# उत्सर्गपत्र

अायुर्वेद की गौरववृद्धि के लिये जो अथक परिश्रम कर रहे हैं, आयुर्वेद की वर्तमान दुरवस्था को देखकर जो अन्तः करण में असहा यंत्रणा का अनुभव करते हैं, विशुद्ध आयुर्वेद को प्राचीच गौरव प्रदान कराने के लिये जो सदा आग्रहशील है, आगुर्वेद की राष्ट्रिय स्वीकृति प्राप्त करने के लिये जिनकी चेष्टात्रों का अन्त नहीं है, आयुर्वेद की गठन प्रणाली को सुसम्पन्न करने के लिये जो सर्वदा प्रयत्नशील है, विशुद्ध ऋायुर्वेद के प्राचीन गौरव को लोकचत्तु के समन्त प्रदर्शित करने के लिये जिन्होंने पर्याप्त त्रात्मत्याग किया है उसी सजनमूषण, सौजन्य सुधासागर, पिंडताअगयय, आयुर्वेद जगत के गौरव, वैद्यरत, डाक्टर शिवशर्मा जी, आयुर्वेदबृहस्पति के करकमलों मे प्रस्तुत 'रस-चिकित्सा' नामक ग्रन्थ मक्ति पुष्पाञ्जलि म्वरूप उरसर्ग करके श्रात्मसन्ताष का श्रनुभव करता हूं।

> विनीत, ग्रन्थकार

# भूमिका

#### मंगलाचरण

"जिनके वंशीरस श्रवण से विह्नल हृदय होकर पित-पुत्र-धन-जन-पित्यक्ता व्रजाद्गनाएँ निशीधसमय में वृन्दारण्य मे गोपीजनवछभ मुरलीधर श्रीकृष्ण के साथ रासलीला करने का सौमाग्य प्राप्त कर चिरन्तन मुख का अनुभव करती हुई कृतकृत्य हुई थीं। भक्तवृन्द के हृदय-वृन्दावन में नित्यवासकुशल, नित्य व्रजविहारी, सर्वरस के मूलाधार, असीम कृपासिन्ध, राधावछभ गोपीकुलदुकूलचोर माधव कृष्ण हमारा पथ प्रदर्शित करें।

'रसचिकित्सा' नामक इस सर्वथा मौलिक ग्रन्थ को विज्ञ समाज के समज्ञ प्रस्तुत करते हुए मैं आज जिस आनन्द का अनुभव कर रहा हूँ वह वर्णनातीत है। लेखक तो केवल एक निमित्त मात्र है।यह वासुदेव भगवान् की कृपा कटाच के विना कदापि सम्भव नहीं था। अब आरम्भ में रसशास्त्र का इतिहास दिया जाता है।

# रसशास्त्र का संक्षिप्त इतिहास

प्राचीन संस्कृतिवद्या अठारह भागों में विभक्त है। चार वेद, यथा ऋखेद, सामवेद, यजुर्वेद, अथर्वेदेद; छः वेदाङ्ग, यथा शिक्ता, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्यौतिप; चार उपवेद, यथा आयुर्वेद, धनुर्वेद, गन्धर्ववेद और अर्थशास्त्र; चार उपवेद, यथा आयुर्वेद, धनुर्वेद, गन्धर्ववेद और अर्थशास्त्र; चार उपाङ्ग, यथा पुराण, न्याय, मीमांसा और धर्मशास्त्र। समग्र संस्कृतिवद्या के विभिन्न स्थलों पर नाना रूप से आयुर्वेदशास्त्र का स्वरूप, उसका उद्भव, विभिन्न रूप से उसका विकास, उन्नति और अवनति की कथा नाना ऋषि, चिकित्सक और गवेषकों के द्वारा लिखित इतस्ततः विखरी हुई है।

#### त्रह्या

सत्ययुग के प्रथम और प्रधान चिकित्सक ब्रह्मा 'प्रथमो दैवभिषक्' के नाम से अभिहित थे। ऋषियुग में लोग ब्रह्मा को आयुर्वेद के पितामह कहा करते थे। भारतीय आर्यगणों का विश्वास है कि स्वयंभू ब्रह्मा ही वेद के समर्ता हैं। वेद का कोई कर्त्ता नहीं है।

महेंजोदड़ों और हरव्या की खुदाई कार्य के सम्पादन के बाद पुरातत्वदर्शी वैज्ञानिक और ऐतिहासिक मनीपियों ने वर्तमान पृथ्वी की अवस्था के सम्बन्ध में जो सिद्धान्त प्राप्त किए हैं उनके अनुसार ब्रह्मा का आविर्भाव काल महाभारत में वर्णित कुरुयुद्धकाल से न्यूनकल्प १५ हजार वर्ष से कम नहीं है। भारतीय ऐतिहासिक तथ्य के वैज्ञानिक कालनिर्णय के सम्बन्ध में विश्राट के विषय में अपना मत इस प्रवन्ध के अन्य स्थान में न्यक्त करूँगा। काश्यपसंहिता के विमानस्थान में ळिखा है कि स्वयंभू ब्रह्मा ने प्रजासृष्टि के पूर्व ही उनके सम्यक परिपालन के लिए आयुर्वेदशास्त्र की सृष्टि की। सुश्रुत के सूत्रस्थान में भी लिखा है कि प्रजासृष्टि करने के पूर्व ही स्वयंभू ब्रह्मा ने सहस्र अध्याययुक्त एवं छत्त श्लोक परिपूर्ण आयुर्वेदशास्त्र का प्रणयन किया। तत्पश्चात् प्राणियों को अल्पमेधायुक्त एवं अल्पायु देख कर रूच श्लोकों का शल्यशालाक्य, काय, भूतविद्या, कौमारमृत्य, अगद्तन्त्र, रसायन एवं वाजीकरण ये आठ विभाग किये। चरकसंहिता में इसी मत का समर्थन है। चरक के सूत्रस्थान के प्रथम अध्याय में 'त्रिसूत्रं शाश्वतं पुण्यं बुबुधे यं पितामहः'। अर्थात् पितामह ब्रह्मा ने प्रथम ही त्रिदोपविज्ञान संविकत हेतु, किङ्ग और औषध ज्ञानयुक्त सनातन आयुर्वेद शास्त्र का उपदेश किया। अपेनाकृत आधुनिक काल की सोलहवीं शताब्दी में प्रकाशित भाव-प्रकाशसंहिता ग्रन्थ से हम जान पाते हैं कि ब्रह्मा ने स्वनाम पर ही ब्रह्मसंहिता ग्रंथ की रचना की और उन्होंने विष्णु, महेश्वर, दचप्रजापति, भास्कर एवं अश्विनीकुमारों को आयुर्वेदशास्त्र की शिचा दी। तत्कृत ब्रह्मसंहिता इस समय प्राप्त नहीं है। भावमिश्र ने अपने भावप्रकाश में ब्रह्मा द्वारा निर्द्ष अठारह से भी अधिक ओषधियोगों की संज्ञा लिपिबद्ध की है। यथा, (१) सर्वाङ्गसुन्दर रस, (२) रतिकुलान्तकरस (३) चतुर्मुखरस (४) आमवात गिजसिंहमोद्क (५) विजयानन्द (६) सूतिकाग्ररस (७) नीलकंठरस (८) मृतसङ्गीवनीरस (९) बृहत् अग्निमुख चूर्ण (१०) बृहत् सारस्वत चूर्ण (११) चन्द्रप्रभागुडिका ( १२ ) स्वायम्भुव रस ( १३ ) माचिक रस ( १४ ) दशसार चूर्ण ( १५ ) कर्णामृत तैल ( १६ ) सहचर ( १७ ) ब्राह्मी तैल और ( १८ ) ब्राह्मी रसायन ।

चरकसंहिता, अष्टांगसंग्रह और भावप्रकाश प्रसृति ग्रंथों में आयुर्वेद के आदि प्रवर्त्तक चतुर्मुख ब्रह्मा रसौषधि व्यवहार के उपदेष्टा माने गये हैं।

# विष्णु

भगवान् विष्णु आयुर्वेदीय चिकित्साशास्त्र में सुपण्डित माने जाते हैं। आयुनिक आयुर्वेद के ग्रंथों में विष्णुपरिकिल्पत वहुविधि ओषधियों का नाम देखा जाता है। उसके मध्य, स्वल्प, बृहत् और महत् भेद से तीन प्रकार का विष्णु तेल और तीन प्रकार का नारायणतेल, सिद्धार्थतेल, श्रङ्गाराभ्र, नित्योदयरस, आमवातेश्वर वटी और सर्वोङ्गसुन्दरस्स अन्यतम एवं विष्णुनिर्मित कह कर फलश्रुति में कथित है। शास्त्रों में भी 'औषधे चिन्तयेदिष्णुम्' अर्थात् ओषधि सेवनकाल में विष्णु का स्मरण करना चाहिए ऐसा कहा है। चिकित्सक श्रेष्ट चक्रपाणि भी अपनी संहिता में लिखते हैं:—

'विष्णुं सहस्रमूर्थानं चराचरपति विभुम् । स्तवन् नामसहस्रेण ज्वरान् सर्वान् च्योहति ॥'

ज्वर में सर्व प्रकार की चिकित्सा विफल होने पर केवल विष्णु सहस्रनाम परिकीर्तन करके अनेकों चेत्र में ज्वर मोच्रूप अपूर्व फल प्राप्त करता है। अतः चराचरपति विष्णु के जिस चिकित्साशास्त्र में अपूर्व ज्ञान था उसमें सन्देह का अवकाग नहीं है।

# महेश्वर

तन्त्रशास्त्र में महेश्वर को ही चिकित्साशास्त्र का जनक कहा गया है। ऋग्वेद में शिव गव्द का उन्नेस नहीं रहने पर भी गिवार्थवाचक रह और ज्यम्बक सद्दों का उन्नेस पाया जाता है। यजुर्वेद में आयु, आरोग्य, धन और सम्पत्ति की वृद्धि के लिए रुद्र की आराधना बहुवार की गई है। यजुर्वेद में रुद्र को सर्व, पशुपति, नीलकंठ, शितिकंठ, शंकर प्रभृति महेश्वर वाचक शब्दों से अभिहित किया गया है। महेश्वर सब प्रकार के रोगों का नाग करने में समर्थ हैं ऐसी कथा वेद के बहुत स्थानों में विणित है। एवं जिस स्थान में कर्मविपाक अनुयायी रोग की चरम असाध्यता प्राप्त हुई है उसी स्थान में रोग को 'गिवेर असाध्य' कहा गया है। 'शिवेर असाध्य' यह बात हमारे देश में बहुत दिनों से प्रचलित है। शिव को सर्वश्रेष्ठ के रूप में स्वीकार न करने से 'शिवेर असाध्य' प्रवाद वाक्य की कोई सार्थकता नहीं रहेगी। श्रेष्ठ निदानकार माधव ने अपने निदान ग्रंथ में ज्वरचिकित्सा के प्रारम्भ में ही लिखा है। 'व्क्षापमानसंकुद्धरुद्रनिश्वाससन्भवः' अर्थात् ज्वर की उत्पत्ति दच्चकर्त क

अपमानित कुद्ध रुद्ध के निश्वास से हुई है। चिकित्सा यंथों में भी रुद्ध के विषय में इसी प्रकार की उक्ति दिखळाई पड़ती है।

रसिविकित्सा चेत्र में शिवादि ही चिकित्सक हैं। सिद्ध सम्प्रदाय के मत से पारा ही शिववीर्थ है। सिद्धगणों के मत से पारा में एवं शिव (ब्रह्म) में कोई प्रभेद नहीं है। पड्रसमय पारा ही चिकित्साचेत्र में एकमान्न साध्यवरत है। पारा के संस्कार के विषय में शिचालाभ कर सकने पर शिव की तृष्टि सम्पादित होती है एवं शिव की प्रसन्नता से ही सब प्रकार की रसक्रिया सिद्ध होती है। प्राचीन रासायनिक विद्वानों के मत से शिव ही सर्वश्रेष्ठ रासायनिक ज्ञानसम्पन्न चिकित्सक हैं। मद्रास सरकार के पुस्तकालय में शिवकृत निम्नलिखित प्रथ पाये जाते हैं:—

- (१) आयुर्जेथ—यह त्रेतायुग में महेश्वर द्वारा प्रणीत है। यही दानिणात्य में आयुर्वेद की आदि पुस्तक है।
- (२) रह्यामलतंत्र—यह महेश्वरप्रणीत चिकित्सा का अत्यन्त बृहत् ग्रंथ है। यह पुस्तक ६ भागों में विभक्त है। प्रथम भाग का नाम 'पारवक्ष्य' है। इसमें पारदसंस्कार एवं पारदसंयोग से निर्मित ओषधियों की प्रस्तुति विधि एवं प्रयोगविधि लिखित है। द्वितीय भाग का नाम 'वातुकल्य' है। इसमें विभिन्न प्रकार से धातु का शोधन, मारण, जारण और आमयिक प्रयोगविधि लिखित है। वृतीय भाग का नाम 'हरितालकल्प' है। इसमें रसचिकित्सा चेत्र में विचित्र फलपद हरिताल का शोधन, मारण, जारण, सत्वपातन एवं भस्मीकरण की विशेष विधि सहज और सरल भाव में वर्णित है। चतुर्थ भाग का नाम अम्रकल्प है। इसमें अम्र का शोधन, मारण, जारण, मस्मीकरण, सत्वपातन और आमयिक प्रयोग विधि भी लिखित है। पंचम भाग का नाम 'हरीतकीकल्प' है। इसमें हरीतकी का प्रकार, भेद उसका गुणागुण और आमयिक प्रयोग विधि लिखित है। छठे भाग का नाम 'वातुकिया' है। इसमें विभिन्न प्रकार से धातु का शोधन, मारण, जारण, भस्मीकरण और आमयिक प्रयोगविधि लिखी हुई है।
- (३) कामतत्र—इस पुस्तक में यौनविज्ञान, वशीकरण और उचाटन के सम्वन्ध में विभिन्न प्रकार की विधियाँ लिखी गई हैं।
- (४) शैवसिद्धान्त—यह ग्रंथ इस समय प्राप्य नहीं है। चक्रपाणिदत्त ने इसी ग्रन्थ से शिवगुडिका नामक ओषिं को अपने ग्रन्थ में उद्धत किया है।

(५) आयुर्वेट—ऋग्वेद के उपांगरूप शिवप्रणीत इस पुस्तक में रोगपरीचा का प्रधान एवं प्रथम उपाय नाडीविज्ञान विस्तृत भाव से वर्णित है। इसमें त्रिदोषविज्ञान का स्वरूप, दोष का संचय, प्रशम एवं स्थान संश्रयादि का विषय, रोग के निदान के सम्पर्क में असात्म्येन्द्रियार्थसंयोग, प्रज्ञापराघ, परिणाम एवं काल का विषय विशद रूप से लिखित है। रसचिकित्सा का समग्र विषय यथा रस, उपरस, घातु, उपघातु, रत्न, उपरत्न, वीर्य, उपविप, चार, उपचार प्रसृति तथा नाडीज्ञानशिचा के प्रारम्भ में नाडी, तन्तु, शिरा, उपशिरा, धमनी स्तायु प्रश्टित का पृथक्-पृथक् वैज्ञानिक विश्लेपण विशेष द्रष्टव्य विषय है। सन्वित और चेतन भेद से हृद्य द्वय का वैज्ञानिक वर्णन इस ग्रंथ का वैज्ञानिकत्व एवं वैदिकत्व का प्रकृष्ट प्रमाण प्रदान करता है। किंच उसे विभिन्न प्रकार से रस, रत्न, धातु एवं चार घटित ओषधि के साथ वनस्पतिसंयोग से मिश्रित ओषधि प्रस्तुत करके तद्द्वारा रोगनिवारण का भी विस्तृत एवं विचित्र वर्णन इस पुस्तक में है। वेद में रोग से परित्राण के निमित्त रुद्र के निकट ओषधि एवं आशीर्वाद की प्रार्थना की गई है और रुद्र को ही सर्वश्रेष्ठ चिकित्सक कहा गया है। रुद्रनिर्मित अनेकों ओषधियां आयुर्वेदीय चिकित्सा शास्त्र में प्रकीर्ण उपदेश रूप से विद्यमान है। यथा—चिन्तामणिरस, सूचिकाभरणरस, मृतसञ्जीवनीरस, चूड़ा-मणिरस, बार्ट्लरस, वैद्यनाथवटी, बृहत् अग्निकुमाररस, छोकेश्वररस, चतुर्भुज रस, मृतभस्म प्रयोग, विश्वेश्वररस, आमवातारिवटिका, शूलराजवटी, महामृत्युक्षय रस, वज्रचार, चन्द्राननरस, विहरस, श्रीमन्मथरस, वसन्ततिह्करस, मकरध्वज, महानीलकंठरस, चूर्णराज, चन्द्रप्रभागुडिका, रसशार्दूल कामेश्वरमोदक, शिवा गुडिका, कन्यादरस, शंकरलौह, महाभन्नातकावलेह, रसाला, सिंहनाद गुग्गुल श्वित्रारि, कुसुमभाप्य तैल, बृहच्छिवगुडिका, ब्योषादिगुडिका, बृहत्स्वायस्भुव गुग्गुळ, कुमार्या रस, माळिकेशव, बृहत् सहचर तैळ. विजयागुडिका, कौलितिका-वर्ती, स्त्यसम, गन्धकं तैल पातन, वातनाशरस, तालकराजरस, स्वर्णसिन्दूर, पूर्णचन्द्ररस, भस्तेश्वररस, शीतभञ्जीरस, पुत्रप्रदरस, सर्वन्याधिहररस इत्यादि।

#### भास्कर

ऋग्वेद में भास्कर सूर्य एवं सविता के नाम से अभिहित हैं। भास्कर ही सब मकार के सुख समृद्धि एवं आरोग्य के भंडार हैं। भास्कर ब्रह्मा से आयुर्वेद सीखे थे 'छ्वा तु पचम वेद भास्कराय ददौ विमुः। स्वतत्रसिहता तस्मात् भास्करश्च चकार सः' अर्थात ब्रह्मा से आयुर्वेद शिचा प्राप्त कर भास्कर ने अपने नाम से 'भास्करसंहिता' नामक स्वतंत्र आयुर्वेदसंहिता का प्रणयन किया। यही सूर्यकृत आदि चिकित्सा ग्रंथ है। वस्तुतः सूर्य ही पृथ्वो के आदि श्रेष्ठ चिकित्सक हैं। 'आरोग्यं भास्कराहि-च्छेत' अर्थात् सूर्य के निकट आरोग्य की कामना करे। यह वाक्य परम्परा से प्रचिलत है। सूर्य जगत् के अन्धकार एवं सकल प्रकार के अधर्म, ग्लानि तथा सभी प्रकार के रोग के वीजाणुओं को स्वकीय तेज प्रभाव द्वारा विनष्ट करके स्थावर जंगमात्मक समग्र संसार की प्राणशक्ति का विकाश किये रहते हैं। ऋग्वेद में भी ऋषि-गण ने प्रार्थना की है कि हे सूर्य आप हमलोगों को हद्रोग से आरोग्य करें कामला रोग दूर करें तथा तेजोदी हकरें।

अथर्ववेद में सूर्य को चत्तु का अधिपति माना गया है। "सूर्यः चधुषां अधिपतिः" ज्योतिषशास्त्र के मत से जातकचक्र में सूर्य पापग्रह वा शुक्रयुक्त होने पर जातक च जु रोग प्रस्त हो जाता है। सूर्य की कृपा विना च जुरोग आरोग्य नहीं होता। सूर्य के धातु ताम्र चत्तुरोग में सर्वापेचा श्रेष्ठ ओषधि है। ताम्र के पात्र में मधुमर्दन कर अञ्जन प्रयोग करने की एवं ताम्रभस्म घृत-सिश्रित करके चन्नु में अञ्जन देने की व्यवस्था भास्करसंहिता में देखी जाती है। सूर्य ही पित्त धातु के कारक हैं। पित्त की विकृति होने पर मानवशरीर में नाना प्रकार के रोगों की उत्पत्ति हो जाती है। पित्त शब्द का अर्थ है तेज। शास्त्र में लिखा है "ऊष्मापित्तादृते नास्ति"। शरीर में गर्मी की कमी हो जाने पर अर्थात् पित्तहास होने पर अनेक रोग आकर उपस्थित हो जाते हैं। "रोगाः सर्वेऽपि मन्दाग्नेः" अर्थात् सव प्रकार का रोग मन्दामि से उत्पन्न हो जाता है। आधुनिक काल में जो तीन रोग जनसमूह को विशेष पीड़ा देते हैं उनके मध्य हृद्रोग अन्यतम है। अन्य दो का नाम यदमा और कैंसर है। लो ब्लंड प्रेसर, हाई ब्लंड प्रेसर, कोरोनिर श्रोम्बोसिस और सेरिबाल थ्रोम्बोसिस इत्यादि आधुनिक रोग हद्दोग का ही नामान्तर है। आहार-विहार के ही अयोग, मिथ्यायोग अतियोग के फल से पित्त विकृति होने पर भी अर्थात् किसी किसी चेत्र में पित्त का आधिनय एवं किसी चेत्र में पित्त की अप्राप्ति उक्त सभी रोगों का अन्यतम कारण है। वस्तुतः पित्त धात् शरीर में समभाव अधिष्ठित रहने पर शरीर सम्पूर्ण भाव से स्वस्थ रहता है। अन्यथा शारीरिक स्वस्थता कम हो जाती है। हम लोग खाद्यरूप में जिसे ग्रहण करते हैं उष्मा वा सूर्य की गर्भी ही उसका पाचक है। परिपाक शक्ति हास प्राप्त करने पर शरीराभ्यन्तरस्थ अन्यान्य यंत्रादि विशेष भाव से यकृत् हृद्िपण्ड आक्रान्त हो जाते हैं। वैदिक ऋषिगण अति पूर्व से ही इस रहस्य को हदयंगम

करके सूर्यताप की समता रत्ता के प्रति आकृष्ट हुए थे इसी कारण वे त्रिसंच्या करके दीर्घायु लाभ करते थे। "ऋषयो दीर्घसध्यात्वात दीर्घमायुः अवाप्नुयुः"। अभी भी प्राचीन लोग रोगमुक्त दीर्घायु लाभ के लिए पृथ्वी के श्रेष्ठ चिकित्सक सविता की आराधना में नित्य नियमित रूप से उपयुक्त काल अतिवाहित करते हैं। भारकर के द्वितीय ग्रंथ का नाम "जानभारकर" है। यह ग्रंथ जर्मनी में पाया जाता है। इससे पूर्वजन्मकृत कर्मफल एवं पाप को रोग का कारण कहकर स्वीकार किया गया है एवं प्रायश्चित्त, जप, होम, पूजा आदि के द्वारा पापच्य होकर दीर्घकालानुवृत्ति दुश्चिकित्स्य रोगादि आरोग्य होता है ऐसा लिखा गया है। भारकर प्रणीत निम्नलिखित ओषधियाँ हैं—भारकर चूर्ण, भारकर लवण, लवणभास्कर उदर्क रस और भारकर लवण चूर्ण इत्यादि।

### द्धप्रजापति

ब्रह्मा के शिष्यका नाम दत्तप्रजापित है। दत्तप्रजापित के नाम से प्रचलित महारास्नादि कषाय औषध है। दत्तके प्रधान शिप्य अश्विनीकुमार हैं, जिनके गुणगान से चारों वेद सुखरित है। स्थानाभाव के कारण उनका उल्लेख यहाँ न कर सका हूँ । च्यवन का वार्द्धक्यनाथा, श्वेतकेतुका किलासङ्खनाशा, ब्रह्मा का यज्ञशिरः संधान, पुन्णाक की दन्तचिकित्सा, इन्द्र की अजस्तस्म चिकित्सा, चन्द्र की यदमा चिकित्सा इत्यादि अनेक प्रकार के जटिल रोगों की चिकित्सा में अश्विनीकुमारों की ख्याति समस्त दैवकाल या ऋषियुग से विख्यात है । स्वर्गवैद्य अश्विनीकुमारों के प्रणीत (१) आरिवनसंहिता। (२) चिकित्सासारतंत्र। (३) अमद्र। (४) धातुरत्नमाला । (५) हरीतकीकथा और (६) नाडीनिदान या नाडी-परीचा ये ६ ग्रंथ आज भी उपलब्ध होते हैं। इनमें धातुरत्नमाला बीकानेर के पुस्तकागार में मिलती है। अरिवनिकुमारों के नामांकित शताधिक योग आधु-निक आयुर्वेद ग्रंथों में मिलते हैं। में तो अपने दैनिक चिकित्साचेत्र में अश्विनी कुमारों की लिखी हुई नाडीपरीचा के मत के अनुसार नाडीपरीचा करके रोग का निर्णय करता हूँ एव उनकी व्यवहृत योगावली चिकित्सा में प्रयोग करता हूँ तथा उनके प्रदर्शित नियमानुसार धातुरलों की भस्म आदि भी तैयार करता हूँ। अश्विनीकुमारों के न्यवहृत ओषधियों में निम्नलिखित का नाम प्रसिद्ध है— मातुछङ्गगुडिका, गुरमनाशंकचृर्ण, हरिद्राद्यचूर्ण, लशुनाद्यवृत, सर्वज्वरहरवृत, विन्दुपृत, रक्तः पित्त निवारण योग, असृततैल, चीरयोग, अयोराजयोग, वर्द्धमानः पिष्पली, फलघृत, अस्तागुग्गुल, अस्ताद्यवृत, अस्तप्राशावलेह, पुनर्नवागुग्गुल,

गोधूमाद्यपृत, महासुगन्धि तेल, गुडकुष्माण्ड, कूष्माण्डकरसायन, बृहत् नारियल खंड, दाडिमाद्यपृत, शतावरीपृत, हिंग्वाद्यचूर्ण, दशांगतेल, बृहत् अग्निमुखचूर्ण, चित्रकहरीतक्यावलेह, हरीतक्यावलेह, चित्रकावलेह, स्वल्पकदलीकन्दपृत, अयःपित रस, मार्तण्डरस, विलस्योदयरस इत्यादि।

#### इन्द्र

देवराज इन्द्र अत्यन्त सुचिकत्सक थे। विशेषरूप से रसायनचिकित्सा में इन्द्र जैसे सुपंडित स्वर्गराज्य में दूसरा कोई नहीं हुआ। इन्द्र ने अश्वनीकुमारों से आयुर्वेद शास्त्र का अध्ययन करके भरद्वाज, स्रुगु, अंगिरा, अत्रि, विश्वष्ठ, करयप, अगस्त्य, पुलस्त्य, वामदेव, असित गौतम प्रसृति, तदानीन्तन काल के ऋषियों को दीर्घ आयुपद आयुर्वेद शास्त्र की जिचा दी। इन्द्र नामाकित निञ्च-लिखित ओषधियाँ आज भी व्यवहार में आती हैं। यथा—ऐदिकरसायन, सर्वतीभद्र-रस, दशमूल्याद्यतेल और हरीतक्यावलेह।

स्वर्ग में सम्पूर्ण अष्टांग आयुर्वेद के साथ नाडीविज्ञान तथा रसिचिकित्सा सुप्रचिक्त थी। परन्तु यह प्रश्न हो सकता है, कि यह स्वर्गराज्य कहाँ था और यह वर्णना केवल-मात्र कवि-कल्पना है या इसमें यथार्थ भी कुछ है। पाश्चात्य पण्डितों ने तो हमारे शास्त्रों में लिखित इन ऐतिहासिक विवरणों को केवल कवि-कल्पना मात्र कहा है। परन्तु मेरे मत में कोई भी किएपत पुरुष नहीं थे। वस्तुतः वे सव ही ऐतिहासिक व्यक्ति थे।

स्वर्गराज्य के अस्तित्व के वारे में तथा इसके स्थानसंस्थान के सम्बन्ध में अनेक मनीषियों ने बहुत गवेषणा की है। इनमें भारतभूषण वालगंगाधर तिलक, डा० मंडारकर, ऋषि वंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय, उमेशचन्द्र वटन्याल, सामश्रमी, डा० भगवान दास, पंडित भागवत दत्त इत्यादि के नाम विशेष उन्नेखनीय है। इनमें से अधिकांश के मत में हिमालय के दूसरी ओर मंगोलिया ही देवों का आदि स्थान है। स्वर्गराज इन्द्र का राज्य मंगोलिया में था। आयुर्वेदावतरण के नाम से वृद्ध चरक, सुश्रुत, वाग्भटादि में जो विवरण मिलते हैं, उनको पढकर हिमालय के दूसरी ओर स्वर्ग के लौकिक तथा ऐहिक अस्तित्व के वारे में किसी को कुछ भी संदेह का अवकाश नहीं मिलता है। 'पार्थ हिमवतः शुभे' पृथिवी का जो सर्वप्रथम और प्रधान ऋषि महासम्मेलन हुआ था, उसमें महर्षि भरद्वाज के सशरीर स्वर्ग जाने का जो प्रस्ताव स्वीकृत

हुआ, उससे यह प्रतीत होता है कि तदानीन्तन महर्षियों को इन्द्र के राजधानी के स्थानिक अस्तित्व के बारे में स्पष्ट ज्ञान था और स्वर्ग में जाने का पथ भी माल्स था। इसको किव कल्पना कहकर छोड़ देने से भरद्वाज के द्वारा संगृहीत आयुर्वेद विज्ञान के भी उक्त ऋषियों के कल्पना प्रस्त से भिन्न और कुछ नहीं कहा जा सकता। परन्तु यथार्थ में जैसे शाश्वत आयुर्वेद-विज्ञान किव परिकल्पना नहीं है, वैसे स्वर्ग वैद्य अश्विनीकुमारों के शिष्य इन्द्र का राज्य भी काल्पनिक नहीं है। पंडितों के मत से मंगोलिया ही इन्द्र का स्वदेश है और ऋषियों के आदेश से आयुर्वेद को लाने के लिये महर्षि भरद्वाज मंगोलिया गये थे यह भी सत्य है।

सत्ययुग या दैवकाल में स्वर्गस्थ इन्द्र के राज्य में आयुर्वेदावतरण-वर्णना के प्रसंग में सोम की कथा को छोड़ने से कदाचित चतुर्वेद का एक वहुत वड़ा भाग अधूरा रह जाता है। सोम या सोमरस का पान वैदिक ऋषियों का एक नित्य नैमित्तिक काम था। इस सोमरस से वे अपने उपास्य देवताओं को तृप्त करते थे। सोमरस-पान करने से वे शरीर के सब रोगों से मुक्त होकर चन्द्र जैसा सुन्दर और दिव्यकान्ति विशिष्ट होते थे। इस सोमरस को वेद के कई स्थानों में चन्द्र के साथ तुलना की गयी है। वेद के वर्णन को पढ़कर ऐसा जान पड़ता है कि चन्द्र और सोम में कोई प्रभेद नहीं है। अनेक मंत्रों में चन्द्र को सोमलता के नाम से अभिहित किया गया है। त्रास्तव में चतुर्वेद का अनेक अंश इस सोमरस का स्वरूप, प्रस्तुतविधि और सेवन के गुणगान से मुखरित है। परन्तु वर्त्तमान समय में इस सोमलता के प्रकृत स्वरूप का किसी को ज्ञान नहीं है। यूरोपीय पंडितों ने सोमरस को पहचानने की कितनी चेष्टा की, परन्तु आज तक उनकी कोई चेष्टा सफल नहीं हुई है। वेदों में सोमरस के वारे में विवरण मिलता है कि यह एक प्रकार का लतागुल्मविशेष है। शुक्कपच में प्रतिदिन इसकी एक नयी पत्ती निकलकर, पूर्णिमा के दिन इसकी एक लता पूर्णावयव प्राप्त होती है। उसके वाद कृष्ण प्रतिपदा से रोज एक-एक पत्ता गिरकर अमावस्या के दिन यह विलक्क पत्ररहित होकर सूख जाता है। ऋषिगण और देवगण पूर्णिमा के दिन सोमसंग्रह करके पान करते थे। सोमरसपान की फलश्रुति में लिखा है कि जैसे कृष्णपत्त का चन्द्र प्रतिदिन एक-एक कला छोटा होकर असावास्या के दिन पूर्णतः चयपात होता है, वैसे सोमपान के वाद मानवशरीर स्थित दोषों का क्रमशः चयशाप्त होकर अमावास्या के दिन पूरा शेष हो जाता है और उसके वाद जैसे शुक्रपच के प्रतिदिन चन्द्र की वृद्धि होती है और पूर्णमा के दिन पूर्णचन्द्र अपूर्व सुषमामंडित होकर आकाश में शोभित होता है, वैसे ही पचान्त में दिव्यवर्गान्त-विशिष्ट होकर अपूर्व आनन्द प्राप्त होता है। वर्त्तमान समय में अनेक पाश्चात्य तथा देशी पंडितों ने सोमरस के सम्बन्ध में गवेपणा की है उनमें कोई तो इसे शराव और कोई भांग के अठावा और कुछ नहीं समझते। हरिद्वार से वद्दीनारायण की ओर दोनों तरफ बहुत से भांग के वृचों को देखकर अनेक विद्वान् हिमालय को शिवजी का देश मानते हैं। शिवजी का प्रधान खाद्य भांग था अतः भांग को सोम समझना उनके लिये विचित्र नहीं है। पहले दिन कचा भांग शाम को भिगोकर, दूसरे दिन अच्छी तरह वृक्ष कर दही, दूध, घी, शहद, चीनी और पका हुआ केला के साथ मिलाकर सेवन करने से शरीर की पृष्टि और मन में स्फूर्ति निश्चित ही होती है। इसलिये भांग को ही बहुत लोग सोमरस समझते हैं। हिमालय पर्वत के किसी विस्मृत स्थान में उत्पन्न शास्त्रीय असली सोम के साथ चांद का सादश्य देखकर वैदिक ऋषि गण जिसको चांद समझकर पूजा करते थे उसका निर्णय आज तक नहीं हुआ है।

वंगदेश के जही-बूटी वेचने वाले तथा हिमालय की औषध वेचने वाले एक तरह के लतागुलम को सोमलता कह कर वेचते हैं। मैंने उसकी ओपिध में व्यवस्था करके शारीरिक पुष्टि फल पाया, परन्तु उसमें किसी तरह की मादकता का विकाश नहीं देखा। यह एक प्रकार का पतला पत्रविहीन सफेद रंग की सूच्मलता विशेष है।

# भारत में आयुर्वेदावतरण

#### भरद्वाज

जव सत्ययुग के शेप भाग में वैदिक ऋषिगणों ने देखा कि दिन प्रतिदिन आयुष्काल चीण होता जा रहा है। नियमित समय तक तपस्या आदि यथा नियम से लोग नहीं कर पा रहे हैं। जनसमाज में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होकर वहुत सी वाधायें उत्पन्न कर रहे हैं, तब उन्होंने धर्मार्थकाममोच लाभ का एकमात्र उपाय, आरोग्य के साथ दीई जीवन लाभ करने के लिये हिमालय की तराई में भारतीय ऋषिमहासम्मेलन की न्यवस्था की।

इस अखिल भारतीय ऋषिसम्मेलन में स्वीकृत प्रधान प्रस्ताव के अनुसार

ऋषि प्रतिनिधि महर्षि भरद्वाज स्वर्ग भेजे गये। उन्होंने स्वर्गराज इन्द्र के पास पहुँच कर दीर्घजीवनलांभ के मूलसूत्र त्रिस्त्रमूलीभूत सारे आयुर्वेदशास्त्र की जिक्ता प्राप्त करके भारत में आकर महर्षि लोगों को दीर्घजीवन लाभं करने का उपायस्वरूप पूरे आयुर्वेदशास्त्र की जिक्ता दी।

सहिं भरद्वाज ने जिन ऋषियों को आयुर्वेदशास्त्र का उपदेश दिया उनमं महर्षि आत्रेय पुनर्वसु अन्यतम थे। आत्रेय पुनर्वसु को वहुत से छोग भरद्वाज समझते हैं, परन्तु यह ठीक नहीं है। चरक के श्रेष्ट टीकाकार चक्रपाणि ने आयुर्वेददीपिका में आत्रेय पुनर्वसु और भरद्वाज के विषय में संशयरूप से अपना मत प्रतिपादन किया है। मदास सरकार के पुस्तकालय में भरद्वाज के नामांकित निम्न तीन पुस्तकें हैं:-(१) भारद्वाजायन, (२) भेपजकल्प और (३) भेपजकल्पद्रुस । भरद्राज नासांकित औपधों में फलवृन और वृहत् फलवृन नाम की दो ओपिंघगेँ आधुनिक वैद्य समाज में प्रचित हैं। आत्रेय पुनर्वसु ने अग्निवंश, अेळ, जतुकर्ण, परागर, चारपाणि तथा हारीत ऋपि को समस्त आयुर्वेदशास्त्र का उपदेश दिया था। इनमें महर्षि अग्निवेश ही सबसे ब्रुडिमान् थे। इसिलये उनका लिखा 'अग्निवेशसंहिता' दूसरे पांच ऋषियों के लिखे स्वनामस्यात संहिताओं से अधिक अच्छी हुई। यह 'अभिवेशसंहिता' ही महिं पतक्षि द्वारा त्रेतायुग के अन्त में सबसे पहिले प्रतिसंस्कृत हुई। इसके वाद कालक्रम से उसके अनेक अंश विलुत हो गये। महर्षि दृढ़वल ने गंकराराधना में सिद्धि लाभ करके गंकरजी के अनुग्रह से वर्तमान चरकसंहिता में चिकित्सास्यान के १७, कल्पस्थान के १२ और सिद्धिस्थान के १२ अध्याय संयुक्त करकं महर्पि पतक्षि द्वारा प्रतिसंस्कृत विनष्टप्राय अग्निवेशसंहिता का प्रति-संस्कार क्रिया। महिष पत्रञ्जिल को रसशास्त्र में विशेष दत्तता थी। स्वनामधन्य महामहोपाध्याय कविराज गणनाथसेन सहाशय ने स्वलिखित 'प्रत्यच शारीरम्' के उपोदात में छिखा है:-

'न नासी पतल्लिः क्षेत्रल चरकसंहिताकार एव रसञ्चास्त्रेऽपि तन्नामश्रवणात्।' तथाहि नक्षटत्तरीकाया लौहद्राविविञ्चाख्याने ज्ञिवदासः—

> 'पानक्षले तु स्पर्शादिनाऽपि पाकज्ञानमुक्तम्'। 'तावडौहं पचेडूँ यो यावद्दलेण पीडितम् समुद्रं जायते व्यक्तं न निःसरति सन्यिभिः॥

लौहादिन्यवहारश्च चरकेऽपि दृश्यते । तदुक्तम्--

एप एव च लोहाना प्रयोगः सम्प्रकीत्तितः।

अनेनैव विधानेन हेम्नश्च रजतस्य च।

आयुः प्रकर्षकृत् सिद्धः प्रयोगः सर्वरोगनुत् ॥

चरके पारदव्यवहारोऽपि काचित्को दृत्रयत एवं यथा-

सर्वन्याविनिवर्हणमचात् कृष्ठी रस च निगृहीतम्।

निगृहीतो रसश्च सकरव्यजाख्य प्रयोग स्यादिति तर्कयन्त्यनेके॥

सहामहोपाध्याय गणनाथसेन की अकाट्य उक्तियों से यह प्रमाणित होता है कि चरक प्रतिसंस्कर्ताओं की रसणास्त्र में बहुत दत्तता थी। प्रातःस्मरणीय महामहो-पाध्याय विजयरत सेन महाणय भी चरकसंहिना के श्वासरोगाधिकार में िळखा मुक्ताद्यपूर्ण अधिकतर व्यवहार करते थे और चरक की रसीषि के अस्तित्व पर विश्वास करते थे। अनेक प्रकार के छुप्तप्राय तथा जीर्णशीर्ण रसग्रंथों के संगोधक श्रीयादवजी दिक्मजी आचार्य को चरक और सुश्रुत की रसीषि के वारे में पूर्ण ज्ञान था। दोनों संहिताओं के अनेक स्थानों में उन्होंने विभिन्न प्रकार की रसौषि की वस्तुओं का उन्होंच किया है। यथा—अञ्चन, त्तिया, शिलाजतु, लौह, हरिताल, मंहर, चुरवक लौह, सब प्रकार के लग्ण, नाम्न, चारमृत्तिका, सोना, विभिन्न प्रकार के मणि, सीसा, सुवर्णगैरिक, कासीस, कांस्य, गन्धक, सुहागे का लादा, तींचण लौह, वग, स्वर्णमाचिक, मनःशिला, पारा, प्रवाल, वज्र, वराटक, वेदूर्य, शंख, सीसा, सोराष्ट्रो, सूर्यकान्त, स्फटिक इत्यादि।

एक बार प्रश्न यह उठा था कि आत्रेय सम्प्रदाय के कायचिकित्सकों का अग्निवंश, जनुकर्ण, भेळ, पराशर, हारीत, चारपाणि, चरक, सुश्चत तथा बाग्सट प्रणीत लब्ध कायचिकित्सा ग्रंथों में रसचिकित्सा की वड़ी-वड़ी ओषधियों का नाम वयों नहीं मिळता। इसका अनुसंधान करके हम छोगों को निञ्जलिखित कारणों का सन्धान मिळा है।

विशेषण चिकित्सको का आविर्नाव:--पहले वताया जा जुका है कि सत्ययुग के अन्त में और त्रेतायुग के प्रारम्भ में ऋषियों के प्रतिनिधि स्वरूप महर्षि भरद्वाज देवराज इन्द्र के पास जाकर सारे आयुर्वेद विज्ञान की शिचा पाकर सर्व्यलोक में आए और उन्होंने ऋषियों को उसकी शिचा दी। उनके शिष्य-प्रशिष्य लोग कई दलों में विभक्त हो गए। आत्रेय, पुनर्वसु, अश्विवेश, भेल, जतुक्कर्ण, पराशर, चारपाणि और हारीत आदि ऋषि लोग कायचिकित्सा के पच में हुये, इसलिये उनको आत्रेय सम्प्रदाय के कायचिकित्सकों के नाम से अभिहित किया जाता था। कायचिकित्सकों में सब बनौषिध प्रयोग के पत्त में नहीं थे। जो जिप्य रसौषिध प्रयोग के पत्त में थे उनके सम्प्रदाय को रमसिङ सम्प्रदाय या रसवेंच या पापाणवेंच या गिडवेंच सम्प्रदाय के नाम से अभिहित किया जाता था। ब्रह्मा ही इस जास्त्र के आदि ज्ञाता, शिवजी प्रधान उपदेश और अरदाज प्रधान इन्हा है। सत्ययुग में महर्षि पतञ्जिल इसके प्रधान उपदेश थे। उसके वाद हेनायुग में लंकेश्वर रावण तथा अयोध्याधिपति रामचन्द्र विजिश्वर रसायनजान्त्र जानने वाले थे। रसरत्यसमुचयकार के मत से द्वापर युग में २७ रससिद्ध चिकित्सक थे। कलिकाल के बौडयुग में रसचिकित्सा का स्वर्णयुग था। इन युग में रसचिकित्सा के प्रधान चिकित्सक नागार्जुन थे। परन्तु नागार्जुन के अतिरिक्त और १७ रससिद्धों के नाम रसरत्यसमुच्चय में लिखे गये हैं यथा—(१) रसंकुण (२) भेरव (३) नन्दी (४) स्वदुन्दभेरव (५) मन्यानभेरव (६) काकचंडीश्वर (७) वामदेव (८) ऋष्यश्वंग (९) रसेन्द्रतिलक (१०) योगी (११) 'क्रियातंत्रममुचयी' (१२) भालुकि (१३) सैथिल (१४) महादेव (१५) नरेन्द्र (१६) वासुदेव और (१७) हरीश्वर।

ये सब वोडयुग में विभिन्न रलग्रंथों के संकलियना थे। ऊपर बताये हुये मिड वैद्य लोग सारे आयुर्वेदगास्त्र में दत्त होकर भी चिदिरला केत्र में रसोणिश ही न्यवहार करते थे और कालक्रम से सिड लोगों का एक स्वतंत्र सम्प्रदाय ही सगिठत हो गया था।

#### धन्वन्तरि सम्प्रदाय

भरहाज के गिण्यों में जो गलय-चिकित्सा के पक्तपाती हुये उनको धन्वन्तिर सम्प्रदाय कहा जाता है। धन्वन्तिर सम्प्रदाय के आदि ज्ञाता-भरहाज, प्रधान उपदेश-धन्वन्तिर, श्रेष्ठ गिण्य सुश्रुत और प्रतिसंस्कर्ता नागार्जुन थे। किसी-किसी ऐतिहासिक के मत से भरहाज की तरह धन्वन्तिर भी स्वर्ग गये थे और इन्द्र के पास गल्यतंत्र की गिचा पाकर सर्त्यलोक में काशीराज दिवोदास के रूप से अपने शिष्य सुश्रुत के हारा उसका प्रचार किया था।

धन्वन्ति सम्प्रदाय का प्रधान अंथ सुश्रुतसिहता है। सूत्रमूलक यह शलयतंत्र आकार में छोटा होने पर भी, शलयतांत्रिकता के सम्बन्ध में विशिष्ट ज्ञानलाभ करने के लिये आधुनिक काल में आवश्यक है।

रासायनिक की दृष्टिमें सुश्रुत का कृतित्व काल नहीं है। सुश्रुत की मृदु, मध्यम और तीच्ण चार बनाने की विधि आधुनिक वैज्ञानिकों के लिये भी विस्सयोत्पा दक है। सुश्रुत की अयस्कृति विधि रसायनशास्त्र के इतिहास का एक विशेष स्मरणीय आविष्कार है और पाण्डु, कामला, प्रमेह, मधुमेह, हृदयरोग इत्यादि अनेक दुःसाध्य रोगों की चिकित्सा की एक अपूर्व आश्चर्यजनक फलप्रद औषध बनाने का प्रधान उपादान कारण है।

## आत्रेय सम्प्रदाय

चिकित्सकों के सम्प्रदाय के अनुसार अनेकों विभिन्न भागों में सम्प्रसारित करना उस सम्प्रदाय की उन्नित का चोतक है। दूसरी गोष्ठी के प्रभाव से अपनी गोष्ठी का संरचण, परिवर्द्धन और परिपालन के लिये उसके ऊपर विधिनिषेध का आरोप करना गोष्ठीपितयों का स्वाभाविक धर्म है। इसके फलस्वरूप जैसे एक ओर साम्प्रदायक गोष्ठी दीर्घजीवी होती है, दूसरी ओर नाना प्रकार के संकीर्णता और जुद्रता के दुष्ट कीट धीरे धीरे उसकी जीवनीयशक्ति को चीण से चीणतर कर देते हैं। हुआ भी ऐमा ही था। धीरे धीरे कायचिकित्सक अनेक प्रकार के संशय तथा चुद्रता के जाल में अपने सम्प्रदाय को वाँधने का प्रयत्न करने लगे। इस वन्धनोद्यम का प्रधान अनुशासन आन्नेय सम्प्रदाय के कायचिकित्सकों का प्रधान उपजीष्य ग्रंथ चरकसंहिता का निम्नलिखित श्लोक है:—

नेपजेर्निनवर्त्तन्ते विकारा साध्यसम्गताः। साधन नत्वसाध्याना न्यावीनामुपदिदयते॥

चरक केवल तथाकथित साध्यरोगों की चिकित्सा के विषय तें ही उपदेश देते हैं। असाध्य रोगों की चिकित्सा के विषय में वे किसी प्रकार का उपदेश नहीं देते और इसी कारण ही उन्होंने प्रायः आधे रोगों की चिकित्सा की व्यवस्था की जिम्मेदारी से अपने को सुक्त कर लिया है।

द्वितीय अनुशासन से चरक लिखते हैं:—

स्वार्विचायरोहानिमुक्तोशमसयहम्। प्राप्नुयान्नियत वैद्यो योऽसाध्य समुगाचरेत्॥

जो वैद्य असाध्य न्याधि की चिकित्सा में प्रवृत्त होते हैं, उनके स्वार्थ, विद्या और यश की हानि होती है। उनके रोगी संग्रह नहीं होते।

धन्वन्तरीय लोगों के प्रधान उपजीव्य सुश्रुत में भी एक शबुरूप अनुजासन देखा जाता है।

'असिद्धिमाप्नुयालोके प्रतिकुर्वन् गतायुपम्'

असाध्य सुमूर्ष व्यक्ति की चिकित्सा कराने से चिकित्सक की अपकीर्ति होती है।

इसिंछिये आन्नेय तथा धन्वन्तिर सम्प्रदाय के चिकित्सक लोगों ने तथाकथित साध्यरोग को भी असाध्य समझकर, उन रोगों की चिकित्सा की चेष्टा को भी निन्दनीय बताकर साधव तथा हेमाद्रिपर्यायभुक्त आधे से अधिक संख्यक रोगों की चिकित्सा के वारे में कोई विशेष विधि का उस्लेख नहीं किया है और अपने सम्प्रदाय के चिकित्सकों में यदि कोई वैसा करे तो वह अपने सम्प्रदायसुक्त व्यक्तियों में निन्दनीय होता था। इसी के फलस्वरूप आत्रेय तथा धन्वन्तरि सम्प्रदाय के चिकित्सकों के प्रधान ग्रंथ वृद्धत्रयी, वृहत्त्रयी, वृद्धचरक, वृद्ध सुश्रुत या बुद्ध वाग्भट की रसिचिकित्सा में प्रधान ओषिघयों का किसी प्रकार का उल्लेख नहीं देखा जाता है। यही धारा दीर्घकाल तक थी और इसका ग्रभाव इतनी दूर तक फंला हुआ था कि कायचिकित्सा तन्त्र के शेष ऋषि सुशिंदावाद के प्रातःस्मरणीय गगाधरतुल्य गंगाधर तन् भो अपने सम्प्रदायभुक्त किसी को भी रसेन्द्रसारसंप्रह भीर भैपज्यरतावली में लिखी हुई किसी प्रकार की गोली वनाते देखकर उसको गोलीवाला कहकर उसकी हॅसी उड़ाते थे। यहाँ तक कि इस विपय में आयुवेंद महासहोपाध्याय चक्रपाणि के ऊपर भी किसी ने कटात्त किया है। इसके अतिरिक्त उस समय के कायचिकित्सक सम्प्रदाय सं प्रचितत ग्रंथों के आर्यत्व तथा अना-र्यत्व को लेकर विशेष समालोचना हुआ करती थी। अपेचाकृत अर्वाचीन किसी नवीन प्रथकार को छुछ प्रकाश करके उसे चिकित्सकरोष्टी के अन्दर सर्ववादी सम्मत तथा सर्वजनसान्य कराने में विशेष कष्ट होता था। अष्टांगहद्य की ऑति सुभाषित ग्रंथ लिखने पर भी सहायति वाग्भट ने पुस्तक की जनप्रियता के वारे में सन्देहयुक्त होकर लिखा है "ऋषिप्रणीने प्रीतिजेन्मुक्ता चरकनुश्रुतौ । नेलाचा नि न पटाने तस्मात् प्राण राभाणितन।" अर्थात् ऋषि का लिखा हुआ होने से ही यदि कोई पुस्तक पढ़ने लायक हो तो फिर क्यों लोग चरक, सुश्चत छोड़कर भेल, जतुकर्ण, पराशर सुनियों की लिखी हुई पुस्तकें क्यों नहीं पढते। उसका कारण उक्त सुनियों का लिखा हुआ सुभाषित नहीं है । परन्तु वाग्भट के समय अर्थात् दोद्धुग में प्राप्त चरक तथा सुशुतसंहिता के सम्पूर्ण रूप से आर्प न होने पर भी सुभापित होने से छोग उनका आदर करते हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि कायचिकित्सालयों के बेड़ाजाल अत्यन्त कठोर और लौहमय थे। इसके अतिरिक्त कायचिकित्सक सम्प्रदाय के पंडित छोग सृष्टितत्त्व तथा जीव-विज्ञान के मूलभूत अनुमन्धान के लिये सांख्य के २५ तस्व तथा वैशेषिक दर्भन के परसाणुवाद के ऊपर निर्भरशील थे।

आयुर्वेदीय सिद्धान्तों का विचार करते संमय, विशेषकर रोगों के साध्यासाध्य निर्णय, द्रव्यों के गुण निर्णय तथा प्रयोग-विधि का विचार करते समय वे तर्कशास्त्र की भी सहायता लेते थे तथा अपने सम्प्रदाय के ऊपर किसी प्रकार का आक्रमण करने पर तर्कशास्त्र के तीव कुठाराघात से आततायी को वही आसानी से घराशायी कर देते थे। इस तरह अनेक प्रकार के विधिनिषेध लगाकर आत्रेय सम्प्रदाय के चिकित्सक लोग त्रेतायुग से लेकर कायचिकित्सकों को बौद्धयुग के मध्यकाल तक रससिद्धसम्प्रदाय के प्रभाव से मुक्त रखने में समर्थ हुये थे।

पूर्वप्रदत्त विवरण से पाठक अवगत हो गये हैं कि सहिष भरद्वाज के समय से कायचिकित्सा सम्प्रदाय के चिकित्सक लोग वनौषिध के उपर अधिक निर्भरशील थे। परन्तु रसौषिध के सम्बन्ध में उनको कोई धारणा ही नहीं थी ऐसा कहना और वर्त्तमानसमय के शत्यतांत्रिक लोगों को कायचिकित्सा के सम्बन्ध में कोई ज्ञान ही नहीं है ऐसा कहना सर्वथा हास्यास्पद है और इससे अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता है।

(१) अल्पायास में वनौषधिसंग्रह की सुविधा। (२) उनके प्रस्तुत प्रयोगों की अपेचाकृत सहज साध्यता। (१) अपेचाकृत निर्भयता से वनौषधियों के प्रयोग की सुविधा। (१) वनौषधि के वारे में लौकिकविरुद्ध प्रभाव का अभाव। (५) रसौषधि के सम्बन्ध में संघवद्ध विरुद्ध प्रचार यथा-(क) पारा तथा हरिताल के भस्म बनाने वाले का वंश नहीं रहता है। (ख) उनकी भस्म बनाने से कुष्टन्याधि होने की आशंका सतत बनी रहती है। (ग) किसी प्रकार विना शोधित तथा विना मर्दित अवस्था में रसौषधि के प्रयोग की असुविधा है परन्तु जो रसौषधि धातुद्दन्य विना मर्दित अवस्था में प्रयोग की जा सकती हैं, उनका प्रयोग चरक तथा सुश्रुत संहिता में देखा जाता है। यथा—प्रमेहरोगाधिकार में सुश्रुत का 'नवायसचूर्ण'। विभिन्न प्रकार के अयस्कृति तथा चरक के जुक्ताधचूर्ण, रसांजनयोग इत्यादि। (६) सबसे ऊपर वनौषधि की स्वल्पमूल्यता उसकी अधिक जनप्रियता का सबसे बड़ा कारण रहा है।

## रससिद्ध सम्प्रदाय

पूर्व वर्णित विवरण से यह ज्ञात होता है कि आदर्श की विभिन्नता तथा रसविद्या की उत्पत्ति, प्रसार तथा प्रयोगविधि के बारे में आनत धारणा ने ही आत्रेय तथा रसवैद्य सम्प्रदाय के अन्दर विरोध की सृष्टि की थी और वहो विरोध त्रेतायुग के मध्य समय से आज तक चला आ रहा है। वहुतों की यह घारणा है कि रसविद्या दान्तिणात्य सें पैदा होकर वहाँ से भारतवर्ष के विभिन्न स्थानों में प्रसारित हुई थी। उनके मत से छंकेखर रावण ने पहले महादेवजी से रसवास्त्र की शिक्ता पाकर अपने राज्य में उसका चृव प्रचार किया। रावण के वकयन्त्र में अर्कविधि और उसका किया हुआ ऊर्ध्वपातन, तिर्यक्पातन, दोलायन्त्र, गर्सयन्त्र विधि, नाना प्रकार के शराव बनाना, रसायनशास्त्र के अत्यन्त गौरव की वस्तु है। रावण नामाङ्कित अर्कप्रकाश, रमदर्पण, नाडीविज्ञान, नाडीप्रकाश, नाडीतन्त्र, रसहदयचक इत्यादि यंथों में रावण के आयुर्वेदगाम्य में विगेपकर रासायनिक ओपिवयों के निर्माण से विरोप कृतिस्व का परिचय मिलना है। यान्त्रीं में लिखा है कि गुकाचार्य सहाराज ने रावण के लिये 'सृतसक्षीवनी' को प्रस्तुत किया था। आधुनिक समय में विभिन्न प्रकार के सृतसंजीवनी सुरा के व्यवहार मव श्रेणी के चिकित्सकों में प्रचित हैं। रावण का यतायी हुई मद्य वनाने की प्रणाली विचित्र और अपूर्व रणोत्साहप्रद, वळपुष्टि एवं तुष्टिकारक तथा विशेषरूप से उत्साहवर्द्धक है। रावण-प्रद्शित प्रणाली के अनुसार मच वनाने से भारत के वाजारों में विदंशी शराव की आसदनी वन्द हो जा सकती है। कि च अन्यान्य प्रकार के रोगों की चिकित्सा में भी रावण के छिखे हुए अर्कप्रकाश के नियसा-नुसार यदि अर्क वना कर चिकित्सा की जाय तो रारीव भारतवासी हो मियो पेथी से भी कम दाम में औपध पा सकते हैं। रादण का वनाया हुआ अर्कप्रकाश दुष्प्राप्य नहीं है। परन्तु शायद ही कोई वैच अर्कप्रकाग के सत से चिकित्सा किया करते हैं। केवल मात्र मृतसंजीवनी सुरा नाम की असम्यक् रूप से वनायी हुई ओपघ स्तिका, सन्निपातव्वर, विस्चिका, रक्तहीनता, रक्तस्राव, रक्तस्य, उदरासय, दुर्वलता इत्यादि रोगों में आजकल के वैद्य लोग व्यवहार किया करते हैं। वाजारों में मिलने वाली मृतसंजीवनी सुरा में केवल ४० फीसदी सुरासार भाग रहता है । अतः इस तरह की सृतसजीवनी अनेक *चीत*लें न्यवहार करके भी रोगी को विशंष लाभ नहीं होता है। रसायन में लिखी इस एक ओपघ को लकेश्वर रावण के वताये हुये नियनों से वना कर वेचने से खाद्यहीनता से विभिन्न प्रकार के दुःसाध्य रोगों से आक्रान्त भारतवासी रोगों से छुटकारा पा सकते हैं। कलिकाल में हीनवीर्य, जीणदेह तथा दुर्वल मित्ति वाले लोगों के लिये शास्त्रों में विणित सुरा के अधिक प्रचार की भावश्यकता है। त्रिटिश राजत्वकाल में रसायनशास्त्र के अनुसार वनायी हुई मुरा विकने से आइरिश, स्काच तथा फेब्ब की मशहूर शरावों का अधिक प्रचार

वंद हो जाता और सरकारी ख़जाने का दुरुपयोग न होता अतः राजनीतिक कारण इसके प्रतिवन्ध के रूप में आ खड़ा हुआ। परन्तु वर्तमान स्वतन्त्र भारत में आयुर्विज्ञान के अनुमोदित आसव, अरिष्ट, ख़ुरा, अर्क तथा मोदकनिर्माण के ऊपर विदिश के लगाये हुये विधिनिषेधों को उठा देना ही उचित होगा।

#### रसायनशास्त्र का कमविकास

अर्कप्रकाश के चताये हुचे ऊपर के विवरण से यह ज्ञात होता है कि रसायनशास्त्र तथा पदार्थविज्ञान दोनों शास्त्रों मे विचन्नण रावण को, वनौषधि सम्भूत भेपज द्रव्यों की आणविक शक्ति का विचित्र प्रभाव सवसे पहले ज्ञात हुआ था। ऋग्वेद पदने से हमको मालूम होता है कि ऋषि लोग बहुन पहले भेपजवृत्त के मूल को रोग निवारण; देहपुष्टि तथा ग्रहदोष निवारण करने के लिये शरीर के विभिन्न अगों में धारण करते थे। जैसे किसी को अश्मरी होने से उसके दाहिने हाथ में कुशमूल तथा वरुणवृत्त का मूल बांध दिया जाता था। उसके कुछ दिन वाद देखा गया कि ऋषि लोग शुकारमरी रोग से पीड़ित रोगी को कुशम्ल तथा वरुणमूल मिला कर उसका कषाय पीने के लिये प्रयोग कराते थे। इससे रोगी की अश्मरी गल कर वाहर निकल जाती थी। उसके भी कुछ दिन वाद उपर्युक्त ओपधियों को पानी से उवाल कर, उसका काथ रोगी के सेवन के लिये प्रयुक्त होने लगा और उससे अपेचाकृत कम समय में अश्मरी गळने लगी। इसलिये देखा जाता है कि ऋषि लोग शीतकषाय निर्माण रूप रसायनशास्त्र के प्रथम सोपान से काथ निर्माण रूप द्वितीय सोपान में उत्तीर्ण हुये हैं। कुछ दिन पश्चात् यह भी देखा गया कि कुशमूल की रसिक्रया (Concentrated form of the liquid extract of the decoction of the kusagrass ) सव प्रकार के मूत्रकृच्छू, सूत्राघात, अश्मरी तथा वृक्क्शोथ में व्यवहार किया जा रहा है और सर्वप्रकार के मार्गावरोध में आधुनिक काल में भी इसका बहुधा प्रयोग हुआ करता है। पुलस्य पौत्र रावण ने अश्मरी रोगाधिकार में कुश तथा वरुण की अर्क प्रयोगविधि को लिपिवड करके आधुनिक युग के आविर्भाव के हजारों वर्ष पहले से रसायनशास्त्र की अग्रगति कुशमूल के शीतकषाय से अनेक अंशों से वृद्धि पाकर वर्त्तमान समय के रासायनिकों का विस्मयोत्पादन किया है। त्रेतायुग के भेषजद्रव्य के स्वरस से, शीतकषाय और काथ से, अवलेह और आसव तथा अहिष्ट से अर्क में आये हुए रसायन विज्ञान की शेष परिणति है। इस तरह धातु, उपधातु, रस-उपरस, रत्न-उपरत्न इत्यादि का मनुष्य के विभिन्न

अङ्ग प्रत्यङ्ग में वाद्य व्यवहार से आरम्भ करके श्रीर के भीतर के रोगों में उनकी प्रयोगिविधि इत्यादि, प्रत्यचर्झन क्रमिक प्रयोग और अभिज्ञना के फल ने ही उत्पन्न हुआ है। पहले लौह आयुप्रदाता, वल्वीर्यकर्ता, धारक, पृष्टिकारक माना जाना था और ग्रहदोष निवारक धात के रूप से मनुष्य के विभिन्न अर्जों में धारण करने के काम आता था उसके वाद कालक्ष्म से लोहे की पिष्ट या चूर्ण या 'अयम्कृति' को आभ्यन्तरिक आमयिक प्रयोग की व्यवस्था हुई। उसके वाद लोहे की धानपृदिन, सहस्तपृदित, आणविक सूचम प्रयोगिविधि गवेषणाकारी ऋषि की युद्धि के पास पकड़ी गयी और उसके फलस्वरूप सेवन के वाद कोष्ट्यद्धता अनुत्पादनकारी सोने से भी अधिक गुणशाली लाहभरम की उत्पत्ति हुई। इस तरह अनुमधान तथा गवेषणा के फलस्वरूप रसायन विज्ञान की क्रमोन्नति हुई थी।

त्रेतायुरा में अयोध्यापति रामचन्द्र जी ने चौदह साल के लिये बन जाते हुए, अयोध्या से निकलकर दक्षिण-भारत के विभिन्न स्थानों में अमण करते समय विभिन्न ऋपियों के साथ मिलकर आयुविद्या ग्रहण की। दण्डकारण्य में रहते समय ऋषि लोग भगवान रामचन्द्र जी के अच्छे न्यवहार पर सन्तुष्ट होकर उनको 'दण्डकनाथ' कहते थे। दण्डकारण्य के शाश्रम मं अवस्थित कलानाथ तथा लच्मीश्वर नाम के दो रमायन-शास्त्र तथा धातुविद्या-विशारद-सिद्ध योगियों से भी रामचन्द्र जी ने रस-शाख का ज्ञान प्राप्त किया था। दान्तिणात्य में मिछने वाली श्रीरामचन्द्र जी रचित 'रामराजीय' नाम की पुस्तक में हमें धातुविद्या तथा रसायन-शास्त्र के प्रधान तथ्यों का सन्धान मिळता है। 'रामराजीय' पुस्तक से यह पता लगता है कि तत्कालीन दण्डकारण्य में अनेक रसिम्ब योगियों के आवास थे और श्रीरामचन्द्र जी को धातुविद्या तथा धातुवाद ( Alchemy ) या धातुनिर्माणविद्या में प्रचुर ज्ञान था और उन्होंने कळानाथ तथा छच्मीश्वर के पास यथाक्रम से धातुवाद और रसशास्त्र विषयों का ज्ञान प्राप्त किया था। 'रामराजीय' पुस्तक में यह लिखा है कि श्रीरामचन्द्र जी ने 'निजकृतसुवर्ण-रचितपत्नीविग्रहः' अर्थात स्वयं सोना वनाकर उससे अपनी पत्नी का विग्रह वनाया। वाल्मीकिरामायण में भी इस मत का समर्थन पाया जाता है। आयुर्वेदीय तथ्यों के श्रेष्ठ सग्रहकार महामित भावमिश्र के भावप्रकाश तथा रतससुचय में 'रामराजीय' पुस्तक का उल्लेख अनेक स्थानों सं पाया जाता है।

सलो-नुस्तो योगा-द्र- क्रमोऽयं लौहमारणे । कथ्यते रामराजेन कौत्हलिधयाऽधुना ॥१ (भावमिश्र ) श्रीरामचन्द्र जी ने 'रसेन्द्रचिन्तामिण' नामक एक रसग्रंथ का निर्माण किया था। किन्तु श्रीप्रफुल्लचन्द्र राय ने अपने रसायनशास्त्र के इतिहास में हुण्डुकनाथ नामक एक अर्वाचीन वौद्ध मिज्जक को 'रसेन्द्रचिन्तामिण' ग्रन्थ का निर्माता माना है। परन्तु उन्होंने यह स्वीकार किया है कि 'रसेन्द्रचिन्तामिण' की दो तरह की हस्तिलिखित पाण्डुलिपियों हैं। उनमें एक में वक्तव्य विषय केवल गद्यात्मक और दूसरे में गद्य-पद्य उभयात्मक है। जो ग्रन्थ पद्य में है वह अपेत्ताकृत प्राचीन है और सूल संस्कृत में रामायण की तरह लिखा हुआ है। इसमें ग्रन्थकारने हिन्दू देव-देवियों को अनेक वार प्रणाम किया है। उसे देख कर यह प्रतीति नहीं होती कि वे वौद्ध थे। 'रसजलिनिधि' के निर्माता स्वनाम-धन्य भूदेवसुखोपाध्याय ने, प्रफुल्लचन्द्र राय की 'हिन्दू सभ्यता का पुरावृत्त' नामक पुस्तक में हुण्डुकनाथ शब्द को दण्डकनाथ शब्द का ही अपभ्रंश माना है।

श्री रामचन्द्र जी ने दृण्डकारण्य तथा दिल्ण-भारत के निवासी योगियों से रसिवद्या की शिक्षा पाई इसिलये वर्त्तमान काल के बहुत से पण्डितों की धारणा है कि रसिविकित्सा दिल्ण भारत की ही वस्तु है और दिल्ण भारत से ही वह भारत के अन्यान्य स्थानों में फंली है। परन्तु यह धारणा ठीक नहीं है। दिल्ण भारत में भी विभिन्न सम्प्रदाय के चिकित्सक लोग विभिन्न रूप से चिकित्सा करते हैं। वहाँ इस समय भी कुछ ऐसे चिकित्सक हैं जो केवल पंचकमों से ही सब रोगों की चिकित्सा करते हैं।

सत्ययुग के प्रधान चिकित्सक महर्षि भरद्वाज, पुनर्वसु और उनके छः शिष्य तथा धन्वन्ति थे। त्रेतायुग के प्रधान चिकित्सक उत्तर भारत में वृद्ध चरक, दक्षिण भारत में सुषेण तथा छक्केश, मध्य भारत में ऋष्यश्रंग, अदित, चन्द्रसेन, मत्त, माण्डच्य आदि रासायनिक विद्वान् द्वापर युगमें भी वर्त्तमान थे। चन्द्रसेन दिल्ली के प्रसिद्ध छोहस्तम्भ बनाने वाले चन्द्रवंशी थे। आपने ही सबसे पहले मकरध्वज बनाया। आप ही प्रसिद्ध रसग्रंथ 'रसचन्द्रोदय' के लेखक है। आपके नामांकित रसचन्द्रोदय तथा चन्द्रोदयमकरध्वज रसचिकित्सा की प्रसिद्ध औषधे हैं। द्वापर युग में नकुल, सहदेव तथा भीमसेन चिकित्सा शास्त्र के भी विशेष ज्ञाता माने जाते थे। त्रेता तथा द्वापर दोनों युगों में मय नामक दानव एक रासायनिक विशेषज्ञ तथा स्थपतिविद्या-विशारद था।

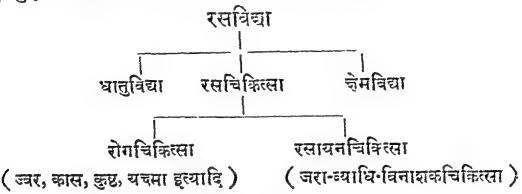
उसके वाद किल्युग के प्रारम्भ में चरकसंहिता का परिपूरक दृढवल का परिचय मिलता है। इस युग के सिद्ध रसतांत्रिकों में निम्न लिखित मनीपी प्रसिद्ध हैं— (१) मत्त, (२) माण्डव्य, (३) भास्कर, (४) स्रसेन, (५) रह्नकोप, (६) शस्सू, (७) सास्विक, (८) गोसुख, (९) नरवाहन, (१०) इन्द्रद (१९) कास्वली, (१२) व्याडि।

कियुग के अन्तर्गत बौद्धयुग के सिद्ध रसतांत्रिकों में निम्न लिखिन सिद्ध

लोग प्रधान थे—

(१) नागार्जुन, (२) सुरानन्द, (३) नागत्रोधि, (४) यशोधन, (५) नित्यनाथ, (६) गोविन्द, (७) अनन्तदेव, (८) वाग्भट आदि।

बौद्ध्युग रसशास्त्र का स्वर्ण युग कहा जाता है। इस युग में रसिवधा परिपूर्ण हुई और उसके निम्न लिखित विभागों की सृष्टि हुई थी।



रसिवधा-त्रिथा प्रोक्ता थातुवार्टाचिकित्सितम्। दुर्लमा क्षेनिवद्या च सर्वविद्यासु ना वराः॥ चिकित्सा द्वितया झेया व्यार्थाना जरसस्तया। जराव्याधिविनाचिनी चिकित्ना विरसायनम्॥

रसचिकित्सकों के मत से चिकित्सा तीन प्रकार की थी-

 देवी-रसचिकित्सा, २. आसुरी-गस्त्र चिकित्सा और ३.[मानुपी-वनस्पतिचिकित्सा।

र्कालग विजय के वाद भगवान् बुड के प्रभाव से प्रभावान्वित होकर चण्डाशोक ने धर्माशोक से परिणत होकर सारे भारत में फैले हुए अपने राज्य में रक्तपात मना कर दिया। इसके फलस्वरूप रसतांत्रिकों को शलयचिकित्सा छोड़कर केवल रसीपधि को सहायता से सब तरह के रोगियों को निरासय करना सम्भव करने के लिये रसीपधि के विषय में, विशेषकर पारा, गन्धक, हिगुल, हरिताल तथा मनःशिला इत्यादि रस-उपरसों का वहुल प्रयोग करके रसचिकित्सा में युगान्तर लाना पड़ा था।

प्रसंगवश अकारादि क्रम से उन ग्रंथकारों के नाम तथा उनके ग्रंथों के नाम संजित रूप में नीचे दिये जाते हैं:—

## रस यन्थों की तालिका

**मं**यकार रस्यंग रसदीपिका आनन्द् अनुभव कंकाली रसकंकाली रसगजमहोद्धि कपाली काशीराम रसकल्पलता -योगर=।कर केशबदेव र् मिद्ध तंत्र गंगाधर रससार संग्रह गुरुदत्त (सिङ्) रसरलावली गोविन्ड रसगोविन्द गोविन्दाचार्य रसहृदय गोपालदास योगासृत गोरच गोरचासंहिता चक्रपाणि रसरलाकर चन्द्रराज कदि रसरलावली रसचन्द्रोदय चन्द्रसेन चर्पटिसिद्धान्त चर्पटि रससंकेतकलिका चामुण्ड जयदेव रसामृत जारिल तंत्रराज रसद्रपंण त्रिमलभट्ट ् दिव्यरसेन्द्रसार { दत्तात्रेयतंत्र दत्तात्रेय देवाचार्य रसरलाकर दिव्यरसेन्द्रसार धनपति रसानन्द कौतुक नरवाहन नागाजुनीय नागार्जुन निःयनाथ रसरलमाला रसचन्द्रिका नीलास्वर रसराज शिरोमणि परशुराम कौतुकचिन्तामणि प्रतापरुद्रदेव

ग्रयकार भोजदेव भोजराज भैरव महारि माधव माण्डव यशोधर योगसिद्ध रसांकुश रसेन्द्रतिलक

रसग्ध
रसराज सृगांक
रसराजमार्तण्ड
रसेन्द्रभैरव
रसकौतुक
आयुर्वेदरसशास्त्र
रसमारिधि
रसप्रकाशसुधाकर
योगमाला
महारसांकुश
योगी रस सार
तालिका

रसेन्द्र राजकृष्ण सह राजराजि रामसेन रामेश्वर अट्ट वरहिच वन्दी मिश्र वासुदेव वैद्यराज वजराज शुक्ल शंकर जी शिवनंदन गोस्वामी शूरसेन सिद्धकालिनाथ सिद्धभास्कर सूर्याकवि हरहरि

हरिहर

नवरत्नधातुविवाह

बलभद्र

रसेन्द्रभाण्डार रसेन्द्रकल्पद्रुम रसरसप्रदीप रससारासृत रसराजलदमी योगासन योगसुधानिधि रससर्वेश्वर रसकषायवैद्यक रसराजसुधानिधि रसराजशकर रसविद्यारल रसेन्द्रस्ररप्र० रसदीप रसेन्द्रभास्कर रसभेषज्यावली रसयोगसुक्तावली रसाधिकार रसविश्वदर्पण

# नागाजुन

वौद्ध युग के श्रेष्ठ रसतांत्रिक नागार्जुन के वारे में इतनी कहानियाँ वौद्ध ग्रंथाविलयों में लिखी गयी हैं कि इस छोटी सी भूमिका में उनका उल्लेख असंभव है। नागार्जुन के असंख्य शिष्यों ने सारे भारत के अलावा लंका तथा प्रशान्त महासागर के विस्तृत होपों में तथा विश्व के अन्यान्य स्थानों में भी रसायन-शास्त्र का प्रभाव विस्तृत किया था। इन रसाचार्थों से ग्रीस, रोम, फारस, अरब, ईरान, अफगानिस्तान, मिश्र, चीन, ब्रह्मा आदि देश के लोग रसायन-शास्त्र के विवरण से पूर्ण अवगत हुए थे।

वौद्ध्युग में नये-नये रसग्रन्थों के अतिरिक्त वर्तमान चरक, सुश्रुत और संहितादि के नये संस्करण लिखे गये और नाड़ी-विज्ञान की विशेष चर्चा की गई तथा इस विपय में भी अनेक नये ग्रंथ लिखे गये। नालन्दा, तक्तिला सारनाथ, विक्रमिशला आदि स्थानों में विश्वविद्यालय स्थापित हुए। बौद्ध-धर्म ससार के पाँचवें भाग में फैला हुआ था और बौद्ध-ज्ञान-विज्ञान के जयगान से सारा जगत् सुखरित हो उठा था।

इसके वाद फिर एक ऐसा युग प्रारम्भ हुआ जिसमें बौद्धधर्मावलम्बी लोग भगवान् तथागत के निर्वाण के वाद उनके उपदेशों को भूलकर केवल उनके शरीर के पुजारी होकर अनेक धाराओं से विसक्त होकर खिन्न-भिन्न हो गये।

इसी समय रसेश्वर दर्शन में विशेषरूप से उच्धप्रतिष्ठ ब्राह्मण लोग पाराअस्म, हिरतालभस्म, सिड मकरध्वज तथा स्वर्णभस्म की सहायता से बौड रोगियों के दुरारोग्य रोगों को दूर कर और उसके साथ काली जी की आराधना का प्रचार तथा बौड जनसाधारण के अन्दर अद्वैतवाद तथा द्वैतवाद का प्रचार करने लगे। ये सब योगी ब्राह्मण लोग रससिद्ध थे अर्थात् पारा के अठारह संस्कार, हिरतालभस्म, स्वर्णकरण, रसेन्द्रवेधन, स्वर्णनर्मणाविधि, लोहा, अश्रक, सोना, चाँदी, ताम्बा, गाँगा, जस्ता, पीतल, कांसा आदि धातु—उपधातु समूह की आणविक प्रयोगविधि विशेषरूप से जानते थे। उस समय के सिद्ध लोग सोना बनाने का ढंग, पारा का धातु भोजन और धातु भोजन करके भी पारद का वजन न बढना, सोना, चाँदी, लाहा, रांगा, जस्ता, पीतल, कांसा, माचिक विमल तथा चपलादि का हंस की तरह पानी में तेराना, अग्न संयोग के विना ही धातुओं का भस्मीकरण इत्यादि चामरकारिक प्रयोग भी जानते थे।

थोहे दिन पहले काशी हिन्द्-विश्वविद्यालय के वैद्यरत प्रताप सिह और सेठ युगलिकशोर विद्ला के तत्वावधान में एक सिद्ध योगी श्री पं॰ कृष्णपाल जी वैद्य की स्वर्ण निर्माण विधि काशी के वहुत से लोगों ने देखी है। रसेन्द्र वेधज स्वर्ण निर्माण विधि रासायनिक लोगों का एक अपूर्व आविष्कार है। परन्तु शिष्य के भाव से और गोपनीयता के लिए यह बिद्या विल्लप्त सी हो गयी है।

रसिख सम्प्रदाय और आत्रेय सम्प्रदाय में विवाद का हेतु

रसिस सम्प्रदाय की वनाई हुई सिद्ध योगावली का शीघ्र फल मिलना काय सम्प्रदायवादी वैद्यों को सर्मवीड़ादायक हुआ था। रसवैद्यों ने खबसे पहले पीछे वताये हुए आत्रय सम्प्रदायवादी वैद्यों के विरुद्ध घोषणा की।

> 'न रोगाणां न दोषाणा न दृष्याणां परीक्षणम्। न देशस्य न कालस्य कार्य रसचिकित्सिते॥'

अर्थात् रसिखों के सत से चिकित्सक को रोगी का देश, काल, पात्र, दोप, दूज्य आदि किसी का विचार नहीं करना पड़ता है सिद्ध लोग वस्तुओं के अन्तर्निहित सूच्य शक्तिप्रभाव के ऊपर इतने विश्वासशील थे कि आत्रेयसम्प्रदाय से परित्यक्त तथा कथित असाध्य रोगों को रस वस्तुओं का बहुत थोड़ा भरम देकर आरोग्य करके आश्चर्यान्वित कर देते थे। असाध्य रोगों पर रसीपिध की प्रशस्ता करते हुए व्यवस्था की गई है—'अमाध्येष्विप दातव्य रसोऽनिश्रेष्ठ उच्यते' इसलिए रसीपिध वनीपिध से अधिक फलप्रद है।

## रसौपधि की विशेपता

- (१) रसीपधि थोड़ी मात्रा में प्रयोग करने पर भी शीख्र फलपद होती है।
- (२) इसके सेवन से यन्दाधि की सम्भावना नहीं होतीं।
- (३) यह थोड़ी सी जगह में अधिक परिमाण में रखी जा सकती है।
- ( ४ ) इसके अपचय की सम्भावना बहुत कम रहती है।
- (५) यह जितनी पुरानी होती है उतनी ही कार्यकारी होती है।
- (६) एक वार वनाने से वहुत दिनों तक फिर वनाना नहीं पड़ता।
- (७) यह एक स्थान से दूसरे स्थान पर आसानी से लाई जा सकती है।
- (८) यह झुमूर्षुओं को प्राण देने वाली है।
- (९) इसके सेवन सें अनुपान का विशेष झंझट नहीं होता।

## रसचिकित्सा का प्रभाव

सिद्ध लोग अपने चिकित्सा के प्रभाव और मूर्तिपूजा की सहायता से भारतीय वौद्धों को फिर से हिन्दूधर्म में दीचित करने को समर्थ हुए। बौद्ध युग में प्रायः सभी हिन्दू बौद्ध धर्म को ग्रहण करने पर बाध्य हुए थे। यद्यपि दोनों धर्म की आदर्श गत विभिन्नता अकिचित् कर है, क्योंकि सनातनी भी दशावतार से बुद्ध का एक अवतार सानते हैं, फिर भी वौद्ध धर्म का अवनति के युग में हिन्दू तथा वौद्धों के अन्दर विद्वेप की आग धीसी-धीमी जल रही थी। किसी हिन्दू संन्यासी अथवा योगी को बौद्ध गाँव में जाने का अधिकार नहीं था। परन्तु हिन्दू ब्राह्मण लोग रसशास्त्र, दर्जन, ज्योतिष में बड़े ही सुपण्डित थे। उनके कधे पर रखे हुए थें हो से अनेक प्रकार की भरमें तैयार रहती थीं। उन्हें आवश्यकतानुसार उसी समय तांत्रिक प्रक्रिया से अस्मादि तैयार करने की शक्ति थी। वौद्धप्रभाव के पतन काल में दर्शन गास्त्र में वे पण्डित लोग वौद्ध गाँवों के शेष प्रान्त में विजत स्थानों में पेड़ों के नीचे वैठ कर धूनी जलाते थे और गाँव के रहने वालों की दृष्टि आकर्षित करते थे। सब देशों ने सब समय साधु संन्यासियों पर सब श्रेणी के लोगों की आन्तरिक श्रद्धा देखी जाती है। इसिछए वोद्ध स्त्रियाँ अपनी मनःकामनाओं की सिद्धि के लिए गाँवों के उन एकान्त से अवस्थित उन हिन्दू ब्राह्मण, सिद्ध, योगियों के पास जाकर अपने स्वामी, पुत्रादि के जटिल रोगों के नाश के लिए द्वा आशीर्वाद तथा विभूति के लिये प्रार्थना करती थीं। साधारणतः श्वास, कास, यदमा, बाधक, प्रदर, वन्ध्यात्व सेद, व्यभिचारी स्वामी को ठीक रास्ते पर लाना इत्यादि कार्य-सिद्धि के लिए वौद्ध स्त्रियाँ उनके पास आती थीं। हिन्दू योगी लोग अपनी धूनी से थोडी सी भस्म उसे उठा कर दे देते थे और कहते थे 'इसे ले जाकर गाय के घृत से मिला कर खिलाना उससे श्वास रोग अच्छा हो जायगा। अच्छा हो जाने पर तुम काली, दुर्गा, गणेश, महादेव आदि की पूजा के लिए। 🗥 रख देना।

इस तरह रसिस्झ ब्राह्मण योगीगण विभिन्न दलों में विभक्त होकर सारे भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न स्थानों में आकर धूनी का अस्मस्वरूप रसीपिध का अपूर्व फल दिखाकर कृतज्ञ वौद्ध स्त्रियों के स्थानिवशेष में कालीपूजा, शिवपूजा, रंगनाथपूजा, रामसीतापूजा, महादेवपूजा, हनुगान तथा गणेशपूजा, श्रीकृष्णपूजा के उपलच्य में मेला, प्रदर्शनी, कीर्तन इत्यादि का अनुष्ठान करने के लिए भिन्ना और दिज्ञणा मौंगते ये और बौद्ध स्त्रियों अपने अभिभावकों से अनुरोध करके हिन्दू ब्राह्मण योगियों को यौद्धाधिश्त स्थानों में उपर्युक्त देव-देवियों की मूर्ति बनवाने की अनुमित दिलाती थीं। इस प्रकार बोहों के विरोधो होते हुए भी वे हिन्दू और सनातन धर्म को सम्मानित करने तथा उसकी प्रतिरना करने की अथक चेष्टा करते थे। कालीपूजा के माध्यम से अहुतवाद हैतवाद, सतकार्यवाद तथा विवर्तवाद, शिवलिंग के माध्यम से आहुतवाद हैतवाद, परमाणुवाद, राधा कृष्ण की सूर्ति की सहायता से हैताहैतवाद, अचिन्त भेदाभेदवाद इत्यादि को यथार्थ रूप मिला। हिन्दू धर्म के हैताहैतवाद, अचिन्त भेदाभेदवाद इत्यादि को यथार्थ रूप मिला। हिन्दू धर्म के लोगों को दर्शन, ज्ञान-हीन निरचर जनता को और उसके साथ शून्यवाद में आस्था लोगों को दर्शन, ज्ञान-हीन निरचर जनता को और उसके साथ शून्यवाद में आस्था सम्पन्न शिचित वौद्धों को सम्भालकर उनके अन्तःकरण के अन्तःस्थानों में लिप सम्पन्न शिचित वौद्धों को सम्भालकर उनके अन्तःकरण के अन्तःस्थानों में लिप सम्पन्न शिचित वौद्धों को सम्भालकर उनके अन्तःकरण के अन्तःस्थानों में लिप सम्पन्न शिचत वौद्धों को सम्भालकर उनके अन्तःकरण के अन्तःस्थानों में लिप सम्पन्न शिचत वौद्धों को सम्भालकर उनके अन्तःकरण के अन्तःस्थानों में लिप सम्भालकर वौद्ध भारत को फिर से उन लोगों हुए सनातन हिन्दू धर्म को किसी तरह जगाकर बौद्ध भारत को फिर से उन लोगों ने हिन्दू भारत में परिणत कर दिया।

वोद्धयुग के अवसान के बाद भारत में सनातन वैदिकधर्म के पुनरभ्युत्थान के समय आयुर्वेद के इतिहास में एक अन्धकार का युग उपस्थित हुआ।
भ्युत्थान के समय आयुर्वेद के इतिहास में एक अन्धकार का युग उपस्थित हुआ।
इस समय चिकित्सा विषय में और कोई मौलिक या आकर प्रथ नहीं
हस समय चिकित्सा विषय में और कोई टीकाकार का युग कहा जाता है।
लिखा गया था। इस युग को संग्रहकार और टीकाकार का युग कहा जाता है।
इस युग का प्रधान प्रथ लघुत्रयी अर्थात् साधवनिदान, आवप्रकाश तथा शार्क्षधर
इस युग का प्रधान प्रथ लघुत्रयी अर्थात् साधवनिदान, आवप्रकाश तथा शार्क्षधर
सौर प्रसिद्ध टीकाकार हिरचन्द्र, चक्रपाणि, डल्हण, अरुणदत्त और इन्दु हैं। उसके
और प्रसिद्ध टीकाकार हिरचन्द्र, चक्रपाणि, चन्द्र, रिवगुप्त, युन्दक्जण्ड, श्रीकण्ठदेव,
वाद वंगसेन, तीसटाचार्य, वाचस्पित, चन्द्र, रिवगुप्त, युन्दक्जण्ड, श्रीकण्ठदेव,
विजयरचित, शिवदास, गयदास, गगाधर, गवीसेन आदि अनेक सहापंडित
टीकाकार और संग्रहकारों का आर्विभाव मुसलमानी राजत्व के शेष भाग तक
होता रहा।

रस विद्या और उसका काल

प्राचीन भारत तस्विवद् पण्डितों के स्वार्थ बुद्धि प्रणोदित परामर्श के अनुसार प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय में शिचित पण्डितों के मत से अथवंवेदं और कौशिकस्त्र रसायन शास्त्र आदि की गुस्तकें हैं और उनका काल १००० ई० पू० से अधिक कभी नहीं हो सकता। उनके मत से चरक का काल ई० पू० नृतीय शताब्दी, सुश्रुत का ई० पू० चतुर्थ शताब्दी, वाग्मट का ई० पू० नृतीय शताब्दी, दृढवल का ई० पू० प्रथम शताब्दी, नागार्जुन का ई० पू० द्वितीय शताब्दी, दृन्द का नवीं ई० पू० प्रथम शताब्दी, नागार्जुन का ई० पू० द्वितीय शताब्दी, दृन्द का नवीं शताब्दी और चक्रपाणि का ११ वीं शताब्दी है। इनके मत से दो नागार्जुन थे। एक सुश्रुतसंहिता का प्रतिसंस्कर्त्ता नागार्जुन और दूसरा रससिद्ध नागार्जुन। इनका सुश्रुतसंहिता का प्रतिसंस्कर्ता नागार्जुन और दूसरा रससिद्ध नागार्जुन। इनका काल सप्तम शताब्दी माना गया है। गोविन्द भागवत कृत रसहदय का काल एकादश सदी, सोमदेव की लिखी 'रसेन्द्रचूड़ामणि' का काल द्वादश शताब्दी,

शम्भूकृत रसार्णव का काल द्वादश सदी और वाग्मट का रसरत्नसमुचय, यशोधरा का रसप्रकाशसुधाकर, गोविन्दाचार्य का रससार चर्तुदश सदी एवं विष्णुदेव की रसराजलच्मी, नित्यनाथ का रसरताकर, दुण्डुकनाथ का रसेन्द्रसारसंग्रह और देवदत्त का धातुरत्नमाला तथा अर्कप्रकाश का काल सोलहवीं सदी माना गया है।

नन्य रासायनिक के सत से भारतीय वैदिक छोगों को धातु प्रस्तुत प्रक्रिया का ज्ञान था। वे शराव बनाना तथा दूध का Lactic fermentation अर्थात् दूध से दही बनाना जानते थे। Carbonate of Potash यवचार Carbonate of Soda मर्जिचार, सदु-मध्य तीचण भेद में तीन प्रकार का चार आयुर्वेदीय युग में आविच्छत हुआ था। अनेकों प्रकार के रस, उपरस, धातु और उपधातु की मौलिक ओषधि आविच्छत हुई थी। यथा—कज्जली (Black sulphide of merroury) रस कर्ष्र (Calomel) रससिन्द्र (Red sulphide of merroury) पुटित छोहा (Ferric oxide) मारित ताझ (Sulphide of copper) मारित चज्ञद (Oxide of zinc) सारित सीसक (Oxide of lead) हरिताल भस्म (Arsen.te of potash) विद् शंखदाव (Nitro hydrochloric acid) और गन्धक द्वय (Sulphuric acid) आदि अजैव अरळ के अन्दर धान्याम्ळ (Vinegar) बनाना जानते थे।

## शुद्ध आयुर्वेद का स्वरूप

कायिनिकत्सासम्प्रदायवादी चिकित्सक लोगों ने प्राचीन काल से चिकित्सकों को पहले रोगी की विशेष,रूप से परीचा करने का उपदेश दिया है। इस परीचा के विभिन्न उपाय स्ट्रन्स उन्होंने दर्शन रपर्शन और पिरिप्रस की व्यवस्था दी है। चिकित्सक को सबसे पहले रोगी की नाड़ी, नेत्र, दाँत, जीभ, सल, सूत्र और निष्टीवन की परीचा करके रोगनिर्णय काल में रोग का पूर्वरूप, निदान, सस्प्राप्ति आर उपशय के वारे में सिद्धान्त स्थिर करना चाहिए। उसके वाद रोग किस दोप से हुआ है यह निर्णय करते समय दोष का वल, प्रकोष, प्रसर और स्थानसंश्रय के वारे में ठीक सिद्धान्त करके रोग साध्य या असाध्य है इसका निर्णय करे। फिर यदि वह साध्य हो तो रोग के स्वाधिकार युक्त दोप के अनुसार चिकित्सा करे। चिकित्सा करते समय दोप के स्वरूप पर विशेष ध्यान दे यदि दोष आमावस्था में हो तो कायचिकित्सकों के मत से दवा देना उचित नहीं है। वयोंकि आमावस्था में ओपिय प्रयोग करने से वह रोग वढ़ने का कारण होता है। इसिलए किसी रोगी को ज्वर होने से चिकित्सक अधिकतर चेन्नों में सप्ताह भर लंबन की व्यवस्था देते हैं। सप्ताह भर लंबन देने से रोगी की आमावस्था उपशय होने पर रोगी के लिए

शोधन चिकित्सा की व्यवस्था करे । विशुद्धायुर्वेद से लोग शोधन का अर्थ वमन, विरेचन, स्नेहन, निरूह, अनुवासनबस्ति, नस्य आदि कमों को समझते हैं । चेत्र के आधे भी इन कमों से रोगी का शरीर शुद्ध करके उसके लिए संशमन चिकित्सा-विधि के अनुसार कपाय, काथ, अवलेह, चूर्ण, गुटिका, आसव, अरिष्ट, घृत और तेल द्वारा मोदकों की व्यवस्था करनी चाहिए। इन विधियों के अनुसार रोगी को बल मिलने पर आयुर्वेदीय स्वस्थवृत्त के विधान के अनुसार स्वास्थ्य रचा के नियमों को मानने का निर्देश दिया जाता था जिससे प्राणी बहुत दिनों तक निरामय रहते थे अतः देशवासियों को बद्धमूल धारणा हो गई थी कि कविराजी चिकित्सा से रोग एक वार अच्छा होने पर फिर प्रादुर्भूत नहीं होता। शुद्धायुर्वेद-चिकित्सा-पद्धति के वारे में निश्चलिखित नियमों को लोग अच्छी तरह मानते हैं:—

(१) जो औषध एक रोग को आरोग्य करने के लिए दूसरे रोग की सृष्टि करती है वह आयुर्वेद के मत से औषधपदवाच्य नहीं है।

(२) रोगोत्पादक दोष का मूलोच्छेद न होने से पेड़ की तरह उसका पुनस्द्रव सुनिश्चित है।

(३) रोगनाश होने के लिए रोगी की पादचतुष्टय स्थिति—रोगी, चिकित्सक, ओषधि और परिचारक होना जरूरी है।

( ४ ) युक्तिवहिर्भूत ओषधि और अपथ्य सर्वथा परित्याज्य है।

(५) रोग का प्रधान कारण प्रज्ञापराध (विवेकविरुद्ध), परिणाम-काल-शक्तिविरुद्ध इन्द्रियार्थ-संयोग है।

(६) रोग साधारणतः दो तरह का होता है—शारीरिक और मानसिक। शारीरिक रोग वायु, पित्त, कफ और रक्त के विकार से उत्पन्न होता है। मानसिक रोग सत्त्व, रज और तमोगुण के विकार से उत्पन्न होता है।

(७) ओषधि-प्रयोग—दैव-व्यपाश्रय और युक्ति व्यपाश्रय के द्वारा शारीरिक रोग तथा विज्ञान, धैर्य, स्मृति और समाधि के द्वारामानसिक रोगआरोग्य होता है।

(८) उत्कट पाप के फलस्वरूप उत्कट असाध्य रोग की उत्पत्ति होती है और भोग तथा प्रायश्चित्त के द्वारा उसका विनाश होता है।

(९) शुद्धायुर्वेदभोगी भेषज-निर्माण-विज्ञान, भेषज-द्रव्य-परिचय और वस्तुओं के रस, गुण, वीर्य, विपाक और प्रभाव-भेद से उनके विशेप विज्ञान के ऊपर निर्मर रहता है।

( १० ) शुद्धायुर्वेदसेवी छोग शरीर-रचना-विज्ञान, शरीर-क्रिया-विज्ञान, शरीर-विकृतिविज्ञान, शस्त्रप्रचार के समय पूर्वकर्म, प्रधान कर्म और पश्चात्-कर्म-विषयक

३ र० चि० भू०

विज्ञान और शरीर के अन्दर के शिरा, धमनी, स्नायु, मर्म इत्यादि यंत्रों के विशिष्ट परिचय से पूर्ण मात्रा में अवगत होते हैं और आवश्यक होने पर स्वस्थ कर्म करने में द्विधा नहीं करते हैं।

(११) रोगपरीम्ना के लिए वे विशेष रूप से नाड़ीविज्ञान की सहायता लेते हैं और रक्त, सूत्र, आँख, मल इत्यादि की परीम्ना किया करते हैं।

( १२ ) शुद्धायुर्वेदसेवी लोग रोग वीजाणु के अस्तित्व के वारे में विश्वासशील हैं परन्तु वीजाणु ही रोग का सर्ववादीसम्मत एकमात्र कारण है यह विश्वास नहीं करते । शुद्धायुर्वेदसेवियों को बीजाणु तस्व से चेत्रतस्व में अधिक विश्वास है ।

अमिताचार जिनत उर्वर चेन्न में ही रोग का वीज अंकुरित होता है। स्वस्थ शरीर युक्त उत्तर चेन्न में रोग का बीज अंकुरित नहीं होता है। प्रत्येक रोग शरीर के अन्दर स्थित कियाविशेष की विकृति चाहते हैं। इससे विकृत शरीर में मार्गावरोध होकर विभिन्न प्रकार के कृमि और बीजाणु पैदा होते हैं परन्तु वे ही सब चेन्नों में प्रत्यच रूप से एक मान्न रोग नहीं हो सकते। क्योंकि बहुधा यह देखा जाता है कि अनेक जगहों में रोग रहता है किन्तु बीजाणु नहीं रहते अतः शुद्धायुर्वेद-सेवी छोग रोगनिर्णय करते समय बीजाणु की खोज में छिप्त नहीं रहते हैं।

(१३) शुद्धायुर्वेदसेवियों का औषधिनर्वाचन-विज्ञान सुचिन्तित परिभाषा-विज्ञान पर प्रतिष्ठित है। इसकी परिभाषा पूर्ण रूप से वैज्ञानिक है। आधुनिक रासायनिक विज्ञान के जन्म के हजारों वर्ष पहले भारतीय चिकित्सकों ने रसायन शास्त्र के आदि सम्मिश्रण-शीत कषाय, काथ, आसव, अरिष्ट, चूर्ण, अवलेह, प्राश्च, मोदक, पिष्टि, कज्जली, भस्म, सत्व, ज्ञार, द्रावक इत्यादि अनेक प्रकार के विपयों में जानकारी की।

(१४) शुद्धायुर्वेद के मत से शल्यविद्याविहीन चिकित्सक को आयुर्वेद-च्यवसाय करने का अधिकार नहीं है। राजा के प्रमाद से ही वे ऐसे काम करने के अधिकारी होते हैं और सर्वथा राजा के द्वारा मृत्युदण्ड पाने के पात्र होते हैं।

(१५) शुद्धायुर्वेदसेवी कभी भी अज्ञात गुण औषध (जिस औषध के उपादान, कारण और गुण के बारे में उन्हें प्रत्यच ज्ञान न हो) का व्यवहार करने के पच में मत नहीं देते हैं।

(१६) उनके मत से यदि रोगी ऐसे ही नहीं मर सकता है तो उसे साँप का जहर या ताम्बे का काथ पीकर मर जाना चाहिये किन्तु मूर्ख वैद्य की अज्ञात-गुण, अन्तःसार-ग्रून्य, वाह्य रूप से मधुर पर परिणाम में विषवद् ओषि का कभी भी व्यवहार न करना चाहिये।

- (१७) शुद्धायुर्वेदसेवी क्पमण्डूकता दोष-वर्जित हैं। एक शास्त्र की उपलब्धि के लिए वे दूसरे शास्त्रों के सिद्धान्तों के सामने पराङ्मुख नहीं हैं।
- (१८) शुद्धायुर्वेदसेवी ज्ञानार्जन के विभिन्न स्थानों में विभिन्न ज्ञानी व्यक्तियों के द्वारा प्रकाशित उदाहरणों में तभी आस्था रखते हैं जब वे दूसरे की आविष्कृत वस्तुओं को आयुर्वेद के त्रिसूत्र के तुलादण्ड में परीचा कर लेते हैं। यदि आयुर्वेद के मानदण्ड में वह प्राह्म विवेचित हो तब विश्वद्ध आयुर्वेदिक अधिष्यों (चोपचीनी, रेहवन्दचीनी, अफीम, तम्बाकू आदि) के ग्रहण करने में कोई आपित्त नहीं करते।
- (१९) शुद्धायुर्वेदसेवियों के मस्तक सर्वदा उन्नत हैं क्योंकि उनका चिकित्सा-ज्ञान चक्रपाणि और डल्हण की टोका से समन्वित सम्पूर्ण चरक-सुश्चत-संहिता के पाठ के ऊपर प्रतिष्ठित है इसलिए उनकी चिकित्सा स्वयं सम्पूर्ण है।
- (२०) शुद्धायुर्वेद्सेवी के मत से सारे पृथ्वी के छोग बुद्धिमान व्यक्ति के ही उपासक हैं, बुद्धिरहित के नहीं।
- (२१) शुद्धायुर्वेदसेवी आज जिसे प्रमाणित कहकर स्वीकार करते, उसे कल निरर्थक कहकर अस्वीकार नहीं करते हैं। वे पाश्चास्य चिकित्सक और ओषधि-विकेता वणिकों के बहुधा विचित्र विज्ञापनों के अनेक आडम्बर से प्रचारित और मनुष्य-देह में अपरीचित एवं चूहा, खरगोश के शरीर में परीचित ओषधियों का विश्वातमा के विचित्र अधिष्ठान मानव-शरीर में प्रयोग करने के चिर-विरोधी हैं।
- (२२) एळोपैथिक ओषियों को एकाएक आयुर्वेदीय ओषियों के साथ मिळाकर प्रयोग करने में शुद्धायुर्वेदसेवी को घोर आपित है क्योंकि उपर्युक्त मिश्रण का प्रयोगफळ आयुर्वेद के मत से परीत्तित नहीं है।
- (२३) शुद्धायुर्वेद सेवी 'सुश्रुत शरीरः श्रेष्टः' इस नीति में विश्वासशील हैं। 'सुश्रुते शरीरो नष्टम्' अर्थात् भारतवासी की शिक्षा के लिए यूरोपीय शल्य तंत्र अवश्य ही पाठ्य है यह विश्वास नहीं करते हैं। शुद्धायुर्वेद के छात्रों के लिए उत्हण, हाराणचन्द्र और ज्योतिश्चन्द्र सरस्वती के टीकायुक्त सुश्चत संहिता पाठ ही परम उपादेय और पर्याप्त हैं। स्वल्पमेघायुक्त और विशिष्ट आयुर्वेदीय छात्र यदि श्रिद्धोष विज्ञान भच्चण के वाद ये और हेली बार्टन समझने की कोशिश करें तो अवश्य ही उनको बदहन्मी की बीमारी हो जायगी। शुद्धायुर्वेदसेवी छुशायबुद्धि महामहोपाध्याय विजयरत्न सेन का कहा हुआ है 'कृशतापि हिता देहे स्थूलता न तु शोथतः' अर्थात् रोगंशून्य दुबला-पतला होना अच्छा है केकिन शोथयुक्त होकर बड़े शरीर वाला होना वान्छनीय नहीं है। इस नीतिवाक्य में मैं विश्वासशील हूँ।

(२४) शुद्धायुर्वेदसेवी अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए सनातन आयुर्वेद शास्त्र के दोषों को प्रकाशित करने में सहमत नहीं हैं।

(२५) पिछले सी वर्षों की उपेत्ता से शुद्धायुर्वेद के ऊपर जो मिथ्या का स्तम्भ स्थापित हुआ है, शुद्धायुर्वेदसेवी उसको शीघ्र उखाड़ने का दावा रखते हैं।

(२६) शुद्धायुर्वेद के सर्वश्रेष्ठ पुजारी आयुर्वेद-महामहोपाध्याय चक्रपाणिदत्त ने पारा, गन्धक, लोहा, ताम्र, अभ्रक भादि रसौषधियों को पूर्ण मात्रा में प्रयोग करके शुद्धायुर्वेद के गौरव को पूर्ण रूप से बढ़ाया है। रस चिकित्सा शुद्धायुर्वेद का सबसे बढ़ा और सबसे आवश्यक अंग है।

# आयुर्वेद के ऊपर राजकीय कोपानल

विधाता के विचित्र विधान से महाराज धर्मशोक के समय से आयुर्वेद के ऊपर राजकीय कोपानल पड़ा है। धर्मशोक की आज्ञा से भारतीय आतुरालयों से शल्यतंत्र विभागों को उठा दिया गया था। क्योंकि धर्मशोक ने अपने राज्य में सर्व प्रकार के रक्तपात, यहाँ तक कि आरोग्य भी लाभार्थ-रोगी के शरीर पर अस्त्रोपचार यन्द कर दिया था। तत्पश्चात् हिन्दू राजत्व के अवसान के बाद ७०० वर्ष तक सुसलमानों के राजत्वकाल में तो आयुर्वेद मातृका को किसी प्रकार राजकीय आनुकृत्य नहीं मिला। केवल अपने अन्तर्निहित सत्य और शक्ति के जोर से आयुर्वेद जीवित रहा।

अंगरेजी शासनकाल में पाश्चात्य भारत-तत्विवदों ने भारत में पाश्चात्य चिकित्सा को स्थापित करने के लिए सर विलियम जौन्स आदि प्रमुख व्यक्तियों को नियुक्त किया जिन्होंने कहना शुरू किया कि भारतीय चिकित्सा-शास्त्र की कोई मौलिकता नहीं है। यहाँ तक कि कुछ दिन पहले वंगीय शिचा विभाग के भूतपूर्व डाइरेक्टर एच० ई० स्टेपल्टन ने अपने लिखे पुस्तक 'पारस और इरान के रसायन शास्त्र' में भारतीय रसायन शास्त्र को पारस से अधमर्ण कहा है। परन्तु आश्चर्य की वात यह है कि सर प्रफुछ चन्द्र के पहली वार इङ्गलैड जाने से पहले तक यूरोपियों को यह भी ज्ञात न था कि पारा और गन्धक एक साथ मिलकर कजाली में परिणत होते हैं। उस समय तक गन्धक और हरिताल के बारे में व्यवहार-पद्धित ज्ञात न थी।

### रसचिकित्सा

अय तक रसचिकित्सा के सुदीर्घ इतिहास की आलोचना करके हमने देखा कि इन्द्र के राजत्व काल में रसचिकित्सा पूर्णाङ्ग रूप से विद्यमान थी। सत्ययुग के शेष भाग में महर्षि भरद्वाज ने उसको मर्त्यलोक में लाकर आर्यावर्त में उसका अधिक मचार किया । त्रेतायुग में रामचन्द्र, भैरव और रावण के द्वारा द्त्रिण भारत में इस शास्त्र का अधिक प्रचार हुआ। तत्पश्चात् द्वापर युग्में महर्षि पतञ्जलि, मत्त, माण्डव्य, व्याङ्, भीमसेन, नकुल, सहदेव, मयदानव, शिश्रपाल, जरासन्ध आदि राजाओं के द्वारा पश्चिम भारत में इसका प्रचार हुआ। इसके बाद किछुग में भगवान् बुद्ध के प्रादुर्भाव के समय इस शास्त्र का अधिक प्रचार हुआ। बौद्धधर्म की अवनति के वाद सनातन हिन्दू धर्म के फिर से प्रतिष्ठित होने पर वैद्य समाज में इस शास्त्र का अधिकतर प्रचार हुआ। इसके वाद हिन्दू राजत्व के अवसान होने यर मुसलमान राजत्वकाल में इसकी अधिक अवनति देखी गयी। मुसलमान राजत्व के शेष होने पर अंग्रेजी शासन काल में इस शास्त्र के लुसप्राय ग्रंथों को फिर से प्रकाशित करने की चेष्टा होने लगी। बम्बई के स्वर्गीय आचार्य यादवजी त्रिविक्रमजी ने इस विषय में हाथ बढ़ाया । उन्होंने छुप्तशाय १७ रस चिकित्सा ग्रंथों को संशोधन करके छपवाया और वे सारे भारतवासियों के श्रद्धाभाजन हो गये। इस विपय में वंबई के प्रसिद्ध रस चिकित्सक तथा 'रसयोगसागर' नामक ग्रंथ निर्माता वैद्य श्री हरिप्रपन्न शास्त्रीजी का नाम भी विशेष उन्नेखनीय है। गाण्डल की प्रसिद्ध रसशाला औषधाश्रम के प्रतिष्ठाता और मेरे वड़े भाई के समान स्नेहशील, सौराष्ट्र गौरव, वैद्य कुळपति राजवैद्य श्री जीवराम काळिदास शास्त्री रसाचार्य का नाम भी विशेष रूप से उन्नेख योग्य है। रस ग्रंथों के संग्रहकारों मे आप अन्यतम हैं। आपने अनेक अप्रकाशित रस प्रन्थों को प्रकाशित करके भारतवासियों की कृतज्ञता प्राप्त की है। पंजाब के प्रसिद्ध वैद्य श्री हरिशरणानन्द शास्त्री ने 'कूपीपक रस निर्माण विज्ञानं और 'भस्म विज्ञान' नामक अत्यन्त उपादेय रस यंथों को छिखकर रस चिकित्सा के बहुछ प्रचार में सहायता की है।

रसिकत्साकाश के दूसरे उज्जवल नक्त्र, काशी के प्रवासी राजस्थानगौरव भिष्डमणि वैद्यरत कविराज प्रताप सिंहजी का 'प्रताप भारतीय' रसशास्त्र का
महत्वपूर्ण मौलिक प्रनथ है। चिकित्सा जगत के दूसरे प्रसिद्ध लेखक ८० साल से
अधिक वयोवृद्ध नागपुर निवासी आयुर्वेद-खृहस्पति श्री गोवर्धन शर्मा छांगाणीजी
का नाम अधिकाधिक उल्लेख योग्य है। छांगाणीजी का और उनके योग्य शिष्य।
वैद्यराज गुलराज शर्मा की मिलित चेष्टा से प्रकाशित माधव के किसे सटीक और
सानुवाद रस ग्रंथ 'आयुर्वेद प्रकाश' के प्रकाश ने सब पापों को नाश करने वाले
सूर्य प्रकाश की भाँति आयुर्वेद जगत के अंधकार को दूर करने में सहायता की है
इस प्रकार अच्छे कामों के लिये गुरु और शिष्य दोनों सारे आयुर्वेद जगत के विशेष

हप से धन्यवादाई हैं। रस चिकित्सा जगत की एक और युगान्तरकारी पुस्तक रसजलिधि है। वेद्य कुलपित रसाचार्य किवराज भूदेव मुखोपाध्याय एम० ए० सांख्य, वेदानतिर्थि विरचित अंग्रेजी और संस्कृत भाषा में लिखित यह रसग्रन्य वेजोड़ है। डा० वामन गणेश देसाई का लिखा भारतीय रसशास्त्र', श्री कृष्णानन्द स्वामीका रस तंत्रसार', श्री सोमदेव शास्त्री का 'आयुर्वेद प्रकाश', वाणेश्वर भट्टाचार्य का 'रसरलप्रदीप', श्री रामप्रसाद का 'रसेन्द्र पुराण', अन्विकादत्त शास्त्री का 'रसरलसमुच्चय' और 'रसेन्द्रसारसंग्रह', श्यामसुन्दराचार्य का 'रसायनसार' तथा निरंजन गुप्त का 'पारदसंहिता' ये वर्तमान समय के उत्कृष्ट रस ग्रन्थ हैं।

काशीपुरी के लब्धप्रतिष्ठ प्रकाशक श्रेष्ठिवर्य वावू श्री जयकृष्ण दास जी गुप्त महोद्यने अपनी प्रकाशनसंस्था चौख्या संस्कृत प्रन्यमाला से आयुर्वेद के अनेका नेक प्रचीन तथा अविचीन प्रामाणिक प्रंथरत्न प्रकाशित करके आयुर्वेद जगत का जो परमोपकार किया है उनके इस यशस्त्री पुण्य कार्य को भी भुलाया नहीं जा सकता। उनके द्वारा प्रकाशित रसग्रंथों में रसायनखण्ड, रसाध्याय, रसार्णव, रसरत्तसमुच्चय, रसेन्द्रसारसंग्रह, रसादिपरिज्ञान आदि ग्रंथों का नाम विशेष उन्लेखनीय है।

# मित्र आयुर्वेद की उत्पत्ति

मुस्लिम राजत्व के अन्त तक विद्वान् लोग त्रिधारा में अर्थात् आत्रेयसम्प्रदाय, धन्वन्तरिसम्प्रदाय एवं रसिसद्धमप्रदाय में विभक्त होकर शुद्धायुर्वेद-मानृका की पवित्रता को किसी प्रकार जीवित रख चुके थे किन्तु अंग्रेजी शासनकाल में आयुर्वेद के आकाश में धूमकेनु की माँति आकर लार्ड मेकाले ने तत्कालीन इन्दोलॉ-जिस्ट या भारततत्वविशारदों के परामर्श से संस्कृत कालेजों में आयुर्वेद का पठन-पाठन एकदम वन्द कराकर १८३५ ई० में सर्वत्र मेडिकल कॉलेजों को प्रतिष्ठित कर दिया। लार्ड मेकाले के इस कुठारावात से भारत में आयुर्वेद का नाममात्र हो रह गया था। परन्तु उस समय भी विद्वान् लोगों ने साहस और धैर्य नहीं खोया। उन्होंने गुरुपरम्परा से गुरु के घर में ही आयुर्वेद के पठन-पाठन का उपक्रम चला कर भारतीय सनातन धारा को फिर से प्रवर्तित कर दिया। इसके फलस्क्य आयुर्वेद की सुखी सरिता में फिर से वाद आ गई और इस वाद में आत्रेय सम्प्रदाय के शेप ऋषि गंगाधर के तुख्य गंगाधर आविर्मृत होकर सारे भारतवर्ष में विश्वदायुर्वेद की पुनः प्रतिष्ठा करने लगे। उनके प्रसिद्ध शिष्य और प्रतिप्य, यथा महामहोपाध्याय द्वारकानाथ हाराणचन्द्र चक्रवर्ती, गंगाप्रसाद

विजय रत, राजेन्द्रनाय, परेशनाथ, उमाचरण विश्वनाथ, श्यामादास, कैलाश, पञ्चानन इत्यादि धुरन्धर वैद्य लोग उदीयमान एलोपैथिक चिकित्सकों के प्रतिद्वनद्वी रूप में भारत के विभिन्न स्थानों में आयुर्वेदीय चिकित्साशास्त्र का प्रचार और प्रसार करने लगे। इसी समय आयुर्वेद जगत में पुनः एक भयानक दुर्योग उपस्थित हो गया। वंगीय वैद्यों ने एछोपैथिक मेडिकल कॉलेज के अनुकरण में आयुर्वेद को आधुनिक करने के अभिप्राय से एछोपैथिक और आयुर्वेदीय पाट्यतालिका में ६५ प्रतिशत एलोपैथी और ३५ प्रतिशत आयुर्वेदीय विषय निविष्ट करके आयुर्वेदीय मेडिकल कालेज स्थापित कर दिया। नवीनता के लिए शुरू में तो इन कालेजों में बहुत से विद्यार्थी भर्ली अवश्य हुए। परन्तु २५ वर्ष बीतने पर यह देखा गया कि इसमें से एक भी द्वारिकानाथ, श्यामदास या विजयरत नहीं निकले वरन् जो निकले वे आयुर्वेदशास्त्र की शिचा के लिए जाकर आयुर्वेद कालेज में पढ़ने लगे और एलोपैथिक चिकित्सा में अधिकतर विश्वासी होकर न घर के रहे न घाट के और निराश वापस आकर चिकित्सा चेत्र में आयुर्वेदीय ओषधियों पर सम्पूर्ण रूप से निर्भर नहीं रह सके। कार्य चेत्र में विना समझे-वूझे अधिकांश चेत्रों में अधिकतर एलोपैथिक ओपधियों की ही सहायता लेने लगे। जहाँ कि धैर्यपूर्वक आयुर्वेदीय ओषधि प्रयोग करने पर अपुनर्भव रूप से आरोग्य लाभ कर सकते थे, उन चेत्रों में शीघ्र आरोग्य लाभ के लिए एलोपैथिक ओषधि के साथ आयुर्वेदीय अरेषधि का प्रयोग करके दोनों शास्त्रों में कहे हुए फललाभ से विचत रहने लगे। अब पुनः उनमें योग्य आयुर्वेद्ज्ञोंका निर्माण होने लगा है यह सन्तोष की बात है।

# आयुर्वेदिक चिकित्सा की वर्तमान अवस्था

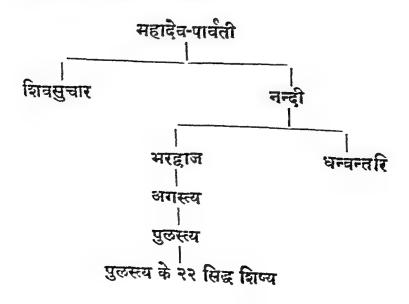
पहले बताया जा चुका है कि आयुर्वेदीय चिकित्सा विज्ञान के तीन सम्प्रदायों में विशेष सन्नाव नहीं था। विशेषकर आत्रेय सम्प्रदाय के साथ रसिस सम्प्रदाय का मनमुटाव था। इसीलिये आत्रेय सम्प्रदायमुक्त वैद्यों ने रसौषिधयों का अपने कायचिकित्सा प्रन्थों में उन्नेख नहीं किया है। परन्तु रसिचिकित्सकों ने अपने प्रन्थों में आत्रेय पुनर्व मु की कही हुई प्रत्यक्त फलप्रद योगाविलयों को सिन्निविष्ट किया था। वैद्य युग के बाद जो रसग्रंथ लिखे गये उनमें मिश्रित रसौषिध की संख्या अधिक देखी जाती है। रसराज महोदिध, रसरजाकर, रसेन्द्रचिन्तामणि, रसरतसमुच्चय, रसेन्द्रसारसंग्रह इत्यादि ग्रंथों में आत्रेयसम्प्रदाय के कहे हुए बहुत सी मुष्टियोग ओषिधयाँ लिखी हुई हैं। आपस की गुणग्राहिता के फल से ही बौद्ध-

युग के वाद हिन्दू धर्म फिर से प्रतिष्ठित हुआ। महामहोपाध्याय चक्रपाणिदत्त ने अजीर्ण, अस्लिपत्त, प्रहणी इत्यादि रोगों की चिकित्सा में रसपर्पटी, ताम्रप्रयोग, अभ्रप्रयोग, ज्ञुधावटी और लोहे को प्रयोगिविधियों को अपनी चक्रदत्तसंहिता में निवद्ध कर दोनों सम्प्रदायों में जो विवाद वहुत दिनों से चला आ रहा था उसका अन्त कर दिया।

चक्रपाणिदत्त के पश्चात वंगाल में रसवैद्यों के विरुद्ध एक दल खड़ा हुआ था, परन्तु बड़े ही आनन्द का विषय है कि वर्तमान समय में इस विवाद का चिह्न मात्र अब नहीं है। एक दूसरे के विरुद्ध कुछ आन्त धारणाओं से ही इस विवाद की छिष्ट हुई थी और इसीलिये सोलहवीं सदी में महात्मा गोपालकृष्ण भट्टाचार्य के रसेन्द्रसारसंग्रह के बाद से बीसवीं सदी के शुरू तक और किसी ग्रंथकार ने रसग्रंथ की रचना नहीं की। बीसवीं सदी के शुरू में फिर से भरद्वाजवंशोद्धव रसाचार्य भूदेव मुखोपाध्याय ने 'रसजलिधि' नामक महाग्रंथ प्रकाशित करके वंगालमें रसविद्या का खूब प्रचार किया और वर्तमान समय में उनके शिष्योपिश्य लोग मारत के विभिन्न स्थानों में कर रहे हैं।

# दक्षिण भारत में रसविद्या

अगस्य मुनि ने महर्षि भरद्वाज से आयुर्वेद की शिन्ता-पाकर दिन्ण भारत में सुख्यतः रसिवद्या का ही सजन किया था। फलतः अभी भी दिन्ण भारत के वैद्य अपने सम्प्रदाय के नाम से रसिवद्या का खूव प्रचार करते हैं। दिन्ण भारत में आयुर्विद्या की निम्नाङ्कित जनश्रुति प्रचलित है:—



## सिंहल में आयुर्वेद

उपर्युक्त २२ तिद्धों में मन्थान भैरव एक हैं। इनका छिखा 'आनन्दकन्द' इस सम्प्रदाय का प्रधान रसग्रन्थ है। मन्थानभैरव छंकेश्वर रावण के राजवैद्य थे। रमिसदों ने हिन्दूधर्म के विस्तार के छिए समस्त भारत और भारत के बाहर भो परिश्रमण किया था। पाछी भाषा में छिखा हुआ 'भैपज्यमंजूषा' नामक ग्रन्थ सिंहळ का आयुर्वेद ग्रन्थ है।

#### केरल में आयुर्वेद

अष्टवेद्य सम्प्रदाय से प्रचारित और इन्दु टीका संविलत वाग्मेह प्रणीत 'अष्टांगहृदय' अत्यन्त जनिषय ग्रन्थ है। नाकृद्दी या नाग्नृद्दी ग्राह्मण सम्प्रदाय इस संस्थान के प्रभावशाला वैद्य भदन्त नागार्जन प्रणीत 'रसवैशेषिक,सूत्र' केरल का उत्तम ग्रंथ है। नीलमेघ वैद्यप्रणीत 'तंत्रयुक्तिविचार' एक उत्कृष्ट केरलीय वैद्यग्रंथ है। निताद में रसोपनिषद नामका एक उत्कृष्ट रसग्रन्थ हाल ही में प्रकाशित हुआ है। महाकिव कालिदास प्रणीत वैद्यमनोरमा को केरलीय वैद्यग्रन्थ स्वीकार किया जाता है। वैद्ययादवजी त्रिविकमजी आचार्यने इसका एक सुन्दर प्रकाशन कियाहै। इसके अतिरिक्त 'धाराकल्प', 'हरिमेखला', 'महेन्द्रयोग', 'आरोग्यकल्पद्दुम', 'सर्वरोग-चिकित्सा', 'चिकित्सानुकृल' इत्यादि ग्रन्थ केरलीय वैद्यों को अत्यन्त प्रिय हैं।

#### कर्नाटक में आयुर्वेद

जैनाचार्य का छिखा पूज्यपादीय, संगळराज जैन का छिखा खगेन्द्रदर्शन, अभिनवचिन्द्रका तथा अश्ववैद्य, देवेन्द्र का छिखा वामग्रहचिकित्सा, वीरभद्र का छिखा हस्त्यायुर्वेद, वाग्भट का छिखा अष्टांगसंग्रह, अष्टांग हृद्य तथा चिन्तामणि नामक ग्रंथ कर्णाटकीय वैद्यों के प्रधान उपजीव्य हैं। उक्त ग्रंथ कन्नड़ भाषा में छिखित हैं।

#### आन्ध्र प्रदेश में आयुर्वेद

वल्लमेत्र प्रणीत चिन्तामणि, वसवप्रणीत वसवराजीय, मंगलगिरि प्रणीत रसप्रदीप तथा शिवरत्नाकर, श्रीनाथ पंडित प्रणीत पराशरसंहिता, भट्टमल्ल प्रणीत बृहद्योग-तरंगिणी, श्रीकंठ पंडित प्रणीत योगरत्नावली, श्रीकंठनिदान तथा भेषजसर्वस्व और इसके अतिरिक्त सन्निपातचन्द्रिका, योगशतक, धन्वन्तरिसारनिधि, राजमृगांक, अश्नोत्तरनवरत्नमाला, गद्यसञ्जीवनी, उमामहेश्वरसंवाद, नाड़ीज्ञाननिर्णय, षड्-विधनाड़ीतंत्र, नाड़ीनचत्रमालिका, अभिधानरत्नमाला, आयुर्वेदमहौषधि, पदार्थ- चित्रका इत्यादि ग्रंथ भी भारतीय आयुर्वेद विज्ञान के वृद्धि करूप में दिलाण भारत की देन हैं। दिलाण भारत में आयुर्वेद के प्रचार और शिक्षा के विस्तार के लिए डा॰ गोपालचन्द्र, डा॰ लच्मीपति, नटराज शास्त्री, श्रीनिवास शास्त्री, वाई पार्थ-नारायण आदि वैद्यों की चेष्टा चिरस्मरणीय है।

#### उपसंहार

इस पुस्तक की पाण्डुलिपि बनाने में अयोध्या प्रसाद शर्मा, श्री देवकुमार चक्रवर्ती, श्री सरोवर ठाकुर तथा श्री महादेव राय इत्यादि व्यक्तियों ने यथेष्ट पिरश्रम किया है तदर्थ में उनको आन्तरिक आशीर्वाद देता हूँ। काशी के सुप्रसिद्ध असंख्य ग्रंथों के प्रकाशक, संस्कृत विद्या के प्रसार तथा प्रचार के लिए भगीरथ-प्रयत्नशील, सद्धर्मनिष्ठ चौलम्बा संस्कृत सीरिज तथा चौलम्बा विद्याभवन के स्वत्वाधिकारी श्रेष्टिवर्य वावू श्री जयकृष्णदास जी गुप्त महोदय ने इस पुस्तक को प्रकाशित कर मुझे चिरकृतज्ञता पाश में आबद्ध कर लिया है। मैं उन्हें अतःकरण से धन्यवाद देता हैं।

उदार पाठकों से नम्न निवेदन है कि पुस्तक में भाषा आदि की जो अशुद्धियाँ रह गई हों उसके छिए चमा कर मुझे अनुगृहीत करेंगे।

> 'गच्छतः स्वलनं कापि भवत्येव प्रमादतः। हसन्ति दुर्जनास्तत्र समाद्धति सज्जनाः॥

> > पूर्वाचार्यों तथा पण्डितों का सेवक श्री प्रभाकर चट्टोपाध्याय

# विषय सूची

# प्रथम खण्ड

यन्थारम्भ प्रयोजन	<b>વ</b> ો
पारद्—पारद भेद, पारद के श्रठारह संस्कार, पारदभस्म के श्र	नुपान, रस
सेवनविधि, रससेवन में पथ्यापथ्य श्रशोधित पारदसेवन से उत्पन्न	विकार के
निवारण का उपाय।	9-99
गन्धक—शोधनविधि, सेवनविधि, तैल बनाने की विधि, पथ्य	।पथ्य तथा
गन्धक का गन्ध दूर करना।	99-98
रसचिकित्सा—पारद के धातुप्रासन की सहज प्रक्रिया, पारदश	ोधन श्रौर
प्रयोग की विशेषविधि।	98-98
रसबन्ध-पारदभस्म विधि, पारदभस्म सेवन के साधारण नियम।	98-98
मकरध्वज बनाने की विधि—	99-27
अभ्रक-शोधन, मारण, श्रनुपान तथा श्रभ्रकसेवन की	साधारण
विधि ।	27-26
सोनामाखी (माक्षिक ) और रूपामाखी—शोधन-मारण-स	त्वपातन-
प्रयोगविधि तथा त्रानुपानादि ।	२८-३०
विम ल-शोधन-भस्मीकरण-सत्त्वपातन तथा सेवनविधि।	₹0-₹9;
शिलाजीत—शिलाजीत के भेद, भावना विधि, सेवनविधि तथ	॥ श्रौषर
नामक शिलाजीत के लक्षण ।	३१–३४
तुत्थ ( तूतिया )—शोधनविधि, सत्वपातनविधि, मयूरपुच्छ से त	ाम्र <sup>.</sup> तैयार
करने की विधि, शूलनाशक श्रंगूठी, तुत्थकसत्त्व की भस्मविधि, श्रशु	द्ध तुत्थकः
सेवन से उत्पन्न विकार-निवारण का उपाय।	३४-३५
सस्यक—सस्यक सत्त्व की श्रंगूठी।	३६
चपल	३६–३७
रसक ( खर्पर )	३७-३८

गेरू

३८-३९

कसीस ( हीराक्स )	३९–४∙
तुबरी (सौराष्ट्र मृतिका)	४०
ककुष्ठ	४०-४१
स्फटिक (फिटकिरी)	४१
साधारण रस-कम्पिल, गौरीपाषाण, नौसादर, कौड़ी, श्रिम	।रि, गिरि-
रीसन्दूर, हिंगुलु ।	४१-४४
	४४-४६
भूनाग-भूनाग का सत्त्वपातन, मृद्दारश्चंगक, राजावर्ते।	8 ξ
अञ्चन 	•
हरिताल—शोधनविधि, भस्मीकरण की सहज विधि, भस्मपर्	४६-५०
अयोग, त्रमुपान, पथ्यापथ्य तथा, सत्त्वपातनविधि ।	
मैनशिल—शोधन तथा सत्त्वनिपातन विधि।	X0-X3
शुद्ध तथा मिश्र धातु—	79
स्वर्ण-भेद, गुण, दोष, शोधन, भस्मीकरण तथा श्रनुपानादि ।	x9-x8
रोप्य-भेद, शोधन, भस्मीकरण, गुण, प्रयोग श्रादि ।	५४-५६
ताम्र-भेद, शोधन, भस्मीकरण, श्रमृतीकरण श्रादि ।	४६-४८
लौह—मुण्ड लौह, तीच्ण लौह, कान्त लौह, लौह की	रोधनविधि,
अस्मीकरण-विधि, पारदरहित लौहभस्म के दोष दूर करने का उपाय	, लौहभस्म
को परीक्षा, श्रमृतीकरणविधि, लौहपुट में प्रयोजनीय, इव्य, लै	हिसस्म के
अनुपान, मात्रा, पट्यापथ्य, दोषनिवारण का उपाय ।	५९-६६
लौह-द्रावण विधि	६६
गन्घक-द्रावण विधि	६७
मएडूर (लोहिकेट )—प्रकार-भेद, श्रीषध में व्यवहार करने ये	
-शोधन-मारण, तथा प्रयोगविधि ।	€0 <b>-</b> €८
यशोद (जस्ता)—गुण, भम्मीकरण, प्रयोग, मात्रा तथा अश्	ਾਟ ਦੇਰਜ਼ ਸੈ
टरपन दोपों की शान्ति।	₹८– <b>₹</b> \$
वङ्ग ( टीन )—गुण, शोधन, भस्मीकरण, प्रयोग, त्रानुपानादि ।	£6-100
सीसक (सीसा)—गुण, परीक्षा, शोधन, भस्मीकरण, श्रमृतीकर्	7 <del>- 0  </del>
तया श्रमोधित सेवन से उत्पन्न दोपों की शान्ति।	ण, अनुपान ७२–७३
· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	94-04

पीतल-गुण, शोधन, भस्मीकरण तथा प्रयोगविधि।	७३-७४
कांस्य—गुण, शोधन तथा भस्मीकरणविधि।	५७-४७
वर्तलौह—गुण, शोधन तथा भस्मीकरणविधि।	હ્ય
त्रिलौह—शोधन, भस्मीकरण तथा गुण।	७४-७६

रत्न—माणिक्य, मौक्तिक, गजमुक्ता, सर्पमिण, मीनमुक्ता, वराहमुक्ता, वेणु-मुक्ता, शंखमुक्ता, दादुरमुक्ता, सीपमुक्ता, प्रवाल (मूंगा), तार्च्य, पुष्पराग, वज़ (हीरा), (हीरे का शोधन-भरमीकरणविधि), नीलम (नीलमिण), गोमेद, वैदुर्थ।

रत्न-शुद्धि	८२
रत्नों की भस्म	८२
वैक्रान्त-भस्मीकरण, शोधन, सत्त्वपातन ।	८३
स्फटिक—लक्षण श्रौर गुण।	८३-८४
चन्द्रकान्त और सूर्यकान्त मणि	68.
प्रवाल के सम्बन्ध में विशेष कथन	37
कर्केत	CX
भीशम रत्न	,,
नीलमणि के विशेष गुण	<b>33</b> ~ ,
<b>उपर</b> त्न	32
<b>प्रहर</b> त्न	4

क्षार—क्षारत्रय, क्षारचतुष्टय, पंचक्षार, क्षार के गुण, क्षार तैयार करने की साधारण विधि, जवाखार तैयार करने की विधि तथा गुण, श्रीषरक्षार के गुण, मिश्रक्षार, सज्जीक्षार, सज्जीक्षार के गुण।

टङ्कण (सोहागा)—भेद, गुण, शोधन, क्षार के भेद, क्षारद्वय श्रीर क्षारत्रय के गुण, क्षाराष्टक।

त्तवण—लवण के साधारण गुण, त्राति लवण सेवन के दोष, समुद्री लवण, सैन्धव लवण, विड् लवण, विड् लवण बनाने की विधि, सौर्चल लवण, रोमक लवण, चूलिका लवण, काला लवण, दोणी लवण, श्रोषरलवण। ८९-९१

विष—स्थावर, सक्तुक, मुस्तक, श्रङ्गी, वालुक, सर्पप, वत्सनाभ, कूर्म, न्यवेतश्रङ्ग, कालकूट, मेषश्रङ्गी, हलाहल, दाईर, कर्कट, मूलक, गंथि, हरिद्रा, रक्त श्रङ्गी, प्रदीपन, विष का व्यवहार, विषदोष।

विषविकार की चिकित्सा—प्रशस्त विष के गुण, कन्द विष, विष सेवन के योग्यायोग्य पात्र, विष सेवन के नियम, मात्रा, पथ्यापथ्य तथा प्रयोग।

जंगम विष—जंगम विष की शोधन विधि, जंगम विष सेवन जनित विकार, -सर्पदंशन का प्रतीकार।

उपविष—स्तुही, श्राक, लांगली, गुंजा, करवी (कनेर) कुचिला, धत्रा, ज्यपाल, भिलावा, निर्विषा, श्रातिविषा, श्राप्तीम, भांग, उपविष विकार की शांति।

शोधन योग्य अन्य द्रवय-गुग्गुल, बृद्धदारकवीज १०६-१०७

यन्त्र—दोलायन्त्र, स्वेदनीययन्त्र, पातनायन्त्र, श्रधःपातनयन्त्र, कच्छपयन्त्र, दीपिकायन्त्र, देकीयन्त्र, जारणयन्त्र, विद्याघर श्रीर कोष्ठिका यन्त्र, सोमानलयन्त्र, गर्भयन्त्र, हंसपाकयन्त्र, वालुकायन्त्र, लवणयन्त्र, नालिकायन्त्र, भूधरयन्त्र, पुट-यन्त्र, कोष्ठिका श्रीर खेचरीयन्त्र, तिर्यक्पातनयन्त्र, पालिकायन्त्र घटयन्त्र, इष्टका-यन्त्र, हिङ्जलाकृति विद्याधरयन्त्र, डमरुयन्त्र, नाभियन्त्र, श्रस्तयन्त्र, स्थालीयन्त्र, धृपयन्त्र, कन्दुकयन्त्र, खल्वयन्त्र। १०७-११३

भूपा—वज्रभूषा, वज्रद्रावणिकाभूषा, वरभूषा, गारभूषा, वर्ण या रूप्यभूषा, विद्यभूषा, वृत्तकाभूषिका, गोस्तनीभूषा, मल्लभूषा, पक्कभूषा, गोलभूषा, सहाभूषा, मण्डृकभूपा, सुशलभूषा। ११४-११६

पुट—महापुट, गजपुट, वराहपुट, कुक्कुटपुट, कपोतपुट, गोवरपुट, भाण्डपुट, पालुकापुट, भूधरपुट, लावकपुट।

रसपरिभाषा — रससेवन की मात्रा, रस सेवन के नियम ११८-१२५ रसेन्द्रवेधज स्वर्णप्रस्तुतविधि १२५

विशुद्ध स्वर्ण का वर्ण बढ़ाना २२६ रोप्य प्रस्तुतविधि

रसशाला निर्वाण — रसशाला के उपक्रम। १२६-१२७

आचार्य लक्षण	१२७
राजवैद्य का लक्ष्ण	१२८
मकरध्वज की पाकविधि	938
रससिन्दूर की पाकविधि	"
मकरध्वज-पाकविधि, कजाली विधि	9 <b>३०</b> –9३ <b>9</b>
स्वर्णीदि भस्म	929

#### द्वितीय खण्ड

ज्ञरचिकित्सा—नवज्वर, नवज्वर में वर्जनीय, नवज्वर में पथ्य। वातज्वर चिकित्सा—ज्वरधूमकेतु, ज्वरगजहरिरस। पित्तज्वर चिकित्सा—नवज्वर गजाङ्करा, त्रिपुरारि रस। कफज्वर चिकित्सा—स्वच्छन्दभैरव, पर्पटी—रस। वातपित्तज्वर चिकित्सा—नवज्वरमुरारि, वातपित्तान्तकरस। वातश्लेष्मक ज्वर चिकित्सा—महा-ज्वराङ्करा, कस्तूरी भैरव। पित्तश्लेष्मक ज्वर चिकित्सा—चन्द्रशेखर रस, रस-गिरि रस।

सन्निपातद्वर चिकित्सा—त्रिनेत्र रस, बृहत् कस्तूरी भैरव रस, सन्निपात सूर्य रस, चतुर्भुज रस, महालद्दमी विलास, बृहत्सूचिकाभरण रस। १३६-१३८

विषमज्वर चिकित्सा—त्रिप्ररारि रस, ज्वराशनि लौह, पुटपाक विषम ज्वरान्तक लौह, विषम ज्वरान्तक लौह, बृहत्सर्वज्वर हरलौह, बृहत् विषम ज्वरान्तक रस, महाज्वराङ्कश, श्रीजयमङ्गल रस, ज्वरभैरव। १२८-१४८

रस द्वारा ज्वरिचिकित्सा का विशेष संकेत—वातज्वर में पित्तज्वर में श्लेष्म ज्वर में, वातिपत्त ज्वर में, पित्तरलेष्मक ज्वर में, वातरलेष्मज्वर में, सिचिपातज्वर में, विषमज्वर में, जीर्णज्वर में, क्षयजज्वर में, मेहज्वर में, प्लीहा ख्रीर यकृत संयुक्त ज्वर में, शोथज्वर में। ज्वर में लौहप्रयोग—भानुपाक, स्थाली पाक तथा पुटपाक विधि। एरण्डादिगण, किरातादिगण, श्टङ्गवेरादि गण, गोक्षरादि गण, पटोलादि गण, किशुकादि गण, वाजीकरणार्थ पुटपाक। द्रव्य, रसायनार्थ पुटपाक द्रव्य।

वर्तमान युग में उत्पन्न कुछ ज्वरों की चिकित्सा—प्लेग, सिन्पातिक प्लेगज्वर, श्रान्त्रिक प्लेगज्वर, इन फ्लूयेझा, डेङ्गू ज्वर, न्यूमोनिया। न्यूमोनिया की चिकित्सा-रसतालक, महादित्य रस, भैरव रस, कनक सुन्दर रस। न्यूमोनिया

रोग में कुछ दृष्ट फल व्यवस्थापत्र महादेव रस। टाईफाईट वा ग्रान्त्रिकज्वर की चिकित्सा-गन्धक की कजाली, पर्पटी सेवनविधि, पर्पटी सेवन की मात्रा, पर्पटी निर्माणविधि, रस पर्पटी, विजय पर्पटी, स्वर्ण पर्पटी पन्नामृत पर्पटी, स्वैह, पर्पटी एवं ताम्र पर्पटी बनाने की प्रणाली।

द्वर के उपसर्ग की चिकित्सा—ज्वर में श्रतीसार-महागन्धक वनाने की रीति। ज्वर में उदराध्मान-वज्ररस, बनाने की विधि। ज्वर में श्रूल वैदना-श्रूल-गजेन्द्र, ज्वर में वमन, ज्वर में दाह, चिर सुन्दर रस, ज्वर में पिपासा, ज्वर में सिरदर्द, ज्वर में गात्रवेदना, वात गजकेशरी, ज्वर में श्रक्रचि। ज्वर में श्रास कास श्रोर हिक्का चिकित्सा-श्वास कुठार रस, कास कुठार, श्वास कास चिन्तामणि बनाने की विधि, ज्वर में हिच्की, ज्वर में कोष्ठबद्धता, रसचिकित्सा में विरेचन सम्बन्ध में विशेषविधि-इच्छाभेदी रस वनाने की विधि, इच्छाभेदी गुड़िका वनाने की विधि, सर्वोद्धसुन्दर रस वनाने की विधि, विरेचन के निषद्ध पात्र, ज्वर में मोह श्रीर प्रलापचिकित्सा।

मैलेरिया ज्वर चिकित्सा—चन्दनादि लौह, चिन्तामणि रस, रसशार्दूल, दुर्जलजेता रस, सर्वज्वरामृत रस, श्रनुपानविधि। प्लीहा श्रौर यकृत् चिकित्सा—सर्वतोभद्र रस बनाने की विधि, श्रकंभरम, लोकनाथ रस, यृहत् लोकनाथ रस, मृत्युष्ठय लौह, लौह मृत्युष्ठय, प्लोहार्णव रस, यकृद्रिलौह, श्रङ्गामृत, योगराज रस, हरिताल भरम, रसेन्द्रसार। कालाज्वर चिकित्सा—सान्निपातिक मेलेरिया ज्वर वा पाणिसास मेलेरिया ज्वर। सान्निपातिक मेलेरिया ज्वर की चिकित्सा- स्वच्छन्द नायक, भरव रस। जीर्णज्वरचिकित्सा- त्रेलोक्यचिन्तामणि रस, रसप्रभाकर जीवानन्दाश्र, बृहत् सर्वज्वरहरलौह रसराज, जीर्णज्वर गजकेशरी, जीर्णज्वर कुठार। श्रभिन्यास ज्वर चिकित्सा-बृहत् चडवानल रस, बृहत् स्विका भरण, सिन्निपातानल रस, कुलवधूनस्य। हतौजा ज्वर चिकित्सा-श्रधंशरीर गतज्वर श्राधंनारीश्वर रस, सन्ततज्वर, स्वच्छन्दभरव, श्री मृत्युष्ठय रस, ज्वराहि रस, सर्वज्वरारि उदक मद्यरी। संततक ज्वर चिकित्सा—सर्वज्वरारि, ज्वर-कालकेतु रस। तृतीयकज्वर—त्र्याहिकारि रस। चातुर्थक ज्वर—चातुर्थकारि रस। वात्वलासक ज्वर, प्रलेपक ज्वर, सुवर्ण मालती रस। शीत ज्वर चिकित्सा, शीत ज्वरारि, हताशन रस, भूतभैरव रस। रात्रिज्वरचिकित्सा—चिन्तामणि रस दाह-

ज्यर चिकित्सा-ग्रुलपाणि, रामेश्वर रस । सप्तधातुगत विषमज्वर चिकित्सा-(१) रसधातुगत विषमज्वर चिकित्सा । (२) रक्तधातुगत विषमज्वर चिकित्सा—हिङ्कलेश्वर रस, (३) मांसधातुगत विषमज्वर चिकित्सा, (४) मंदगत विपमज्वर चिकित्सा, (५) श्राह्मिगत विषमज्वर चिकित्सा, (६) मज्जागतविषम ज्वर चिकित्सा, (७) श्रुक्चगत विपमज्वर चिकित्सा। श्रमार्वेग ज्वर चिकित्सा—ज्वराङ्कुश रस, हारिद्रक विषमज्वर वा पीतज्वर, प्रन्थिज्वर महालच्मीविलास रस । श्रीपत्यकज्वर—श्रक्चमहम, दुर्जलजेता रस, त्रिपुरारि रस। एक ज्वर—एक ज्वर चिकित्सा, ज्वराङ्कुश रस, नवज्वरमुरारि, ज्वरान्तक योग, पचनजित ज्वर वा विषाक्त ज्वर। वातज्वर—श्रानन्दभैरव रस, वात विनाशिनी, लच्मीविलास रस, श्लीपदजित ज्वर—वातारि श्रभ्र, वातारि रस। मोहज्वर—स्तसङ्घीवनी विटका, श्रिमकुमार रस। श्राच्चेपजित ज्वर—सिन्नपाता-नल रस, सान्निपातिकज्वर में विष प्रयोग पर विशेषविधि। १६४–१८३

ज्वरातिसार—ज्वरातिसार चिकित्सा-कनक सुन्दर रस, मृतसङ्गीवनी वटिका, गगन सुन्दर रस, प्राग्णेश्वर रस, विशेष द्रष्टव्य।

अतिसार चिकित्सा—वातातिसार चिकित्सा—श्रानन्द भैरव रस । पित्ता-तिसार चिकित्सा-कणाद्य लौह, बृहत् कनक सुन्दर रस । रलेष्मातिसार चिकित्सा-बृहत् गगन सुन्दर रस । श्रामातिसार चिकित्सा-प्राग्णेश्वर रस, जातीफल रस । रक्तातिसार चिकित्सा—कर्पूररस, श्रहिफेनविटका । त्रिदोषज श्रातिसार चिकित्सा— श्रातिसार वारणरस, सर्वोङ्ग सुन्दररस । शोथातिसार । शोकज श्रातिसार चिकित्सा, प्रवाहिका चिकित्सा—प्रवाह कुठार रस ।

श्रहणी चिकित्सा—वातज ग्रहणी चिकित्सा—श्राप्तकुमार रस, ग्रहणी कपाट रस। पित्तज ग्रहणीचिकित्सा-पयूष विद्या रस, ग्रहणी शार्दूल रस। श्लेष्मज श्रहणी चिकित्सा—वज्र कपाट रस, विजया विटका। संग्रह ग्रहणी चिकित्सा—संग्रह ग्रहणी कपाट, घटीयंत्र नामक ग्रहणी चिकित्सा—शम्बुकादि वटी। त्रिदोषक श्रहणी चिकित्सा—ताम्रयोग, दुग्ध वटी, विजयपर्पटी। १८८-१९१

अर्श चिकित्सा—बातोल्वण अर्श चिकित्सा-अर्श कुठार रस। पित्तज अर्श चिकित्सा-तीच्णमुख रस, रलेप्मज अर्श चिकित्सा-पञ्चानन वटी, शिलागन्धक-, षटिका, अर्कयोग् । रक्तज अर्श चिकित्सा-पञ्चान्न रस। रसपपटी, रक्तार्श की

२ र० चि० स०

सर्वश्रेष्ठ श्रोषध । सर्वप्रकार श्रर्शनाशक श्रोषधियां - श्रष्टाङ्ग रस, रसगुिंका, कनक सन्दर् रस ।

भगन्दर चिकित्सा—वातिक शत पोनक संज्ञक भगन्दरचिकित्सा-वारि ताण्डव रस । पैत्तिक उष्ट्रप्रीवसंज्ञक भगन्दरचिकित्सा—भगन्दर कुठार । रलैप्मिक परिस्नावि संज्ञक भगन्दरचिकित्सा—भगन्दरकरिकेशरी । सान्निपातिक शम्वुका-वर्त संज्ञक भगन्दरचिकित्सा—भास्कर योग । शल्यज उन्मार्गी नामक भगन्दर चिकित्सा—व्रणराक्षस तैल ।

अग्निमान्द्यादि रोगाधिकार, आमाजीण चिकित्सा—श्रिप्त कुमार रस, रामवाण रस, क्षुधासागर रस, तन्त्रनाथ गुिंका, श्रिप्त रस। विद्रश्याजीण चिकित्सा—मक्त विपाक वटी, श्रिग्निकर वटी सर्वरोगान्तक वटी। विष्टव्धा जीण चिकित्सा—महाशङ्ख वटी, श्रिजीण कण्टक रस। रस शेष जीण की चिकित्सा, क्रव्याद रस। विस्चिका चिकित्सा—ग्रहच्छङ्खवटी, वीरमद्राश्र विष्वंसनामा रस श्रव्यसक चिकित्सा—वज्रधरस। दण्डालसक चिकित्सा—राजशेखर वटी, विलम्बिका चिकित्सा—वड्नधरस। वण्डालसक चिकित्सा—राजशेखर वटी, विलम्बिका चिकित्सा—वड्नधरस। वण्डालसक चिकित्सा—राजशेखर वटी, विलम्बिका चिकित्सा—वड्नवामुखी वटिका, विशेषद्रष्टव्य।

आभ्यन्तर कफोत्पन्न एवं पुरीषोत्पन्न किसिचिकित्सा—किसिविनाश रस, कीटमर्दरस, किसि मुद्गरस, किसि धूलिजल प्लव रस, किसि काष्टानल रस, विडङ्गलौह-रक्तजात किमिचिकित्सा। १९९-२००

पाण्डुरोग चिकित्सा—वातज पाण्डुरोग चिकित्सा-पाण्डुहारि चूर्ण, हंस-मण्ह्र । नवायस लौह । पित्तज पाण्डुरोग चिकित्सा-निशालौह, दार्व्यादि लौह, पित्तपा-ड्विर गुटिका । श्लेष्मज पाण्डुरोग चिकित्सा-लच्चानक रस, कामेश्वर रस । त्रिदोपज पाण्डुरोग चिकित्सा-प्राणवल्लभ रस, त्रैलोक्य सुन्दर रस । पाण्डुजनित शोथ चिकित्सा-पाण्डुघनपद्धशोषण रस, पुनर्नवा मण्डूर, पञ्चानन वटी, कामला चिकित्सा-त्रियोनि, लौहभस्म । हलीमकचिकित्सा-चन्द्रसूट्योत्मक रस । कुम्भ कामला चिकित्सा-धात्रीलौह, प्रशस्त श्रनुपात ।

उदावर्त और आनाह चिकित्सा—उदावर्त चिकित्सा-बृहद् इच्छाभेदीरस । श्रानाह चिकित्सा-वैद्यनाथ वटिका, नाराच रस, वारिशोषण रस । २०४-२०५

शूलरोग चिकित्सा—वातज शूल चिकित्सा—पञ्चातमक रस, शूलराज लौह । पित्तजराल चिकित्सा—सप्तामृत लौह, त्रिफला लौह, त्रिनेत्र रस, बृहत् त्रिनेत्र रस । श्लेष्मज शूल चिकित्सा-श्राग्नमुख, शङ्कादि चूर्ण । त्रिदोषज शूल चिकित्सा-सर्वाङ्ग-सुन्दर रस, धात्री लौह । परिणाम शूल चिकित्सा—वातिक परिणाम शूल की चिकित्सा-त्रिगुणाख्य रस, शूल गजकेशरी । पैत्तिक परिणाम शूल चिकित्सा-त्रिपुर-भैरव रस, वृहद् विद्याधराभ्र । श्लैष्मिक परिणाम शूल चिकित्सा-शूलान्तक रस । त्रिदोषज परिणाम शूल चिकित्सा-शूल केशरी, उदय भास्कर रस । श्रान्नद्रवशूल-चिकित्सा-शूल गजेन्द्र केशरी, शूल वज्र । श्रामशूल चिकित्सा-ताम्राष्टक, वडवानल रस । पार्श्वशूल चिकित्सा-शूलहरणयोग, शूलनाशिनी । कुक्षिशूल चिकित्सा-क्षार ताम्र । हच्छूल चिकित्सा-मणिकाश्चन योग । वस्तिशूल चिकित्सा-क्षारवटी । मूत्रशूल चिकित्सा-शूलगजेन्द्र शूलचिकित्सा में श्रनुपान । २०६-२१२

गुल्म-चिकित्सा—वातज गुल्म चिकित्सा-गुल्म कालानल रस, महानाराच रस। पित्तज गुल्म चिकित्सा—दीप्तामर रस, गुल्मनाशिनी गुडिका। श्लेष्मज गुल्म चिकित्सा—विद्याधर रस, प्राणवल्लभरस। त्रिदोषज गुल्मचिकित्सा—गुल्मनाशक चूर्ण। गुल्मरोगचिकित्सा का श्रनुपान। रक्तजगुल्मचिकित्सा—रक्तगुल्म कुठार, सर्वेश्वर रस, रक्तोदर कुठार।

शोथ चिकित्सा—बातज शोथिविकित्सा—शोथाङ्करा रस, पित्तज-सर्वशो-थारि, शोथकालानल रस । श्लेप्मज शोथिविकित्सा—पंचामृत रस, त्रिकद्वादि लौह । त्रिदोषज—त्रिनेत्राख्य रस । श्राप्तमान्य श्रौर ग्रहणीजनित शोथ-चिकित्सा—दुम्धवटी, दिधवटी, तक्रवटी, क्षीरवटी, पथ्य, श्रमुपानादि । २१५-२१७

वृद्धि रोगचिकित्सा—वातज वृद्धि चिकित्सा-भक्तोत्तरीय चूर्ण । पित्तज वृद्धि की चिकित्सा—सिन्दूररस । शोथजवृद्धिचिकित्सा—श्रद्यंमामृताभ्र । रक्तज वृद्धिचिकित्सा—रसराजेन्द्र । मेदज वृद्धिचिकित्सा—वृद्धिचाधिका वटिका । मूत्रज वृद्धि-चिकित्सा—सैन्धवादिगुटिका । श्रान्त्रज वृद्धिचिकित्सा—बातारि रस । वृद्धि रोग में श्रानुपान ।

अम्लिपित्त चिकित्सा—वातज श्रम्लिपत्त चिकित्सा-श्रुघावती गुडिका । पित्तज श्रम्लिपत्त चिकित्सा—भास्करामृताभ्र, लीलाविलास । कफज श्रम्लिपत्त चिकित्सा-पद्मानन गुडिका, श्रम्लिपत्तान्तक रस । द्वन्द्वज श्रम्लिपत्त चिकित्सा-वृहत् श्रुघावती वटी, श्रम्लिपत्त रोगचिकित्सा का श्रानुपान । २२०-२२२

प्लीहा श्रौर यकुद् रोग चिकित्सा— वातिक प्लीहा चिकित्सा-वासुकि भूपण रस, पैत्तिक प्लीहा चिकित्सा—चित्रकादि लौह । श्लैप्मिक प्लीहा चिकित्सा— प्लीहा राार्टूल रस । रक्तज प्लीहा चिकित्सा-यकृत् चिकित्सा । प्लीहा श्रोर यकृत् चिकित्सा का श्रनुपान । २२२-२२४

कालरा (हेजा) चिकित्सा—विड्सेदलक्षण कालरा चिकित्सा—कर्पूर रस, श्रमय नृसिंह रस। वसन प्रधान कालरा चिकित्सा-चमनामृत योग, नृपध्वज रस। रक्तमेद श्रीर वमनयुक्त कालरा चिकित्सा—रसेन्द्रयोग। ज्वर युक्त कालरा चिकित्सा—नृहत् चन्द्रोदय मकरच्वज। दस्त श्रीर वसन दोनों प्रकार के उपसर्ग युक्त कालरा चिकित्सा—श्राग्नतुण्डी रस, महोदधि रस। श्राचेप संयुक्त कालरा चिकित्सा—दस्त भेद श्रीर वसन रहित, पक्षाघात कालरा चिकित्सा—तालकेश्वर रस। कालरा रोग में उपसर्ग की चिकित्सा, वसन, हिचकी, श्वास, संज्ञालोप, शीताङ्ग, पिपासा, मूत्ररोध, शूल वेदना, पसीना, नाडीलोप श्रीर खल्ली इन रोगों में श्वेत चूर्ण, वज्रक्षार।

उद्र रोग चिकित्सा—वायु जिनत उद्द रोग चिकित्सा-त्रैलोक्य सुंदर रस, त्रेलोक्य हुम्बुर रस, त्र्रज्ञुपान । पित्त जिनत उद्द रोग की चिकित्सा—इच्छाभेदी रस, उद्दय मार्तण्ड रस, त्र्रज्ञुपान । कफजिनत उद्द रोग चिकित्सा—विकित्सा—उदरान्तक रस, महाविह्नरस । त्रिदोष जिनत उद्द रोग चिकित्सा—नाराच रस, विक्रेश्वर रस, ताम्र प्रयोग । जिलोद्दर चिकित्सा—जिलोद्दर्शि रस, उद्दर्शि रस । प्लीहोद्दर की चिकित्सा—रोहितकाद्य लौह, प्लीहारि रस, पिप्पलाद्यलौह, शङ्कद्रावक, महाशङ्कद्रावक, महादावक रस । मलसञ्चय जिनत उद्द चिकित्सा—इच्छाभेदी रस । क्षतजिनत उद्दर्शेग चिकित्सा ।

पाकाशय के क्षत (गैस्ट्रिक आलसार) चिकित्सा—रसेन्द्र चूर्ण। पित्तशिला (गलस्टोन) चिकित्सा। २२४-२२५

मृत्रकुच्छ चिकित्सा—-वरुणादि लौह। पित्तज मृत्रकुच्छ् में त्रिनेत्र रस। कफ्ज मृत्रकुच्छ् में — मृत्रकुच्छ्रान्तक रस। त्रिदोषज, श्रभिघातज, तथा पुरीषज—वातारिरस, पथरी से उत्पन्न मृत्रकुच्छ्र में—पाषाण भेदी रस। शुक्रज मृत्रकुच्छ्रमें—पाषाण भेदक रस, योगेन्द्र रस। शर्कराज मृत्रकुच्छ्र में—तारकेश्वर रस, रक्तज मृत्रकुच्छ्र में—मृत्रकुच्छ्र हर। श्रजुपानादि।

मृत्राघात चिकित्सा—तारकेश्वर रस, श्रष्ठीला (नाभि के नीचे ग्रन्थि) में त्रिविकम रस, वातवस्ति में-लघुलोकेश्वर रस, मूत्रातीत में-पाषाण भेदी रस, मूत्र जठर में विड्विघात में, वस्तिकुण्डल में, मूत्राघात में, मूत्रीत्सङ्ग में, मूत्रक्षय में, मूत्रप्रिय में, मूत्रशुक्र में, उष्णवात में, मूत्रसाद में, अनुपान। २३८-२४०

अश्मरी चिकित्सा — वातज अश्मरी मे-पापाण वज रस। पित्तज अश्मरी में त्रिविकम रस। कफज अश्मरी में-पाषाणभित्र रस। अश्मरी चिकित्सा का अनुपान। २४०-२४१

प्रमेह चिकित्सा—उदक्षमेह में विडङ्गादि लीह । इक्षुमेह में -बङ्गेश्वर रस । सान्द्रमेह में -मेघनादरस सुरामेह में हरिशंकररस, पिष्टमेह में इन्द्रवटी, शुक्रमेह में -मेहकेशरी । सिकतामेह में -प्रमेहसेतु । शीतमेह में -प्रानन्दमेरवरस । शनमेंह में -प्रानन्दमेरवरस । लालामेह में -प्रहत् हरिशङ्कररस । क्षारमेह में बङ्गावलेह । नीलमेह में -विद्यावागीशरस । मसीमेह में -चन्द्रप्रभावटी । हरिद्रामेह में -चन्द्रकलारस । माजिष्ठ-मेह में - मेहान्तक रस । रक्तमेह में योगीश्वर रस । वसामेह में मेहकुलान्तक रस । मज्जामेह में -मेह कुझर केशरी, क्षीद्रमेह में -वेदिवद्या वटी, वृहत् वड्गेश्वर रस, हस्तिमेह में बङ्गाष्टक । वातिपत्तज प्रमेह में भीमपराक्रम । वातरलेष्मज प्रमेह में - मेहारि, पित्तरलेष्मज प्रमेह में - मेहबद्ध रस । त्रिद्योषज प्रमेह में - उदयभास्कर रस, मेहारि, पित्तरलेष्मज प्रमेह में - मेहबद्ध रस । त्रिद्योषज प्रमेह में - उदयभास्कर रस, मेहमईन रस, रामवाण रस । उमाशम्मु रस, प्रमेह के अनुपान । प्रमेह पिडिका विकित्सा ।

सोमरोग चिकित्सा—तालकेश्चररस, मेहनाथरस, सोमनाथ रस, सोमेश्वर रस, वसन्तकुसुमाकर, चन्द्रकान्तिरस, सोमरोग चिकित्सा के श्रनुपान। २४७-२४८

उपदंशरोग चिकित्सा—दृषित योनिगमनजनित फिरङ्ग रोग चिकित्सा— वातज फिरङ्ग में-रस गुग्गुल। पित्तज फिरङ्ग में-भैरव रस। कफज फिरङ्ग में-रस शेखर रस। त्रिदोषज फिरङ्ग मे-रस कर्प्र, सप्तामृता वटी, धूम प्रयोग। त्रध्न चिकित्सा-लिङ्गार्श चिकित्सा—मनःशिलादि प्रलेप। गनोरिया चिकित्सा— वङ्गरत्न, रसराज रस, स्वर्णवङ्ग बनाने की विधि। बङ्गभस्म। शूकदोप चिकित्सा। २४८-२५१

रक्तिपत्त चिकित्सा—वातप्रधान रक्तिपत्त में श्रकेश्वर, सुधानिधि रस, पित्तप्रधान रक्त पित्त में रक्तिपत्तान्तक छोह, शकराद्य छोह, कफप्रधानरक्तिपत्त में-कपर्दक रस, रसामृत रस, रक्तिपत्ताङ्कश रस, सर्व प्रकार के रक्तिपत्त नाशक-चन्द्रकला रस, रक्तिपत्त चिकित्सा के श्रनुपान।

यदमा चिकित्सा-वायु प्रधान यदमा में राजमृगाङ्करस । शङ्खेरवर रस । मृगाद्ध पोटली रस, पञ्चामृत पोटली रस, पञ्चामृत रस, लोकेरवर रस। पित्त प्रधान यद्मा में वैद्यनाय रस, राजावर्त रस, क्षय केशरी, रजतादि लौह, बृहत् काञ्चनाभ्र रस । कफप्रधान यद्मा में-महामृगाङ्ग रस, कनक सुन्दर रस, श्राप्ति-रस, सर्वोड्ड सुन्दर रस, वज्रपर्वटी, पञ्चामृत पर्पटी। व्यवाय शोप में वसन्त कुसुमाकर । शोकज शोप में-मकरध्वज रस, व्यायाम शोष में-रत्न गर्भ पोटली रस, वृहत् काञ्चनाभ्र, महामृगाङ्क रस, सर्वाङ्ग सुन्दर रस। जराशीप में — कमला विलास रस, अध्वशोष जनित शोप में-मृगांक रस, वणशोष में-वसन्त कुषुमाकर, हरिताल भरम, पारदभरम, उरःक्षत में-रजतादि कौह, शिलजातु श्रादि लौह, राज-मृगाड्ड, काजनाभ्र रस । यद्मारोग में उपसर्ग चिकित्सा-स्वरभङ्ग में च्यम्वकाभ्र, शूलवेदना में शूलराज लौह, त्रिनेत्र रस, स्कन्ध श्रौर पार्श्वद्वय सङ्कीच में मकरध्वज रस, वृहत् काञ्चनाभ्र । व्वर में वज्र पर्पटी, हरिताल भस्म, महामृगाङ्क, राजमृगाङ्क, चसन्तकुसुमाकर, श्रीज्यमङ्गल रस, त्रैलोक्य चिन्तामणि, दिषमञ्चरान्तक लौह, रत्नगर्भ पोष्टली । दाह में-सर्वाङ्गसुन्दर रस, महोद्धि रस, कुमुदेश्वर, ताम्रभस्म, श्रितसार में विजयं पर्पटी, रक्तिनर्गम में शोधित हिड्डल, हरिताल भस्म, रक्त-पित्तान्तंक रस । शिरःपरिपूर्णता में स्वर्ण घटित महालद्दमी विलास, श्रास्वि में— सुलोचनाभ्र, फास मे बृहच्चन्द्रोदय रस, वसन्ततिलक रस। उत्कासिका में वृहद् रसेन्द्र गुडिका, वृहत् श्वज्ञाराभ्र । यद्मा चिकित्सा के श्रनुपान । २ : ३ - २ ५९

कासरोग चिकित्सा—वातज कास में भूताङ्कश रस, पित्तजकास में स्वय-मग्नि रस, कफज कास में बहुत श्रह्वाराश्र, क्षतज कास में रसेन्द्रगुटिका। क्षयज कास में—सार्वभीम रस, लच्मी विलास रस। जराकास में बहुत श्रृह्वराश्र, बहुत् चन्द्राश्रुत, बहुत् रसेन्द्र गुडिका, कमला विलास रस। त्रिदोषज कास में कास संहार भेरव, नित्योदय रस। कास चिकित्सा में श्रवुपान, कासान्तक धूम।

रवास चिकित्सा—महारवास में पिप्पल्याद्य लौह, ऊर्ध्वश्वास में सूर्यावर्त रस, छिन्नश्वास में श्वास कास चिन्तामणि। तमक श्वास में लौह पर्पटी रस, प्रतमक श्वास में ताम्र पर्पटी। क्षद्रश्वास में श्वास कुठार रस। श्वास चिकित्सा के श्रतुपान। हिकारोग चिकित्सा—श्रन्नजा हिका में नीलकएठ रस, यमला हिका में हिका नाशक रस, क्षद्रा हिक्का में शिलाप्लुत रस, गम्भीरा हिक्का में डामेश्वराश्च, महाहिक्का में प्रवाल योग, हिक्का चिकित्सा का श्रमुपान। हिक्का में धूम-पान।

२६४-२६५

स्वरभेद चिकित्सा—वातज स्वरभेद में भैरवरस, पित्तज स्वरभेद में ज्यम्बकाभ्र, कफज स्वरभेद में सूर्य्य रस, साजिपातिक स्वरभेद में नीलकण्ठ रस, क्षय
जनित स्वरभेद में पर्पटी रस, मेहजनित स्वरभेद में ताम्रभस्म, स्वरभङ्ग
चिकित्सा के श्रनुपान । श्ररोचक चिकित्सा—वातज श्ररोचक में सुधानिधि
रस। पित्तज श्ररोचक में सुलोचनाभ्र। श्लेष्मज श्ररोचक में ताम्रभस्म। त्रिदोषज
श्ररोचक में सर्वरोगान्तक वटी। श्रागन्तुज श्ररोचक में रसेन्द्रयोग। श्ररोचक
रोग चिकित्सा का श्रनुपान।

वमनरोग चिकित्सा—वातज वमन में पारद भरम, श्रभाव में मकरध्वज, पित्तज वमन में ताम्रभरम। कफज वमन में पारदभरम श्रभाव में मकरध्वज। त्रिदोषज वमन में रस सिन्दूर, किमिज वमन में ताम्रभरम, वमन चिकित्सा में श्रनुपान।

तृष्णारोग चिकित्सा—वातज तृष्णा मे महोदधि रस, पित्तज तृष्णा मे कुमु-देश्वर रस । कफज तृष्णा में ताम्रभस्म । क्षतज तृष्णा में शोधित हिंडुल । क्षयज तृष्णा में रसिसन्दूर, सर्वतृष्णा हरयोग, तृष्णारोग चिकित्सा में त्रानुपान । २६८-२६९

दाहरोग चिकित्सा—मद्यपानज दाह में ताश्रभस्म । रक्तज दाह में हिरताल भस्म, पित्तज दाह में दाहान्तक रस, रक्त पूर्ण कोष्ठज दाह में ताश्रभस्म, धातुक्षयज दाह में चन्द्रोदय रस, क्षतजदाह में हिरताल भस्म, मम्मीभिघातक दाह में रसिसन्दर, तृष्णानिरोध जनित दाह में दाहान्तक रस। दाह चिकित्सा में श्रनुपान।

हृद्रोग चिकित्सा—वातज हृद्रोग में कल्याण सुन्दर रस, विश्वेश्वर रस, पित्तज हृद्रोग में चिन्तामणि रस, पश्चानन रस, नागार्जुनाभ्र, श्लेष्मज हृद्रोग में प्रभाकर वटी, हृद्यार्णव रस, त्रिदोषज हृद्रोग में शङ्कर वटी। क्रिमिज हृद्रोग में हृद्यार्णवरस, शङ्करवटी, कल्याण सुन्दर, हृद्रोग चिकित्सा में त्रानुपान। २७०-२७१ काश्य चिकित्सा—श्रमृतार्णव रस, पूर्णचन्द्ररस। स्थील्य चिकित्सा—वडवाशि ररा, त्र्यूषणाद्य लौह, वडवानिन लौह, स्थौल्य चिकित्सा में श्रानुपान । २७१-२७२ मृच्छ्रिरोग चिकित्सा—रसिन्दर, ताम्र भस्म, हरिताल भस्म । श्रमरोग चिकित्सा—ताम्रभस्म, शिलाजतु, लब्बानन्द रस । संन्यास चिकित्सा—मृच्छिन्तक रस, मदात्यय चिकित्सा—रसेन्द्रसार । २७२-२७३

उत्साद चिकित्सा—वातिक उन्माद में उन्माद्भन्नन रस । कफन उन्माद में तालभरम । पैत्तिक उन्माद में उन्माद गजकेशरी, त्रिदोपन उन्माद में चतुर्भुन रस, मानस दु खन उन्माद में वृहत् वात चिन्तामणि । विषन उन्माद में नहरित्तालभरम, भूतोन्माद में भूताङ्करा रस । उन्माद चिकित्सा का त्र्रमुपान । अपस्मार चिकित्सा—वातिक त्र्रपरमार में वातकुलान्तक, पैतिक त्र्रपरमार में स्तक-प्रत्यय नामक रस, कफन त्र्रपरमार में इन्द्रबद्धा वटी, त्रिदोषन त्र्रपरमार में पारद्भस्म । त्र्रपरमार चिकित्सा का त्र्रमुपान । २०४-२०५

वातव्याधि चिकित्सा—ग्रानिलारि रस, वात विष्वंसन रस, सर्वेश्वर रस, ग्राकेश्वर रस, स्पर्श वातारि रस, गन्धाश्मगर्भ रस, सर्ववातारि, चिन्तामणि रस, चतुर्मुख रस, लद्मी विलास रस, कुञ्जविनोद रस, तालकेश्वर रस, सर्वोङ्ग सुन्दर रस, त्रेलोक्य चिन्तामणि रस, वात गजाङ्कुश, बृहत् वात गजाङ्कुश, महावात गजाङ्कश, वात व्याधि चिकित्सा का श्रानुपान।

पित्तरोग चिकित्सा—पित्तान्तक रस, महापित्तान्तक रस, गुड्च्यादि लौह, ताम्रभस्म, हरितालभस्म, रौप्यभस्म, पित्त जिनत रोग चिकित्सा का श्रतुपान । कफरोग चिकित्सा—कफकेतु रस, कफ चिन्तामणि रस, महालच्मी विलास रस, महारलेष्म कालानलरस, रसतालक । कफरोग चिकित्सा का श्रतुपान । २७९-२८०

उत्तरनम चिकित्सा—गुजाभद्र रस, हरितालभस्म, रसतालक, उत्तरनम चिकित्सा का श्रमुपान। श्रामवात चिकित्सा—वातज श्रामवात में वातारि रस, पित्तज श्रामवात में श्रामवातारि वटी, कफज श्रामवात में श्रामवातेश्वर, साजि-पातिक श्रामवात में वृकोद्दर विका, प्रभावती गुडिका, श्रामवात चिकित्सा का श्रमुपान। वातरक्त चिकित्सा—वायु प्रधान वातरक्त में पर्पटी रस, पित्तप्रधान वात रक्त में त्रिनेत्र रस, कफ प्रधान वातरक्त में उदय भास्कर रस, रक्त प्रधान वातरक्त में हरितालभस्म। हरितालभस्म सेवनविधि, त्रिदोषज वातरक्त में महा तालेश्वर रस, वातरक्त चिकित्सा के श्रमुपान।

# तृतीय खण्ड

शीतिपत्त उद्दं और कोठ—श्लेष्मिपत्तान्तक रस, गुङ्च्यादिलौह, पित्ता-न्तक रस, बीरेश्वर रस, बृहद्हरिद्राखण्ड, रसादिगुडिका, वातिपत्तान्तक रस, क्रष्ट-कालानल रस।

गलगरड और गरडमाला—वातारिस, त्रिनेत्ररस, वडवाग्निरस, कांच-नार गुग्गुलु, मन्थानभैरवरस। २८४-२८६

अपची चिकित्सा—ताम्रभस्म, कांचनार गुग्गुलु, स्वर्णभस्म, माणिक्यरस्, महामृगाङ्क, राजमृगांक, रत्नगर्भपोटलीरस, प्रवालयोग। २८६-२८७

प्रंथि चिकित्सा—वातारिरस, योगराजगुग्गुलु, श्रमृतभङ्घातक, राजमृगांक, प्रवालयोग, कांचनारगुग्गुलु, माणिक्यरस, राजमृगांकरस, ताम्रभस्म, स्वर्णभस्म, महालच्मीविलास, बृहत् सिंहनाद गुग्गुलु। २८७-३८९

अर्बुद्द चिकित्सा—हरितालभरम, ताम्रभरम, स्वर्ण श्रौर सुक्ताभरम, प्रवालयोग, पारदभरम, विजयपर्पटी, स्वर्णपर्पटी, वातारिरस, राजमृगांकरस, हिरण्यगर्भपोडलीरस, रौद्ररस, ताम्रभरम, वाडवाग्निरस, लोहारिष्ट, शिलाजीत, मुष्टियोग।

श्लीपद चिकित्सा—चक्रेश्वर रस, नित्यानन्दरस, कामदेवरस, श्लीपदारि लीह, वातरक्तान्तकरस, वातारिरस, पर्पटीरस, पारदभस्म, कर्णादिचूर्ण-२९१–२९३

विद्रिधि चिकित्सा—कज्जलीयोग, वातारिरस, माणिक्यरस, शोधित हिंगुल, ताम्रभस्म, कज्जलीयोग, मकरध्वज, महालच्मीविलास, शोधत दग्ध हरिताल, हिरितालमस्म, माणिक्यरस, ताम्रभस्म, माणिक्यरस, वातारिरस, रसपर्धटी।

अन्तर्विद्धि चिकित्सा—ग्रादित्यरस, रसपर्पटी, माणिक्यरस, वातारि रस, ताम्रभस्म, रसतालक, कज्जलीयोग, रौद्ररस, वृहत्वातचिन्तामणि, वात-गजेन्द्रसिंह, पाषाणभेदीरस, ताम्रपर्पटी, हरितालभस्म, नागार्जुनाभ्र, प्रभाकरविका, महाकालेश्वर, सोमनाथताम्र, कृष्णचतुर्मख, हिंगुलयोग।

कुष्ट चिकित्सा—सर्वेश्वररस, सुप्तान्तकरस, प्रतापलंकेश्वर, तालेश्वर, महा-तालेश्वर, कनकसुन्दररस, विश्वहित्तरस, वज्रशेखररस, नागार्जुन गुडिका, माणि- क्यतिलकरस, परिहतरस, तालकेश्वररस, खंगेश्वररस, कुष्ठनाशकरस, श्रारोग्य-वर्धिनी वटिका, नारायणरस, मेदिनीसाररस, धन्वन्तिरस, वज्रधाररस, माणिक्य रस, महातालेश्वररस, कुष्ठान्त पर्पटी, कासीसवद्धरस, श्वित्रारि, चन्द्रप्रभावटी, उदयादित्यरस, श्वेतारिरस।

त्रणशोथ चिकित्सा—व्रणगजांकुश, कर्कोटावतेल, व्रणराक्षसतेल ३०८-३०९ नाडीव्रण चिकित्सा—वृहत् व्रणराक्षसतेल । ३०९

विसर्प चिकित्सा—कालाभिहद्ररस, सर्वेश्वररस, खगेश्वर, माणिक्यतिलकरस, विसर्पनाशकयोगावली। ३१०-३११

विस्फोट चिकित्सा—माणिक्यरस, व्रणारिगुग्गुलु । ३११-३१२

क्रिमिरोग चिकित्सा—किमिकालानलरस, क्रिमिमुद्गररस, क्रिमिरोगारिरस, कीटमर्दनरस, क्रिमिहररस, विखंगलीह, लाक्षादिवटी, क्रिमिविनाशरस, क्रिमिको-छानलरस, पारिभद्गरस, कनकसुन्दररस, श्रिमितुंडीरस, कीटमर्दरस, क्रिमिनाशक-योगावली।

शिरोरोग चिकित्सा—बृहद्वातचिन्तामणि, चतुर्मुखरस, स्योदयरस, योगेन्द्र रस, चिन्तामणिचतुर्मुख, त्रैलोक्यचिन्तामणि, शिरःशुलादिचज्ररस, बृहत् चन्द्रोदय, मकरध्वज, श्रीमहालद्दमीविलासरस, शिरोरोगान्तकरस। ३१५-३१७

शिरोरोगनाशक योगावली चिकित्सा—

३ 9 ७--३ 9 ८

नेत्ररोग चिकित्सा—सर्वचूर्णसमलौह, षडंगरस, नयनामृतलौह, तिमरहर-लौह, क्षतशुक्लहरगुग्गुलु, नेत्रशनिरस, गडुरांजन, चन्द्रोदयावर्त्ति चन्द्रप्रभावर्ति, तारकाद्यावर्ति, नागार्जुनवर्ति, ताम्रहृति । ३१८-३२१

कर्णरोग चिकित्सा—कफकेतु रस, भैरवरस, इन्दु वटी, सारिवादि वटी रुघुनाद्य तेल, निशातेल। ३२१-३२२

नासिकारोग चिकित्सा—पञ्चामृतरस, नारदीय महालच्मी विलास, मणिपर्पटी।

मुख, गले और दांत के रोग में —कालक चूर्ण, पीतक चूर्ण, चल-दन्त।

गलप्रनिथ और कराठशास्त्रक रोग में — चतुर्मुखरस, पार्वती रस, मुखरोग इरी वटी।

मस्तिष्क और स्नायुरोग चिकित्सा—चतुर्मुख रस, बृहत् वातचिन्तामणि, रस, पञ्चामृत लोह, रसराजरस, मकरध्वज रसायन । ३२५-३२७

प्रदरोग चिकित्सा—प्रदरान्तंक लौह, शिलाजत्वादि वटी, लच्मणा लौह चन्द्रांशु रस, प्रदरान्तक रस, रत्नप्रभा। ३२७-३२९

वन्ध्यारोग चिकित्सा—जयसुन्दर, लच्मणा लौह, द्वितसार, कुमार कल्प-हुम घृत। ३२९-३३१

गर्भिणीरोग-चिकित्सा-गर्भविलास रस, गर्भविन्तामणि रस, गर्भपीयूष-विह्यी रस, इन्दुशेखर रस, बृहत् गर्भविन्तामणि रस। ३३१-३३३

सूतिकारोग चिकित्सा—सूतिकारि रस, बृहत्सूतिका वज्ञम रस, सृतिका-न्तक रस, महारसशार्दूल, बृहत् गर्भचिन्तामणि रस, महाभ्रवटी, बृहत् रस शार्दूल। २३३-३३५

शिशुरोग चिकित्सा—वालकल्याण रस, बाल रस, कुमारकल्याण रस, दन्तोद्भेदगदान्तक। ३३५-३३६

क्लैंड्य (नपुंसक रोग) चिकित्सा—वृहत् चन्द्रोदय रस, कामिनीदर्पव्न, श्रनन्तकुसुमाकर, सिद्धसूत, कामाग्नि सन्दीपन, श्रीमदनानन्द मोदक। ३३६–३३८

बाजीकरणार्थ रस प्रयोग चिकित्सा—मन्मथाश्र रस, महेरवर रस, कामदेव रस, पुष्पवन्द्र रस, श्रवंग सुन्दर रस, मदनसुन्दर, पूर्णवन्द्र रस, कामदीपक रस, कामदूत रस, कामश्वर मोदक, मकरध्वज रस, रसेन्द्र चूढ़ामणि, कामधेनु, कामाज्ञना नायक रस, कामकलाख्य रस, कुसुमायुध। ३३९-३४३

रसायन—त्रैलोक्य चिन्तामणि, उदयादित्य रस, लद्दमीविलास, कान्ताश्च रसायन, कमलाविलास रस, कार्श्यहर लौह, नृहत् पूर्णचन्द्र रस, श्रीमहालद्दमी विलास रस, मृत्युहारी रस, लौह गुग्गुलु, बज्ज पंजर रस, वसन्त कुसुमाकर रस, श्रष्टावक रस, श्रमृतार्णव रस, मकरध्वज रसायन, चन्द्रोदय रस, महाकनक-सन्दर। विष चिकित्सा—भीमरुद्ररस, विषवज्रपात रस, मृतसंजीवन रस, तार्च्य-स्त । ३४८-३५०

भगत चिकित्सा—वराटिका योग, रंससिन्दूर, सप्तामृत रस, वच्वूलादि लेप, बज्रलेप। ३५०-३**५**१

ससूरिका (चेचक) चिकित्सा—कज्जली योग, शोधित हिंगुल, रससिंदूर, निम्वादिकपाय पटोलादिकपाय, पर्पटादि क्वाय, सर्वतोभद्ररस, शिलाजतु, वटी।

रसादि शोधन मारण की सहज प्रक्रिया—( रस, उपरस, धातु, उप-धातु, रत, उपरत्न, विष श्रोर उपविष, के शोधन श्रीर मारण की सहज प्रक्रिया)।

पारद प्रयोग की विशेष अनुपान विधि— ३६२--३६४ रसायनार्थ पारद सस्म—सेवन की विशेष विधि । ३६५-३६६ सकरध्वज सेवन की विधि और अनुपान— ३६६--३७८

आधुनिक रोगों की संज्ञा—वेरी वेरी, मेनिनजाइटिस, गेष्ट्रिक श्रालसर, गलष्टोन, डिडडिनल श्रालसर, टिटेनास, डिपथिरिया, डायेवेटिस, डायेवेटिककोमा, कार्यान्कल, ग्रेंगीन, व्लडप्रेसर, वेसिलरी डिसेन्ट्री डिसपेप्सिया, लिडकोरिया, सिफिन्लिस, गनोरिया, गाउट रिडमेटिज्म श्रोर श्रारथा इटिज, नेफ्राइटिज, ब्राइटस् डिजिज श्रोर एलवुमेनिडरिया एक्लामसिया, एनलार्जड प्रोष्टेट, पायोरिया, पार्निसस एनेमिया।

#### ॥ श्रीः ॥

# रसचिकित्सा

# [ प्राथामा खाण्ड ]

#### **ग्रन्थारम्भप्रयोजन**

जगद्गुरु श्री हरि के चरणों में प्राणपात करके चिकित्सको के उपकार के लिये श्रानेक रस-प्रनथों से जानने योग्य विषयों का संप्रह कर केवल परीक्षित, प्रत्यक्ष फल देनेवाली श्रीर सहज साध्य श्रोषध एवं उनके बनाने की रीति लिखता हूं तथा श्राशा करता हूँ कि समस्त विश्व के मनुष्य इसे पढ़कर लाभ उठायेंगे।

#### पारद

जिस पारे का भीतरी भाग श्रिधिक नीला श्रीर बाहरीं भाग दोपहर के सूर्य की तरह उज्जवल रंग का हो, श्रोषध-कार्य के लिये वही उत्तम है। श्रोर जो धूप्र, पाण्डर या विचित्र वर्ण वाला हो वह रसकार्य के योग्य नहीं है।

नाग, वङ्ग, मल, श्रिम, चञ्चलता, विष, गिरि और असह्याप्ति ये पारे के स्वाभाविक दोष है। पारा शोधन किये विना सेवन करने से नाग दोष से फुंसी फोड़े, दङ्ग दोष से कुछ, मल और गिरि दोष से जड़ता, अप्तिदोष से दाह, चञ्चलता दोष से वीर्यनाश, विषदोष से मृत्यु, असह्याप्ति दोष से फोड़ो का रोग होता है।

पर्पटी, पाटली, भेदी, द्रावी, मलकारी, अन्धकारी और घ्वांक्षी-ये सात पारद की केचुली रूप दोष हैं। अशुद्ध पारा सेवन करने पर पर्पटी दोष से चर्म में कड़ा-पन, पाटलीदोष से चर्मविदारण (शरीर का फट जाना), भेदी दोष से नाड़ी ज्ञण, द्रावी दोष से गलत् कुष्ट, मलकारी दोष से त्रिदोष वृद्धि, श्रन्धकारी दोष से दृष्टि-हीनता, ध्वांक्षी दोष से चमडे का काला पड़ जाना, ये दोष उत्पन्न होते हैं। श्रतएव चिकित्सकमात्र की चाहिये कि वे पारे की शुद्ध कर व्यवहार करें।

दोषरिहत, शुद्ध पारा मृत्यु, जरानाशक और साक्षात् श्रमृततृत्य है। श्रवपमात्र प्रयोग से ही श्रिधिक फल मिलता है। सेवन में कभी श्रकिच नहीं हो सकतीं और शीघ्र निरोगता करने के कारण पारा श्रन्यान्य ओषधियों से श्रेष्ठ है। चरक श्रादि चिकित्सातत्त्वज्ञ महर्पियों ने साध्य रोगों की ही श्रोषधियों लिखी हैं। किन्तु पारा साध्य-श्रसाध्य सभी रोगों में प्रयोग किया जा सकता है। मृत पारा श्रसमय में वाल सफेद हो जाने, वदन में किरीयां पढ़ जाने श्रादि रोगों का नाशक है, मूर्च्छित पारा व्याधिनाशक है, रीति के श्रनुसार वद्ध पारद से खेचरता (श्राकाश में विचरना) प्राप्त होती है। पारे से हितकर पदार्थ दूसरा नहीं है।

पारद् मेद्— चेत्र भेद से पारा चार प्रकार का है। रवेत, लाल, पीला श्रोर काला। रवेत रंग का पारा रोगनाशक, लाल रंग का पारा रसायन में, पीले रंग का पारा धातुभस्मीकरण में, काले रंग का पारा खेचरत्व देने में प्रशस्त है। इनके सिवाय हिंडुल से लर्ष्वपातन यंत्र की सहायता से निकाला हुआ पारा अति विशुद्ध और सब कार्यों में सदा व्यवहार करने योग्य होता है।

# **पारे** के अठारह संस्कार

(१) शोधन, (२) स्वेदन, (३) मईन, (४) उद्धृति, (५) पातन, (६) रोधन, (७) नियामन, (८) दीपन, (९) अनुवासन, (१०) प्रासन, (११) मृर्च्छन, (१२) सञ्चारण (१३) गर्भदृति (१४) जारण, (१५) मारण, (१६) भस्मीकरण, (१७) रज्जन, (१८) वेधन ये पारे के संस्कार हैं। प्रथम श्राठ संस्कारों द्वारा शुद्ध किये हुये पारे में श्रोषध रूप से व्यवहार करने पर उत्कृष्ट फल पाया जाता है। किन्तु साधारणतः केवल शुद्ध पारा ही काम में लाया जाता है, ऐसा करना उचित नहीं है। क्योंकि केवल शोधन द्वारा पारे के नाग-बड़ादि दोप श्रोर केवली दोष दूर नहीं होते। परन्तु हिंडुल से निकाला हुश्रा पारा शोधनादि श्राठ कर्म वर्जित होने पर भी सब काम में व्यवहार किया जा सकता है।

्राभ नक्षत्र तथा शुभ सुहूर्त मे एक सौ, पचास, पचीस, दश, पाँच श्रथवा एक पल पारा शोधन के लिये लेवे, उत्तम संस्कार के लिये एक पल से कम पारा नहीं लेना चाहिये।

- (१) पारा-शोधन-विधि। ( प्रथम संस्कार ) रसमारक द्रव्यों के सीलहवाँ भाग (पारे का सोलहवाँ भाग ) चूर्ण द्वारा पारे को मर्दन करें। प्रतिदिन प्रत्येक वस्तु द्वारा सात बार मर्दन करें।
- १. घृतकुमारी रस, चित्रक का काथ श्रोर काकमाची का रस पृथक् र इन के साथ एक एक दिन मर्दन करने पर पारा निर्दोष होता है।
- २. लहसुन का रस, पान का रस और त्रिफला का काथ इनमें मर्दन करे। प्रत्येक रस में मर्दन करने के बाद उसे भो डाले। इससे पारे के सब दोष नष्ट होते हैं।
- ३. घृतकुमारी, चीता, लाल सरसों, बृहती ( भृटकटेरी ) श्रौर विकला के काथ में पारा तीन दिन मर्दित होने से सब दोषों से रहित होता है।

हिंडुल से पारा निकालने की विधि नीवू के रस में हिंडुल को एक दिन घोट कर डमह यंत्र से पारा निकालो । आजकल किराज (वैय) जिस अचिलत प्रणाली से जर्ध्वपातन द्वारा पारा निकालते हैं उसमें वड़ा श्रम करना पड़ता है । हमने बहुत अन्वेषण करके निर्दोष भाव से हिंडुल से पारा तैयार करने की जो अणाली निकाली है, वह बड़ी सहज है और इसमें थोड़ा समय लगता है । हिंडुल को बारह घण्टे नीवू के रस में घोंट कर धूप में सुखा कर पीस ले । फिर उस पीसे हुए हिंडुल के साथ उसकी तौल के बरावर पत्थर का चूना (कलई) पीस कर मिला देवे । फिर दोनों के मिले हुए चूर्ण को एक हांड़ी में रख कर उसके ऊपर चड़ी हांड़ी रख दे (हांड़ी के मुख बिस कर ठीक कर ले जिससे अच्छी तरह मिल जा सके)। हॉड़ी के पिछले भाग मे एक वड़ा छेद रहे, वह छेद सकोरे के मुख पर बैठे । हांड़ी के जपर दूसरी हांड़ी ठीक ठीक बैठा दे (मुंह से मुंह ठीक मिला दे)। उक्त तीन वा दो पात्रो के मिलान को मिट्टी और गोवर से (अथवा मुलतानी मिट्टी में रई मिलाकर खूव पीस कर अच्छी तरह बन्द कर दे जिससे भुआँ न निकलने पाये)। इसके वाद उस यंत्र को अवल अप्तिवाले पत्थर के कोयलों वाले चूलहे पर चढ़ा दे । प्रवल अप्ति को गर्मी से हिंगुल सकोरे से उठकर

भस्माकार में ऊपर की हांड़ी की दीवार में लग जायगा। जब श्रिप्त शान्त होकर यंत्र शीतल हो जाय तब दोनो पात्रो को खोल कर हॉड़ी के तले पर से भस्म छुड़ा कर साफ कपड़े में छान ले तो सर्वदोषरिहत मध्याह के सूर्य के समान चमकनेवाला पारा निकल श्रायगा।

- (२) पारे के स्वेदन की विधि—(२ य संस्कार) त्रिकट, संधानमक, त्रिफला, चीते का काथ, कांजी (सड़ाया हुआ भात) में डाल कर दोलायंत्र में एक दिन पकाये तो पारे का स्वेदन-कार्य पूरा होता है।
- (३) पारद्मद्रनिविधि—(३ य संस्कार) बेर, ईट का चूर्ण, काला जीरा, भेड़ के वालो की भस्म, गुड़, सेधानमक श्रीर कांजी इनको मिलाकर पारे का सोलहवाँ भाग परिमाण लेकर उसके द्वारा उक्त पारे को तीन दिन मर्दन करने से पारे का मर्दन होता है।
- (४) पारे की उद्भृति—(४ र्थ संस्कार) पारे से चौथाई हलदी का चूर्ण श्रोर घृतकुमारी के रस में पारे को मर्दन कर पातनयंत्र से ऊर्ध्वपातन करने से उद्धृति किया नामक पारे का चौथा संस्कार होता है।
- (४) पारद का पातन (५ वां संस्कार)—पातन तीन प्रकार का है, १. ऊर्ध्वपातन, २. अधःपातन और ३. तिर्यक्पातन । विशुद्धभाव से पातनिक्रया करने के लिये इन तीन प्रकार की कियाओं को करना चाहिये—
- १. ऊर्ध्वपातन—पारे को शुद्ध किये हुए तांवे के साथ माङ्कर तीन वार उर्ध्वपातन करने से पारे का ऊर्ध्वपातन पूरा होता है।
- २. अधःपातन—पारे को त्रिफला, संधानमक, चीता और घृतकुमारी के रस में मर्दन कर भूधरयंत्र से अध पातित करे तो पारे की अधःपातनिकया पूरी होती है।
- ३. तिर्यक्पातन कांजी के साथ शोधित श्रभ्रक श्रौर पारा एकत्र माड़ कर एक ताल में पका कर तिर्यक्पातन यन्त्र में गिराने से पारे की तिर्यक्पातन किया पूर्ण होती है।
- (६) पारे का रोधन (निरोध) (६ ठा संस्कार)—खिले हुए कमल में वाध कर रखने से पारे की निरोधिकया सम्पादित होती है। स्वेदन आदि के कारण हीनशिक्त पारा निरोधिकया द्वारा उत्तम वीर्थ की आप्त होता है।
  - (७) पारे का नियामन (७ वां संस्कार,)—निरोधिक्रिया के वाद

पारे की चन्नलता दूर करने के लिये नियामनिक्रयां करनी चाहिये। कांकरोल, सर्पाक्षी ( श्वेता पराजिता ) कमल श्रोर भृज्ञराज द्वारा कांजी के साथ तीन दिन भिगोने से पारे का नियामन होता है। इसके द्वारा पारा प्रासार्थी होता है।

- (८) पारे का दीपन (८ वां संस्कार)—जवाखार, सज्जीखार, सैन्धव, सीसा, सहजना, राई सरसों, श्रम्लवेतस, मिर्च श्रीर कांजी—इन द्रव्यों के साथ पारा मर्दन करके नेपाल देश के ताम्रपात्र में सुखाये। इसके वाद फिर कांजी द्वारा दोलायंत्र में भिगोने से पारे को दोपनिकया पूरी होती है।
- (६) पारे का अनुवासन (९ म संस्कार)—पत्थर के वर्तन में नीवू का रस रखकर उसमें पारा डाल कर एक दिन धूप में रख देने से पारे की अनुवासनिकया पूरी होती है।
- (१०) पारे का ग्रासन धातुभोजन (१० म संस्कार)—एक वाज (सिज) वृक्ष की शाखा में त्राठ श्रङ्गल प्रमाण गर्त करके उसमे पारा भर कर मिट्टी से लेप दे श्रौर तीन दिन सूखे गोवर की श्रिप्त में पाक करने से पारे में गन्धक, स्वर्ण श्रादि धातु ग्रासनशक्ति उत्पन्न हो जाती है।

#### (११) पारे का मूरुईन (११ वां संस्कार)—

- 9. मूच्छ्रेन-विधि—एक भाग पारा श्रीर एक भाग गन्धक एकत्र घोंट कर कजा करने से पारे की मूच्छ्रेन किया सम्पन्न होती है। इस तरह मूर्च्छित पारे के द्वारा श्रनुपान भेद से सब तरह के रोग दूर होते है।
- २. रसिन्दूर—एक भाग पारा, तीन भाग गन्धक और पारे का आठवां भाग सीसा की भस्म एकत्र कज्जली करके वालुकायंत्र से पाक करने पर जो रस-सिन्दूर तैयार होता है, वह अनुपानभेद से सर्वरोगनाशक और जरा-मृत्युनाशक है।
- ३. श्वेतरस अथवा कर्पूररस—एक भाग पारा, एक भाग सुहागा, एक भाग शहद, एक भाग लाख, एक भाग गोंगची इनको भुद्रराज के रस में घोंट कर वालुकायंत्र पर पाक करने से कपूर के सदश जो पाया जाय उसका नाम कपूर रस है। यह भी श्रनुपानभेद से सर्वरोगनाशक है।
- ४. सिन्दूर रस—पारा एकं भाग, गन्धक श्राधा भाग वालुकायंत्र में पकाने पर वोतल के कण्ठ में जो सिन्दूर समान रस मिलता है उसका नाम सिन्दूर रस है। यह श्रनुपान भेद से सर्प रोगनाशक है।

- ४. पीतरस—पारा श्रीर गन्धक समभाग लेकर हाथीशुण्डी वा भुंइ श्रामला के रस में सात दिन घोंटकर मूषावद्ध (घरिया में बन्द ) कर एक दिन वालुका यंत्र में पाक करने से पीले रंग का जो रस तैयार होता है उसे पीतरस कहते है। यह पान के रस के साथ एक रत्ती प्रमाण सेवन करने से सर्वरोगनाशक होता है।
  - ह. कुडणरस—लोहे अथवा ताँवे के पात्र में एक पल शुद्ध गन्धक रख कर मृदु अप्ति से पाक करे। गन्धक पिघलने पर उसमें तीन पल पारा डाल कर लोहे की कलछी से वार वार चलाये और कुछ देर वाद गोवर के ऊपर रखे हुए केले के पत्ते पर उसे डाल कर दूसरे केले के पत्ते से लपेटी हुई गोवर की पोटली से डक दे (दवा दे), इस तरह कुष्णरस तैयार होगा। यह सबरोगों में प्रयोग करने योग्य है।

रवेतरस, पीतरस, सिन्दूररस वा रससिन्दूर श्रौर कृष्णरस ये चार प्रकार के रस यथाक्रम से उत्तरोत्तर श्रेष्ठ हैं।

- ७. रसताल शुद्ध पारा, गन्धक, हरताल और लाल दारमूज (एक प्रकार का विष ) ये चार वस्तुएँ समान भाग ले एकत्र मर्दन कर वालुका यंत्र में चार प्रहर पाक करने से जो रस उत्पन्न होता है उसका नाम रसताल है। यह ज्वरघन, श्रिप्तिदीपक, वीर्यस्तम्भक, कुष्ठ और वातरक्तनाशक, वलकारक, मेधाजनक और रसायन है। एक यव (जो) मात्रा में इसका व्यवहार करना चाहिये।
  - ८. स्वर्णसिन्दूर—स्वर्णभस्म १ पल, पारद ८ पल, गन्धक १६ पल एकत्र घृतकुमारीरस में घोट कर धूप में सुखाये, फिर उस सूखे चूर्ण को बोतल में भर कर वालुकायंत्र से तीन दिन पाक करे, बोतल ठण्डी होने पर लाल रंग का रस संग्रह कर ले। यह एक जो की मात्रा में पान के रस के साथ प्रयोग करे। श्रमुपान भेद से यह सर्वरोगनाशक श्रवश्य है परन्तु विशेषतः ज्वर, श्रमुचि श्रोर मन्दािमनाशक है।
    - (१२) पारे का सञ्चारण (१२ वॉ संस्कार)—पारा, स्वर्णभस्म श्रीर होहमस्म प्रत्येक को समभाग से पुरानी कॉजी द्वारा मर्दन करने से पारे की समारणिकया पूरी होती है।

- (१३) पारे को गर्भद्वित (१३ वां संस्कार) समभाग अभ्रसत्त्व और माक्षिकसत्त्व एकत्र मिलाकर दो भाग पारे के ऊपर डालने से पारे की गर्भ-द्वितिकिया सम्पन्न होती है।
- (१४) पारे का जारण (१४ वां संस्कार)—एक चौथाई ताम्रभरम द्वारा एक भाग पारा मर्दन कर एक गोलक तैयार करे फिर डमहयंत्र से नीवू का रस भर कर ऊर्ध्वपातन करे। फिर रक्तगणों द्वारा मर्दन करने से पारे का जारण होता है।
- (१११) पारे का मारण (१५ वां संस्कार)—ढाक के बीज, चन्दन श्रीर नीबू के रस में मर्दन कर भूधरयन्त्र श्रथवा बालुकायंत्र से पारे की पाक करने से उसकी मारणिक्रया पूरी होती है।
- (१६) पारे का भस्मीकरण (१६ वां संस्कार)—(क) अपामार्ग तैल के द्वारा मर्दन कर पुटपाक करने से पारा भस्म होता है।
- (ख) अथवा पुहकरमूल और कॉटानट की जब द्वारा पुटपाक करने पर भी पारा भस्मीभूत होता है।

मारण के विना भस्मीकरण विधि—(क) श्रपामार्ग के बीज श्रीर कमल के कलक (पानी में पिसा हुश्रा समग्र कमल पुष्प) के साथ पारे को मूषावद्ध कर पुटपाक करने से मारण के विना भी पारा भस्म हो जाता है।

(ख) अथवा पारा और अअ समभाग बड़ के दूध या लासा में तीन पहर मर्दन कर कोछिकायन्त्र से पुटपाक करने पर पारा भस्मीभूत होता है।

सस्मीभूत पारे का लक्षण—भरमीभूत पारे में चमक नहीं रहती। यह स्थिर, लघु, श्वेतवर्ण, अन्य धातुमारण में समर्थ और ऊर्ध्वपातन के अयोग्य होता है।

- (१७) पारे का रक्षन (१७ वां संस्कार)—गन्धक मिला कर जारित सीसे को फिर ताम्र द्वारा जारण करना चाहिये। इस तरह जारित तीन भाग ताम्र द्वारा मारित होने पर पारे का रंग लाख के सदृश हो जाता है।
- (१८) पारे का वेधन (१८ वां संस्कार)—पारे का वेधनकार्य करने के लिये सब से प्रथम पारे का रज्जन, फिर जारण और उसके वाद फिर रज्जन और जारण करना चाहिये। इस तरह सात बार रज्जन और जारणिकया करने से पारे का वेधन समाप्त होता है।

इस तरह पारा श्रन्य सव धातुओं को स्वर्ण में परिणत कर सकता है। किन्तु चिकित्साचेत्र मे पारे को रक्षन श्रोर वेधन करने की श्रावश्यकता नहीं होती। केवल भस्मीभूत पारा ही श्रोपध के लिये व्यवहार किया जाता है।

# पारद भस्म के अनुपान

श्वास, कास ग्रोर शूल में —पीपल, मरिच, सींठ, भागी श्रोर मधु।
रकतदुष्टि में —हल्दी श्रोर चीनी श्रथना मधु।
पाण्डु ग्रोर कामलारोग में —ित्रकटु, त्रिफला श्रोर श्रइसे के काथ वा
मुलहटी।
सूत्रकृच्छु में —शिलाजीत, इलायवी श्रोर मिश्री श्रथना गोसक का रस

सूत्र**कृ**च्छु म —शिलाजीत, इलायचा श्रार मिश्रा श्रयंवा गांखरू का रस श्रीर दूध ।

धातुदीर्वत्य में —लोंग श्रीर पान का रस।
जवर में —( चाहे किसी प्रकार का हो ) कालानमक, लोंग, चिरायता श्रीर
हरी श्रथवा नीवू का रस।

कोष्टबद्धता में - काला नमक और त्रिफला।

वमन में—भङ्ग त्रौर त्राजवाइन त्रायवा मधु, लाजा, चीनी त्रौर मूंग का यूष। सव प्रकार के उद्ररोग में—कालानमक, हल्दी, भङ्ग त्रौर त्राजवाइन। किमिरोग में—हल्दी या त्रानारस के पत्तों का रस।

श्रतिसार में — त्रफीम, लौंग, हिङ्कल एवं भङ्ग।

मन्दानिन में —कालानमक श्रीर श्रजवाइन ।

सव तरह के पित्त विकार में — श्रॉवला श्रीर चीनी।

सव तरह के वायु विकार में—पीपल।

सव तरह के कफ विकार में - श्रादी का रस।

त्रिदोपज ज्वर में —दशमूल पाचन श्रौर पीपल का चूर्ण।

रकिपित्त में हरें का चूर्ण और मघु श्रथवा पीपलचूर्ण और श्रइसे का काय।

च्चयकास में — पृत श्रीर वकरी के दूध में पकाया हुआ पीपल का चूर्ण श्रयवा त्रिफला, गन्धक, त्रिकटु श्रीर पुराना गुड़। हिचकी में — काला नमक, विजीरे का रस श्रीर मधु। ववासीर में — जमींकन्द का भुती, तैल श्रीर सेंधानमक। विसृचिका में — हींग श्रीर पीपल।

प्रमेह श्रौर शुक्र की तरलता में—सतावर श्रथवा सेमर की जड़ का चूर्ण।

रलीहा श्रीर गुल्म में न्ययोधादि या श्रसनादि के काय में मिली हुई हर्रा, लहसुन श्रीर गोमूत्र।

पित्तशत में — कुलथी का यूष श्रीर शङ्ख की भस्म। श्रामश्रल में — तिल का काथ और त्रिकटु। शोध श्रीर पाण्डु रोग में — त्रिफला का काथ।

**उ**ष्ट में—पञ्चित्तम्ब (नीम का पञ्चाङ्ग समभाग, छाल, पत्ते, फल, फूल, जड़) के काथ के साथ।

श्वेत कुष्ठ में--जारित अभ्र और त्रिफला।

वातरक्त में—गिलोय हर्रा श्रीर गुड़।

गृध्यसी में—सोठ का चूर्ण और एरण्डमूल सहित गरम किया हुआ दुग्ध। मेदरोग में—मधु और जल।

कार्श्य रोग में -चीनी।

उन्माद श्रोर श्रपस्मार (मृगो) में— घृत, हींग, कालानमक, त्रिकटु 'श्रोर गोमूत्र।

दुष्त्रण में—त्रिफला, परवल का जड़, त्रिकटु, गुगगुल, गिलोय श्रौर विडङ्ग । गलगण्ड में—मूर्ला का रस, त्रिफला, परवल की जड़, त्रिकटु, गुगगुल, गिलोय श्रौर विडङ्ग का लेप।

१. न्यमोधादिगण—न्यप्रोध-पिष्पल-सदाफल-रोध्रयुग्म-जम्बृद्धयार्जुन-क्रपीतन सोमबल्क-प्लत्तास्त-बञ्जुल-पियाल-पर्लाशनन्दि-कोली-कद्ग्वं-विरला-मधुक-मः धूकम् ॥ (वैद्यकशब्दसिन्धु पृष्ठ ६२४)

२. असनादिगण—असन-तिनिश-भूर्ज-श्वेत-वाह-प्रकीर्थ-खिद्र-कद्रभण्डी-शिशपामेषश्वद्गी-चन्दनत्रय-ताल-पलाश-जोङ्ग-शाल-क्रमुक-धव-कुलिङ्ग-छागक-णिश्वकणित्मको गणः । ( वै० श० सि० पृष्ठ ९२ )

मसूरिका-नारियल का जल।

विषदोष में — तेल, कपास के पत्ते और अनन्तमूल का काथ। अथवा चावल का धोया जल, तण्डुलीयक (चौलाई) का रस अथवा कपूर, दिध और गोमय (गाय के गोवर) का रस।

रसायन में - त्रिफला चूर्ण श्रौर स्वर्णभस्म ।

वाजीकरण में—त्रिफला चूर्ण, स्वर्णभस्म और लौहभस्म अथवा घृत, मधु, सतावर का रस और दूध अथवा जारित स्वर्णमाक्षिक और मधु अथवा अभभस्म और वक्फूल (शिवलिङ्गी के फूल) का रस और कच्चे केले का रस।

## रससेवनविधि

पारद ( भरम ) भक्षण करने से पूर्व एकदिन प्रातः जुलाव लें श्रौर उपवास कर रहें। रात को थोड़ा श्राहार किया जा सकता है। विरेचनजित दुर्वलता दूर हो जाने पर पारद सेवन करें। मात्रा-पूर्ण वयस्क के लिये एक रत्ती।

पारदसेवन के समय कोष्ठवद्धता हो तो शयन के पूर्व पीपल श्रौर गिलोय का काथ सेवन करना चाहिये। पारदभरम पान के रस के साथ सेवन करने से कोष्ठश्वद्धता नाश करती है।

# रससेवन में पथ्यापथ्य

पथ्य — मूंग का यूप, सेंधा नमक, पीपल मोथा, पद्ममूल, गेहूं, साठी चावल, गोडुग्य, रनान, मनोरमा स्त्री से सम्भाषण, घृत जो, ख्रादी, जीरा इत्यादि पारदसेवी के लिये पथ्य हैं।

श्रपथ्य — कृप्माण्ड, ककड़ी, तरवूज, करेला, फूलशाक, काकरोल, कलमी, काकमाची (मकोय) ये श्राठ पारदसेवी के लिये श्रपण्य हैं। तेलमर्दन, कॉजीभक्षण, मय, दिध, खटाई, लहसन, प्याज, मूली, कुलथी, बैगन, रात में जागरण, दिन में सोना, कटु, तिक्त, लवण श्रिवक मीठा, श्रिवक वायु सेवन, शैत्यिक्रिया, धूप में बैठना, शोक, ताप, चिन्ता, साहस श्रीर वीरताप्रदर्शन तथा जो चस्तुएं पारे एवं धातुश्रों के मारण में सहायता करती हैं उनका त्याग करें। कपूर, दारुचीनी, वड़ी इलायची, तेजपत्ता, नागकेसर, त्रिकटु श्रीर जायफल भी श्रपण्य हैं। श्राजीण में भोजन श्रीर धुधा का वेग नहीं रोकना चाहिये।

# अशोधित पारद सेवन से उत्पन्न विकारनिवारण का उपाय ।

श्राह्य पारद सेवन से हृदय में ज्वाला (जलन) हो तो पीसे हुए जीरे के साथ शिक्षी, कई, जियल माछ का रस, साठी चावल और दूध सेवन करें। वायुवृद्धि होने पर नारायण तेल की मालिश करें। मन की चन्नलता हो तो शीतल जल देवें। अत्यधिक तृष्णा में डाभ (कच्चे नारियल) का जल, मूंग का यूष और चीनी का शरवत सेवन करें।

सीसा और वङ्ग मिश्रित पारा भक्षण करने से श्रमुस्थता हो तो गोमूत्र श्रीर संधानमक सेवन करना उचित है।

अशुद्ध पारद सेवन से शूल, नाभिशूल, तन्द्रा, ज्वर, अरुचि, आलस्य, कोष्ठयद्धता, दाह, शोथ आदि रोग उत्पन्न होते है। उक्त रोगों द्वारा आक्रान्त होने पर सौवर्चल लवण और गोमूत्र तीन दिन भक्षण करे।

अधिक खट्टा, कट्ट द्रव्य सेवन से पारद की किया नष्ट होती है। वर्तमान समय में अनेक कविराज मकरध्वज या रंसिसन्दूर के साथ कुनैन मिलाकर देने की व्यवस्था करते है। यह अति गिहंत कार्य है। क्योंकि कुनैन अत्यन्त तिक्त वरत है, इसके साथ पारद सेवन करने से पारे का गुण नष्ट होता है और शरीर में विषिक्रिया उत्पन्न होती है।

पारदसेवी को कभी भूख सहना या उपवास करना उचित नहीं है।

त्रशोधित पारा सेवन से उत्पन्न, सब रोग शोधित गन्धक सेवन से नष्ट होते है।

अशोधित रसकपूर के सेवन से उत्पन्न अमुस्थता में मिश्री, धनिये का भिगोया हुआ जल सेवन करे।

अशोधित पारे से वने हुए रसिसन्दूर के सेवन से भी पारे की ्तरह विष किया होती है। इस दशा में सात दिन गोल मरिच और गाय का घी सेवन करे।

पारे के गुण —शोधित श्रौर भस्मीकृत पारा जरा-मृत्युनाशक है। यह श्रेष्ठ रसायन, वल, बुद्धि, कान्ति श्रौर मेधावर्द्धक है। यह सर्वश्रेष्ठ महौषध है।

#### गन्धक.

गन्धक वर्णमेद से चार अकार का है, यथा, 'लाल, पीछा, सफ़ेद जोर काला। स्वर्णसंस्कार विषय में लालवर्ण, रसायनकार्य में पीतवर्ण और रंग- विलेपनकार्य में श्वेतवर्ण गन्धक प्रशस्त है। कृष्णवर्ण गन्धक स्वर्णसंस्कारादि सव कार्यों में प्रशस्त है। यह ब्रात्यन्त दुष्प्राप्य है। पीले रंग वाले गन्धक को ब्रांवलासार कहते हैं। इसका दूसरा नाम शुक्रिपच्छ है। रसिक्रिया ब्रोर रसायन कार्य में यही गन्धक श्रेष्ठ है। लाल रंग का गन्धक लोहमारण कार्य में व्यवहत होता है। उसका दूसरा नाम शुक्रचञ्च है।

गन्यक श्रत्यन्त रसायन, मधुररस, पाक में करु, उष्णवीर्य, कण्डू, कुष्ट, विसर्प श्रोर दहुनाशक, श्रामिनदीप्तिकर, पाचक, श्रामदोषनाशक, शोषक, विषनाशक, पारद का वीर्यवर्द्धक, क्रिमिनाशक श्रोर स्वर्ण से भी श्रिधिक गुणवाला है।

# ं गन्धक की शोधनविधि

गन्धक में शिलाचूर्ण त्रौर विष ये दो दोष रहते है। इस कारण त्रौषधार्थ उसे उत्तमरूप से शोधन करना उचित है।

- (१) गन्धक का चूर्ण गाय के घी के साथ अग्रिनताप से पिघला कर घृताक्त चस्र द्वारा छान ले और एक घड़ी भर गाय के दूध में भिगोकर जल से घी डाले। इस तरह शोधित गन्धक का शिला चूर्ण दोष बस्र द्वारा दूर होता है। विषमाग भाप की तरह घृत में मिला रहता है। और विशुद्ध गन्धक भाग पिण्डाकार में परिणत होता है। शोधित गन्धक सेवित होने पर अपध्य करने से भी कुछ हानि नहीं होती। किन्दु अशोधित गन्धक सेवन करने से अपध्य सेवन द्वारा यह हलाहल (विष) की तरह प्राणनाश करता है।
  - (२) गन्धक पीसकर तीन दिन भृज्ञराज के रस में भावना दें फिर उसें सुखा कर चूर्ण करें फिर एक कलकी पर थोड़ा घी डालकर श्रिप्त पर रखे, श्रिप्त से तपे हुए उस कलकी पर गन्धक का चूर्ण छोड़ दें। गन्धक पिघलने पर घृताक्त वल्न द्वारा भृज्ञराज रस से भरे हुए वर्तन का मुख बन्द कर उसमें पियला हुआ गन्धक छोड़ दें। इस तरह गन्धक के वर्तन में जम जाने पर घड़ी भर उसी रस में श्रिप्तताप से पका लें। इस तरह शोधित गन्धक आत्यन्त शिक्त नम्पल होता है। सब तरह की पर्पटी बनाते समय इसप्रकार शोधित गन्धक नवने श्रिप्तक पलप्रद होता है।

#### गन्धकसेवनविधि

शोधित गन्धक त्रिफलाचूर्ण, घृत, भृङ्गराजरस श्रौर मधु के साथ मिलाकर ३ माशे सेवन करने पर गिद्ध की तरह दृढ़शक्ति होती है श्रौर रोगहीन दीर्घायु प्राप्त होती है।

त्वक् दोष में—गन्धक ३ माशे श्रौर पक्का केला।
बलच्य में--चीते की जड़ का चूर्ण श्रौर शहद के साथ।
मन्दाग्नि में—श्रिफला के क्वाथ के साथ।
च्यकास में—वासक के क्वाथ के साथ।
ऊर्ध्वदेहगत सब रोगों में— घृत श्रौर मधु के साथ।

कुष्ठ रोग में—गन्धक १ भाग, मरिच १ भाग, त्रिफला ६ भाग, एकत्र कर श्रमलतास के मूल के रस में सान कर रेवन करने से श्रीर श्रमलतास के मूल के रस में सान कर रेवन करने से श्रीर श्रमलतास के मूल के रस में गन्धक पीस कर प्रतिदिन शरीर पर लेपन करने से सब प्रकार का कुछरोग दर होता है।

वित्ववृद्धि के लिए—दूध के साथ गन्धक ३ माशे मात्रा में। दुष्टव्रण में—तिल के तैल के साथ।

सव रोगों में —गाय के घी के साथ।

चक्षुदोष में - समपरिमाण पोपल श्रोर हरें के चूर्ण के साथ।

दुर्जय कण्डू श्रीर पामारोग में—१ तोला गन्धकचूर्ण, तैल, श्रपामार्ग रस श्रीर मरिच के साथ मिलाकर सर्वोद्व पर अलेप।

शुक्रतारस्य में—गोदुग्ध, चतुर्जात ( दालचीनी, वड़ी इलायची, तेजपत्ता श्रोर नागकेशर)।

सुजाक में — गिलोय, हर्रा, बहेडा, श्रामला, त्रिकटु।

भूख न लगने पर उद्रामय में कुष्ठ में शूल में भृजराज श्रौर श्रादी प्रत्येक के रस या ववाथ में पृथक् २ विभावित गन्धक १ तोले मात्रा में।

गलत कुष्ट में-गन्धक तैल सेवन करे।

# ग्रन्थक तेल वनाने की विधि।

गन्धक का चूर्ण दृध में डाल कर कुछ क्षण तर्क गरम करे फिर उसकां, दही जमा दे, उस दही को बिलो कर घृत तैयार करे। इसका नाम गन्धक का तेल है। यह गन्धक तेल शरीर पर लेपन करने से या सेवन करने से गलत् कुछ निवृत्त होता है।

# गन्धकसेवी का पथ्यापथ्य।

गन्धकसेवी, क्षार द्रव्य, खही वस्तु, श्रिधिक लवण वाला द्रव्य, खीसङ्ग, घोड़े की सवारी पर भ्रमण, मद्यपान, शाक श्रीर रेल, मोटर श्रादि तेन चलने वाली सवारी पर भ्रमण, दाल खाना, करु द्रव्य छोड़ दे।

# गन्धक का गन्ध दूर करना।

गन्धक का चूर्ण दूध में श्रोटते-श्रोटते खोश्रा करे, फिर उसे सूर्यावर्त-रस श्रोर किर त्रिफला के काथ में श्रोटावे। इस प्रकार शोधने से गन्धक की गन्ध दूर होगी।

#### रसचिकित्सा

# पारद के धातु-ग्रासन की सहज प्रक्रिया

- (१) ९ प्रकार के विष श्रौर ७ प्रकार के उपविष द्वारा मर्दन करने से पारे में धातुत्रासनशक्ति उत्पन्न होती है।
- (२) त्रिकटु, दो क्षार, राई सरसों, पांच नमक, लहसन, नौसादर, सहजना, इन प्रत्येक का चूर्ण पारे के सम परिमाण लेकर इन सबको एकत्र गरम खरल में बालकर जमीरी नीवू के रस मे तीन दिन मर्दन करे तो पारे में धातुत्रासनशक्ति उत्पन्न होती है।
- (३) विन्दुली कीट (लाल रंग का कीड़ा)—नमक श्रीर नीवू के रस के साथ तीन दिन पारा मर्दन करने से उसमें श्रासनशक्ति उत्पन्न होती है।
- (४) पूर्वोक्त प्रक्रियानुसार हिंडुल से निकाले हुए पारे की अनुवासन किया सम्पन्न करके उसे एक सीज की दृढ़शाखा में आठ अड्डल गहरा छेद करके सम परिमाण गन्धक सहित भरकर मिट्टी से लेप कर दे। फिर गिलीय

श्रीर श्यामालता द्वारा श्रिप्त अज्वलित करके तीन दिन श्रिप्त है। इस प्रकार पारे में स्वर्णीद सब धातुश्रों को ग्रास कर्ने की शक्ति उत्पन्न होती है, यह आसन शक्ति युक्त पारा मकरध्वज वनाने में प्रयोग करना चाहिये।

# पारदशोधन और प्रयोग की विशेषविधि

न्यवसायी लोग विक्री के लिये पारे के साथ सीसा और वज्ज मिला देते हैं। इस कारण पारद में जो कृत्रिम दोष उत्पन्न होता है उसका नाम षण्डत्व दोष है। तीन पातन (अर्थात् अर्ध्वपातन, अधःपातन और तिर्थक्पातन) द्वारा यह पण्डत्व दोष विनष्ट होता है। विष, विह और मल ये तीन पारद के स्वामाविक दोप है। इन तीन दोषों से कमशः मृत्यु, सन्ताप और मूच्छी होती है, अर्थात् पारद के विषदोष द्वारा मानव की मृत्यु होती है, विहिदोष द्वारा सन्ताप उपस्थित होता है और मलदोष द्वारा मूच्छी होती है। नागदोष और वज्जदोष इन दोनों को पारे का यौगिकदोष कहा जाता है। इन दोषों से मनुष्यों में जडता, आध्मान (पेट फूलना) और कुछरोग उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त पारे में और सात श्रीपाधिक दोष हैं जिन्हें सात केञ्चुली कहते हैं। ये सात कञ्चुकी भूमिज, गिरिज और वारिज अर्थात् भूमितल, पर्वत और जल के मिलन से उत्पन्न होती हैं। इस तरह रसशास्त्रविदों ने पारे के वारह दोष निर्देश किये हैं।

मेड़ के वाल ( ऊन ), हल्दी का चूर्ण, इंट का चूर्ण, घर में जमी हुई धूल, नीवू के रस के द्वारा मर्दन करने से नागदोष; राखालशशा और श्वेत आक की जड़ की छाल के चूर्ण द्वारा मर्दन से बहुदोष; अमलतास फल की मजा के साथ मर्दन करने से मलदोष; चीते की जड़ के चूर्ण के साथ मर्दन करने से बहिदोष; काले धतूरे के रस के साथ मर्दन करने से चाञ्चल्यदोष; त्रिफला के काथ के साथ मर्दन करने से विषदोष; त्रिकट के साथ मर्दन करने से गिरिदो अऔर त्रिकण्टक ( कटेरी, गोखह, जवासा ) के साथ मर्दन करने से असहाप्तिदोप निवृत्त होता है। इससे पारद के आठ दोष और सात कञ्चकी दोष शान्त होते है।

मर्म्मिच्छन श्रीर क्षार वा श्रिप्त द्वारा दग्ध होने पर उन स्थलों में पारद का अयोग करना उचित नहीं होता है।

इसके त्रातिरिक्त अग्यान्य स्थलों मे पारद प्रयुक्त होने से त्राशानुरूप उपकार प्राप्त हो जाता है। शोधित पारद मृदु अग्निताप सह्य करता है। मूर्च्छित पारद व्याधि नाश करता है, मारित पारद तीव श्राग्न ताप से भी निष्कम्प श्रीर वेगहीन श्रवस्था में रहता है श्रीर वह मनुष्यादि की श्रायु श्रीर श्रारोग्य वढ़ाता है।

#### रसबन्ध

वार्तिककारों ने पारे को बांधने के लिये अर्थात् चांचल्य और दुर्महत्व के निदारण के लिये पचीस प्रकार के रसबन्धों का वर्णन किया है। यथा—हठ आरोट, हठाभास और आरोटाभास, कियाहीन, पिष्टि, क्षार, खोट, पाट, कल्कवन्ध, कज्जलि, सजीव, निर्जीव, सवीज, श्रृह्लला, द्वितवन्ध, वालक, कुमार, तरुण, बृद्ध, मूर्तिबन्ध, जलवन्ध, अभिनवन्ध, सुसंस्कृत और महावन्ध। ये पच्चीस प्रकार के वन्ध और कोई कोई जालुकावन्ध नामक और एक प्रकार की वन्ध किया मिलाकर छच्चीस प्रकार के वन्ध कहते है।

जालुकावन्ध दैहिकिकिया के उपयोगी नहीं है। कामिनी-द्रावण कार्य में यह श्रित प्रशस्त है। पारद सम्यक् शोधित किये विना यदि उसकी वन्धिकया की जाय तो उसे हठवन्ध कहते हैं। यह वन्ध कियायुक्त पारद सेवन करने से मृत्यु वा उत्कट व्याधि उत्पन्न करता है। सुशोधित पारद की वन्धिकिया होने से वह श्रारोटवन्ध कहलाता है। यह पारद चेत्रकरण में श्रेष्ठ श्रोर धीरे धीरे व्याधि नाशक है। धातु श्रोर मूलादि पदार्थ द्वारा भावित करके वन्धिकया करने पर भी जिसके गुण मे विकार हो श्रर्थात् यदि पारद पुटपाक के समय स्वभावानुसार श्रन्य पदार्थ का संयोग परित्याग कर निकल जाय तो वह हठाभास वा श्रारोटाभास वन्ध कहा जाता है।

श्रशोधित धात्वादि के साथ जो पारद संस्कृत हो उसे क्रियाहीन कहते हैं। यह पारा सेवन के वाद श्रपथ्य सेवन से दिविध विकार उपस्थित होते है।

द्रव्यविशेष के साथ पारा गाइतर रूप से मथन करके और तेज धूप में रख कर, मक्खन के तुत्य पिढ़ी तैयार करने से उसे पिष्टिकावन्ध कहते हैं। पिष्टिकावन्ध यन्धयुक्त पारद श्रीन का उद्दीपक और श्रत्यन्त पाचक है। शङ्क, सीप और कौड़ी श्रादि क्षार पदार्थ के साथ पारद मर्दन करने से उसे क्षारवन्ध कहते है। क्षारवन्ध युक्त पारद श्रीन का श्रत्यन्त उद्दीपक, पुष्टिजनक श्रीर श्रालनाशक है। जिस बन्ध में पारद खोटता को प्राप्त होता है श्रोर बार वार श्राध्मापिन करने से उसका क्षय होता रहता है। वह खोटवन्ध कहलाता है। खोटवन्ध युक्त पारा सर्च रोगनाशक है।

कज्जली द्रवीभूत करके केला के पत्ते पर ढाल दे और केले के पत्ते से आच्छादित पोटली से उसे दवा कर चिपटा करे। इसे पोटबन्ध कहते हैं।

द्रव्यविशेष के साथ स्वेदादि द्वारा पारद को पहुरूप मे परिणत करने से उसे कल्कवन्थ कहते हैं। कल्कवन्थ युक्त पारा कल्क द्रव्य का फल देता है।

पारद-गन्थक का एकत्र मर्दन करने से चिकना काजल को तरह जो पदार्थ होता है उसे कजलीवन्थ कहते है।

जिस वन्ध में पारद भस्म करते समय, श्राग्नियोग से निकल जाता है, वह सजीव वन्ध निर्द्धि होता है। यह सेवन करने से पारदभस्म की किया श्रथवा शीघ्र व्याधिविनाश कुछ भी कार्य सिद्ध नहीं कर सकता है।

श्रश्र वा गन्धक के साथ जारित होकर भस्मीभूत होने से पारद सब धातूश्रों मे शिरोमणि हो जाता है। इस तरह भस्मीभूत पारद श्रातिशीघ्र सर्वरोग विनाश करता है।

चौथाई स्वर्ण श्रौर समान गन्धक के साथ पारद सर्दन कर पिट्ठी करके पुटपाक द्वारा जारित करने से निर्वीजवन्ध नाम से कहा जाता है। यह सर्वरोग नाशक है।

हीरकादि के संयोग से जारित पारद के साथ अन्य जारित पारद समान भाग में मिला देने से वह श्रृष्ट्वलावद्ध कहा जाता है। यह पारद देह की दढ़ता का साधक है। यह अत्यन्त गुणसम्पन्न है।

वाह्यद्विति वाला पारा वद्ध होकर भस्मरूप मे परिणत होने से वह द्वितवद्ध पारा कहा जाता है। श्वेत सरसों का चौथाई ( है ) भाग परिमाण मे सेवन करने से यह दुःसाध्य रोगसमूह को विनष्ट करता है।

पारा सम प्रमाण अश्र के साथ जारित होने से वालवद्ध कहा जाता है। उपयुक्त अनुपान के साथ सेवित होने से यह शोघ्र रसायनकार्य सम्पादन करता है और रोगोत्पित्त की आशंका दूर करता है एवं उपद्रव और अरिष्टलक्षणाकान्त पीड़ाओं को भी विनष्ट करता है। द्विगुण अश्र के साथ जो पारा जारित हो वह

२ र० चि०

कुमारवद्ध कहा जाता है। चावल भर मात्रा में इसका तीन सप्ताह सेवन करने से कुछ ग्रादि पापज व्याधियां निवारित होती हैं एवं यह रसायन हो जाता है।

चौगुने श्रश्न के साथ जारित पारद तरुणवद्ध है। यह उन्कृष्ट रसायन है। एक सप्ताह तक इस पारा के सेवन से सर्वरोग विनष्ट होते हैं एवं वीर्य श्रोर वल उत्पन्न होता है।

छः गुने श्रम्र के साथ जीर्ण होकर जो पारा श्राग्निसहत्व को प्राप्त हो, श्रर्थात् श्रिप्तताप को सहकर निकल जाय उसे बृद्धवद्ध कहा जाता है। देह-हितकर श्रोपिथयों में श्रोर धानुश्रों के संस्कारों में यह पारा प्रयुक्त होता है।

श्रश्र जारण न करके केवल दिव्य श्रोपिधरों के मूलादि द्वारा पारद श्रितशय श्रिग्निसह होने से वह मूर्तिवद्ध कहा जाता है। यह पारा जारित करने से श्रिग्नि-ताप से क्षय नहीं होता श्रोर इसका सब रोगों में प्रयोग करने से श्रनुपम उपकार पाया गया है।

शिलाजल द्वारा जो पारा वद्ध हो उसे जलवद्ध पारा कहते हैं। यह जरा, रोग श्रोर मृत्युनाशक एवं कल्पनानुसार उन उन द्रव्यों का फल देनेवाला है।

केवल पारा श्रयवा धातु मिला हुत्रा पारा श्राध्मात होकर गोली के श्राकार में हो जाय श्रोर वह गोली श्रिप्तताप से क्षीण न हो तो उसे श्राग्नवद्ध कहते हैं—यह पारे की गोली मुख में धारण कर मनुष्य श्राकाश-विचरण करने में समर्थ होते हैं।

सोने श्रोर चांदी के साथ पारा श्राध्मापित करने पर दोनों द्रव्य एकत्र मिल कर श्राग्नदीप्त टज्वल गुटिकाकार वन जाता है। उस समय वह ध्रय को प्राप्त नहीं होता श्रोर श्रत्यन्त भारी होता है। वह गुटिका या गोली चोट लगने से नमक की तरह चूर्ण हो जाता है श्रोर घिसने से मिलन नहीं होता है। यही पारद का महावन्य है। यह वन्ध ठीक ठीक सम्पन्न हुए विना गुटिका क्षण भर में हवीभूत हो जाती है।

टिल्लित वन्ध-प्रिक्रियाओं में आठवें संस्कार से संस्कृत पारा व्यवहार्य अथवा हिंगुल से निकाले हुये पारा का भी व्यवहार किया जा सकता है।

#### पारदभस्मविधि

प्रथम प्रणाली—हाक के वीज, लाल चन्दन श्रोर जम्हीरी नीवू के साथ पारा मर्दन करके सर्जाव वद करने के वाद हसे यन्त्र में पातित करने से मारित होता है। अपामार्ग वीज और कमलगद्दा के कल्क के साथ मर्दन कर मूषा में बन्द कर दढ़ रूप से आध्मापित करने से पारा भस्मीभूत होता है।

द्वितीय प्रणाली—काकड्मर के लासा द्वारा हिड्ड भावित करके उसके साथ मर्दन पूर्वक पुटदग्ध करने से पारा भस्मरूप में परिणत हो जाता है।

तृतोय प्रणाली—अपामार्ग के वीज और एरण्ड बीजो का चूर्ण पारे के नीचे ऊपर रख कर मूषारुद्ध करे। इस तरह चार बार पुटपाक करने से पारा भस्मत्व को प्राप्त होता है।

चतुर्थ प्रणाली—पान के रस मे पारा मर्दित करके कॉकरोल-मूल के गर्भ मे रखे हुए एक मिट्टी के मूषा में पुटपाक करने से ही पारा भस्मरूप में परिणत होता है।

### पारदभस्म सेवन के साधारण नियम

पारदमस्म सेवन के वाद यदि अधिक उबकाई आवे तो दही मिला हुआ अन्त या जीरे के साथ कृष्ण मत्स्य भोजन करे। वायु की अधिकता जान पड़े तो नारायणादि तेल मालिश करे। चित्त की अस्थिरता होने पर सिर को शीतल जल से धोवे। घास अधिक होने से डाभ का जल और चीनी मिलाकर मूंग का यूष पान करे। रस-वीर्य बुद्धि के लिये अंगूर, अनार, खजूर और केला एवं दिध, दुग्ध, ईख का रस और चीनी भोजन करना चाहिये। रससेवन परित्याग करते समय तक बृहतीफल, बिल्ब आदि पदार्थ भोजन करे।

#### मकरध्वज बनाने की विधि

पृथिवी के इतिहास की आलोचना करने पर मालूम होता है कि मिश्र, चीन आदि देशों में अति आचीन काल से विविध कला-विद्या अकाशित होने पर भी अधिकांश शास्त्र का मूल इस भारतवर्ष में ही अथम उद्भावित हुआ था, अब भी जगत के सब सुधी वर्ग इसे एक वाक्य से स्वीकार करते हैं। आचीन वेद-संहिताओं की पर्यालोचना करने से पता चलता है कि अति आचीन काल से भारतवर्ष में ही चिकित्साविज्ञान के मूल सूत्र सब से अथम आविष्कृत हुए थे। पाश्चात्त्य ऐतिहासिक पण्डितों ने स्वीकार किया है कि विविध धातु, उपधातु, रस, उपरस आदि भारतवर्ष में ही सबसे अथम औषध रूप से व्यवहार में लाये गये हैं।

श्रायुर्वेदीय त्रिदोष विज्ञान, वैदिक श्रोपधपथ्यप्रयोगज्ञान एवं चिकित्सा-प्रणाली के सिवाय तान्त्रिक चिकित्सा विज्ञान ने भारत के चिकित्साशास्त्र को जगत के श्रिष्टितीय चिकित्साशास्त्रह्म में परिणत किया है। सकर च्वल श्रायुर्वेदीय तन्त्रोक्त सहोपध है। चिरकाल से यह महोपध नाना प्रकार साध्य-श्रसाध्य व्याधि को श्रारोग्य करके जीवजगत का परम कल्याणसाधन करती श्रा रही है।

पारद, गन्धक श्रीर स्वर्णशोग से यह श्रोषध वनती है। स्वर्ण के ल्वस स्टम पत्र ८ तोला, पारद ६४ तोला श्रीर गन्धक १२८ तोला। प्रथम स्वर्णपत्र श्रीर पारा एकत्र सांड कर फिर गन्धक मिलाकर उत्तम रूप से कन्नली करते हैं फिर उसे धृतकुमारी के रस से मर्चन कर एक समतल बोतल मे भरकर वालुका यन्त्र से तीन दिन पाक करते हैं। श्राजकल इसो पद्धित से सब वेंच प्रायः मकर-ध्वज तैयार करते हैं। उत्त प्रणाली से मकरध्वज तैयार करने में स्वर्ण वोतल के तल देश में पड़ा रह जाता है, वह पारे के साथ मिलता नहीं। वोतल के गल देश में पारा श्रोर गन्धक एक साथ श्राविताप से उठकर लाल रंग का हो जाता है। साधारण के निकट यही मकरध्वज है। चिरकाल से विज्ञ चिकित्सकगण इसे व्यवहार करते श्रारहे हैं। इसके गुणों पर मुग्ध होकर पाश्चात्त्य चिकित्सकों ने कठिन कठिन रोगों में इसे व्यवहार करके श्राश्चर्य फल पाया है। किन्तु जिस प्रणाली से मकरध्वज तैयार होता श्राया है वह प्रणाली तन्त्रोक्तप्रणाली से विलक्कल मिन्न है तन्त्रोक्त श्रसल नियमानुसार पारद श्रोर स्वर्ण को यथाविधि संस्कार करके उसके द्वारा मकरध्वज तैयार करने से स्वर्ण निःशेपरूप से पारद के साथ मिल जायगा एवं किसी तरह रासायिनक प्रक्रिया इस स्वर्ण को पारे से श्रलग करने में समर्थ न होगी।

नीचे लिखी प्रणाली से मकरध्वज तैयार करने से अवश्य ही स्वर्ण पारद के साथ मिल जायना।

प्रथम विधि—स्वर्णभत्म १ पल (८ तोला) मूर्चिछत पारद ८ पल (६४ तोला) गन्थक १६ पल (१२८ तोला) एकत्र कज्जली करके घृतकुमारी के रस में मईन करके तीन दिन वालुकायन्त्र में पाक करने से जो मकरध्वज तैयार होता है इसमें सोना प्रयक् हप से अवस्थान नहीं करता।

द्वितीय विधि—शोधित स्वर्णपत्र १ पल, एवं त्रासन शक्तिविशिष्ट अर्थात् दशम संस्कार द्वारा संस्कृत पारा = पल, गन्धक १६ पल एकत्र कज्जली करके ३ दिन वालुका यन्त्र में पाक करने से जो मकर वज तैयार होता है, उससे स्वर्ण पृथक् नहीं किया जा सकता।

डक्त प्रणाली द्वारा तैयार किया मकरध्वज प्रायः प्रचलित मकरध्वज की श्रपेक्षा हज़ार गुण श्रधिक फल देनेवाला है।

भारतीय रसायनशास्त्र के मत से पारद की विभिन्न प्रकार धातु को ग्रास करने की शक्ति है। परन्तु केवल शोधित पारे में ग्रासन शक्ति नहीं रहती। श्रायुर्वेदीय रसशास्त्र में पारे के जो श्रठारह प्रकार के संस्कारों का विषय उल्लिखित है, वह वर्तमान समय के श्रधिकांश श्रायुर्वेदीय चिकित्सकों को मालूम नहीं है। वे केवल पारद के श्राठ प्रकार के संस्कार ही जानते हैं। ८ प्रकार के संस्कारों द्वारा संस्कृत पारे में धातुमोजन शक्ति उत्पन्न नहीं होती श्रत एव ऐसे पारे से मकरध्वज तैयार करने से स्वर्ण उससे पृथक् भाव में श्रवस्थान करे तो श्राक्षर्य ही क्या है १ प्रचलित मत से तैयार किये हुये मकरध्वज में केवल शोधित पारे की उक्त धातुश्रासन शक्ति नहीं रहती।

पड्गुणबित्तजारित मकरध्वज प्रस्तुत विधि—प्रासनशिक्त वाला पारा १ पल, गन्धक २ पल और शोधित स्वर्ण १ तोला एकत्र कज्जली करके चृतकुमारी के रस में घोट कर साधारण मकरध्वज पाक के नियम से पाक करने पर जो मकरध्वज प्राप्त होगा, उसके साथ फिर पूर्व परिमित गन्धक घोट कर फिर पूर्ववत् पाक करे। इस तरह पारद के ६ गुण गन्धक अर्थात् ६ बार पाक किया सिद्ध होने पर षड्गुण वालिजारित मकरध्वज तैयार होगा।

सिद्ध मकरध्वज प्रस्तुत विधि—ग्रासनशंक्ति वाले पारद द्वारा साधारण मत से तैयार किये मकरध्वज को २० वार सम परिमाण गन्धक द्वारा घोंट कर २० वार पाक करने से सिद्ध मकरध्वज तैयार होता है।

# षड्गुण बलिजारित और सिद्ध मकरध्वज तैयार करने की दूसरी विधि

षड्गुणबिलजारणिविधि—वालू से भरी हुई हॉडी के भीतर १ भारी भाण्ड में प्रथमतः पारद सम परिमित गन्धक श्राप्त जाल में पाक करे। गन्धक गल कर तैल जैसा होने पर उसमें पारा डाल दे। इस तरह इम से पारद का ६ गुणा गन्धक उसमें दे चुकने पर वालू से भरी हांडी उतार कर उसके भीतर

से पारे का वर्तन निकाल ले श्रोर भाण्ड के नीचे छेद करके उससे पारद वाहिर कर ले। इस पारद का नाम षड्वलिगुण जारित पारद है।

इसके द्वारा मकरध्वज तैयार करने पर उसे षड्गुणविष्ठजारित मकरध्वज कहा जाता है।

पड्गुणवित्ति सक्तरध्वज प्रस्तुतिविधि—प्रासनशक्ति युक्त पड्गुण विल्जारित पारद १ पल (८ तोला), शोधित स्वर्ण पत्र १ तोला, शोधित गन्धक २ पल (१६ तोला), एकत्र कज्जली करके घृतकुमारी के रस मे मर्दन करके वालुकायन्त्र मे ३ दिन पाक करने पर पड्गुणविल्जारित मकरध्वज तैयार होता है। यह पड्गुणविल्जारित मकरध्वज अनुपानयोग से सर्वरोग हरण करने वाला है।

यदि पारा शुद्ध गन्धक द्वारा जारित हो तो शोधित पारे की श्रपेक्षा सौ गुना गुण वढ़ जाता है। इस प्रकार दूने गन्धक में जारित होने पर सब कुष्टों की दूर करने वाला तिगुने गन्धक में जारित होने से सर्व जड़तानाशक, चौगुने गन्धक में जारित होने से वलीपलित ( कुरीं तथा सफेद बाल हो जाने का ) नाशक, ५ गुने गन्धक में जारित होने से क्षयरोगापहारी श्रीर षड्गुण गन्धक में जारित होने से सर्वरोगनाशक होता है।

जो पारद शतगुण गन्धक द्वारा जारित हुआ है, यदि उसको अअ-सत्त्व द्वारा जारित किया जाय, तो पूर्च की अपेक्षा सौगुना वीर्यवान होता है। फिर स्वर्णमाक्षिक, खपरिया और हरिताल इत्यादि द्वारा जारित होने से उससे भी अधिक गुणवाला होता है। स्वर्ण के साथ पारा जारित होने से हजार गुने वीर्य से सम्पन्न होता है।

सिद्ध मकरध्वज प्रस्तुत विधि—वीस गुने शोधित गन्धक द्वारा जारित पारा १ पल (८ तोला), शोधित स्वर्णपत्र १ तोला एवं शोधित गन्धक २ पल (१६ तोला) एकत्र वालुकायन्त्र से यथाविधि पाक करने से सिद्ध मकरध्वज तैयार होता है, यह सिद्ध मकरध्वज अमृततुल्य है। अनुपानभेद से सर्वरोग नाशक है। सब प्रकार की असाध्य व्याधि मे, रोगियो की मुमूर्ष अवस्था में जाद मन्त्र की तरह कार्यकारी होता है। यह प्राच्य चिकित्सा शास्त्र की एक श्रेष्ठ महात्रध है। पृथिवी के किसी चिकित्साशास्त्र में इसकी अपेक्षा उत्कृष्टतर श्रीषध नहीं वर्ना।

ऊपर जो षड्गुणविजारित एवं सिद्ध मकरष्वज की प्रस्तुतिविधि लिखी गई है, वह अभिज्ञता से उत्पन्न है। उक्त प्रणाली से मकरष्वज तैयार करने पर उससे स्वर्ण पृथक्भाव में अवस्थान नहीं करगा। पारे और गन्धक के साथ मिल जायगा। इस प्रक्रिया द्वारा भारतीय रसशास्त्र के यथेष्ट कृतित्व का परिचय पाया जाता है। वर्तमान समय में पृथिवी के अधिकांश लोगों को उक्त प्रक्रियाये मालूम नहीं है। इसी कारण वर्तमान समय में शुद्ध मकरष्वज तैयार नहीं होता।

### अभ (क)

श्रभक-श्रमृत स्वरूप, कषाय तथा मधुररस, धातुवर्द्धक, व्रण-कुछनाशक, वातिपत्त श्रोर क्षयरोगनाशक, मेधावर्द्धक, त्रिदोषनाशक, श्रारोग्यजनक, वृष्य, श्रायुवर्द्धक, वलकारक, स्निग्ध, रुचिकर, उदर, ग्रन्थि, प्रमेह, प्लीहा, विष श्रोर कफनाशक, श्राग्नि का उद्दीपक, शीतवीर्थ श्रोर श्रनुपानभेद से सर्वरोगनाशक है।

खनिज अअक का ही श्रीषध में व्यवहार होता है। यह चार प्रकार का है— पिनाक, नाग, मण्ड्क श्रीर वज्र। स्वेतादि वर्णभेद से इन प्रत्येक के भी चार भेद हैं। पिनाक अअ—अमि, तप्त, होने से उसके पर्त (स्तर) अलग अलग हो जाते है, यह सेवित होने से मनुष्य का मल रोक कर प्राणनाश करता है। नागाअ— श्रीन पर गरम करने से नाग की तरह फुफकारता है, इसके सेवन से मण्डल कुष्ठरोग पैदा होता है। मण्ड्काअ—अग्नि तप्त होने से खिल कर उचट जाता है, यह सेवित होने से शस्त्रचिकित्सा का भी श्रमाध्य रोग अश्मरी (पथरी) पैदा करता है वज्राअ—श्राग्निताप से किसी रूप में विकृत नहीं होता, इसके सेवन से देह लौहसार और सर्वरोगरहित होता है। वज्राअ ही श्रीषध में सर्वथा व्यवहार के योग्य है।

वर्णभेद से अभ्र ४ भागों में विभक्त है—रवेत, रक्त, पीत और कृष्ण । रवेत वर्ण विधानादि कार्य में रवेत अभ्र, और रक्तकर्म में रक्त अभ्र और पीत कर्म में पीला अभ्र व्यवहार करे । रसायनकार्य में कृष्ण अभ्र ही अधिक फलदायक है। जो अभ्र-हिनग्ध, स्थूल पर्तवाला, वर्णयुक्त और अधिक भारी है और जिसके पर्त अनायास अलग किये जा सकते है, वही उत्तम है। उत्तरदेशीय पर्वत में उत्पन्न अभ्र ही अत्यन्त सत्त्ववाला और गुणदायक है।

चित्रकायुक्त अभ श्रोषध के कार्य में लाने योग्य नहीं होता है। इसके सेचन करने से मेह श्रोर मन्दाप्ति आदि अनेक रोग उत्पन्न होते है। अशुद्ध अभ-आयुनाशक, एवं वायु, कफ, क्रिमि, क्षय, बात, शोथ, हृद्रोग, पसली में दर्र, कुष्ठ श्रोर क्षय उत्पन्न करनेवाला है। अतएव सब कार्यों में शोधित अभ प्रयोग करना उचित है।

### अभ्रक की शोधन विधि

- (१) श्रभ्रक को तपाकर क्रम से ७ वार काजी, गोमूत्र श्रौर त्रिफला के क्वाथ में विशोपतः गाय के दूध में डालने से विशोधित होता है।
- (२) ग्रथवा ग्रभ्र को तपाकर ७ वार निसिन्दा रस की भावना देने से वह विशुद्ध होता है।

शोधनान्त मे अभ को धान्याभ्र से परिणत करे।

धान्याभ्रिविधि—ग्रम्न के चौथाई साठीधान के साथ ग्रम्न को एकत्र कम्वल में वॉध कर ३ दिन तक जल में भिगो कर रखे। फिर उसे हाथों से मईन करने पर कम्वल से जो छोटे छोटे ग्रम्न के कण निकलें, उनका नाम धान्याभ्र है।

धान्याभ्र विना श्रभ्रशोधन विधि—श्रभ्र को तपाकर वेर के काथ में डाले, फिर उसे हाथ से मर्दन कर चूर्ण करे। इस तरह शोधित श्रभ्र धान्याभ्र से भी श्रेष्ठ है।

#### श्रभ्रकी मारणविधि—

- (१) हरिताल, श्रामले का रस श्रीर सुहागा इनके साथ शोधित श्रश्नक मर्दन करके १ दिन गजपुट में पाक करे। ६ वार इस तरह मर्दन श्रीर पाकिक्या सम्पन्न करने पर श्रश्न की मृतमस्म तैयार होती है। यह विशेपतः यद्मारोग में प्रशस्त है।
- (२) गीले गुड़ श्रौर एरण्ड के पत्तों के रस में एक दिनं भावना देकर श्रश्न को एक दिन गजपुट में पाक करे। इस तरह ३ वार भावित श्रौर पुटपक्व श्रश्न मृतभाव से भस्मीभूत होता है। यह विशेषभाव से श्रिम्बर्धक है।
- (३) एक माग धान्याभ्र, २ भाग सुहागे के साथ मर्दित करके ध्रन्थम्या में प्रवल ध्रान्ति से पुटपाक करे।
- (४) २ माग धान्यात्र, १ माग शोधित गन्धक के साथ 'वड़' के दूध में मान करके एकदिन गजपुट में पाक करे।

श्रभ्र का श्रमृतीकरण— वृत श्रीर श्रभ्र तुल्य परिमाण में लेकर लोहे के वर्तन में पाक करे। जब घी गल जाय तब ही समम लें कि श्रभ्र का श्रमृती- करण हो गया— वह सब कर्म में प्रयोज्य है।

अन्यप्रकार—त्रिफला का क्वाथ १६ पल, गाय का घृत ८ पल, मर्दित अभ्र १० पल सवको एकत्र करके लोहे के पात्र में रखकर मृदु अग्नि से पकावे। तरल पदार्थ स्खने पर ही उसे ग्रहण करते है, यह सब रोगों में काम आता है।

नित्य सेवित जारित अश्र के गुण—नित्य सेवित जारित अश्र रोग-नाशक, शरीर को दृढ़ करने वाला, वीर्यवर्द्धक, दीर्घायु और सिंह की भांति विक्रमशाली पुत्रजनक, अकाल मृत्युनाशक और रितशिक्त वर्द्धक है।

### अभ्रमस्म के अनुपान

दीस प्रकार के प्रमेह रोगों में—हलदी, पीपल के चूर्ण और मधु के साथ।

राजयदमा रोग में—स्वर्ण भस्म के साथ। धातुवृद्धि विषय में—स्वर्ण श्रोर चांदी के भस्म के साथ। रक्तिपत्त में—हरीतकी, गुड़, इलायची श्रोर शक्कर।

राजयदमा, पाण्डु श्रीर रलीहासें—त्रिकटु, त्रिफला, चातुर्जात ( दार-चीनी, इलायची, तेजपात श्रीर नागकेशर)

शुक्रमेह में—गिलोय के रस, ईख के गुढ़ या चीनी के साथ।

मूत्रकुच्छु में—इलायची, गोखरू, भूमि श्रावला, शक्कर श्रीर घृत।

सन्तत्ववर श्रीर भ्रम में—पीपल के चूर्ण श्रीर मधु के साथ।

दृष्टिशक्ति बढाने में—मधु श्रीर त्रिफला के साथ।

विद्रधि श्रीर दुष्टवण में—मूर्वीरस के साथ।

वासीर में—शुद्ध भिलावे के साथ।

वात में—सोठि, पुष्करमूल, भागी, श्रश्वगन्धा श्रीर मधु के साथ।

पित्तवृद्धि में—चातुर्जात श्रीर चीनी के संयोग से।

श्रेष्मावृद्धि में—कॉयफर, पीपल श्रीर मधु के साथ।

परिपाकशंक्ति बढ़ाने में—सब प्रकार के क्षार के साथ।

सूत्राघात, सूत्रकृष्ठ श्रोर पथरी के रोग में—इलायची, गोखरू भंइ श्राँवला, गोदुग्ध श्रोर शकर।

शक्ति वहाने में —गोदुग्ध श्रीर भूमि कुष्माण्ड (विदारीकंद ) के साथ ।
शुक्रस्तम्भन में —विजया (भांग ) के रस के साथ ।
वातरक्त में —हरीतकी श्रीर ईख के गुड के साथ ।
चन्नरोग में श्रीर शुक्रवर्द्धन में —त्रिफला, घी श्रीर मधु के साथ ।

### अभ्रसेदन की साधारणविधि

एक वर्ष तक प्रतिदिन प्रातः १ रत्ती श्रम्भस्म श्रीर सम परिमित श्राँवला, त्रिकटु श्रीर विडङ्ग द्वारा गोली वना कर १ गोली सेवन करना चाहिये। दूसरे वर्ष में मात्रा वहा कर प्रति-दिन प्रातः दो गोली श्रीर तीसरे वर्ष प्रतिदिन तीन गोलियों सेवन करनी चाहिये। इसके डिल्लिखित नियमसे एक सौ पल श्रम्भस्म सेवन करने से मनुष्य बलशाली श्रीर स्वास्थ्यवान होता है। कोई व्यक्ति उपयुक्त पथ्य पालन करके यह श्रम्भस्म सेवन करे तो ३ महीने में सब रोगो से छूटकारा पा सकता है। इसके द्वारा राजयच्मा, पांच प्रकार के कफ, हद्रोग, गुल्म, जटिल, उदरामय, ववासीर, भगन्दर, श्रामवात, क्षय, कामला श्रीर १८ प्रकार के कुछ दूर होते है।

मृत्त्रभ्र के लाज्जण—यथार्थरूप से भस्मीभूत अभ्र निश्चन्द्र और कज्जल सदरा चिकना होता है। जो अभ्रभस्म चिन्द्रका (चमक) युक्त हो वह श्रोषध के व्यवहार योग्य नहीं।

श्रभ्रश्रमृतीकरण की विशेषविधि—श्रभ्रभस्म लाल श्रौर काली दी प्रकार की है। केवल काला श्रभ्रक ही श्रमृतीकरण में प्रशस्त है।

श्रभ्रभस्म में पुट की विशिष्टता—(१) सब प्रकार के रोग नाश करने के लिये श्रभ्रक में दश से सौ वार् तक पुटपाक करे। रसायनकार्य में एक सौ से एक हजार वार तक पुटपाक करना श्रावश्यक है।

(२) वायु नारा करने के लिये अभ्रक में १८ पुटपाक करे। पित्तनारा जरने के लिये उसे ३६ वार पुटपाक करे और रुलेप्मा नारा करने के लिये उसे

५४ वार पुटपाक करे। अभ्रक को एक सौ वार से अधिक कालपाक करने से वह बीजरूप में परिणत होता है। वह शोधित होने से बीर्य, श्रोज, कान्ति श्रौर वल बढ़ाता है'।

अभ्रमारक गण—कॉटानट, चृहती (वड़ी कटेरी), ताम्बूल, तगर, पुनर्नवा (सार), हिंचे, खुलकुड़ी, चिरायता, त्राक, त्रादा, पलाश, मूसाकणी, मैनफल, विशाला, एरण्ड इन द्रव्यो द्वारा पेषण करके पुटप्रदान करने से अभ्र मारित होता है।

श्रभ्रसेवन में श्रपथ्य—श्रभ्रसेवी क्षार, खटाई, सब प्रकार की दाल, ककड़ी, वैगन श्रीर तेल न खाये।

कचा श्रभ्रं सेवन के दोष—जो श्रभ्र सम्यक् रूप से भरमीभूत नहीं हुत्रा है, उसके भक्षण करने से सहसा मृत्यु हो जाती है, व्याघ्र चर्म सदश गात्रचर्म होता है श्रोर श्रनेक प्रकार की व्याधि होती है।

श्रपक श्रभ्रसेवनजित दोष की शान्ति—दो तोले श्रॉवला शीतल जल में पीस कर ३ दिन सेवन करने से कच्चा श्रभ्रक सेवन से उत्पन्न दोष निवारित होते हैं।

श्रभ्र का सत्त्वपातन—श्रभ्र को उसके चौथाई सुहागे के साथ मर्दन करके मूसली के रस में मर्दन कर कोष्ठिकायन्त्र में पुटपाक करने से श्रभ्र का सत्त्व निकल श्राता है।

श्रभ्र सत्व की शोधनिविधि—गोमूत्र में तीन दिन भावना देने से श्रभ्र सत्त्व शोधित होता है।

श्रभ्रसत्त्व का भस्मीकरण—एक भाग पारद, दो भाग गन्धक एकत्र कज्जली करके तीन भाग श्रश्नसत्त्व के साथ मिलाकर ष्ट्रतकुमारी के रस में मर्दन करें। फिर उस मर्दित द्रव्य को पिण्डीभूत करके श्रण्डी के पत्ते में लपेट कर एक घण्टे तक तांवे के पात्र में धूप में रक्खे। उसके वाद उठा कर वश्च से छान ले तो विशुद्ध श्रभ्रसत्त्व भस्म मिलेगा।

श्रभ्र सत्त्व की सेवनिविधि—श्रभ्रसत्त्व जब तक काले रंग का न हो जाय तब तक त्रिफला के क्वाथ की भावना दे। उसके वाद उसे धूप में सुखा कर कपड़े से छान ले फिर उसमें भृद्वराज का रस, श्रॉवले का रस, हलदी का रस, वकरी का घी, गोमूत्र मिलाकर उसे एक लोहे के सम्पुट में वन्द कर धान्य की राशि में एक महीने तक रख छोड़े। फिर उसे वाहर निकाल कर चूर्ण करे। घी ज्योर मधु के साथ उपयुक्त मात्रा में यह श्रोषध सेवन करने से मानव श्रनेक व्याधियों से मुक्त हो जाता है श्रोर उसकी श्रायु तथा वल वढ़ता है।

अश्रद्धित—(१) विशुद्ध श्रश्र को समान कांकरोले के चूर्ण श्रौर पञ्चामृत के साथ मिलाकर १ दिन श्रम्लरस में मर्दन करें। उसके वाद उसे घरिया में वन्द करके १ दिन पुटपाक करने से श्रश्र पारे की तरह तरल हो जाता है।

(२) धान्याश्र को शिवलिङ्गी के पत्ता के रस में मर्दन करके एक जमीकन्द के भीतर भरकर गाय वांधने के घर से १ हाथ गहरे गढ़े में गाड़ दें, १ महीने वाद निकाल कर देखेंगे कि वह पारे की तरह श्राकृति वाला हो गया है।

## सोनामाखी ( माक्षिक ) और रूपामाखी

यह स्वर्णपर्वत से उत्पन्न श्रोर काञ्चनवर्ण रसिवशेष है। माक्षिक धातु दी प्रकार का है। सोनामाखी श्रोर रूपामाखी। सोनामाखी-कुछ खद्दा रस ित्ये मधुरस है श्रोर रूपामाखी कुछ कषाययुक्त मधुरस है। दोनो माक्षिक शीतवीर्य, पाक में कटु श्रोर लघु है। इनका सेवन करने से जरा व्याधि श्रोर विप से श्रामिभूत नहीं होना पड़ता है। कान्यकुठ्ज देश में उत्पन्न सोनामाखी स्वर्ण सहश श्रोर ताप्ती नदी की तीरभूमि में उत्पन्न सोनामाखी पञ्चवर्णयुक्त श्रोर स्वर्ण सहश होती है। रूपामाखी श्रमेक प्रकार की होती है उसमें सोनामाखी से कम गुण होता है। माक्षिक-सर्वरोगनाशक, रसेन्द्र का प्राणस्वरूप, श्रात्यन्त वृष्य, दुर्मेलक दो धातुश्रों को मिलाने वाली, वहुगुणयुक्त श्रोर सव रसायनों में उत्कृष्ट है।

किसी-किसी रसाचार्य के मत से माक्षिक तीन प्रकार का है। पीला, श्वेत छोर लाल। यह २ प्रकार का माक्षिक भी फिर चेत्र छोर छाकृति भेद से ४ भागों में, विभक्त है यथा—प्रथम प्रकार का कदम्व फूल के सदृश गोल, दूसरा सीप के पुट की आकृति वाला, तीसरा अङ्गूठी की नाई, चौथा तुवरी की भर्म के वर्णवाला।

श्रशोधित मान्निक सेवन में दोष—श्रशोधित माक्षिक सेवन करने से ध्रथानाश, वलहानि, विष्टम्भ, नेत्ररोग, कुष्ट, गण्डमाला, व्रण यहां तक कि मृत्यु भी हो सकती है।

माण्तिक की शोधनविधि—एरण्डतेल, विजीरा नीवू या केले की जड़ के रस के साथ माक्षिक दो घण्टे सिद्ध करने से शोधित होता है अथवा अमिताप से तपाकर त्रिफला के काथ में वुम्ताने पर भी माक्षिक धातु शुद्ध हो जाती है।

मासिक की मारणविधि—शोधित माक्षिक और गन्धक एकत्र विजीरे नीवू के साथ मर्दन करके मूणा में वन्दकर पांच वार पुटद्ग्ध करने से मृत होता है। एरण्ड तैल, गाय का घृत और विजीरा नीवू के रस के साथ खर्पर पात्र में पाक करने पर भी माक्षिक मृत होकर भस्मरूप में परिणत होता है। इस तरह मृत माक्षिक धातु की तरह किया में और रसायनकार्य में प्रयोग करने योग्य है।

मादिक का सत्व पातनिविधि—३० भाग सीसा मिला हुआ मालिक, क्षार और अम्ल-द्रव्य के साथ मर्दन कर मुखखुली मूपा में रख कर द्राध करने से माक्षिक का सत्त्व निकलता है। फिर उस सत्त्व को सात वार गलाकर निसिन्दा या निर्गुण्डी के रस में डालने से माक्षिक सत्त्व मिला हुआ सीसा नष्ट हो जाता है। मधु, एरण्डतेल, गोमूत्र और गाय का घी और केले की जड़ का रस इन सव द्रव्यों की वार वार भावना देकर मूपा में पुटदम्ध करने पर भी माक्षिक का ताम्रवर्ण मृदु सत्त्व निकलता है। इस तरह गलित सत्त्व शीतल होने पर वह गुजाफल की तरह लाल रंग का हो जाता है।

मानिक सत्त्व की प्रयोगिविधि—माक्षिक सत्त्व और पारद एकत्र मर्दन करते करते दोनों के मिश्रित हो जाने पर उनके साथ गन्धक मिलावे। फिर उसमें अअ सत्त्व डाल कर सब द्रव्य खरल में मर्दन करे। इसके बाद उसके द्वारा गोलक तैयार करके, लवणयन्त्र में आधा दिन मृदु अग्नि ताप से उसे पकावे, एवं पाक के बाद शीतल होने पर उसका चूर्ण करे। यह माक्षिक सत्त्व दो रत्ती मात्रा में मधु, त्रिकटुचूर्ण और दिडङ्गचूर्ण के साथ सेवन करे तो विविध रोग-जनक जरा, अपमृत्यु एवं दु साध्य व्याधियाँ सप्ताह में दूर हों। यह अमृत से अधिक उपकारी है।

साक्तिक की सत्त्वद्वृति — ग्रंडी का तैल, गुजाफल, मधु श्रोर सुहागा इन द्रव्यों के साथ माक्षिक सत्त्व मर्दन करने से वह द्रवीभूत होता है।

मात्तिक भरम का श्रनुपान—त्रिफला, त्रिकडु, विडङ्ग श्रौर घृत ये द्रव्य श्रनुपान में लेकर माक्षिक भरम व्यवहार करें। अशुद्ध मानिक भन्नण से उत्पन्न दोपों की शान्ति—अशुद्ध माक्षिक भक्षण से उत्पन्न दोष में कुलथी और दाडिम की छाल का काथ-सेवन उपकारी है।

#### विसल

### विमल की शोधनपणाली

अड्सा के क्वाय, जम्हीरी के रस अथवा मेटासिंगी (कांकड़ासिंगी) के क्वाय के साथ सिद्ध करने से विमल तथा अन्यान्य धातु भी शोधित होती हैं।

### विमल की भस्मीकरणविधि

गन्धक और आक के रस के साथ अथवा सोहागा, आक का रस और मेढ़ाश्ट्रही की भस्म के साथ विमल मर्दन करके मूण में वन्द करे और उसके छपर माटी का अलेप देकर मुखा ले, इस अकार जम से १० वार पुटपाक करे तो विमल भस्मीभूत होता है।

### विमल से सत्त्वपातन

विमल के साथ समान सौराष्ट्रमृत्तिका, हीराकस और सुहागा एवं कुद्दती जमीकंद और मोखा (घण्टापारूल) का क्षार मिलाकर उसमे सहजने का रस और केला की जड़ का रस इनमें ७ दिन भावना दे। फिर उसे मूण में वन्द करके पुटद्ग्ध करे। इस तरह विमल से उज्वल सत्त्व निकलता है।

### विमल सत्त्व की सेवन विधि

विमल १ भाग, पारा १ भाग, गन्धक १ भाग, हरिताल ३ भाग, मैनसिल १ भाग, रोप्यभस्म १० भाग का एक भाग, वैकान्त (पुखराज) भस्म १० वां दें भाग मिलाकर अच्छी तरह चूर्ण कर वस्त्र से छान ले। फिर वह चूर्ण कुपी मे भरकर वालुकायंत्र से पाक करे। पाकसिद्ध होने पर एवं विमल, त्रिकटु और त्रिफला के चूर्ण और घत के साथ सेवन करने से जरा, शोथ, पाण्डु, अहचि, प्रमेह, ववासीर, प्रहणी, शूल, यद्दमा, कामला और वातिपत्तज सब प्रकार की पीड़ा दूर होती है।

#### विालाजीत

स्वर्ण द्यादि पर्वतीय धातुएं सूर्य की गर्मी से गल कर तरल होती है। उनसे लाक्षा के सहश कोमल, चिकना द्योर स्वच्छ जो मल (गोद सा) पदार्थ वाहर निकलता है। उसे शिलाजतु कहते है। यह रसायनगुणवाला है। यह दो प्रकार का होता है, १-कर्पूर शिलाजीत द्योर २-गोमूत्र शिलाजीत, गोमूत्र की नाई गन्धयुक्त शिलाजीत को गोमूत्र शिलाजीत द्योर कपूर जैसी गन्ध वाले को कपूर शिलाजीत कहते हैं। उनमें गोमूत्रगन्धि शिलाजीत दो प्रकार का है ससस्व द्योर निःसस्व। इन दोनों में ससस्व शिलाजीत ही द्यधिक गुणशाली है। हिमालय पर्वत का स्वर्ण, रोप्य, ताम्र, लोह, वङ्ग द्योर सीसकगर्भ पाद देश तीन सूर्य की किरणों से उत्तप्त होने पर उससे शिलाजीत निकलता है।

### शिलाजीत के प्रकार भेद

स्वर्ण शिलाजीत—स्वर्ण शिलाजीत मधुर, श्रम्लितक्त, जवाफूल सहश, स्निग्ध, गेरू के रंग समान, विपाक में कटु-तिक्त श्रीर वात-पित्तनाशक है। यह स्वर्णगर्भ पर्वत से निकलता है।

रजत शिलाजीत—क्षार, कटु, अम्लरस वाला और विदाही, विपाक में मधुर रस, शीतवीर्थ, गुरु, पाण्डु, पित्त, मेह, अजीर्ण, ज्वर, शोष, प्लीहा और वातनाशक है। यह रौप्यगर्भ पर्वत से निकलता है।

ताम्र शिलाजीत—ताम्र शिलाजीत में मयूरकण्ठ की सी त्राभा होती है, प्रियह तिक्त, करु रस, तीच्ण, करुविपाक, मेह, त्रम्लिपत, ज्वर श्रीर शोषनाशक है। यह ताम्रगर्भ पर्वत से निकलता है।

लोह शिलाजीत—लोह शिलाजीत तिक्त, नमकीन, कटुविपाक श्रोर शीतल है। लोह शिलाजीत ही सर्वश्रेष्ठ है। यह रसायन श्रोर त्रिदोपनाशक है।

यङ्ग शिलाजीत — वङ्ग शिलाजीत तिक्त, करु, गाढ़ा, कींचढ़ के तुल्य एवं वङ्ग सहश वर्णवाला होता है। यह सद्य जलोदर, प्रमेह, ज्वर, क्षय, शोप श्रोर विसर्प नाशक है। यह वङ्गगर्भ पर्वत से निकलता है।

सीसक शिलाजीत—सीसक शिलाजीत मृदु, उष्णवीर्य, तिक्त, क्रमुमवर्ण विशिष्ट, कटु रसप्रधान, वर्ण, तेज श्रोर वीर्य वृद्धिकर है, सीसकरार्भ पर्वत से यह निकलता है।

विशुद्ध शिलाजीत की परीक्ता दिधि—जो शिलाजीत अप्ति पर डालने में निर्भूमभाव से जल कर लौहमल (लौटिकिट) की तरह हो जाय और फिर जल में डालने पर वह पहले तेरता रहे फिर कम से तार की तरह गल कर नीचे वैठ जाय, वही उत्तम शिलाजीत है।

शिलाजीत के साधारण गुण—रिलाजीत श्रनम्ल, कषाय, कटुविपाक, नात्युण श्रोर नातिशीतल होता है। यह योगवाही, रसायन, छेदी, कफ, कम्प, श्रमरी (पथरी), शर्करा, मूत्रकृच्छ्र, क्षय, श्वास, मृगी, वात, ववासीर, उन्माद, वमन, कुछ, किमि, ज्वर, पाण्ड, शोथ, मेह, मन्दाप्ति, मेदरोग, यद्तमा, श्रल, गुलम, प्लांहा, श्राम, सव प्रकार के त्वचा श्रोर गर्भ के रोग, उदररोग, हृद्रोग श्रोर श्रामाशयरोगनाशक है।

शिलाजीत शोधनिविधि—त्रिफला के काय, गोहुग्य और मृंगराज का रस इनमें से किसी एक के द्वारा शिलाजीत को १ दिन मईन कर घूप में मुखा लेने से वह विशोधित होता है। वातष्म, पित्तष्म और कफष्म द्रव्यों में से प्रत्येक के अथवा सबके काथ में ७ दिन भावना देने से शिलाजीत का वीर्य यह जाता है।

## शिलाजतु भादनादिधि

शिलाजीत कि बिन् रण पूर्वीक्त द्रव्य के काय में प्रक्षिप्त करे और काथ सूख जाने पर फिर दूसरे काय में भिगी दे। ऐसा ७ दिन करने को ही भावना देना कहते हैं। शिलाजीत के समान काथ्य द्रव्य चौगुने जल में सिद्ध कर चौथाई (२) रहने पर टतार कर छान ले। छानते ही गर्म गर्म में शिलाजीत छोड़ दे। त्रोर उसे खूव मिला दे त्रोर सुखा ले श्रोर फिर उक्तरूप से काथ बना कर उसमें दे, ऐसा ७ दिन करे। इस तरह तैयार किया शिलाजीत श्रोर जारित लौह (शिलाजीत का चौथाई है लौहभस्म) मिलाकर दूध के साथ सेवन करने से सुखकर दीर्घ जीवन प्राप्त होता है। यह जरान्याधि—नाशक, देह को उत्कृष्ट दृता—सम्पादक, मेधा—स्मृतिवर्द्धक एवं शक्तिदायक है, इस श्रोषध को सेवन करते समय दुग्धप्रधान द्रव्य श्राहार करे।

शिलाजीत सेवन का समय और मात्राविधि—शिलाजीत के सेवन का समय ३ प्रकार है। ७ सप्ताह उत्कृष्ट प्रयोग, ३ सप्ताह मध्यम प्रयोग और एक सप्ताह अधम प्रयोग। इसकी मात्रा भी ३ प्रकार की है, जैसे कि-एक पल उत्तम मात्रा, आधा पल मध्यम मात्रा और २ तोला अधम मात्रा है। शिलाजीत सेवन के दिनों में विदाही (अति गरम दाह पैदा करनेवाली) एवं गुरुपाक द्रव्य और कुलथीं, काकमाची और कवूतर का मांस न खाय। शिलाजीतसेवी शिलाजीत सेवन से पूर्व सेवनकाल में तथा सेवन के वाद व्यायाम, धूपसेवन, वायुसेवन, चिन्ता, गुरुपाक (भारी) द्रव्य, विदाही द्रव्य, खद्टी वस्तु, भुनी हुई वस्तु, एवं दुष्पाच्य द्रव्य भोजन न करे। सावधानी से रखा हुआ वर्षा का जल, कूप का जल और मरने का जल पीवे।

विशुद्ध शिलाजीत की परीचा—जो शिलाजीत श्रिप्त पर डालने से शिविलड़ की श्राकृति धारण करे श्रीर उससे धुत्रां न निकले श्रीर जो जल में डालने से विलीन हो जाय, वहीं विशुद्ध शिलाजीत है।

शिलाजीत की भस्म विधि—शिलाजीत के समान मनःशिला, गन्धक श्रीर हरिताल मिलाकर विजौरा नीबू के रस में माड़ कर बनघुटिया (बाहर मैदान में वनाया हुआ गोवर का छेना) द्वारा पुटपाक करने से शिलाजतु भस्म होता है।

### शिलाजीत की सेवन विधि

शिलाजीत भस्म २ रत्ती, कान्तलोहभस्म २ रत्ती और पुखराज भस्म २ रत्ती एकत्र मिला कर त्रिफला और त्रिकटु चूर्ण एवं घृत के साथ पाण्ड, यद्तमा, मन्दामि, मेह, त्रश्री, गुल्म, प्लीहा, उदर अनेक प्रकार के शूल और योनिरोग आदि मे प्रयोग करे। रसायनविधि के अनुसार शिलाजीत ६ महीने सेवन करने से, बली-पलित रहित देह से एक सौ वर्ष सुख से जीवित रह जायगा।

३ र० चि०

द्रावण वर्ग ('गुडाटहुणमध्वाज्यगुडा द्रावकपञ्चकाः') श्रोर श्रमलवर्ग (चाड्वेरी, लक्कच, श्रमलवेत, जम्बीरक, विजारा, नागरङ्ग, दाडिम, केथ, तिन्दुक तिन्तडीक, श्रमलप्ट निम्वू) के साथ शिलाजीत पीसकर मृपा में वन्द करके कोयला द्वारा धोकनी में दम्ध करने से शिलाजीत से लोहे की तरह सत्त्व निकलता है। कर्र्रगन्धि शिलाजीत-पाण्डुवर्ण श्रोर वालुकाकृति होता है। यह शिलाजीत मूत्रकृच्छू, पथरी, मेह, कामला श्रोर पाण्डुरोगनाशक है। वड़ी कई मछली के काथ में मिगोने से यह शोधित होता है। पण्डित लोग इस शिलाजीत का मारण श्रोर सत्त्वपातन श्रावश्यक नहीं समकते।

श्रयुद्ध शिलाजीत सेवन के दोप—श्रयुद्ध शिलाजीत सेवन से दाह, मूच्छी, अम, पित्तविकार, शोणितस्नाव, भूख कम हो जाना श्रोर कोष्टवद्धता होती है।

श्रशुद्ध शिलाजीत सेवन से उत्पन्न विकार निवारण का उपाय— ३ मारो गोल मरिच का चूर्ण घी के साथ तेवन करने से श्रशुद्ध शिलाजीत सेवन का विकार शान्त होता है।

# श्रोषर नामक शिलाजीत

शिलाजीत २ प्रकार का है; १-पहाड़ से उत्पन्न और २-मिट्टी से उत्पन्न । औपर नामक शिलाजीत को मिट्टी से उत्पन्न कहा जाता है। यह एक प्रकार का रवेत क्षार विशेष है। यह अभिवर्धक, वर्णप्रसादक और सव मूत्ररोगों में हितकर है। पहाड़ से उत्पन्न शिलाजीत के प्रकार भेद और गुण पहले विशेष भाव से वर्णित हुए हैं।

# तुत्थ-(तृतिया)

तावे और गन्धक के योग से तृतिया वनता है। इसमें कुछ तांवे के से गुण हैं। यह करु, तिक्त, क्षार और कषाय रस विशिष्ट, वसनकारक, लघु है। यह भेदक, लेखन गुण विशिष्ट, शीतवीर्य, कफ, पित्त, विप, पथरी, कुष्ट, खाज, विचित्तका और किमिनाशक है।

त्तिया की शोधन विधि—(१) एक दिन नीवृ के रस में घोंटकर लघु पुट में पाक करे। इसके वाद ३ दिन खट्टी दही की भावना देवे।

(२) त्तिया से श्राधा गन्धक मिलाकर उसे श्रच्छी तरह घोंटे फिर उसे श्रच्छी तरह गजपुट में पाक करे। तुत्थ को श्रम्लवर्ग श्रीर तैल में श्रथवा तक (मट्ठा) में भिगोकर श्रश्वमूत्र श्रीर गोमूत्र में १ दिन दोलायंत्र से पाक करने पर यह शोधित होता है।

तृतिया का सत्त्व निकालना—समपरिमाण में सोहागे के साथ तृतिया को गलाने से उसका सत्त्व पतित होता।

विना अग्नियोग के तूतिया का सत्वपातन—तूतिया को पीसकर नीवू के रस में लोह पात्र में ७ दिन भिगोने पर भी इसका सत्त्व निकल आता है।

सयूरपुच्छ से ताम्न तैयार करने की विधि—मयूरपुच्छ (मोरपंख) को घी श्रोर शहद मिलाकर भरम करे। फिर उसके समान खइल (तैलादि का कल्क या खरी), गूगल, क्षुद्रमत्स्य, सोहागा, मधु, गुड़, पीपल बक्ष का लाख श्रीर घृत मिलाकर गोला पकार्व। फिर उस ताल को एक श्रम्भ मूपा में वन्द कर गजपुट मे पाक करे। इसके द्वारा जो ताम्र तैयार होता है उसे नागताम्र कहते है।

शूलनाशक अँगूठी — तूतिया का सत्व, नागताम्र और रवर्ण समभाग लेकर सुनार से अंगूठी तैयार करावें। इस अंगूठी को धारण करते ही सब शूल-चेदना तुरन्त निवारण होती है। इसके द्वारा सब प्रकार के विषदोष और भूत दोष नष्ट होते हैं। प्रसिद्ध रसाचार्य भालुिक ने कहा है कि तैल में इस अंगूठी को डालकर तपाकर वह तैल मर्दन करने से शरीर के सब स्थानों का दर्द बन्द हो जाता है इसके मर्दन से शीघ्र प्रसब चेदना भी निवारित होती है एवं प्रस्ति सुख से सन्तान प्रसब करती है। इस तैल के प्रयोग से सभी प्रकार के चक्षु रोग विनष्ट होते हैं।

तुरथक सत्व की भरम विधि—तितया का सत्त्व १ भाग, पारद २ भाग, गन्धक ४ भाग एकत्र नीवृ के रस मे ९ घण्टा मर्दन कर उसे धत्रे के पत्तों में बॉधकर गजपुट में पाक करें। पुट शोतल होने पर तुत्थ का सत्त्व चृर्ण कर लें। यही तुत्थकसत्त्व भरम है।

श्रशुद्ध तुत्थक सेचन से उत्पन्न विकार निवारण का उपाय— ३ दिन विजीरा नीवू का रस पान करने से श्रशुद्ध तूतिया सेवन से उत्पन्न विकार निवारित होता है।

#### सस्यक

यह मयूर के काठ की भांति चिविध रंगयुक्त श्रीर श्रात भारी होता है। सस्यक सर्वदोषनाशक एवं विषदोष, हहोग, शूल, श्रश्नं, कुछ, श्रम्लिप्त, मलादि का रुकता श्रीर सफेद कुछ रोग को शान्त करने वाला है। यह रसायन, वमन श्रीर विरेचनकारक एवं दृषित विष नाश करने वाला है। रक्तवर्ग (दाड़िम, किंशुक, लाक्षा, वन्धूक पुष्प, हिंदा दारहरिद्रा, कुसुम्भ पुष्प, मिलिएन दाड़िमं किंशुकं लाक्षा वन्धूकश्च निशाह्यम्। कुसुम्भपुष्पं मिलिए इत्येते रक्तवर्गकाः') की भावना देने से श्रथवा स्नेहचर्ग द्वारा ७ वार भिगोने से सस्यक शोधित होता है। गाय, मेंस श्रीर वकरी के मूत्र में तीन प्रहर दोलायन्त्र द्वारा पाक करने से सस्यक श्रीर खपरिया शोधित होते हैं। श्राक के रस, गन्धक श्रीर सोहागे के साथ मर्दन करने के वाद मूला में वन्दकर कुक्कुट पुट में दग्ध करने से सस्यक मृत हो जाता है। सस्यक की भरम उसके चौथाई है सोहागे के साथ करख तैल में १ दिन भिगो कर श्रन्धमूणा में ३ दिन कोयलो की श्रिप्त से मही में दग्ध करने से इन्द्रगोप कींड़ की भांति लाल रंग का श्रित सुन्दर सस्यकसत्त्व निकलता है। श्रथवा थोड़ा सोहागा श्रीर नीवू का रस इनके साथ मर्दनपूर्वक मूणावद्ध करके धौकनी से दग्ध करने पर भी सस्यक का तांवे के रंग का सत्त्व निकलता है।

श्रथवा शोधित सस्यक श्रोर मनःशिला पूर्वोक्त श्रोपधो के साथ मर्दन करके दग्ध करने पर भी सत्त्व निकलता है। इस तरह श्रनेक विधि से सस्यक का सत्त्व निकलता है।

सस्यक सत्त्व की ऋँगूठी—कठिन सीसक सत्त्व के साथ यह सस्यक सत्त्व मिलाकर उसकी ऋंगूठी या तावीज स्पर्श करने से तुरन्त शूल निवारित होता है। यह तावीज़ स्थावर—जङ्गम विष ऋौर भूत—डाकिनी की दृष्टि से उत्पन्न पीड़ाओं का नाश करता है। यह देखी हुई विश्वस्त वात है। ऋग्नि से तपाये हुए तेल में इसकी मुद्दिका को डालकर उस तैल का मर्दन करने से किसी भी स्थान का शूल तुरन्त निवारित होता है। यह शीघ्र प्रसवकारक और नेत्र रोगनाशक है।

#### चपल

चपल चार प्रकार का है, १-गौरवर्ण, २-श्वेतवर्ण, ३-ग्राहणवर्ण श्रौर ४-द्वाहणवर्ण। उनमें स्वर्णवर्ण श्रौर रौप्यवर्ण चपल विशेष रूप से रसवन्धकारक है। श्रन्य दो प्रकार का अर्थात् लाल और काला चपल लाख की तरह जल्द गल जाता है, एवं वे निष्पल अर्थात् गुणहोन होते हैं। अग्निताप से वज्ज की तरह चपल शीघ्र गल जाता है इसी से इसका नाम चपल कहा गया है। चपल लेखनकारक, स्निग्ध, देह की हट्ताकारक रसराज का सहाय, उप्णवीर्य, एवं तिक्त और मधुर रस है। यह स्फटिक कान्ति पट्कोण, स्निग्ध, गुरु, त्रिदोषनाशक, अत्यन्त वृष्य और रसवन्ध कारक है। किसी किसी के मत से चपल महारसों में गिना जाता है।

जम्होरी, कांकरोल श्रोर श्रादी के रस में भावना देने से चपल शोधित होता है। श्रयवा चपल पत्थर श्रथम चूर्ण करके उस चूर्ण को कांजी, उपविष श्रोर विष के साथ मर्दन करके उसका गोला बनावें, फिर पातनथन्त्र में विधिपूर्वक पाक करके उस पातित करें। इस तरह चपल शोधित होता है।

# रसक (खर्पर)

रसक दो प्रकार का है; दुर्दर श्रोर कारवेक्कक । दलविशिष्ट रसक को दुर्दर रसक श्रोर दलहीन रसक को कारवेक्कक रसक कहते हैं, इसमें दुर्दर रसक सत्त्व पातन कार्य में श्रोर कारवेक्कक रसक श्रोपध किया में व्यवहार किया जाता है। रसक सर्वमेहनाशक, कफिपत्तिन्वारक, नेत्ररोगनाशक श्रोर क्षयनिवारक है। यह लौह श्रोर पारे का रझनकारक है। रस श्रोर दोनो प्रकार का रसक देह के लिये श्रत्यन्त दढ़ताकारक है। रस श्रोर रसक को श्रिम्न ताप में स्थिर रख सकने से देह सुदृढ़ होता है। रसक कड़वीं लौकी के रस में घोंट कर पाक करने से शुद्ध, निर्दोप श्रोर पीले रंग का होता है। रसक को श्रिम्न पर तपाकर सात वार विजोर के रस में डवाने से भी निर्मल होता है। श्रथवा रसक को श्रिम पर तपाकर सात यार विजोर के एक वार नरमूत्र, श्रश्चमूत्र, तक श्रोर काँजी में स्थाने से भी शोधित होता है। रसक १ महीने तक नरमूत्र में भिगोकर रखने से, इस रसक द्वारा शुद्ध पारद, ताम्र श्रोर रोप्य विशुद्ध स्वर्ण के रंग के हो जाते है।

हलदी, त्रिफला, धूना, संधानमक, घर का धूमसा, सोहागा और भेला प्रत्येक चौथाई परिमाण, ये द्रव्य और कॉजी के साथ खर्पर मर्दन करके उसे बैगन के मूषा में स्थापन कर लेपन करे।

सूख जाने पर उसका मुखवन्ध करे श्रौर दूसरी मूषा में उसे स्थापित करके , हापर या धौकनी में पकावे। मूषा की खपरिया गलकर जब उससे नीली श्रौर सफेद

लौ निकलने लगे तब चिमटे से उस मृता को नीचे उतार कर धार-धार भ्या उतार ले, जिससे चैंगन की मूपा फट न जाय—हट न जाय, उस तरह रसक से वज्ज की तरह सत्त्व निकलता है। तीन-चार वार्टम अकार दरा करने के इसका सब सत्त्व निकल आता है। हरीतकां, लाग, जमीन का मीए, उस्मी. धूमसा श्रोर सुहागा इन सबके साथ रसक मईन कर मृपा में बन्ट कर पूर्गीटी में दग्ध करने से भी रसक का शुद्ध सत्त्व निकलता है। अथवा लाग, गुरू, स्मेद सरसो, हरीतकी, हल्दी, धूना श्रीर सोहागा इनके साथ रमक नृशं करके गाय के दूध श्रोर घी के साथ उसे पाक करे। फिर उसका गोला बनाकर वंगन के मूषा में वन्द कर वार वार हापर या श्रंगीटी में द्राध करके पत्थर के वर्तन में ढाल दे। इस तरह वज्ज की तरह मनोहर सत्त्व निकलने पर उसे ब्रहण कर ले। यह रसक सत्त्व श्रोर हरताल खपरे में रराकर श्रिप्ते पर तपावे श्रोर लोहे के दंड द्वारा मर्दन करे तो उससे वह सत्त्व भस्मीभूत होगा। यह भस्म नम परिमित कान्तलोह भरम के साथ मिलाकर उसे १ माशा लेवे। त्रिफला के काय में तिल का तैल डालकर एक रात कान्तलोह के पात्र में रखना चाहिंगे, फिर उस काथ के साथ इस श्रोपध का प्रयोग करे। इसके सेवन से मधुमेह, पित्तविकार, क्षय, पाण्डु, शोथ, गुल्म, सोमरोग, विपमज्वर, कास, श्वास, हिचकी एवं लियों का रक्तगुल्म, प्रदर, योनिरोग श्रौर रजःशूल निवारित होता है।

### गेरू

गेरू दो प्रकार का है। पाषाण गेरू ख्रीर सोना गेरू।

कठिन श्रीर ताम्रवर्ण गेरू को पाषाण गेरू कहते हैं श्रीर जो श्रत्यन्त रक्तवर्ण, स्निग्ध श्रीर नरम हो वह सोना गेरू कही जाती है। सोना गेरू-स्वादिष्ट, स्निग्ध, शितळ, कषाय रस, नेत्ररोग में हितकर, रक्त-दुष्टिनाशक श्रीर रक्तिपत्त, हिचकी, वमन श्रीर विपदीप निवारक है। पाषाण गेरू—सोना गेरू से कम गुण वाली है। गोदुग्ध की भावना देने से गेरू शुद्ध होता है। क्षार श्रीर श्रम्ल द्वारा, मिगोने से सत्त्व निकळता है। गेरू का सत्त्व पारे के साथ मिलने से वह श्रिधक गुणशाली होता है। गेरू, पाशु ळवण, सोंठ, वच, कैंट एवं कांजी, ये द्रव्य एकत्र मर्दन करके प्रलेप तैयार करे। उक्त प्रलेप त्रिदोष श्रीर सान्निपातिक ज्वरोत्पन्न कर्णमूल से उत्पन्न शोध मे विशेष उपकारी है। पित्तोत्वण ज्वर मे गेरू केवल

मधु मिला कर श्रयवा पारा, गन्धक श्रौर मधु के साथ व्यवहार करे। इसे धिनयां, खसखस श्रौर लालचन्दन के काथ के अनुपान के साथ सेवन करने से रक्तिपत्त विनष्ट होता है। ग्रथवा इलायची, चीनी, सेंघानमक, दाहहल्दी, हरीतकी, गेरू श्रोर रसोत इनको एकत्र मर्दन करके मलहम वनाकर श्रज्जन की तरह व्यवहार करे तो सभी प्रकार के चक्षरोग विनष्ट होते हैं। गेरू, रक्तचन्दन, लाख, मालती की कली घोटकर श्रॉखो के चारो श्रोर लेप करने से नेत्रवण नष्ट होते है। कांजी के साथ ३ मासे गेरू दिन मे ४ वार सेवन करने से शीतिपत्त रोग नष्ट होता है। पकी इमली श्रोर गेरू एकत्र मर्दन कर प्रलेप देने से सव शीतिपत्त श्रोर उदर्द रोग शान्त होता है। तीन मासे गेरू जल के साथ सेवन करने से पित्तज व्याधि नष्ट होती है।

पित्त विकार जिनत विसर्प और चर्मरोग में गेरू को घृत के साथ मर्दन कर प्रलेप देने से विशेष फलप्रद होता है। शरीर का कोई स्थान जल जाने पर उसपर नारियल का तल, घृत और गेरू मिलाकर प्रलेप देने से जलन दूर होती है और फफोला नहीं पड़ सकता । आम की गुठलों का चूर्ण, विड्डा, हलदी, रसीत और केंट के साथ गेरू जल के साथ पीस कर (घाँट कर) प्रलेप देने से योनिकण्ह दूर होती है।

### कसीस (हीराकस)

कसीस दो प्रकार की है—१-वालुकाकसीस और २-पुप्पकसीस। बालुका और पुष्प दोनों कसीस ही क्षार पदार्थ, अम्लरस, अगुरु के धुएँ के जैसे वर्ण वाले, उष्णवीर्य, विषनाशक, श्वित्रनिवारक और केशरक्षक हैं। उनमें पुष्प कसीस अधिक प्रसिद्ध है। यह उष्णवीर्य कषाय-अम्लरस, नेत्रों को अत्यन्त हितकर, केशरक्षक एवं विषदोष, श्वित्र, क्षय, व्रण और वातश्लेष्मज रोगों का विनाश-कारक है।

एक वार मृझराज के रस की भावना देने से ही हीराकस शोधित होता है। तुवरी से सत्त्व निकालने के नियमानुसार कसीस का सत्त्व निकाला जाता है। पित्त द्वारा भावना देने पर भी कसीस शोधित होता है।

गन्धक जारित कसीस ख्रोर कसीस जारित वैक्रान्त (गोतास) दोनों सम-भाग मिलाकर त्रिफला ख्रौर विडङ्ग चूर्ण तथा विषम परिमाण घृत ख्रौर मधु के साथ मिलाकर श्राधा तोला प्रातःकाल सेवन करने से श्वित्र, पाण्डु, क्षय, गुल्म, प्लीहा, शूल विशेष कर ववासीर शीघ्र नष्ट होता है। रसायन विधि के श्रामुसार यह एक वर्ष सेवन करने से श्राम दोप शोधित होता है मन्द श्रिम उद्दीप्त होती है। एवं वली-पलित श्रादि निश्चित ही दूर होते हैं।

# तुवरी (सौराष्ट्र मृत्तिका)

सौराष्ट्र देश के पत्थर से तुवरी (सौराष्ट्र मृतिका) नामक चिकनी मिटी उत्पन्न होती है। यह वस्त्र पर लेपन करने से वस्त्र मंजीठ का सा रंगा हुआ ठाठ रंग का हो जाता हैं। पीतिका और फुल्लिका नामक एक और तुवरी है। उनमें पीतिका (काठघड़ि) - कुछ पीले रङ्ग की, गुरु, स्निग्ध, विपनाशक, एवं प्रण और सर्व प्रकार के कुछ रोग में उपकारक है। फुल्लिका - शुक्ठवर्ण, हरुकी, स्निग्ध और अम्ल-रस युक्त है। इस फुल्ल तुवरी का ताम्र पर लेपन करने से ताम्र लोहे का आकार धारण कर लेता है।

तुवरी का दूसरा नाम है काड्क्षी। यह कटु, कषाय, श्रमलरस युक्त, कण्ठ 'शोधक, केशों को हितकर, व्रणनाशक, विपनिवारक, श्वित्रनाशक, नेत्रों को हितकारी, त्रिदोप को शान्त करनेवाला श्रोर पारद के जारण कार्य में उपयोगी है।

तुवरी ३ दिन कॉजी में भिगोकर रखेने से शोधित होती है एवं क्षार वर्ग (सज्जी, सुहागा ख्रोर जवाखार) ख्रोर ख्रम्लवर्ग के साथ मर्दन करके हापर में दग्ध करने से इसका सत्त्व निकलता है। ख्रथवा इसको गोरोचन द्वारा सो वार भावना देकर शोधन करे फिर हापर में दग्ध करके इसका सत्त्व पातन करे।

#### कङ्कुष्ठ

हिमालय के प्रचण्ड शिर्खर पर कड़ुष्ठमृत्तिका उत्पन्न होती है। कड़ुष्ठ दो प्रकार का है, १-निलका कुड़ुष्ठ श्रोर २-रेणुक कुड़ुष्ठ । उनमें निलका कड़ुष्ठ पीत वर्ण, गुरु श्रोर स्निग्ध होता है श्रोर यही उत्कृष्ट है; रेणुक कड़ुष्ठ श्यामक-पीतवर्ण, लघु श्रीर सत्त्वहीन होता है। यह निकृष्ट है।

कोई कोई कहते हैं कि सद्योजात (ताज़ी) हाथी की विष्ठा से श्याम पीत वर्ण कडूछ उत्पन्न होता, है, यह विरेचक है। और कोई कोई कहते हैं, तेजि-

वाहरनाल श्वेत पीत वर्ण कड्ड छरूप में परिणत होता है। वह श्रत्यन्त विरेचक, सत्त्वहीन, वहुविकारजनक एवं रसिक्रया श्रीर रसायन कार्य में श्रनुपयोगी है।

कङ्कष्ठ करुतिक्त रस, उष्णवीर्य, श्रात विरेचक है एवं व्रण, उदावर्त्त, श्रूल, गुल्म, प्लीहा श्रोर ववासीर श्रादि रोगनाशक है।

स्यावर्त ( हुड़हुड़िया ), केले की जड़, कड़वी ककड़ी, कड़वी तोरई, देवदाली, सहजना की छाल, कुदरती जमीकन्द, नीरकना और काकमाची, इन द्रव्यों में अत्येक के रस द्वारा एवं लवण क्षार और अमल द्रव्य द्वारा अनेक वार भावना देने से कड़ुछ आदि रस और उपरस शोधित होते हैं। और इन सवोंकी भावना से दग्ध करने पर सब उपरसों का सत्त्व निकल आता है। शुण्डी के काथ से व वार भावना देने पर भी कड़ुछ शोधित होता है। कड़ुछ सत्त्वमय है, इस कारण इसका सत्त्व निकालने का विधान नहीं लिखा गया है।

विरेचन योग्य व्यक्ति को विरेचन के लिये एक यव (जौ) मात्रा में कड़ुष्ठ, मलरोधक द्रव्य के साथ सेवन करे, उससे क्षण भर में शरीर की आमपूर्णता नष्ट होती हैं। पान के साथ इसे भक्षण करे तो विरेचन होकर आण विनष्ट होता है।

कब्रुष्ठ सेवन से विषिक्रिया प्रकाशित होने पर उस विष के नाश के लिये वबूल की जड़ के क्वाथ के साथ सम परिमित जीरा श्रीर सुहागा वारम्बार सेवन करना श्रावश्यक है।

# 'स्फटिक'( फिटांकरी)

तुवरी के सत्त्व को स्फटिक कहते हैं। इसे अग्नि पर गलाने से शोधित होता है। स्फटिक-ग्रण, उरक्षत और शूल आदि रोग नष्ट करती है। यह पारद के जारण कार्य में सहायता देती है। यह 'देखने में उत्कृष्ट सेंधे नमक की सी आभावाली होती है।

#### साधारण रस

(१) किम्पिल्ल (निसीत), (२) गौरीपाषाण, (२) नौसादर, (४) कौड़ी, (५) अभिजार (समुद्रफल), (६) गिरिसिन्दूर, (७) हिंडुल और (८) मुद्दीसंग ये आठ साधारण रस हैं। नागार्जुन आदि पण्डितगण इन्हें रसों में ही गिनते हैं।

- (१) किम्पल्लक (कमलागुँड़ि) ईंट के चूर्ण की तरह और वहुत चिन्द्रका (चकचका) चिशिष्ट होता है। यह अत्यन्त विरेचक है। किम्पल्ल सौराष्ट्रदेश मे पैदा होता है। पित्त, व्रण, आध्मान, मलमूत्रादि का रकना, रले मा, उटररोग, क्रिसि, गुल्म, अर्थ, आमदोष, शोध, ज्वर और शूल आदि विरेचन साध्य सव रोग इससे विनष्ट होते है।
  - (२) गौरीपाषाण—१-पीत, २-विकट और २-हतचूर्णक नाम भेद से गौरीपाषाण तीन प्रकार का है। इनमें हतचूर्णक फिटिकरी की तरह, विकट राष्ट्र की तरह और पीत हल्दी के रंग के समान पीला होता है। हतचूर्णक की अपेक्षा विकट और विकट की अपेक्षा पीत गौरीपाषाण अधिक गुणशाली है। गौरीपाषाण को करेला फल में वन्द करके, हांडी में रख सिद्ध करने से विशोधित होता है। हिरताल सत्त्व निकालने के नियमानुसार इसका सत्त्व निकालते है। गौरीपाषाण का शुद्ध सत्त्व शुभ्रवर्ण, हिनम्ध, दोषनाशक, पारद का वन्धनकारक और वीर्य-वर्धक है।
    - (३) नौसादर—वांस के श्रद्धार वा पीलू की लकड़ी सड़ने से उससे जो क्षार पदार्थ उत्पन्न होता है, उसी को नवसार या नौसादर कहते है। इसका दूसरा नाम है चूलिकावरण। पक्की ईंटों पर जो रवेत हलका नमक की तरह पदार्थ पदा होता है वह भी नौसादर कहा जाता है। नौसादर पारे का जारण एवं धातुश्रों का द्रावण करने वाला, जठरागि को वढ़ाने वाला एवं गुलम, प्लीहा, मुखशोप श्रोर त्रिदोष का विनाशक है। इसका सेवन करने से मुक्त मांसादि जीर्ण हो जाता है। यह विड द्रव्य (रस जारण) में गिना जाता है।
      - (४) कोडी (कपर्वक)—जो कौड़ी (वराटिका) पीताभ, पीठपर प्रन्थि वाली त्रोंर वहीं गोल हो उसे ही रसवैद्य रसकार्य में निर्देश करें। इसका एक नाम चराचर है। छः माशे की कौड़ी उत्तम, चार माशे की मध्यम त्रौर तीन माशे की निकृष्ट है। वराटिका—परिणामादि शूलंनाशक, प्रहणी त्रौर क्षयरोग निवारक एवं कदुरस, उप्णवीर्य, त्राप्ति–दीप्तिकर, शुक्रवर्द्धक, चक्षु को हितकर त्रौर वातरलंग्मनाशक है। यह पारद-जारण में प्रशस्त त्रौर विड द्रव्य में गिनी जाती है। पूर्वीक्त लक्षणयुक्त वराटिका के त्रातिरिक्त अन्यान्य वराटिका गुरु और वित्त-रलंग्नजनक है।

- (५) श्रिग्निजरि—जो श्रिग्निक की जरायु समुद्र की लहरों से उछलती हुई स्थल में श्रा पड़े एवं धूपकी ताप से सूख जावे वही श्रिग्निजार कही जाती है। श्रिग्निजार-त्रिदोपनाशक, धनुस्तम्भादि वातव्याधि—निवारक, पारद का वीर्यवर्द्धक, जठराग्नि का उद्दीपक श्रीर जीर्णकर है। यह समुद्र के खारे जल से पूर्व ही शुद्ध हो जाती है। इसलिये इसके शोधन करने की श्रावश्यकता नहीं है।
- (६) गिरिसिन्दूर—महागिरि के पाषाण गर्भ से लाल रंग का सूखा जो थोड़ा सा रस पदार्थ मिलता है वही गिरिसिन्दूर कहा जाता है। गिरिसिन्दूर त्रिदोपनाशक, भेदक, रसवन्धन मे प्रशस्त, देह को हढ़ करने वाला और नेत्रों को हितकर है।
- (७) हिङ्कुलु—हिङ्कलु दो प्रकार का है—१-शुकतुण्ड श्रोर २-हंसपाक इनमें शुकतुण्ड थोड़े गुणवाला है, इसे चर्मार भी कहते हैं। श्रोर जो प्रवालवर्ण श्रोर श्वेत रेखा वाला है, उसका नाम ही हंसपाक है। हिङ्कुलु—सर्वदोषनाशक, श्रानिवर्द्धक, श्रातिशय रसायन, सर्वरोगनिवारक, गृप्य श्रोर जारण किया में श्राति प्रशस्त है। हिङ्कुलु से जो पारा निकाला जाता है, वह जीर्ण गन्धक पारे के साथ समान गुणवाला है।

#### हिङ्गल की शोधनविधि—

- (१) त्रादी त्रयवा मदार के रस में सात वार भावना देकर सुखाने से हिंडुलु निर्दोष होता है।
- (२) हिंद्धल स्वभावतः ही सुन्दर रक्तवर्ण है, भेड़ी के दुग्ध श्रोर श्रमलवर्ग द्वारा सात बार भावना देकर धूप में सुखाने से वह उत्कृष्ट कुड़ुम की नाई वर्ण वाला श्रोर विशुद्ध होता है।
- (३) हिंडुल को तीन दिन जयन्ती (जेथी) पत्तो के रस में अथवा कॉजी में अथवा गोमूत्र में अथवा नीवू के रस में दोलायन्त्र से पाक करने पर शोधित होता है।

हिङ्कल का सत्त्व पातनः—जल वाले पातन यन्त्र में हिङ्कल डालने से उसमें से पारा रूप सत्त्व निकलता है।

### हिङ्कल से पारा निकालने की विधि-

(१) हिङ्जल के चावल के समान दुकड़े कर नीवू के रस में अथवा आमरूल

शाक के रस में ४ दिन वार वार (७ वार) भावना देवे। फिर एक हांड़ी में उसे स्थापन करके नीवू के रस या आमरूळ शाक के रस में डुवा दे। तदनन्तर एक सकोरे को खिड़्या से िक्ष कर उससे हांड़ी का मुख डक कर उसकी सिन्ध अच्छी तरह वन्द कर अर्घ्वपातन यन्त्र विधान से उस हांडी के नीचे आप्त और अपर सकोरे के अन्दर जल भर देवे। जल गरम हो जाने पर उसे फेक कर शीतल जल भर देवे इस तरह ३० वार जल वदलना आवश्यक है। इस प्रक्रिया से नीचे के वर्तन का पारा निर्दोष होकर खिड़्या से लिप्त सकोरे के तलदेश में चिपक जायगा। शीतल होने पर सिन्ध स्थल खोल कर खिड़्या संयुक्त पारा छुड़ा कर कपड़े में छान ले और जल अथवा काजी में कई वार धो लेवे।

(२) पारद प्रसङ्ग में हिङ्जल से वहुत सहज साध्य रसाकर्षण विधि लिखी हुई है।

श्रायुद्ध हिङ्कुल सेवन जनित दोष—श्रशुद्ध हिङ्कुल सेवन करने से कुष्ट, वलेंक्य, क्रम, मोह श्रोर मस्तिष्क के विकारजनित श्रानेक प्रकार के रोग पैदा होते हैं।

श्रगुद्ध हिङ्कुल सेवन से उत्पन्न दोषों की शान्ति—योग्य परिमाण (३ माशे से ६ माशे तक) विशुद्ध गन्धक दूध के साथ सेवन करने से श्रगुद्ध हिद्दुल जनित दोप की शान्ति होती है।

#### भूनाग

वर्षा श्रोर शरद ऋतु में वर्षा से गीली मिट्टी से भूनाग की उत्पत्ति होती है। यह एक प्रकार की मृत्तिका से उत्पन्न किमि विशेष है। भूनाग चार प्रकार का है। १-स्वर्ण की खान के निकट की मिट्टी से उत्पन्न भूनाग, २-रौप्य की खान की निकटस्य मृत्तिका से उत्पन्न भूनाग, ३-लौह की खान की निकटस्य मृत्तिका से उत्पन्न भूनाग छोर ४-ताम्र की खान की निकटस्य मृत्तिका से उत्पन्न भूनाग छोर ४-ताम्र की खान की निकटस्य मृत्तिका से उत्पन्न भूनाग। प्रथम कहा हुत्रा तीन प्रकार का भूनाग दुर्लभ है श्रोर चतुर्थ प्रकार श्रार्थात् ताम्र की खान की निकटस्य मृत्तिका से उत्पन्न भूनाग सुलभ है।

सामान्य भूमि से उत्पन्न भूनाग श्रालप गुण वाला है। श्रमल संयुक्त खारी जल यें एक दिन सिद्ध करने से भूनाग शोधित होता है।

### भूनाग का सन्वपातन

- (१) शरत काल में उत्पन्न भूनाग को मातगुड़, मधु, घृत सुहागा, केले की जड़ श्रोर जमीकन्द के साथ एकत्र मर्दन कर एक गोला पकावे। फिर उस गोले को सुखाकर जब तक सत्त्व न निकले तब तक उसे तपाता रहे। यह सत्त्व मल श्रंश से पृथक कर लेवे।
- (२) दूध के साथ सिद्ध कर भूनाग-मृत्तिका द्वारा अथवा सहागे द्वारा मर्दन करे फिर तपावे तो उससे सत्त्व निकलता है। यह सब तरह के कुष्ठ और ज्ञण नष्ट करता है। इसे जल के साथ सेवन करने से सब अकार के स्थावर-जङ्गम विष नष्ट होते हैं। यह पारे को अगिन सहन करने की शक्ति देता है। यह मयूरपुच्छ सत्त्व के सहश गुणवाला है।

मृद्दारशृङ्गकः—गुजरात देश मे अर्बुदगिरि के निकटवर्ती स्थानों में मृद्दारशृङ्गक उत्पन्न होता है। यह सीसक सत्त्व की भांति भारी, श्लेष्मानाशक, शुक्ररोगनाशक, पारद की बन्धन किया में उत्कृष्ट और उत्तम केशर बन है।

विजोरे श्रोर श्रादी के रस की ३ रात भावना देकर जारित कर सुखाने से मृहारश्वज्ञक एवं श्रन्यान्य साधारण रस दोषशून्य होता है। चाहे जितने ही प्रकार के सत्त्व हो, वे सभी शुद्धिवर्ग में कहे हुए द्रव्यों के साथ मिलाकर तपाने से शोधित होते हैं श्रोर परस्पर मिल जाते है।

राजावर्तः—राजावर्त अलप लाल श्रौर वहुल परिमाण में नीलिमा मिले हुए वर्ण वाला है। जो राजावर्त भारी श्रौर चिकना है वहीं श्रेष्ठ है। इसके विपरीत गुणवाला होने से वह मध्यम कहा जाता है। राजावर्त—अमेह, क्षय, श्रर्थ, पाण्ड, रलेष्मरोग श्रौर वायुरोग निवारक एवं श्रिमवर्धक, पाचक, वृष्य श्रौर रसायन है।

नीबू के रस, गोमूत्र श्रोर क्षार पदार्थ के साथ दो-तीन बार भिगोने से राजावर्तादि धातुये विशुद्ध होती हैं। सिरस के फूल श्रोर श्रादी के रस द्वारा भी राजावर्त शोधित होता है।

राजावर्त चूर्ण करके विजारे के रस श्रीर गोमूत्र के साथ मर्दन कर ७ वार पुटपाक करने से मृत होता है। राजावर्त चूर्ण के साथ मनःशिला चूर्ण श्रीर घृत मिला कर भैंस के दूध के साथ लोहे की कढ़ाई में पकावे फिर सोहागा श्रीर

पद्मगव्य के साथ गोला वनाकर इसे जारित करे, फिर खैर की लकड़ी के कोयलों द्वारा तपाने से राजावर्त का ऋति सुन्दर सत्त्व निकलता है।

इस नियम से गेरू भी शोधित होता है श्रोर उसका पीत श्रोर रक्तवर्ण का सुन्दर सत्त्व निकलता है।

#### अञ्जन

ग्राज्ञन ५ प्रकार का है, १-सोवीराज्ञन, २-रसाज्ञन, ३-स्रोतोज्जन, ४-पुष्पाज्ञन ग्रोर ५-नीलाज्ञन । सोवीराज्ञन-धूम्रवर्ण, शीतल, रक्तिपत्तनाशक, विष, हिचकी ग्रीर नेत्ररोग निवारक श्रीर व्रण का शोधन तथा रोपण कारक है । रसाज्ञन पीला सा श्रीर चर्मरोगनाशक, श्रास श्रीर हिचकी निवारक, वर्णवर्द्धक श्रीर वायु, पित्त तथा रक्त का विनाशकारक है । स्रोतोज्जन-शीतल, स्निग्ध, कषायरस, स्वादिष्ट, लेखनकारक, चक्षु को हितकर एवं हिचकी, विष, वमन, कफ, पित्त श्रीर रक्तविकार को दूर करनेवाला है । पुष्पाज्ञन-श्रवेत वर्ण, रिनग्ध, शीतल, सर्व नेत्ररोगनाशक, श्रात दुर्जय हिचकी को दूर करने वाला एवं विष श्रीर उवर नाशक है । नीलाज्ञन-गुरु, स्निग्ध, चक्षु को हितकर, त्रिदोषनाशक, रसायन, स्वर्णमारक श्रीर लोह को मुलायम करने वाला है ।

युजराज के स्वरस की भावना देने से सब श्रज्जन शोधित होते हैं। मनःशिला के सत्त्वपातन नियमानुसार सभी प्रकार के श्रज्जनों का सत्त्व निकाला जाता है।

स्रोतोञ्जन की श्राकृति वल्मीक के शिखर की भांति तोड़ कर जण्ड—खण्ड करने से उसमें नील कमल की सी श्राभा लक्षित होती है श्रीर विसने से गेरू का सा वर्ण देखा जाता है, ये सब विषय निशेष रूप से लच्य करके स्रोतोञ्जन ग्रहण करें: एवं उसमें गोवर का रस, गोमूत्र, घृत, मधु श्रीर बसा की ७ वार भावना दें। इस स्रोतोञ्जन द्वारा पारा शीघ्र वद्ध होता है।

सूर्यादर्त की भावना देने पर भी रसाजन शोधित होता है। राजावर्त के नन्यपातन के नियमानुसार भी स्रोतोजन का सत्त्वपातन किया जा सकता है।

### हरिताल

गोमल घोर गन्यक मिलने से हरिताल वनता है। हरिताल ४ प्रकार का है। १-संग्रापत्र हरिताल, २-पिण्डहरिताल, ३-गोदन्तहरिताल छोर ४-वक्रदाल गिर्माल। इनमें श्रासल गोदन्त हरिताल छोर वक्रदाल हरिताल प्रायः मिलते है।

वंशपत्र हरिताल—यह स्वर्ण के वर्ण वाला, गुरु, स्निग्ध, मृदु, चमकदार एवं सूद्रम और सूद्रमस्तर विशिष्ट है। यह सब प्रकार की व्याधि एवं जरा का नाशक और रसायन है।

पिण्डहरिताल—यह निष्पन्न, पिण्डाकार, श्राल्प सत्त्व वाला एवं गुरु है। यह विशेष रूप से ख्रियों का रजोनाशक श्रीर श्रान्यविध हरितालों की श्रापेक्षा हीनगुण सम्पन्न है।

गोद्नत हरिताल—इसके वड़े-वड़े दुकड़े मिलते है। यह श्राति चिकना श्रीर गाय के दॉत की श्राकृति वाला होता है। यह भारी है श्रीर इसके भीतर हरी श्रीर नीली रेखा देख पड़ती है।

वकदाल हिरताल—वकदाल हिरताल अति मृदु और अत्यन्त शीतल गुण सम्पन्न होने के कारण हिम हिरताल कहलाता है। यह पत्रयुक्त, भारी, श्वेतकुष्ठ और अन्य सभी प्रकार के कुष्ठों का निवारक है।

रोधित हरिताल के गुण—विशुद्ध हरिताल—श्लेष्मा, रक्तदुष्टि, वातरक्त, विष, वायुप्रकोप श्रोर भूतदोष नाश करता है। यह श्रीपुष्पनाशक, हिनम्ध, उष्णवीर्य, कट्ट, दीपक, कुष्टनाशक श्रोर श्राग्निवर्द्धक है।

मारण योग्य हरिताल — भरम करने के लिये वंशपत्र हरिताल ही सबसे श्रेष्ठ है। पिण्ड हरिताल भरम के काम मे नहीं लाया जाता। कर्कटरोग और गलत्- कुष्ठ दूर करने में गोदन्त हरिताल श्रेष्ठ है। श्वित्र नाश करने के लिये वकदाल हरिताल भस्म प्रयोग करे।

श्रशुद्ध हरिताल सेवन से दोष—अशुद्ध हरिताल-श्रायुनाशक, कफ, वायु श्रोर प्रमेहकारक एवं शोथ, विस्फोटक श्रोर श्रद्ध सकारक है। जो हरिताल श्रायार्थ रूप से शोधित श्रोर भस्मीभूत न हो, उसके सेवन से देह का सौन्दर्य नष्ट होता है श्रोर श्रनेक प्रकार के रोगों की उत्पत्ति होती है। श्रात्र प्रवार हरिताल को प्रथम यथाशास्त्र शोधन करके भरम करे। भस्मीभूत हरिताल सर्वरोगनाशक हैं।

# हरिताल की शोधन विधि

(१) क्रूष्माण्ड (पेठा) के जल में अथवा तिलक्षार जल में अथवा चृना के जल में दोलायन्त्र से एक दिन पकाने पर हरिताल शोधित होता है।

3

- (२) चूने के जल में सात दिन भावना देने से वंशपत्र हरिताल शुद्ध होता है।
- (३) हरिताल को कॉजी मिले हुए चूने के जल में कूष्माण्ड जल में, तिल के तैल में और त्रिफला के क्वाथ में दोलायन्त्र से तीन घण्टे पकाने से शुद्ध होता है।

### हरिताल भस्म की सहज विधि

- (१) विशुद्ध हरिताल लेकर घृतकुमारी के रस में एक दिन मर्दन कर गोला वनावे। उसके वाद उस गोले को अन्धमूषा में वन्द करे। फिर उसे वारह प्रहर तक तीत्र अग्नि से गजपुट में पकावे। छः वार इस तरह घृतकुमारी रस में मर्दन करके छः वार प्रटपाक करने से हरिताल भस्मीभूत होता है।
- (२) शोधित हरिताल को ७ दिन घोड़े की लीद के रस में भावना देकर मुखाने। उसके वाद उसे घोड़े की लीद से प्रस्तुत छेना की श्राग्नि में ५ वार गजपुट में पाक करे तो वह भस्मीभूत होता है।
- (३) मनुष्य का एक पोला (खाली) हड्डी संग्रह करके उसमें शोधित हरि-ताल का चूर्ण भर दे, उसके वाद उस पोली हड्डी के दोनो सिरे, पीपल, ढाक ग्रथवा पुनर्नवा के क्षार से भर देवे। किर उसे गजपुट में एक दिन तीव्र अग्नि में पाक करे। इस तरह जो हरिताल भस्म तैयार होगी, वह अति उत्तम और सर्वरोगनाशक होगी।

हरिताल भस्म की परीचा—हरिताल भस्म अग्निपर डालने से यदि उसमें से धुआं न निकले तो उसी को हरिताल भस्म जाने।

हरिताल भस्म के गुण श्रीर प्रयोग—१२ रत्ती गन्ने का गुड़ लेकर उनके साथ श्राधी रत्ती हरिताल भरम सेवन करने से ८० प्रकार के वायु रोग, ४० प्रकार के पित्त रोग, २० प्रकार के रलेप्सा रोग सब प्रकार के कुछ, मेह श्रीर गुग प्रदेश के रोगों की शान्ति होती है। इसका श्वास, कास, क्षय, पित्तज श्रीर नाजिपातिक रोगों में तथा दाद, पामा, व्रण श्रीर वात रोंग में प्रयोग किया जाना है।

हरिताल भरम की श्रनुपान विधि—सभी प्रकार के रक्तविकारों में श्राण के एन के श्रनुपान से भरम सेवन करे। मृगी रोग में विस ( कमलनाल )

श्रीर जीरे के साथ प्रयोग करें। समुद्रफल के योग से हरिताल भस्म सेवन करने से सभी प्रकार के जलोदर विनष्ट होते हैं। यह तरोई के रस के श्रमुपान से भगन्दर, मजीठ के क्वाथ के साथ सेवन से फिरज़ रोग, त्रिफला श्रीर चीनी के साथ पाण्डुरोग श्रीर सोठ के चूर्ण के साथ सेवन से श्रामवात को नष्ट करता है।

स्वर्णभस्म के अनुपान से इसका व्यवहार करने पर रक्तिपत्त और कॉटानट के रस के साथ सेवन करने से आठ प्रकार का ज्वर शान्त होता है।

मजीठ, बाकुची, चक्रमर्द, (चक्रवड़ इसका फूल पीला होता है। यह हरिद्वार में बहुत होती है), नीम, हरी, ऑवला, अइसा, शतावरी, वला, नागबला, मुलेठी, कोकिलाक्षीके बीज, परवल का पत्ता, खसखस, गिलीय एवं लालचन्दन इनके काथ के अनुपान से हरताल भस्म सेवन करने से १८ अकार का कोड़ दूर होता है। इसके सिवाय अनुपानमेंद से सर्वरोगनाशक है।

हरिता लसेवी का पथ्य—खटाई, नमक, कटुरस, श्रिमताप श्रीर धूप में वैठना छोड़ दे। जो लोग नमक बिलकुल न छोड़ सकें वे वहुत थोड़ा सेंधानमक खा सकते है। मीठा मोजन हरितालसेवी के लिये उपकारी है।

#### हरिताल की सत्त्वपातनविधि—

- (१) कुलथी का काथ, सोहागा, भैंस का घी और मधु इनके द्वारा हरिताल घोटकर एक थाली में रख ले। फिर उस थाली को छेदवाले सकोरे से ढक दे, फिर थाली को कम से बढ़ते हुए अप्रि पर अच्छी तरह पाक करे। एक प्रहर तक उस ढके हुए सकोरे के छिद्र को गोबर से ढक दे। फिर तीन घण्टे पाक करने के बाद सकोरे पर से गोबर हटाकर छिद्र खोल देवे, जब उन छिद्रों से पाण्डुवर्ण का धुआँ निकले तब अप्रि का जलाना बन्द कर देवे। फिर वह थाली जब विलक्षल शीतल हो जाय तब सकोरे को तोड़ डाले और अति सावधानी से थाली में लगा हुआ सत्त्व प्रहण कर ले।
- (२) एक पल हरिताल की श्राक के दूध में एक दिन घोंटे श्रीर इसके साथ इसका १६ गुना तैल मिलाने। फिर इसे खुले वर्तन में रखकर इक्कीस घण्टे तक श्रिप्त देने। फिर पात्र जब बिलकुल ठण्डा हो जाय तब उसके तले पर लगा हुआ विशुद्ध सत्त्व ग्रहण करे।

#### ४ र० चि०

- (३) तिर्यक्यन्त्र में हरिताल को पातित करने से उससे रवेत वर्ण का हिरताल सत्व पातित होता है। इसके सेवन करने से आश्चर्य रूप से ज्वर श्रीर श्रजीण निवारित होता है एवं कान्ति, पृष्टि श्रीर वलवृद्धि होती है। मात्रा १ सरसो भर।
- (४) एरण्ड श्रीर जमालगोटे के बीजों के साथ मर्दन करके बालुकायंत्र में पाक करने से हरिताल का सत्त्व निकलता है।

### हरिताल सत्त्व के प्रयोग की विधि—

एक चावल परिमाण हरिताल सत्त्व सेवन से दुःसाध्य वातरक्त दो सप्ताह में विनष्ट हो जाता है। हरिताल सत्त्व व्यवहार के समय रोगी लवण त्याग कर घृत संयुक्त त्र्यन्न, रोटी त्र्यौर पूरी व्यवहार करें।

#### श्रगुद्ध हरिताल सेवन से उत्पन्न दोषों की शान्ति —

- (१) त्राधा तोला जीरे का चूर्ण और त्राधा तोला चीनी शीतल जल के साथ तीन दिन सेवन करने से अशुद्ध हरिताल सेवन जन्य दोष निवारित होते हैं।
- (२) राजहंस (हंसराज) अथवा कूष्माण्ड का रस ७ दिन १ छटाक मात्रा में पान करने से उक्त दोष निवारित होता है।

### मैनशिल

मैनशिल हरिताल का केवल प्रकार भेद हैं। हरिताल का रंग पीला श्रीर मेनशिल का लाल रंग होता है। मेनशिल ३ प्रकार का है; १-श्यामाङ्गी, १-कण-वीरका श्रोर ३-खण्डा। रक्तगौरयुक्त श्यामवर्ण श्रोर श्रधिक भारी मैनशिल का नाम श्यामा मैनशिल है। जो गौररिहत, ताम्रवत रक्तवर्ण श्रोर उज्ज्वल है, वह कणवीरका है। जो मैनशिल को चूर्ण करने पर श्रितशय रक्तवर्ण श्रोर श्रधिक भारी होता है उसे खण्डा मैनशिल कहते है। ये उत्तरोक्तर श्रयीत श्यामा की श्रपेक्षा कणवीरा एवं कणवीरा की श्रपेक्षा खण्डा मैनशिल गुण विषय मे उत्कृष्ट है एवं श्रधिक सत्त्वयुक्त होने से प्रसिद्ध हैं। मैनशिल एक श्रेष्ठ रसायन है। यह कर्युतिक्तरम, उल्लावीर्य, कफ्यातनाशक, श्रधिक सत्त्वयुक्त एवं भूतदीष, विष, श्रप्रिमान्य, कण्ड, कास श्रीर क्षयरोग निवारक है।

श्रशोधित मैनशिल सेवन के दोष—श्रशोधित मैनशिल से पथरी, मूलरुष्ट्र, मन्दाप्ति श्रोर मलरोध होता है। श्रोर शुद्ध मैनशिल सर्वरोगनाशक है।

मैनशिल की शोधन विधि—अगस्त के पत्तों के रस अथवा आदी के रस द्वारा सात वार भावना देने से मैनशिल शुद्ध होता है। जयन्तीपत्र (जैथी), मृझराज (धमरा) और लाल वकफूल के पत्तों के रस के साथ 9 प्रहर दोलायन्त्र में पाक करे। फिर दूसरे वार भी वकरी के मूत्र के साथ 9 प्रहर दोलायन्त्र में पाक करे और कांजी से धो डाले। इस तरह भी मनःशिला शुद्ध होती है अथवा केवल चूने के जल में ७ दिन भावना हेने से भी मैनशिल शोधित होता है। शुद्ध मैनशिल सव रोगों में प्रयोग करे।

मनःशिला का सत्व निकालने की विधि—गुड़, गुग्गुल और घी के साथ उनका आठवां भाग (है) परिमाण मनःशिला मर्दन करके कोष्ठिकायन्त्र में बन्द कर उत्तम रूप से दग्ध करने अर्थात् हापर में तपाने से मनःशिला का सत्त्व निकलता है। अथवा सीसक सत्त्व, सोहागा और मैनफल के साथ हरिताल मिलाकर करेला के पत्तों के रस के साथ मर्दन करे और मूण में वन्द कर दग्ध करे। फिर क्षार और अम्ल द्व्य के साथ पीस कर दो घंटे अप्ति देवे। इस तरह मनःशिल का सत्त्व निकलता है।

# गुद्ध तथा मिश्र घातु

्सोना, चांदी, तांवा, लोहा, जस्ता, वङ्ग श्रीर सीसा ये ७ शुद्ध धातु हैं। प्रीतल, कांसा श्रीर वर्तलोह ये ३ प्रकार की मिश्र धातु हैं। धातु, लोह श्रीर लोह ये ३ शब्द एकार्थवाची हैं। धातु मात्र ही वलीपलित ( सुरी पड़ना, वाल सफेद हो जाना ), सिर के वाल गिर जाना, कृशता, दुर्वलता, ज्वर श्रीर जरा नाश करके देह की रक्षा करते हैं।

# स्वर्ण

्यसल सोने को गलाने से वह लाल रंग का हो जाता है, काटने से रोप्य वर्ण धारण करता है ग्रीर कसोटी पत्थर पर घिसने से कुहुम सहरा वर्ण धारण करता है। मलरहित स्वर्ण-स्निग्ध, कोमल, भारी श्रीर उत्तम होता है। जो स्वर्ण श्वेतवर्ण, कठिन, रूक्ष, विवर्ण, मलयुक्त, दलिविशिष्ट श्रीर गलाने से काले रंग की हो जाय श्रीर कसोटी पर धिसने से श्वेत वर्ण धारण करे वह लघु, क्षणभद्धर श्रीर परित्याज्य है। स्वर्ण के प्रकार सेद्—स्वर्ण प्रधानतः दो प्रकार का है—१-रसेन्द्रवेधज ग्रोर २-खनिज। रसेन्द्रवेधज स्वर्ण १६ प्रकार के वर्ण वाला है। खनिज स्वर्ण १४ तरह के वर्ण वाला है। प्रथम प्रकार का स्वर्ण-रसायन, जरानाशक श्रोर श्रेष्ठ है। द्वितीय प्रकार के स्वर्ण को यथाशास्त्र भस्मीभूत करने से वह सर्वरोगनाशक होता है।

#### शोधित स्वर्ण के गुण-

- (१) साधारणतः सभी स्वर्ण आयु, लच्मी, कान्ति, बुद्धि और स्मृति को वढ़ाने वाले, निखिल रोगनाशक, पिवत्र, भूतावेश को शान्ति करने वाले, रित शिक्त वढ़ाने वाले, सुखजनक, पृष्टिकर, जरानिवारक, मेहनाशक, क्षीणजन का पृष्टिवर्द्दक, मेथाजनक एवं वीर्यवर्द्दक हैं। रोप्य में भी प्रायः ये ही गुण हैं।
- (२) रसेन्द्रवेधज अर्थात् पारे के संमिश्रण द्वारा जो स्वर्ण उत्पन्न होता है उसे रसेन्द्रवेधज कहते हैं। यह रसायन, उपकारिता में सर्वोत्कृष्ट और पवित्र है।

स्वर्ण-स्नियं, पवित्र, विषदोपनाशंक, पृष्टिकर, श्रत्यन्त वृष्य, यद्मा श्रोर उन्माद श्रादि रोगनाशंक, मेथा, वृद्धि श्रोर स्मृति वर्द्धक, सुखजनक, सर्वदोष श्रोर सकल रोग निवारक, रुचिकर, श्रिक्ष का उद्दीपक, वेदनानिवारक श्रोर मश्रर विपाक वाला है।

श्रशोधित श्रोर श्रमारित स्वर्ण के दोप—श्रशुद्ध श्रोर श्रमारित स्वर्ण सेवन से वीर्य, वल श्रोर सुख विनष्ट होता है एवं श्रनेक रोग टत्पन्न होते हैं। श्रत एव स्वर्ण शोधित कर व्यवहार करें।

#### स्वर्ण की शोवन विधि—

- (१) सम परिमित स्वर्णपत्र श्रीर नमक एकत्र सकीरे में सम्पुट करके श्राधे प्रहर तक कीयलों की श्राप्ति पर तपावे तो पूर्ववर्ण श्रार्थीत् विशुद्ध हो जाता है।
- (२) स्त्रर्ण, रोप्य, पींतल, तांवा एवं लौह को तपाकर ७ वार तेंल में, दिनों में, गोमृत्र में, कांजी में श्रोर कुलयी के काय में डालने से शुद्ध होता है।
- (३) सब प्रकार के धातु को ७ वार तपाकर केले की जड़ के रस में डालने

धातु मारण में पारे की आवश्यकता—सव धातुओं की ही पारे की माम मिलाने में जो मारण किया सम्पादित होती है वही सर्वीत्तम है। मूल विशेष के

स्वरसादि द्वारा मारण किया सम्पादित करने से वह मध्यम कहीं जाती है खोर गन्धकादि द्वारा जो मारण किया की जाती है उसे निकृष्ट कहते हैं। श्रिर लोह श्रर्थात् विशुद्ध गुणवाली धातु द्वारा जो किसी धातु की मारण किया की जाय तो वह हानिकारक होती है।

'जो धातुभस्म विना पारद के तैयार होती है उसके सेवन करने से उदर में कोडे उत्पन्न हो जाते हैं' यह सिद्ध लच्मिश्वर प्रमुख रसाचार्यों की वाणी है।

#### स्वर्णभस्म विधि-

- (१) त्राति पतला स्वर्णपत्र तयार कर उन्हें पारदभस्म त्रौर विजौरा नीवू के रस में लिप्त करे। सूखने पर यथानियम से पुट देने, इस तरह १० वार पुट देने से ही स्वर्ण मारित होता है।
- (२) स्वर्ण द्रवीभूत करके उसमें स्वर्ण के समान पारद भस्म डाले। फिर उसे चूर्ण करके बिजीरे के रस ख्रौर हिक्कल के साथ मर्दन कर पुटपाक करे। इस तरह १२ बार पुट देने से कुड़ुम वर्ण स्वर्ण भस्म तैयार होती है।
- (३) स्वर्ण की चौथाई ( है ) पारद की भस्म किसी खट्टी वस्तु के साथ पीस कर उसे स्वर्णपत्र पर लेप करे श्रौर सूखने पर पुटपाक करे। इस तरह १८ बार पुटपाक करने से ही स्वर्णभस्म होता है।

विना श्राम्न योग के स्वर्णभस्म विधि—१ भाग पारद, २ भाग गन्धक एकत्र कज्जलों कर तीन भाग शोधित स्वर्णपत्र के साथ मिलाकर घतकुमारी के रस में ६ घण्टे तक मर्दन कर गोला वनावे। फिर उस गोले को एरण्डपत्र में श्रव्छीं तरह बांध दे। इसके बाद उसे एक तांबे के पात्र में डाल कर एक घण्टा धूप में रक्खे। धूप में रखने से उस पिण्ड के गरम हो जाने पर उसे सकोरे में बन्द करके ३ दिन श्रन्न के ढेर में दबाये रक्खे। चौथे दिन उसे वाहर निकाल-सूच्म चूर्ण कर वस्त्र से छान ले। यह चूर्ण ही स्वर्ण का मृत भस्म है। यह इतना प्रतला होता है कि जल में तैरता रहता है। यह भस्म सर्वोत्कृष्ट है।

स्वर्ण की द्विति—(१) मेंड्क की हड्डी श्रोर चर्ची एवं सोहागा, कनेर बीरवहूटी, ये सब द्रव्य उसमे डाल रखने से बहुत समय तक स्वर्ण द्रवीभृत श्रवस्था में रहता है। (२) वीरवहूटी (इन्द्रगोप कीट) का चूर्ण श्रौर देवदाली (घुंघरवेलि) के फल का स्वरस एकत्र मिलाकर उसकी भावना देने से स्वर्ण जलवत् द्रवीभूत होता है।

स्वर्णभस्य के अनुपान—दो रत्ती परिमाण स्वर्णभस्म मरिच के चूर्ण और घी के साथ मिलाकर चाटने से क्षय, मन्दाग्नि, श्वास, कास, अरुचि, पाण्ड, प्रहणीदोष, सव प्रकार का विपदोष और दूषीविष निवारित होता है। यह श्रोजी-धातुवर्द्धक, वलकर और पथ्य है।

शोध में — मछली के पित्त के साथ।

वल वढ़ाने के लिये — महराज के रस और दूध के साथ।

चक्षुरोग में — पुनर्नवा के रस के साथ।

रसायन में — वी के साथ।

स्मृतिशक्ति बढ़ाने के लिये — वच के चूर्ण के साथ।

सौन्दर्य बढ़ाने के लिये — कुड़कुम के साथ।

यदमारोग में — दुग्ध के साथ।

विपदोष में — निर्विषी के रस के साथ।

उन्माद में — सोठ, लोंग और मरिच के चूर्ण के साथ सेवन करे।

#### रोदद

रोप्य के प्रकार सेंद्—रोप्य तीन प्रकार का है, १-सहज, २-खनिज श्रोर २-कृत्रिम । इनमें से पूर्व-पूर्व अर्थात् कृत्रिम की अपेक्षा खनिज श्रोर खनिज की अपेक्षा सहज रोप्य अधिक गुणवाला है ।

केंलास त्रादि पर्वत से जो रौष्य उत्पन्न होता है उसे सहज रौष्य कहते हैं। यह रोष्य एक वार स्पर्श करने से ही मनुष्य व्याधिमुक्त हो जाता है।

हिमालयादि पर्वत शिखर पर जो रौप्य उत्पन्न होता है, धातुतत्त्वज्ञ पण्डित उसे यनिज रौप्य कहते हैं। यह उत्कृष्ट रसायन है।

जो रौप्य पारे चे उत्पन्न होता है उसका नाम कृत्रिम रौप्य है। यह यथा-नियम प्रयुक्त होने से सर्वरोग नाश करता है।

जो रोप्य घन, स्वच्छ, भारी, स्निग्ध, कोमल, शङ्खवत् शुभ्रवर्ण, चिकना, म्फोटक्टीन श्रयीत बुदबुदाकार न हो और द्ग्ध करने या काटने पर भी जिसके शुभ्रवर्ण में विकार न हो, वह रोप्य ही शुभ फलदायक है।

जो रोप्य तपाने से लाल पीला या काला हो एवं जो रूक्ष, स्फुटन, लघु, स्थूलाङ्ग श्रीर कर्कशाङ्ग हो, यह श्राठ प्रकार का रोप्य त्यागने योग्य है श्रर्थात् इसके व्यवहार से श्रपकार होता है।

रौप्य-श्रम्ल-कषाय रस, विपाक मे मधुर, शीतल, सारक, श्रद्यन्त लेखन-कारक, रुचिजनक, हिनग्ध, बातश्लेष्मानाशक, जठरामि-दीप्तिकारक, श्रद्यन्त बलकर, श्रायुस्थापक श्रौर मेधाजनक है।

पाठान्तरोक्त रोप्यगुण-रोप्य, शीनल, श्रम्लकषायरस, स्निग्ध, वायुनाशक, गुरुपाक एवं रसायन विधान में प्रयुक्त होने से सर्वरोगनाशक है।

स्वर्ण, रौप्य आदि धातु के पत्र प्रत्येक बार तपाकर तिल तैल, तक ( छाछ ), गोमूत्र, काँजी, कुलथी के काथ में यथाक्रम से सात सात बार डालने से शोधित होते है।

त्रशोधित रोप्य-त्रायु, शुक्र श्रोर बलं नष्ट करता है एवं सन्ताप श्रोर मलरोध रोग उत्पन्न करता है। श्रितएव उसे यथाशास्त्र शोधित श्रोर भस्मी-भूत करे।

(१) सीसा श्रीर सोहागा का प्रक्षेप देकर रौप्य गलाने से वह रौप्य शोधित

रौप्य की अन्यिवध शोधनविधि स्वर्णशोधन की तरह है।

द्रीष्यभस्म विधि—स्वर्णभस्म की चौथी विधि के अनुसार रौप्य भस्म करे।
रौष्य की द्रुति—देवदाली (घोषा) फल में सात वार नरमूत्र की सावना
देने के बाद उस देवदाली फल का चूर्ण डालने से स्वर्ण और रौप्य दोनों ही द्रवीभूत
होते है।

रौष्यभस्म का गुण—सर्वसमिष्ठ के समपरिमाण त्रिकट श्रोर त्रिफला चूर्ण घृत श्रोर मधु के साथ उपयुक्त मात्रा में लेहन करने से यत्तमा, पाण्ड, उदर रोग, श्रर्श, श्वास, कास, नेत्ररोग श्रोर सब प्रकार का पित्तविकार शान्त होता है।

# रौप्य भस्म का प्रयोग

शोध में —चीनी के साथ। वागु श्रोर पित्त वृद्धि में —त्रिफला के चूर्ण के साथ। प्रमेह में —त्रिसुगन्धि (दारुचीनी, इलायची, तेजपात) चूर्ण के साथ। कास (श्लेष्मधिक्य) में — अद्भा के रस और त्रिकटु चूर्ण के साथ।
श्वास में — भारती और सोंठ के चूर्ण के साथ।
गुलम में — जवाखार के चूर्ण के साथ।
कार में — शिलाजीत की भस्म के साथ।
कार्य में — मांसरस अथवा द्ध के साथ।
कार्य में — मांसरस अथवा द्ध के साथ।
कार्य में — प्रकृत में — त्रिफला और पीपल के चूर्ण के साथ।
जलोदर में — पुनर्नवा के रस के साथ।
रक्त की अल्पता में — लोहभस्म के साथ।

' रसायन श्रौर सौन्दर्य एवं श्रग्नि-वृद्धिकरण में—वृत के साथ सेवन करे।

#### ताम्र

- ताम्र दो प्रकार का है, १-म्लेच्छ और २-नैपाल। नैपाल ताम्र उत्कृष्ट है। नैपाल देश के अतिरिक्त अन्य देशों में खान से जो ताम्र उत्पन्न होता है, उसे म्लेच्छ ताम्र कहते हैं। जो ताम्र श्वेत वा कृष्ण की आभायुक्त लाल वर्ण, कठिन और अत्यन्त वमनकारक है तथा जो ताम्र वार वार धोने पर भी कृष्णवर्ण होने लगे वहीं म्लेच्छ ताम्र है। और जो ताम्र स्निग्ध, मृदु, रक्तवर्ण, भारी, चोट लगने से भी दृदे नहीं, गुरु और निर्विकार हो उसे नैपाल ताम्र कहते हैं। नैपालताम्र उत्कृष्ट गुणशाली है।

पाण्डुवर्ण अथवा कृष्णयुक्त लालवर्ण, लघु, स्फुटनयुक्त (फट-फटा), रूक्षाङ्ग भ्रोर स्तर विशिष्ट ताम्र रसिक्रया में प्रशस्त नहीं है।

ताम्र कुछ खटाई मिला हुआ तिक्त रस, विपाक में मधुर, टप्णवीर्य, पित्तकफ-नाशक, ऊर्घ और अधोदेश का शोधनकारक, स्थूलतानाशक, क्षुधावर्द्धक, नेत्र रोग में हितकर, लेखन एवं विपदोप, यक्तदोष, जठररोग, कुछ, आमदोष, किमि, अर्थ, क्षय और पाण्डरोग को शान्त करने वाला है।

श्रशोधित श्रोर श्रमारित ताम्र श्रायुःक्षयकारक, कान्ति, वीर्य श्रोर वल नाशक एवं वमन, मूच्छी, भ्रम, उत्क्लेद ( वमनवेग ), कुष्ट श्रोर शूल रोग का उत्पन्न करने वाला है। ताम्र सेंवन से उत्क्लेद, मलभेद, भ्रम, दाह श्रौर मोह ये कई दोष श्राति अवल भाव से उपस्थित होते हैं किन्तु ताम्र शोधित होने से ये सब दोष नष्ट हो जाते हैं एवं रस-वीर्य श्रोर पाक में श्रमृत की तरह हितकर होता है।

ताम्र की शोधन विधि—क्षार और खहे पदार्थ एवं गेरू के साथ ताम्र मिलाकर जंगली उपलों की श्रिम में उन्हें द्रवीभूत करे एवं भैंस के दूध की छाछ में डाल दें। सात बार यह प्रक्रिया करने से तांबे के उत्कलेद श्रादि पञ्चदोष नष्ट हो जाते हैं। श्रथवा निर्मल ताम्रपात्र में नीवू का रस श्रीर सेंधानमक लेपन करके तपावे श्रीर सौवीरक कांजी में डाल दें। ८ वार यह प्रक्रिया करने से ताम्र शोधित होता है। ताम्रपात्र में नीवू का रस और सेंधानमक लेपन करके तपावे एवं निसिन्दा के रस में उसे डुवावे। इस तरह ८ वार तपाकर ठंडा करने से भी ताम्र शोधित होता है।

ताम्र की भस्म विधि—गोमूत्र के साथ ताम्रपत्र एक प्रहर तक तीव श्राप्ति से पकाने पर भी वह विशोधित होता है। पारद श्रोर गन्धक की कज्जली कर जम्हीरी के रस में मर्दन कर, उससे ताम्रपत्र लिप्त करे फिर उसे सकोरे में वन्द कर पुटपाक करे। ऐसा ३ वार करने से ताम्र भस्मीभूत होता है।

मारित ताम्र का श्रमृतीकरण—मारित ताम्र एक प्रकार के खंदे रस में मर्दन करके १ गोला वनावे, उस गोलक को जमीकन्द में वन्दकर जमीकन्द के ऊपर मिट्टी का लेप करे। सूखने पर गजपुट में श्राप्त देकर उस ताम्र की ग्रहण करे। इस प्रक्रिया के वाद उस ताम्र के सेवन करने से वमन, श्रम श्रौर विरेचन कदापि नहीं होता है।

सूच्या ताम्रपत्र पहले ५ प्रहर तक गोमूत्र में भिगो दे। फिर वह ताम्रपत्र १ भाग, पारद १ भाग छोर गन्धक २ भाग एकत्र छामरूल के रस में मर्दन कर भाण्ड (मिट्टी के वर्त्तन) में बन्द कर दे। इसके बाद उस भाण्ड के नीचे एक प्रहर तक छान्न जलावे तो ताम्र भरमीभूत होता है। यह ताम्रपत्र सर्वत्र प्रयोग किया जा सकता है।

पारद १ भाग, गन्धक १ भाग, हिताल श्राधा भाग, एवं मनःशिला चौथाई भाग एकत्र कर श्रच्छी तरह चिकनी कज्जली करे फिर यन्त्राध्याय में कहे हुए गर्भयन्त्र में उस कज्जली श्रीर पारे के समान परिमाण ताम्र पर्याय कम से निहित करें (रक्षे)। अर्थात् पहले थोड़ी सी कज्जली रख कर उसके ऊपर कुछ ताम्र और उसके ऊपर फिर कज्जली और कज्जली के ऊपर फिर ताम्र इस तरह सजाकर एक प्रहर तक यथानियम पाक करे। पाक हो जाने पर जब यन्त्र शीतल हो जाय तब उससे ताम्र छुड़ाकर चूर्ण कर ले।

इस ताम्रभस्म को दो रत्ती मात्रा में उपयुक्त श्रनुपान के साथ सेवन करने से परिणाम शूल, उदररोग, शूल, पाण्डु, ज्वर, गुल्म, प्लीहा, यक्तत, क्षय, मन्दाग्नि, मेह, ववासीर श्रीर श्रहणी रोग निश्चितरूप से निवारित होता है। इसको सोमनाध ताम्र कहते हैं।

पारद एक भाग, गन्धक एक भाग, ताम्रपत्र दो भाग, एकत्र घृतकुमारी के रस में मर्दन कर उसे एक भाण्ड में रक्खे और भाण्ड के मुख को एक कसोरे से ढक दे। वह भाण्ड एक हांड़ी ने रखकर लवण से उस हांड़ो को भर देवे एवं हांडी के मुख को भी एक कसोरे से ढक देवे। फिर चार प्रहर तक उसके नीचे श्रिप्त जलावे। इस ताम्र को चूर्ण करके दो रत्ती की मात्रा में मधु और पीपल के चूर्ण के साथ सब रोगों में प्रयोग करे। विशेषतः उपयुक्त अनुपान के साथ प्रयुक्त होने से यह गुल्म, प्लीहा, यक्टत, मूच्छी, धातुगत ज्वर, परिणामशूल एवं त्रिदोप से उत्पन्न सब रोगों को विनष्ट करता है। रसिक्या और रसायन कार्य में भी उपयुक्त मात्रा में यह ताम्रभस्म प्रयोग किया जाता है।

श्रादी के रस श्रीर मधु के संयोग से दो रत्ती ताम भस्म इसेवन करने से सव प्रकार के उदररोंग निवारित होते हैं, ताम सब प्रकार के उदर रोगों का सर्वश्रेष्ठ श्रीपध है।

विना अन्तियोग के ताम की निरुत्थ अस्म एक भाग पारद और दो भाग गन्धक एकत्र कळाळी करके तीन भाग शोधित ताम के ऊपर डाले। उसके वाद उन द्रव्यों को नीवू के रस में तीन दिन भिगों स्कले, तीन दिन वीत जाने पर वह ताम गळ कर कीचड़ की तरह हो जाता है। फिर उस ताम को धूप में मुखाकर कपड़े से छान ले। इस तरह से जो ताम भरम मिलेगा वह सर्वश्रेष्ठ और सर्वरोगनाशक होगा। यह विशेष भाव से रसायन गुण सम्पन्न और सव प्रकार के उद्ररोग का नाशक है।

# लौह

श्रायुः प्रदाता वलवीर्यकर्ता रोगापहर्ता मदनस्य धाता। श्रयः समानं निह किश्चिदिस्त रसायनं श्रेष्ठतमं नराणाम्॥ लोह तीन प्रकार का है:—१-मुण्ड, २-तीव्ण श्रोर ३-कान्त।

मुण्ड लौह तीन प्रकार का है:—मृदु, कुष्ठ श्रीर कड़ार; जो शीघ द्रवीभूत हो, स्फोटक की तरह युद्वुद युक्त न हो श्रीर विकना हो वही मृदु मुण्डलौह है। यह श्रुम फल देने वाला है। जिस मुण्डलौह को चोट लगाकर श्रनायास प्रसारित ना किया जा सके उसे कुण्ठ कहते हैं, यह मध्यम है। श्रीर जो चोट लगने पर दूर जाय श्रीर दूरने पर काला हो जाय वह कड़ार मुण्ड है। उत्तम मृदुमुण्ड लोहा सेवन करने से कफ, वायु, श्रूल, मूलरोग (श्र्रश्र), श्रामदोप, मेह, कामला, पाण्ड, गुल्म, श्रामवात, उदररोग श्रीर शोध नष्ट होता है। श्रीरश्रान का उद्दीपक, रक्तवर्द्धक तथा कोप्रशुद्धिकारक है।

तिक्षण लीह

तीवण लौह छः प्रकार का है:—१-खर, २-सार, ३-हन्नाल, ४-तारावह, ४-वाजिर और ६-कालालौह। जो तीवण लौह परुष (खरस्पर्श), पोगर से रहित ( ख्रलकों की तरह टेढ़ी रेखारहित ) हो, जिसमें तोढ़ने से पारद की तरह आभा दीख पड़े एवं तपाने से दूट जाय, उसे खर लौह (खेरी) कहते हैं। जिस लौह के ऊपर तीव वेग से आघात करने पर उसके किनारे फट जावे वह सारलौह है। सारलौह छुटिल रेखायुक्त और पाण्डु भूमि से उत्पन्न है। जो लोह पाण्डुकृष्ण वर्ण चक्षु वा वीजाकृति है, पोगर जिसके गात्र पर स्पष्ट रूप से रहे और जो काटने से अति कठिन जान पढ़े वह हुन्नाल लोह है। वीजाकृति एवं सूच्म स्वम रेखा वाला हो, पोगर द्वारा जिस लोह का गात्र सर्वत्र क्याप्त हो और जो श्यामवर्ण हो उसे वाजिर लोह कहते है। और जो लौह नीलकृष्णवर्ण, सघन, चिकना, भारी, उज्ज्वल और लोह की चोट लगने पर भी टूट न जाय वही कालालौह वा कालायस है।

खर लोह-रूझ, विपाक में कुछ मधुर, अति शीतोष्ण वीर्य नहीं और तिक्तरस है एवं कफ, पित्त, कुछ, उदर, प्लीहा, आमदोष और पाण्डरोग को शान्त करता है। श्रूल, यकृत, क्षय, जरा, मेह, आमवात, ववासीर और दाहरोग इसके द्वारा शीघ्र निवारित होता है। यह अग्नि का उद्दीपक, अत्यन्त, रसायन और वलकर है:

# कान्तलौह

कान्तलौह ४ प्रकार का है:--यथा १-भ्रामक, २-चुम्वक, ३-कर्पक, ४-द्रावक श्रौर ५-रोमकान्त । इन लोहों में से कोई लोहा एकमुख, कोई द्विमुख, कोई त्रिमुख, कोई चतुर्मुख, कोई पञ्चमुख श्रोर कोई सर्वतोमुख होता है। इस ५ प्रकार के लौह में पीला, काला श्रोर लाल ये तीन रंग देखे जाते हैं। इनमें पीतवर्ण लौह स्पर्शवेधी कार्य में, काले रंग का लौह रसायन कार्य में उत्तम है श्रौर लाल रंग का लौह पारद की वन्धन किया से प्रशस्त है। भ्रामक लौह निकृष्ट है, चुम्वक सध्यम, कर्पक उत्तम एवं द्रावक श्राति उत्तम है। जो कान्तलौह दूसरे लोहों को घुमावे वह भ्रामक है; जो लोहे का चुम्वन करे श्रर्थात् लोहे से चिपक जाय वह चुम्वक है; जो लौह दूसरे लोहे का त्राकर्षण करे वह कर्षक है; जो स्रन्यान्य लोहों को द्रवीभूत कर सके वह द्रावक है एवं जो छौह गात्र पर स्फुटित होने से रोमाश्च हो वह रोमकान्त लौह है। एकमुख लोह निकृष्ट है, द्विमुख श्रौर त्रिमुख लोह मध्यम है, चतुर्मुख श्रौर पञ्चमुख उत्कृष्ट श्रौर सर्वतोमुख लोह सवसे उत्तम है। श्रामक श्रीर चुम्वक लौह व्याधिनाश में प्रशस्त है। कर्षक एवं द्रावक लौह रस श्रीर रसायन कार्य में हितकर है। रोमकान्तलौह पारद की वन्धनिकया मे स्रित उत्कृष्ट है। खान से यत्नपूर्वक लोह संग्रह करना चाहिये। जो लोह धूप श्रौर वायु मे पड़ा रहे वह त्याज्य है।

# कान्तलौह का स्वरूप

जिस लोहे के पात्र में जल रख कर उस पर तेलिबन्दु डालने से वह (तेलिबन्दु) प्रस्त न हो, जिसके गात्र पर हीग लेपन करने से उसकी गन्ध और निम्वकल्क लेपन करने से उसकी कटुता नष्ट हो जाय और जिसमे दुग्ध पाक करने से दुग्ध शिखर की भांति ऊपर को उठे तो भी जमीन पर न गिरे उसे कानत लोह कहते हैं। इसके बिना अन्य लक्षणों वाला लौह कान्तलौह नही है। कान्त लौह रसायन कार्य में अति उत्तम है। और स्वस्थ मनुष्य को दीर्घायु देने वाला, स्निग्ध, मेहनाशक, त्रिदोप को शान्त करने वाला, तिक्तरस युक्त, नातिशीतोष्णवीर्य रूपं शूल, आमदोष, मूलरोग (अर्थ), गुल्म, प्लीहा, उद्दर, पाण्डु, यक्तत, क्षय आदि नाना रोगनाशक है। सब प्रकार के श्रोषध कल्प में लौह कल्प ही सर्वोत्कृष्ट है।

श्रत एव सव से पहले लौह की मारण श्रौर शोधन किया विशेष यत्न के साथ सम्पन्न करे।

# लौह की शोयनविधि

- (५) लोह को सामुद्र लवण से लेपन करे श्रीर खूव तपाकर त्रिफला के काथ में बुम्तावे। ऐसा करने पर लोह का गिरिज दोष नष्ट होता है।
- (२) इमली के फल या पत्तों का काथ करके उसमे श्रयवा गोमूत्र में त्रिंफलाः का काथ वना कर उसमें तपे हुए लौहपत्र डालने से भी वह शोधित होता है।
  - (३) स्वर्ण शोधन के नियमानुसार भी लौह शोधित होता है।

#### लौह भस्म विधि

- (१) लौह भस्म की विधि स्वर्णभस्म की तरह है। स्वर्णभस्म की चौथी विधि देखिये।
- (२) तीच्ण लोह का चूर्ण त्रिफला के काथ के साथ पीस कर उसके साथ थोड़ी सी चावल की पिट्ठी मिलाकर टिकिया बनावे। उन्हें सुखाकर पुटपाक करे। इस तरह ५ वार पुटपाक करने से लाल रंग का भस्म तैयार होता है।
- (३) तीचण लौह के स्तरहीन पत्र तैयार करके उन्हें तीव्र श्राग्न में तपावे श्रीर जल में वुम्ता कर ठंडा करे। फिर पत्थर की श्रीखली में मोटे लोहे दण्ड की चोट से उस लोहपत्र का चूर्ण करे, उसमें जो वड़े बड़े दुकड़े रहें, उन्हें दो सकोरों में वन्द कर फिर दग्ध करे श्रीर जल में डाल कर ठंडा करे। इसके बाद पूर्ववत् श्रलग श्रलग करके चूर्ण करे, उस चूर्ण को पारद श्रीर गन्धक के द्वारा मिईत करके २० वार पुटपाक करे। अत्येक वार पुटपाक के बाद दृढ़ रूप से पेषण करना चाहिये इस तरह भस्मीभृत लौह सर्व रोगनाशक होता है।
- (४) लौह चूर्ण में उसके सम परिमाण गन्धक मिलाकर घृतकुमारी के रस के साथ मर्दन करके तीन वार पुटपाक करने से लौह भस्म रूप मे परिणत होता है।
- (५) लोह को तपाकर हिड्डल मिला जम्हीरी के रस में निच्चेप करने से लोह भस्मरूप में परिणत होता है। यदि एक वार में न हो तो कई वार ऐसा करना चाहिये।

, जिस लौहपात्र में रक्खे हुए जल में तैल विन्द डालने से वह विक्षिप्त न हो 'ग्रीर तारे के त्राकार में गोल हो जाय वही कान्तलौह है। सव लोहों में श्रेष्ठ उस कान्त लोह के पतले पत्र करके श्राप्त में तपावे श्रोर त्रिफला के काथ में उसे ठंढा करे। फिर उस शुद्ध लौह को किसी खट्टे पदार्थ के साथ पीस कर उसके साथ उसका चौथाई ( चनुर्थाश ) मृतपारद मिला कर श्रीन में पुटपाक करे। -प्राथवा सम परिमित स्वर्णमाक्षिक, गन्धक और पारद के साथ मिश्रित करके पुट देवे। ग्रयवा कान्त लोह में क्षार श्रौर श्रम्ल पदार्थ लेपन कर उसे तपा कर खरगोश के रक्त में बुमावे। इससे भी कान्त लौह शोधित होकर सर्वदोष शून्य होता है। शोधित पारद श्रीर उससे दृना गन्धक मिला कर खरल में घोट कर कज्जली वनावे, वह कज्जली श्रौर उसके समान लौह चूर्ण मिला कर चृतकुमारी के रस के साथ २ प्रहर यद्न करके गोला बनावे। उस गोले की कांसे के पात्र में रख कर उसके छपर एरण्डपत्र ढक कर श्राधे प्रहर तक पाक करे, उसके वाद ३ दिन उसे धान्य राशि में रख दे। फिर पेषण करके वस्न से छान ले। इस तरह लौह की जो भस्म तैयार होगी, वह जल में डालने से तैरती रहेगी। कान्त, तीचण श्रौर मुण्ड इन तीनों तरह के लोहों की इस तरह मृत भस्म तैयार होती है। लौह की नाई स्वर्णीदि धातु का चूर्ण करके भी इसी तरह भस्म तैयार की जाती है। कान्त लौह-कमनीय, कान्तिजनक, पाण्डुरोगनाशक, यद्मारोगनिवारक, विषनाशक, त्रिदोषशान्तिकारक, विविध कुष्ठनाशक, वल-कर, बृष्य, वयःस्थापक, सर्वव्याधिनाशक, उत्कृष्ट रसायन एवं श्रद्वितीय श्रीर पार्थिव श्रमृत स्वरूप है। इसके सेवन से क्रिमिविकार, पाण्डु, वायुरोग, क्षीणता, पित्तरोग, स्थूलता, श्रर्श, ग्रहणी, ज्वर, श्लेष्मविकार, शोथ, प्रमेह, गुल्म, प्लोहा, विषदोष, कुष्ठ श्रौर मनदाप्ति दूर होती है। यह स्वास्थ्यजनक, रसायन घोर अकाल मृत्यु नाशक है। मृत लौह रसवत् हितकर श्रोर योगानुसार से महान्याधिनिवारक है। लौहभस्म सेवन का श्रभ्यास करने से देह की दढ़ता प्राप्त होती है श्रीर जरा-व्याधि विनष्ट होती है।

# पारद रहित लौह भस्मके दोष दूर करने का उपाय

विना पारद के जिस लीह का भस्म किया गया हो उसका एक तिहाई ( है ) श्रंश पारा श्रीर पारद से दूना गन्धक इनके द्वारा ६ घण्टे तक वृतकुमारी के रस में

मर्दन करे। उसके वाद इन सब द्रव्यों को लघुपुट में पार्क करने से वह श्रोषध रूप में व्यवहृत हो सकता है।

# लौहभस्म की परीक्षा

घृत श्रीर मंधु मिश्रित लौहमस्म को रौप्यसम्पुट में वन्द करे उसके बाद उसे तेज श्राग्न पर तपावे, तपाने पर यदि रौप्य का श्राकार बदल जाय तो समस्मना चाहिये कि लौह यथार्थ रूप से भस्म नहीं हुआ उसको फिर लोहा बनाया जा सकता है। ऐसी दशा में लौह को फिर भस्म करना चाहिये। मृत लौह को पद्मामृत के साथ ( सधु घृत, गुजा, सोहागा श्रीर गुग्गुल ) तल लेने से फिर वह किसी भी तरह से पूर्ववत लौह में परिणत नहीं हो सकता।

# लौहभस्म का अमृतीकरण

तुल्य परिमाण घृत के साथ लोहभरम लोहपात्र में तपाने। घृत जल जाने पर उतार कर नीचे रख ले। इस तरह लोह का श्रमृतीकरण साधित होता है। यह योगवाही है।

# लौहपुट में प्रयोजनीय द्रव्य

त्रिफला, सहजन, हस्तिकर्णपलाश (कोई इसे लाल एरण्ड भी कहते है), भृष्ठाराज के एवं फिर त्रिफला के काथ में लोह का मर्दन करते हुए प्रदेशक करने से कोष्ठविद्धता नहीं करता। इसे पीपल के काथ में मर्दन करते हुए व्यवहार करने से आग्रिमान्य नष्ट होता है। उसी तरह भूमिकुष्माण्ड के रस के साथ मर्दन करके व्यवहार करने से ध्वजभन्न, नीवू के रस के साथ मर्दन से क्षुधामान्य, शिरीप की छाल के काथ के साथ मर्दन कर व्यवहार करने से विवर्णता नष्ट होती है। लोह वलारस के साथ मर्दन कर, पुटपाक करने के बाद सेवन करने से वात, पक्षाधात और सब वायु विकार नष्ट हो जाते है। पित्तविकार में चेत्रपर्पटी के रस के साथ, त्रिदोष प्रकोप में दशमूल के काथ के साथ, विषय ज्वर (मलेरिया और कालाज्वर) में चिरायते के रस के साथ, मेह में गिलोय के रस के साथ, पाण्डरोग में मेंस के मूत्र के साथ मर्दन करके इसे पुटपाक करे। विडङ्ग और चावल धोये हुए जल के साथ पुटपाक से किमिरोग नष्ट होता है। भिलावे और विडङ्ग के काथ के सहयोग में कुष्ठरोग, प्लीहा में सहेलिया की छाल के काथ के साथ, मूत्राधात

में सिन्ध्वार के रस के साथ, शूल में काजी के साथ, दाद और पापा रोग में दहु-मारी (चक्रवड़) के रस के साथ मर्दन कर पुटपाक करे। मूसली के रस के साथ पुटपाक करने से अर्श, अर्जुन वृक्ष की छाल के काथ के साथ पुटपाक करने से हृद्रोग, टच्टा (लाल घुंघुची) के रस से आमवात, सोमराजी और खदिर के काथ के साथ पुटपाक कर सेंवन करने से कुछ, पापाणमेदी के रसयोग से अश्मरी, निसोत के रस से टदावर्त, खहे अनार के रस के साथ गुल्म में, स्वरमङ्ग में ब्राह्मीरस एवं अक्षनन्था और जटामांसी के रस के योग से लौह मर्दन कर भस्मार्थ पुटपदान करे।

# लोहभस्म के अनुपान

शृल में — हींग और मधु के साथ लौहभस्म सेवन करे।
पुराने ज्वर-( मलेरिया, कालाउवर ) में — पीपल के चूर्ण के साथ।
वायु वृद्धि से उत्पन्न चात और श्रद्धीङ्ग में — वृत और लहसन के रस के साथ।

श्वासकास में—मधु श्रौर त्रिकटु चूर्ण के साथ। शीत में—बृश्चिकाली श्रौर मिरच के चूर्ण के साथ। मेह में—त्रिफला श्रौर मिश्री के चूर्ण में मिलाकर।

त्रिद्रोपत्रुद्धिजनित सव व्याधियों में—मधु श्रौर श्रादी के रस

वायुत्रुद्धि में—केवल के साथ।

पित्तवृद्धि में—केवल मधु के साथ।

कर्फापत्त-वृद्धि से उत्पन्न रोग में—आदी के रस के साथ।

वायुवृद्धि-जनित शरीर-कम्पन में—निर्गृण्डी के रस के साथ।

वायुवृद्धि में—सोंठ के चूर्ण के साथ।

पित्तवृद्धि में—मिश्री के चूर्ण के साथ।

कफतृद्धि में—पीपल के चूर्ण के साथ।

सन्धरोग में—विजातक ( दारुचीनी, इलायची, तेजपात ) के साथ।

जराव्यायि में—त्रिफला के साथ।

इलेप्म रोग में—कळली, मधु श्रीर पीपल के चूर्ण के साथ।

रक्तिपत्त में चतुर्जात (दारुचीनी, तेजपात, इलायची, नागेश्वर) मिश्रित गुढ़ के साथ।

वलवृद्धिकरण में—गाय के दूध श्रौर पुनर्नवा के रस के साथ। रक्त की श्रहपता में—पुनर्नवा के रस के साथ।

चीस प्रकार के प्रमेह रोग श्रीर सुज़ाक में—मधु मिश्रित हरिद्रारस श्रीर पीपल के चूर्ण के साथ।

मूत्रकृच्छु में—शिलाजीत के साथ।

कपरोग में—श्राहसा, पीपल, द्राक्षा श्रीर मधु एकत्र मिलाकर सेवन करे। श्राग्निदीप्ति करने श्रीर देह में कान्ति उत्पन्न करने में—गामफल के रस के साथ।

सर्वरोग निवारण में-- त्रिफला और मधु के साथ सेवन करे।

### लौइभस्म की मात्रा

लौहभस्म की मात्रा २ रत्ती है।

# लौह सेवन में पथ्य

लौहसेवी के लिये निस्नलिखित पथ्य की व्यवस्था करनी चाहिये। बटेर, तीतर, गोह, मयूर, खरगोश, वत्तक, कबूतर, बटेर, हारिल, वाजपक्षी, वड़ा लवा पक्षी, सब प्रकार के सृग, ताजी मछलियां, रोहित, शकुलमत्स्य, पपीता, परवल, रमकिया, तालफल, शतावरी, बेत की कोपल, विडङ्ग, बथुत्रा, धनिये का शाक, स्वर्णालु, पुनर्नवा, नारियल, खजूर, श्रनार, लिसोड़ा, सिंघाड़ा, पके और मीठे श्राम के फल, श्रङ्गूर, जायफल, लौंग, सुपारी श्रौर पान श्रादि पथ्य है।

#### लौहसेवी के लिये अपध्य

लकुच (बड़हर), वेर, ककड़ी, पेमदी वेर, नीवू, विजौरा, करोदा, तिन्तिड़ी (इमली), ग्रानूपमांस, कद्धर, पिड़की, हंस, सारस, मूंग, काक, वलाहक, कन्द, चना, कद्म्ब, कुम्हड़ा, कद्दू, केंबुक, केला, कुलथी, कशेरू, सब प्रकार की दाल, तिल का तेल, लहसन, राई, मद्य, खटाई, वासी मछली, जीरा, वेंगन, उर्द की दाल, करेला, सब प्रकार के व्यायाम, सब प्रकार के सन्धान द्रव्य (श्रासव, श्रारिष्ट श्रादि), दीर्घकाल तक घोड़े की सवारी, श्रम, श्रत्यधिक वार्ते करना, स्नान, पान,

४ र० चि०

1

ख्राहार, शीत श्रीर वायु सेवन, श्रसमय में भोजन, विरुद्ध भोजन, दिन में सोना, रात को जागना, वात-पित्तकर द्रव्य भोजन, कटु-खट्टा-तिक्त-कपाय रस भोजन, मैथुन, क्रोध; शारीरिक परिश्रम एवं सव प्रकार के धातु श्रीर रसमारक समस्त द्रव्य श्रपथ्य हैं।

# अनियमित लौहसेवन के दोपनिवारण का उपाय

लोहमस्म वा अन्य धातुभस्म का अनियमित भाव से सेवन करने से जो दोप होते है, उनके निवारण के लिये नीचे लिखा सिद्धिसार सेवन करे।

#### . सिद्धिसार

हरीतकी का चूर्ण, सेंधा नमक, सोठ, सफेद जीरा, समान भाग लेकर प्रत्येक का दूना निसोत लेकर नीवू के रस में भावना दे।

मात्रा-१ रत्ती से श्रारम्भ कर १२ रत्ती तक वढ़ाई जा सकती है। इसके सेवन से यथासमय मलप्रवृत्ति श्रोर उदर की लघुता श्रा जाती है, डकार शुद्ध श्राती है, श्रइ-प्रत्यइ की थकावट दूर होकर मन में फुर्ती श्राती है।

# अविशुद्ध लौह सेवन के दोष

लोहमारण में शास्त्रोक्किखित जिन द्रव्यों का जो परिमाण है उसकी श्रपेक्षा कम मात्रा में व्यवहार करने से श्रथवा श्रल्पसंख्यक पुट देने से श्रथवा श्रल्प मात्रा में गन्धक श्रीर पारद के साथ मर्दन करने से लोह दोषयुक्त होता है। इस दोषयुक्त लोह का सेवन करने से मनुष्य श्रल्पायु होता है।

# अशुद्ध लौह सेवन से उत्पन्न विकार की शान्ति

श्रशुद्ध लोहे से उत्पन्न दोष में, वासक (श्रद्धसे) के रस में विडङ्ग मर्दन कर उसमें श्रिविक परिमाण में श्रद्धसे का रस मिलाकर श्रिविक समक तक ध्रूप में भावना देकर सेवन करे।

## लौह द्रावण

सात दिन तक गन्धक को देवदाली के रस में भावना देनी चाहिये, फिर उस गन्धक को सुखा कर श्रिप्तसंयोग से द्रावण करते हुए लौह गिराने से वह पारे की तरह श्रवस्थान्तर को प्राप्त होता है श्रर्थात द्रवित होता है।

# भ-र्भ भन्धक द्रावण

गन्धक श्रोर सोरा दग्ध करके दोनों के धुँए को जल की भाप के साथ किसी सीसे के पात्र में एकत्र मिलाने से गन्धक में द्रावण उत्पन्न होता है यह श्राग्न की तरह तेज से युक्त श्रोर श्रत्यन्त श्राग्निसन्दीपक है।

# मण्डूर ( लोहकिट्ट )

जलते हुए कोयलो की अग्नि में लोहे को तपाकर हथीड़ी की चोट लगाने से उससे चारों ओर जो मल उचटता है उसे मण्हर (लोहसिङ्गारिन) कहते हैं। यह जितना पुराना हो उतना ही अधिक उत्तम होता है। मण्हर में लोहे के सहश गुण है। अतएव रोगशान्ति के लिये मण्हर भी सर्वत्र प्रयोग किया जा सकता है। लोहिक्ट की अपेक्षा मुण्डलौह दश गुना उत्कृष्ट है। मुण्ड की अपेक्षा तीचण सौगुना श्रेष्ठ है, तीचण लौह की अपेक्षा कान्त लौह सेचन से लक्ष गुना अधिक उपकारी है। अतएव जरा, मृत्युनांशक कान्तलौह ही सदा सेवन करना उचित है। कान्तलौह के अभाव में स्वर्ण वा रोप्य व्यवहार्य है।

# . . मण्डूर के प्रकार भेद

मुण्डलौह से उत्पन्न मण्ड्र कुछ रयामवर्णविशिष्ट भारी और कोमल होता है; तीच्ण लौह से उत्पन्न मण्ड्र काजल के सहश चिकना और भारी होता है; कान्तलौह से प्राप्त मण्ड्र धूसर वर्ण वाला कर्कश और अन्यान्य मण्ड्र की अपेक्षा अधिकतर भारी है। इसके दो दुकड़े करने से रौप्य की तरह स्तर वाला देख पड़ता है।

# ब्योषध में व्यवहार करने योग्य सण्डूर

(१) च्रीपध में व्यवहार करने योग्य मण्ड्र कोटररहित-भारी, स्निग्ध, दृढ़, सी वर्ष का पुराना च्रीर बहुत प्राचीन ग्राम से संगृहीत, होना उचित है। (च्रागरे से ५० मील पर पाटम Via Shikohabad, जिला मैनपुरी से खेरे पर कई सी वर्ष का पुराना खोदने पर मिल जाता है। यहाँ पर राजा जनमेजय ने सर्प-यज्ञ किया था।

(२) सौ वर्ष से अधिक पुराना सण्ह्र सर्वश्रेष्ठ है, ८० वर्ष से अधिक सण्ह्र मध्यम गुणवाला श्रीर ६० वर्ष का मण्ह्र अधम है। ६० वर्ष से कम का मण्ह्र विषवत् है, उसे औषधार्थ कभी व्यवहार करना उचित नहीं है।

# मण्डूर की शोधन और मारणविधि

- (१) मण्हर को वहेड़े की लकड़ी के कोयलों पर तपाकर वहेड़े के पात्र में रक्खे हुए गोमूत्र में यथाक्रम ७ वार बुमावे। फिर उस मण्हर का सूचम चूर्ण करके सब कार्यों में प्रयोग करे।
- (२) अथवा गोमूत्र के साथ त्रिफला सिद्ध करके उस काथ में तप्त मण्हर वारम्वार बुकावे। जब तक मण्हर जीर्ण न हो जाय, तब तक इसी तरह तपाता ख्रीर बुकाता रहे। फिर उस मण्हर का चूर्ण करके व्यवहार करे।
- (३) त्रथवा मण्हर त्रातिसूचम करके उस चूर्ण को त्राठगुने गोमूत्र में सिद्ध करे (श्रौटे)। यथेष्ट रूप से सिद्ध होने पर फिर पीस कर व्यवहार करे।

# भण्डूर का व्यवहार

मण्डूर भस्म नीचे लिखे प्रत्येक द्रव्य के साथ सम परिणाम में मिला कर प्रति-दिन १ तोला परिमाण ( यह मिश्र ) सेवन करने से पाण्डु, शोथ, हलीमक, ऊर-स्तम्भ और अर्शरोग आराम होता है:— त्रिकटु, त्रिफला, मोथा, विडङ्ग, चन्य, चित्रक, दार्वीप्रन्थी एवं देवदार । इसके साथ व्यवहृत मण्डूर को हंसमण्डूर कहते हैं। इस औषघ के हजम होने पर तक पान करना उचित है।

#### मण्डूर का द्रावण

विडङ्ग को वकफूल के पत्ते के रस में मांड कर वहुत दिन तक हुँ उस रस में भावना दे। लोहिक ह को इस रस में कुछ देर डुवाकर रखने से द्रावित होता है।

#### यशोद (दस्ता)

यशोद रसक (फिटकरी) का सार है। यह वैद्यों की यश देने वाला है। ज्ञानी वैद्य इसके व्यवहार से सफल मनोरथ होकर वास्तव में यथेष्ट यश अर्जन करते हैं।

## यशोद के गुए

(१) इसको श्रिप्त पर गला कर चूने के जल में बुक्ताने से शोधित

(२) ग्रथवा गला कर केला की जड़ के रस में बुमाने पर भी शुद्ध होता है।

यशोदभस्म विधि

यशोद मारण की विशिष्ट विधि स्वर्णभस्म की तरह होने से उसकी चतुर्थ विधि देखिये।

#### .यशोदभस्म सेवन विधि

श्रितसार में — काटानट की जड़ श्रीर खजूर एकत्र जल में भिगी कर इस जल के साथ।

शीतज्वर में—जवाइन और लवड़ के चूर्ण के साथ।
चमन तें—चीनी और जीरा के चूर्ण के साथ।
चजुरोग में—पुराने घी के साथ अज्ञन लेना चाहिये।
प्रमेह रोग में—पान के रस के साथ।
श्रानिमान्द्य में—अग्निमन्य (अरणि) के रस के साथ।
त्रिदोष में—त्रिसुगन्धि के साथ।

#### यशोद की मात्रा

हरिताल के संयोग से जारित यशोद १ रत्ती मात्रा में प्रतिदिन सेव्य है। हरिताल के विना जारित यशोद २ रत्ती मात्रा में सेव्य है।

# अशुद्ध यशोद सेवन के दोष

श्रशोधित यशोद एवं जो विधिपूर्वक भरमीभूत नही है, ऐसा यशोद सेवन से प्रमेह, श्रिमान्य, वमन श्रादि रोग उत्पन्न होते हैं।

# अशुद्ध यशोद सेवन से उत्पन्न दोष को शान्ति

तीन दिन सुगन्ध बाला श्रीर हरीतको चीनी के साथ मिला कर सेवन करने से श्रशुद्ध यशोद सेवन से उत्पन्न दोषों को शान्ति होती है।

# बङ्ग (टीन)

दो प्रकार का बड़ है—१-खुरक और २-मिश्रक। उनमें खुरक वड़ ही उत्कृष्ट है। खुरक बड़ श्वेत वर्ण, स्निग्ध, शीघ्र द्रवीभूत होता है, भारी होता है और अग्नि पर तपाने से इसमें कुछ शब्द नहीं होता। मिश्रक बड़ श्याम मिला हुआ शुष्र रंग का होता है, दोनों वङ्ग ही तिक्तरस, उष्णवीर्य, ह्क्ष, ईषत् वायु प्रकोपक एवं मेह, श्लेष्म रोग, मेद ख्रौर क्रिमि निवारक है।

# वङ्ग के गुण

यथाविधि भस्मीकृत वङ्ग वल, श्रिप्त, क्षुघा, वुद्धि श्रीर सीन्दर्य वढ़ाने वाला तथा स्निग्धकर है। यह नियमित सेवन से क्षय, स्वप्नदोप श्रादि निवारण करता है। एवं धातु को स्थिर करने वाला श्रीर प्रमेहनाशक है।

#### बङ्ग की शोधन विधि

- (१) वङ्ग को पिघला कर हलदी का चूर्ण मिले हुए निसिन्दा (निर्गुण्डी) के रस में बुमावे, तीन वार ऐसा करने से खुरक वङ्ग अवश्य शोधित होता है।
- (२) पुनर्नवा, कुचिला श्रौर कडवी तूंवी के साथ मर्दन करके खट्टी छाछ में बुमाने से भी वज्ज विशुद्ध होता है।
- (३) वङ्ग ख्रोर सीसक को सात वार घोषा (विडङ्ग) के चूर्ण ख्रोर ख्राक का रस लेपन करके धूप में सुखाने पर भी वङ्ग ख्रोर सीसा विशुद्ध होता है। निर्गुण्डी का चूर्ण मिलाकर निर्गुण्डी के रस में डालकर सुखाने से भी वङ्ग शोधित होता है।

#### वङ्गभस्म

- (१) वङ्ग के पंत्र अलग अलग कर उसमें हरिताल और आक का रस लेपन करे। फिर उस वङ्ग को पीपल और इमली वृक्ष की सूखी छाल के क्षार के साथ मिलाकर पुटपाक करे। पाक हो जाने पर वह भस्म चूर्ण कर ले और रसादि किया में उसका अयोग करे।
- (२) एक मिट्टी के पात्र में वज्ज पिघला कर उसमें उसका सोलहवां भाग पारा डाले, और थोड़ा थोड़ा हरिताल चूर्ण वारम्वार डालकर भारद्वाज (वन कपास) की लकड़ी से उसे हिलाते रहें। इस तरह भस्म तैयार करके उसका रस-क्रिया में प्रयोग करे।
- (३) स्वर्णभरम की तरह वज्जभरम करने से वह भरम विशेष गुणकारी
- (४) पलोस (ढाक) के रस में हरिताल मर्दन करके उसके द्वारा वङ्ग के पत्ते लेपन करके पुटपाक करे तो वङ्ग सहज में भस्म हो जाता है।

#### वङ्गभस्म सेवन विधि

न रत्ती परिमाण (उपयुक्त मात्रा में) यह वज्ञभरम, गाय की छाछ श्रीर पिसी हुई हलदी के साथ चाटने से इसके द्वारा सुन्दर रूप से रसायन किया सिद्ध होती है। एवं २० प्रकार के मेहरोग निश्चय विनष्ट होते हैं। बज्जभरम सेवन करके महीन चावल, मूंग का यूष, मक्खन, तिल का तैल, परवल, तिक्त तेलकुचा श्रीर छाछ ये पथ्य प्रशस्त है।

# बङ्ग के अनुपान

मुख की दुर्गन्ध में -- कपूर के साथ बङ्ग सेव्य है।

जायफल के साथ सेवन से यह देह पुष्ट करता है श्रौर वीर्यधारण की शक्ति वढ़ाती है।

प्रमेहरोग में—तुलसी पत्ते के साथ।

गुल्मरोग में —शोधित सुहागे के साथ।

श्चाम्लिपित्त रोग में—हलदी के साथ। मधु के साथ सेवन से मलशृद्धि होती है।

पित्तवृद्धि में — मिश्री के साथ। पान के रस के साथ सेवन से शुक्र वृद्धि होती है।

जीर्ण शक्तिलोप में-पीपल के चूर्ण के साथ।

दमा श्रीर भ्वास में—हल्दी के साथ।

गात्र की दुर्गन्ध में — चम्पा फूल के रस के साथ सेवन करने से गात्र की दुर्गन्य नष्ट होती है।

वायुवृद्धिजनित पीडा में कस्तूरी के साथ।

चर्मरोग में - खदिर के काथ के साथ।

श्रजीर्ण में - सुपारी के साथ।

दायरोग में — मक्खन के साथ। दुग्ध के साथ सेवन करने से यह खूव पुष्टिकारक है। भन्न के साथ सेवन से वीर्यस्तम्भन होता है।

वायुजनित पीड़ा में लहसुन के रस के साथ।

कुष्ठव्याधि में समुद्रफल श्रौर निर्गुण्डी के रस के साथ।

क्लैंड्य में — श्रपामार्ग की जड़ के साथ सेवन से सुन्दर फल मिलता है। जननेन्द्रिय की शक्ति बढ़ाने के लिये — लवड़, समुद्रफल श्रीर पान के रस के साथ वड़ मलहम की तरह लगावे।

इसका तिलक कपाल पर धारण करने से सम्मोहन शक्ति ग्राप्त होती है। एरण्ड मूल के रस त्रीर जल के साथ कपाल पर लेपन करने से शिरोरोग विनष्ट होते हैं।

# सीसक (सीसा)

सीसक शीघ्र पिघल जाता है। यह श्रत्यन्त भारी है, छेदन करने से उज्ज्वल कृष्णवर्ण दीख पड़ता है। जिस सीसे में बदवू श्राती हो श्रोर वाहर से काला हो वह श्रच्छा नही। इससे श्रन्य प्रकार का सीसा निर्दोष है। सीसक श्रत्यन्त उप्णवीर्य, स्निग्ध, तिक्तरस, बातश्लेप्मनाशक, प्रमेह श्रोर जलदोष निवारक, श्राग्न का उद्दीपक श्रोर श्रामवात नाशक है।

सीसा श्रिम की ज्वाला में चढ़ाकर, उसमें निर्मुण्डी की जड़, वराहीकन्द श्रीर हलदी का चूर्ण डाले। द्रवीभूत होने पर उस सीसे को निर्मुण्डी के रस में डाल दे। ऐसा ३ वार करने से सीसक शुद्ध होता है श्रीर उस शोधित सीसक का सेवन करने से मूर्च्छा श्रीर फोड़ा श्रादि पीड़ा उत्पन्न नहीं होती है।

# सीसक के गुण

भस्मीभूत सीसक जीवनीशक्ति श्रौर शुक्त वर्द्धक है, यह पाचन शक्ति की बढ़ाता है। दीर्घकाल नियमित व्यवहार से प्रजनन शक्ति बढ़ती है।

सीसक मिष्ट और तिक्त रसयुक्त है। यह रौप्य का रखक है। दीर्घकाल व्यवहार से जीवनीशक्ति, वीर्य और स्मरणशक्ति बढ़ाता है।

# शुद्ध सीसक की परीक्षा

जो सीसक शीघ्र गल जाय, वहुत भारी हो श्रीर जो काटने से समुज्ज्वल कृष्ण वर्ण दीख पड़े वह विशुद्ध है।

### सीसक शोधन विधि

सीसक के पत्र करके, निर्गुण्डी की जड़ के चूर्ण और आक के रस के साथ मिलाकर उन पत्रों पर लेप कर सुखा लेवे फिर गला कर निर्गण्डी के रस में डुबा दे। यह किया सात वार करने से सीसा शोधित होता है। सीसक को पिघला कर केला की जड़ के रस में भिगोने से वह शोधित होता है।

#### सीसक की भश्म विधि

- (१) सीसक भस्म की विधि स्वर्णभस्म की तरह है। (चतुर्थ विधि देखिये)।
- (२) सम परिमित सीसक और यवक्षार एकत्र मिलाकर प्रवल अग्निताप पर चढ़ावे और लोहे की कर्छी से चलाता रहे एवं धूल की मांति चूर्ण हो जाने पर उतार ले फिर वड़ की जटा के काथ में मांड़ कर पुटपाक करे।
- (३) सीसक के पत्र पर मैनशिल और आक का रस लेपन करके पुटपाक करने से उसका निरुत्थ भस्म तयार होता है।

# अ सीसक का अमृतीकरण

दो पल सीसक भस्म समपरिमित हिड्डल श्रौर एक तोला गन्धक एकत्र नीबू के रस में मर्दन करके गजपुट मे पाक करे। इस प्रकार का सीसक विशेष शक्तिशाली होता है।

#### सीसक का अनुपान

सीसक भस्म चीनी के साथ सेवन करने से वायु, पित्त, शिरःशूल, चक्षु की पीड़ा, शुक्रदोष, प्रलाप, प्रदाह, श्राग्निमान्य दूर हो जाते हैं।

# अशोधित सीसक सेवन से उत्पन्न दोषों की शानित

हरी श्रीर चीनी के साथ स्वर्णभस्म तीन दिन सेवन करने से उक्त दोषों की शानित होती हैं।

# मिश्र धातु

#### र् पीतल 🖰

पीतल दो प्रकार की है—9-रीतिका श्रीर २-काकतुण्डी। जो पीतल तपाकर कॉजी में डालने से ताम्रवर्ण हो वह रीतिका है। श्रीर जो तपाकर कॉजी में डालने से काली पढ़ जाय वह काकतुण्डी है।

# पीतल के गुण

रीतिका पीतल-तिक्तरस, रूझ, क्रिमिनाशक, रक्तपित्त-निवारक, कुष्टनाशक, संयोगवश कुछ उल्लवीर्य किन्तु स्वभावतः शीतवीर्य है। काकतुण्डी पीतल-स्थ, तिक्तरस, उल्ल, कफपित्तनाशक, यकृत-प्लीहा निवारक श्रोर शीतवीर्य है।

#### पीतल शोधन विधि

पीतल को तपाकर, हलदी के चूर्ण मिले हुए निर्गुण्डी के रस में १ वार डालने से विशोधित होता है।

#### पीतल-भस्मविधि

- (१) पीतल-भस्मविधि तावे की तरह है।
- (२) नीवू का रस, मैनशिल श्रीर गन्धक के साथ पीतल मर्दन करके श्राठ वार पुटपाक करने से पीतल भस्म हो जाता है।

#### पीतल का व्यवहार

पीतलभस्म, कान्तलौह भस्म श्रीर श्रश्न सत्त्व ये तीनों द्रव्य समपरिमाण में लेकर सव की तौल वरावर त्रिकटु, विडङ्ग, वामनहाटी के वीज, वनयमानी, चीते की जड़, भेला श्रीर तिलों के चूर्ण के साथ मिलाकर एक मात्रा परिमाण सेवन करने से क्रिमि, कुष्ठ विशेषतः श्वेतकुष्ठ निवारित होता है।

#### कांसा (कांस्य)

त्राठ भाग तॉवा त्रीर दो भाग वङ्ग (दस्ता) पिघला कर एकत्र मिलाने से कासा वनता है। सौराष्ट्र देश में उत्पन्न कांसा शुभ फल देने वाला है। त्राथवा तीं क्णशब्दकारी, मृदु, स्निग्ध, कुछ श्याम युक्त शुभ्र वर्ण, निर्मल त्रौर तपाने से रक्तवर्ण इन छः गुणों वाला कांसा ही प्रशस्त है। जो क्रांसा पीले रङ्ग का, तपाने से ताम्रवर्ण हो त्रौर जो खरस्पर्श, रूक्ष, घन, त्राघात सहने मे त्रासमर्थ (फूट जाय) त्रौर मर्दन करने से जिसकी ज्योति निकले, यह सात प्रकार का कांसा परित्याग करने योग्य है।

# कांसे के गुण

कांसा लघु, तिक्तरस, उष्णवीर्य, लेखन, दृष्टि की असन्नता करने वाला, किमि श्रोर कुष्टनाशक, वायु श्रोर पित्त का शान्तिकारक, श्राप्त का उद्दीपक श्रोर हितकर है। घी को छोड़कर श्रन्य सब द्रव्य कांसे के पात्र में सेवन करने से श्रारोग्य, सुख श्रोर शान्ति प्राप्त होती है।

#### कांस्य की शोधनविधि

कांसे को तपाकर गोमूत्र में वुमाने से शोधित होता है। अथवा तीन घण्टा तेज अभिन पर गोमूत्र में सिद्ध करने से शोधित होता है।

#### कांसे की भस्मविधि

शोधित कांसा गन्धक श्रोर हरिताल के साथ मर्दन कर ५ वार पुटपाक करने से उसका निरुत्थ भस्म प्रस्तुत होता है ।

# वर्तलौह

कांसा, तांवा, पीतल, लौह श्रौर सीसा इन ५ घातुश्रों के मिलने से वर्तलौह की उत्पत्ति होती है। इसका दूसरा नाम पञ्चलौह है।

# वर्तलौह के गुण

वर्तलौह शीतवीर्य, श्रम्लकदुरस, रूक्ष, कफिपत्तनाशक, रुचिंकर, त्वचा की हितकर, किमिनाशक, नेत्रों को उपकारक एवं मलशुद्धिकारक है। वर्तलौह के पात्र में श्रन्न, व्यक्षन श्रौर दाल श्रादि पकाने से श्रौर उसमें खटाई का संयोग न रहनें से वे पदार्थ श्रीन वढ़ाने वाले श्रौर पाचक हो जाते हैं।

# वर्तलौह को शोधन-विधि

वर्तलौह पिघला कर घोड़े के मूत्र में वुमाने से वह विशुद्ध होता है।

### वर्तलौह की भस्मविधि

उक्त रूप से शोधित वर्तलौह गन्धक श्रौर हरिताल के साथ मर्दन करके पुटपाक करने से भस्म होता हैं।

# त्रिलौह

२५ भाग स्वर्ग, १६ भाग रौप्य और १० भाग ताम्र एकत्र गलाने से त्रिलौह तैयार होता है। यह सर्वदोष नष्ट करता है और श्रेष्ठ रसायन है। यह अभिवर्द्धक और सर्वरोगनाशक है।

# त्रिलौह को शोधन श्रोर भस्म विधि

यह स्वर्ण के शोधन त्रौर भस्म की विधि से शोधित त्रौर भस्मीभूत होता होता है। पूर्ण रूप से शोधित त्रौर भस्मीभूत हुए विना यह विप की तरह त्रसर करता है।

### त्रिलौह रसायन

जो व्यक्ति प्रतिदिन सवेरे १ रत्ती त्रिलौह भस्म मधु, घृत, त्रिफला श्रौर त्रिकटु के साथ सेवन करे वह सुखी, दीर्घायु श्रौर स्वस्थ रहता है।

#### रतन

मणिसमूह भी पारद का वन्धनकारक है। वैक्रान्त, सूर्यकान्त, हीरा, मुक्ता, चन्द्रकान्त, राजावर्त्त, मरकत (गरुडोद्गीर्ण), पुखराज, महानील, माणिक्य, मूंगा, वैदूर्य श्रोर नील, इनको मणि कहा जाता है।

पद्मराग, इन्द्रनील, मरकत, पुखराज श्रौर हीरा ये ५ श्रेष्ठ रत्न कहलाते हैं। माणिक, मोती, मूंगा, मरकत, पुष्पराग, हीरा, नीलमणि, गोमेद श्रौर वैदूर्य यथाक्रम से ये ७ मणि ९ प्रहों को प्रसन्न करने वाली है। पद्मराग (माणिक्य), पुष्पराग, प्रवाल, मुक्ता, मरकत, हीरा, नीलमणि, गोमेद श्रौर वेंदूर्य ये मणि यथाक्रम से इष्ट सिद्धि के लिये श्रंगूठी धारण में प्रशस्त हैं।

ये सव रत्न सुलक्षण श्रीर सुजात होने से रसिकया, रसायन कार्य, दान, धारण श्रीर देवपूजा में सिद्धिप्रद हैं।

#### माणिक्य

माणिक्य दो प्रकार का है, १-पद्मराग और २-नीलगिन्ध। कमलदल की नाई जिसकी कान्ति हो और जो स्वच्छ स्निग्ध और अतिशय उज्वल हो, वही पद्मराग है। वृत्त, आयत, सम और स्थूल पद्मराग उत्कृष्ट है। और जो गङ्गाजल से उत्पन्न और नीलगर्भ रक्तवर्ण है वही नीलगिन्ध माणिक्य है। यह भी पद्मराग की तरह उत्तादि गुणवाला होने से उत्कृष्ट है।

छिद्रयुक्त, कर्कश, मिलन, रूक्ष, श्रस्वच्छ, चपटा, लघु श्रीर वक्र यह ८ प्रकार का माणिक्य दूषित है।

माणिक्य अप्नि का उद्दीपक, वृष्य, कफ-वातनाशक, क्षयरोग निवारक एवं भूत, वैताल, पाप और कर्मज व्याधियों का शान्तिकारक है।

#### मौक्तिक

त्राह्मदजनक, श्वेतवर्ण, लघु, स्निग्ध, किरण विशिष्ट, निर्मल, बृहत्, जल-विम्ववत् श्रीर गोलाकार यह नौ प्रकार गुणयुक्त मौक्तिक शुभजनक होने के कारण प्रसिद्ध है।

मुक्ता लघु, शीतल, मधुररस, कान्तिवर्धक, दृष्टिशक्ति को बढ़ाने वाला, ब्रिशिकर, पुष्टिजनक, विषनाशक, विरेचक और वीर्यवर्द्धक है। समुद्र में जो सीप उत्पन्न होती है वह उज्ज्वल एवं परिणाम शूल का शीघ्र शान्तिकारक है।

जो मुक्ता रुक्षाङ्ग, शुष्कवत् , काले वर्ण की, ताम्राभ श्रौर लवण सदश है, श्राधा शुभ्र, विकटाकार श्रथवा ग्रन्थिविशिष्ट है, उन सब मुक्तात्रों का परित्याग करे।

मुक्ता कफिपत्त ख्रोर क्षयरोगनाशक, कास, श्वास ख्रोर श्रिग्नमान्य निवारक, पृष्टिजनक, शुक्रवर्द्धक, ख्रायुवर्द्धक एवं दाहशान्तिकारक है।

मुक्ता निम्नलिखित विषयों से उत्पन्न होता है:—हाथी, मेढक, शूकर, शङ्क, मत्स्य, सीप श्रोर वांस।

#### गजमुक्ता

हाथी से जो मुक्ता पाई जाती है उसे गजमुक्ता (मोती) कहते हैं। यह खूव उज्जवल, जयप्रदानकारी श्रीर सब रोगों को शान्त करने वाली है।

#### सर्पमाण

सपमिण रम्य, नील वर्ण की ज्योतिवाली एवं अत्यन्त उज्ज्वल, कटहल की आकृति सदश, आमले और गुजावीज सदश होती है।

### मीनमुक्ता

यह कोंच के बीज सदश होती है। एक प्रकार की तिमिजातीय मछली के भीतर उत्पन्न होती है। यह लघु एवं पारल पुष्प के सदश होती है। यह गोलाकार श्रोर ज्यादा उज्ज्वल नहीं होती है।

मीनमुक्ता मछली को श्रॉख के सहरा, पवित्र श्रीर वहुगुणविशिष्ट श्रीर वहत् होती है। यह तिमि के मुख मे उत्पन्न होती है।

# बराहसुक्ता

किसी किसी यूकर के दॉत की जड़ में जो मुक्ता उत्पन्न होती है उसे वराह मुक्ता कहते हैं। यह चन्ड्रविम्व की तरह उजली और अनेक गुण वाली होती है।

## वेणुसुक्ता

वांस से टरपन्न मुक्ता वांस के भीतर होती है। चन्द्रविम्व की भांति उज्जल और हलदी की सी आभावाली होती है। वंशलोचन में और इनमें भेद यह है कि—वंशलोचन चीनी की तरह वस्तु, कोमल और लघु है। वेणुमुक्ता कठिन एवं भारी होती है।

#### शङ्खमुक्ता

शङ्गमुक्ता चन्द्रसमान श्वेतवर्ण वाली, गोलाकार, टज्ज्वल श्रोर मनोहर है, इसकी वेर की सी श्राकृति होती है श्रोर समय समय पर कभी कभी कवृतर के श्रण्डे के समान वड़ी भी होती है।

# दादुर ( मेंडक ) खुक्ता

मेंडक के सिर पर जो मुक्ता उत्पन्न होती है वह सपमणि सदृश होती है।

# सीपसुक्ता

सीप में जो मुक्ता टरपन्न होती है टसे सीप की मोती कहते हैं। शङ्क और सीप में जो मोती टरपन्न होती है वह अन्यान्य मोतियों की अपेक्षा हीन है। जो मोती या मुक्ता समुद्र में टरपन्न होती है (मीनमुक्ता, शङ्कमुक्ता, सीपमुक्ता) वे वीर्यवान और रोगनाशक होती हैं।

#### प्रवाल-संगा

पके हुए विम्वपल कुंदर की तरह लाठरंग, गोला और वड़ा, सीधा, चिक्रना, अन्त ( ह्टा न हो ) और मोटा यह ७ अकार का अवाल शुभ फलदायक है।

पाण्ह चा धूसरवर्ण, स्ट्म, क्षत ( दागी ) वाला, भीतर कोटर वा गांठ वाला, क्ष्मि, ताप्रवर्ण ये आठ प्रकार के प्रवाल अच्छे नहीं हैं।

भ्वाल श्रप्तिवर्द्धक, पाचक, लघु, क्षीण, पित्त, रक्त श्रीर कास निवारक है।

# ं ताक्ष्य

हरिद्दर्ण, भारी, चिकना, किरणयुक्त, मुलायम, उज्ज्वल और स्थूल इन सात लक्षणों से युक्त मरकत मणि उत्तम है। जो मरकत कपिल, नील, पाण्डु वा कृष्ण वर्ण, कर्कश, लघु, चपटा, विकट और रूक्ष हो वह अच्छा नहीं है। मरकत मणि ज्वर, चमन, विषदोष, श्वास, सन्निपात, अग्निमान्द्य, अर्था, पाण्डु और शोथ रोग को शान्त करने वाला और ओजवर्द्धक है।

#### पुटप्राग

भारी, स्वच्छ, चिकना, स्थूल, समगात्र, मृदु, मुलायम श्रीर कर्णिकार (कनेर) के कुसुम की नाई पीतवर्ण, इन ८ लक्षणोसे युक्त पुष्पराग मिण शुभजनक है। पीला, श्याम, किपश, किपल, वा पाण्डवर्ण, प्रभाहीन, कर्कश, रूक्ष श्रीर विपम गात्र वाले पुष्परागमिण का परित्याग करे। पुष्पराग श्रीनवर्द्धक, पाचक, लघुपाक श्रीर विषदोष, वमन, कफ, वायु, मन्दाग्नि, दाह, कुष्ठ श्रीर रक्तदोप का शान्ति-कारक है।

#### बज्र-हीरा

पुरुष, स्त्री और नपुंसक भेद से हीरा तीन अकार का है। रसवीर्य और विपाक में इनमें पूर्व पूर्व उत्कृष्ट है अर्थात् नपुंसक की अपेक्षा स्त्री और स्त्री की अपेक्षा पुरुषजातीय हीरा श्रेष्ठ है।

श्रष्टकोण, श्रष्टफलक या षट्कोणयुक्त, श्रत्यन्त दीप्तिवाला एवं मेघ, इन्द्रधनु या स्वच्छ जल की श्राभा वाला हीरा पुरुपजातीय होता है। जो गोलाकार किन्तु दीर्घ श्रीर चपटा हो, वह स्त्रीजातीय है। श्रीर जो वर्तुलाकार किन्तु कोनो पर 'सड्कुचित श्रीर कुछ भारी है, वही नपुंसकजातीय हीरा है।

स्त्री, पुरुष श्रोर नपुंसक व्यक्ति के लिये यथाक्रम से स्त्रीजातीय, पुंजातीय श्रोर नपुंसकजातीय हीरे का प्रयोग करें। पुंजातीय हीरक के सिवाय श्रन्य कोई हीरा इस नियम के विपरीत प्रयोग किया जाय तो वह फलप्रद नहीं होता, श्रर्थात पुंजातीय हीरा स्त्री, पुरुष, नपुंसक सब के लिये ही उपकारी है। इन तीन प्रकार के हीरों में से प्रत्येक के श्वेतादि भेद से चार प्रकार हैं। वे चार विभाग वर्णभेदानुसार बाह्मण, क्षत्रिय, वैश्य श्रोर श्रद्ध कहे, जाते हैं। श्वेतवर्ण-हीरा बाह्मणजातीय,

लालवर्ण का क्षत्रिय, पीले वर्ण का वैश्य श्रीर कृष्ण वर्ण का शृहजातीय है। इनमे पीतवर्ण की श्रपेक्षा पूर्व-पूर्व उत्तम जातीय हीरक श्रधिक फलप्रद है।

हीरा आयुवर्द्धक, शीघ्र सद्गुणप्रद, वृष्य, त्रिदोप का शान्तिकर्ता, सर्वरोग-नाशक, पारद का बन्धन, जारण श्रोर गुणोत्कर्प सम्पादक, उद्दीपक, नृत्युनिवारक श्रोर श्रमृतवत् उपकारक है।

सब रत्नो के ही ५ साधारण दोप हैं जैसे गौर, त्रास, विन्दु, रेखा श्रोर जल-

गर्भता। चेत्र श्रीर जलजात ये दोष रत्न में नहीं लगते हैं।

# हीरे का शोधन

- (१) कुलथी के काथ त्रथवा कोदो (धान्य) के काथ के साथ एक प्रहर तक भिगोने से हीरा शुद्ध होता है।
- (२) किसी भी प्रकार के रत्न को दोलायंत्र में जयन्ती (जेंथी) के पत्तों के रस में २ घण्टा पाक करने से वह शोधित होता है।

#### हीरे की भस्मविधि

श्वेतवर्ण वाले हीरे को पीपल, वेर श्रीर जयन्ती वृक्ष की छाल, माक्षिक श्रीर कॅंकड़ा का खोला श्रीर सम परिमाण मनसा वृक्ष के रस के साथ मर्दन करके उस मलहम का लेप लगाकर गजपुट में पाक करने से हीरा भस्मीभूत होता है।

लाल रंग का हीरा करबी, मेढ़ाश्टङ्गी, वेर, गूलर समान लेकर आक के रस के साथ माड़कर मलहम सा तयार कर उसे हीरे पर लगाकर गजपुट में पाक करने से भस्मीभूत होता है।

पीले रंग का हीरा बला, श्रतिबला, गन्धक श्रीर कल्लुए के खोल समपरिमित इन्द्रवारुणी के रस के साथ मर्दन करके यह मलहम लगाकर गजपुट में पाक करने से भस्मीभूत होता है।

कृष्णवर्ण हीरे को जमीकन्द, लहसुन, शङ्ख, मैनशिल सम परिमाण वट के रस के साथ मर्दन करके गजपुट में पाक करने से भस्मीभूत होता है।

स्त्रीजातीय श्रौर नपुंसकजातीय हीरे को पुंजातीय की तरह भस्म करते हैं। हीरे की भस्म तिगुने पारद के साथ मर्दन कर गुटिका (गोली) बनावे। इस गुटिका को मुख मे घारण करने से हिलते दुए दांत हढ़ होते है। हीरे की भस्म २० भाग, स्वर्णभस्म १ भाग, रौप्य ८ भाग, पारइ ११ भाग, श्रम्भ १ भाग, स्वर्णमाक्षिक ८ भाग, वैकान्त ६ भाग, ये द्रव्य एक साथ मिलाने से पारद का षाड्गुण्य सिद्ध होता है।

## नीलम (नीलमाणि)

नीलमणि दो प्रकार का है, जलनील श्रीर इन्द्रनील। इनमें इन्द्रनीलमणि ही श्रेष्ठ है। जिस नीलमणि के गर्भ में रवेत श्रामा दिखाई पड़े श्रीर जो लघु हो वहीं जलनील है। श्रीर जिसके गर्भ में कृष्ण श्रामा दिखाई पड़े श्रीर जो भारी हो, वहीं इन्द्रनील है।

एक रंग वाला, भारी, ह्निग्ध, स्वच्छ, पिण्डाकृति श्रौर मध्यदेश में ज्योति-वाला हो, यह ७ प्रकार का नीलरत्न उत्कृष्ट है। जलनीलमणि भी ७ प्रकार का है; यथा कोमल पंचवर्ण श्राधिष्ठित (श्राधा भाग एक वर्ण श्रौर श्राधा भाग पंचवर्ण), रूक्ष, हलका, रक्तगन्धयुक्त, चपटा श्रौर सूच्म। नीलमणि-श्वासकास-नाशक, वृष्य, त्रिदोषनाशक, श्रिप्तिदीपक एवं विषमज्वर, बवासीर श्रौर पापनिवारक है। इसके श्रितिरक्त श्रौर भी एक प्रकार का नीलमणि है, जिसका नाम महानील है। यह नील १०० गुने दूध में रखने से इसके वर्ण की श्रिधकता के कारण वह दूध नील वर्ण का हो जाता है।

नील उड़ीसा के कुछ भागों में एवं लड़ा में पाया जाता है।

#### गोमेड

गोमेद मिण का वर्ण गोमेद की तरह होने से इसे गोमेद कहा जाता है। गोमूत्र के वर्णवाला और स्वच्छ, स्निग्ध, समगात्र, गुरु, स्तरहीन, मुलायम और उज्जवल यह ८ प्रकार का गोमेद मिण शुभफलप्रद है। विकृतवर्ण, लघु, रूक्ष, चपटा, त्वचा की तरह आवरणयुक्त, प्रभाहीन और पीले कॉच की तरह वर्णवाला गोमेद शुभजनक नहीं है।

गोमेद म णि कफिपत्त, क्षय श्रोर पाण्डुरोगनाशक एवं श्रिप्त का उद्दीपक, पाचक, रुचिकर, त्वचा को हितकर श्रोर बुद्धिवर्द्धक है।

# वैद्यं

जो वैदूर्य मणि शुभ्र ग्राभायुक्त, समगात्र, स्वच्छ, भारी श्रोर उज्ज्वल हो श्रीर जिसके मध्यभाग में शुभ्र चहर सा घ्मता जान पड़े वही शुभजनक कहा

६ र० चि०

जाता है। ग्रीर जलवत् श्यामवर्ण, चपटा, लघु, कर्कश ग्रीर जिसके भीतर चहर जैसा पदार्थ दीख पड़े वह ग्रच्छा नहीं है।

वैदूर्यमणि रक्तिपत्तनाशक, प्रज्ञा, श्रायु श्रोर वल को वढ़ानेवाला, पित्त प्रधान रोग निवारक, श्रिप्त का उद्दोपक श्रोर मलनाशक है।

# रत्नज्ञुद्धि

खद्दी वस्तु द्वारा साणिक्य, जयन्ती पत्ते के रस द्वारा विद्वम, गोंडुग्ध द्वारा मरकत, कुलधी के काथ में मिले हुए मद्य वा काजी द्वारा पुष्पराग, तन्डुलीय (काँटानट के) रस द्वारा हीरा, नीलवृक्ष के रस द्वारा नीलमणि, गोरोचन द्वारा गोमेद श्रोर त्रिफला के जल द्वारा वैदूर्यमणि शोधित होता है।

## रत्नों ी भस्स

त्राक के रस, मैनशिल, गन्धक श्रीर हरिताल के साथ मर्दन करके ८ वार पुट देने से हीरे के सिवाय श्रन्य सव रत्न भस्म हो जाते हैं।

हीग, पश्चलवण, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, मांसरस (एक प्रकार का अम्लवेत), चूलिका लवण, पका हुआ जमालगोटा फल, भिलावा, इवन्ती, रदन्ती लता, क्षीरविदारी, चीते की जड़ और मनसा सीज का रस, आक का रस इन सवको एकत्र पीस कर उसका एक गोला वना ले, उस गोलक में निर्दोप और शुभफलदायक उत्तम जाति के रत्न रक्खे, फिर उस गोलक के ऊपर भोजपत्र लगाकर धागे से बांध दे। फिर उसके ऊपर चल्न लपेट कर, सब अम्लद्रव्य और कॉजी से भरी हुई हांडी में दोलायन्त्र से पाक करे। ३ दिन रात तक तीव्र अगिन से आई कर रत्नों को धो डाले। इसके वाद पुटपाक करके उन रत्नों की भस्म प्रहण कर ले। रत्नभस्म रत्न की तरह अभा विशिष्ट, लघु, देह की दृदताजनक और विविध शुभफलप्रद है।

सुक्ताचूर्ण श्रम्लवेत के साथ १ सप्ताह मईन करके जम्हीरी में रख दे श्रौर किर श्रन्न के ढेर में गाढ़ दे। १ सप्ताह वाद उसे वाहिर निकाल कर पुटपाक करे तो उसकी भस्म तैयार होती है।

वज़दल्ली (हाड़जोड़ा ) में हीरा रखकर, अम्लद्रव्य से भरे मिट्टी के पात्र में ७ दिन इसे भिगोवे, फिर पुटपाक करने से हीरा भरमरूप में परिणत होता है।

#### वैत्रान्त

रवेत वर्ण वैकान्त श्रम्लवेतस के रस में भिगोकर तेज धूप में सुखावे, इस तरह ७ दिन भावना दे, फिर केतकी के स्वरस, संधानमक श्रीर स्वर्णपुष्पी (स्वर्णयूथी वा विषलाङ्गलीया) श्रीर बीरवहूटी कीट, ये सब द्रव्य एक हांड़ी में रखकर 
उस हांड़ी में दोलायन्त्र से एक सप्ताह तक वैकान्त को भिगोवे। इस तरह वैकान्त भस्म तैयार होता है। ८ तरह की धातु में हीरा डाल कर भिगोवे उस योग के प्रभाव से वह भी निश्चित द्रवीभूत होता है।

रत्नभस्म कसूम के बीजों के तैल में रखने से वह चिरकाल तक निर्विकार रहती है। इस प्रकार से रत्नभस्म रखकर श्रावश्यकता के समय उसका व्यवहार करे।

रत्नधारण करने से सूर्यादि ग्रहो का दोष दूर होता है एवं दीर्घायु श्रोर श्रारोग्य प्राप्त होता है, धेर्य वढ़ता है, कान्तिहीनता श्रोर पत्थर धूलि श्रादि के संसर्ग से उत्पन्न श्रलद्मी का नाश श्रोर भूतादि निवारित होते हैं।

विन्ध्य पर्वत के उत्तर और दक्षिण की खानों में वैकान्त मिलता है।

### वैक्रान्त की शोधन विधि

कुलथी के काथ में तीन दिन पकाने से पैकान्त शुद्ध होता है।

#### वैकान्त का सत्त्वपातन

वैक्रान्त की भस्म, गुड़, गुग्गुल, लाख, उम्फल, पिण्याक (तिलकल्क), राल, लोम एवं छोटी मछली इनको मिलाकर यथेष्ट दुग्ध के साथ मर्दन कर मूणावन्ध करके तपाने से वैक्रान्त का सत्त्व निकलता है।

#### स्फाटिक

साधारणतः कई प्रकार का स्फटिक देखा जाता है। मन्दकान्ति (लाख की सी ज्योति) वाला स्फटिक विन्ध्याचल के जज्ञलों में उत्पन्न होता है। उसका रंग श्रशोक के कच्चे पत्ते के सहश श्रथवा श्रवार के वीज के सहश होता है। काले रंग का स्फटिक सिंहल में उत्पन्न होता है। पद्मराग की खान में तीन प्रकार का स्फटिक उत्पन्न होता है। उनमें से प्रत्येक श्रत्यन्त निर्मल, स्वच्छ श्रीर स्तरविहीन होता है। इनका साधारण नाम ज्योतीरस है। इनमें लाल

रंग के स्फटिक को राजावर्त, नीले रंग को राजमय श्रीर जिस स्फटिक के गात्र पर ब्रह्मसूत्र का सा चिह्न हो उसे ब्रह्ममय स्फटिक कहते हैं।

# स्फटिक के गुण

यह न त्राति शीतल त्रोर न त्राति उष्ण है। यह पित्त, स्जन, रक्त की खरावी श्रोर क्षयरोग में परम हितकर है।

स्फटिक के वने हुए वर्त्तन में जल रखने से वह शीतल श्रौर पित्तनाशक गुण वाला होता है।

# चन्द्रकान्त और सूर्यकान्त मणि

सूर्यकान्त मणि हिमालय के शिखर पर उत्पन्न होता है। यह सूर्यग्रह की प्रिय वस्तु है। सूर्यिकरण इस पर पड़ने से इसके वीच से श्रिप्त शिखा निकलती है। यह रत्नों में श्रेष्ठ है। चन्द्रकान्त मणि चन्द्रग्रह की प्रिय वस्तु है। यह भी हिमालय के शिखर पर मिलती है। यह दुर्लभ है। इसके ऊपर चन्द्रकिरण पड़ने से इसके वीच से श्रमृत सदश सामर्थ्यवान जल कण निकलते हैं।

सूर्यकान्त सणि के गुण—यह टप्ण, निर्मल, रसायन, वातकफहर्ता श्रौर मेथाजनक है। यह रत्न धारण करने से रवित्रहजनित सब दोष नष्ट होते है।

चन्द्रकान्त सणि के गुण—यह शीतल, स्निग्ध, रक्तिपत्त और शोध-नाशक है। यह महादेव की प्रिय वस्तु है एवं प्रहदोप और दुर्भाग्यनाराक है। चन्द्रकान्त सणि से जो जल कण निकलते हैं वे अत्यन्त विशुद्ध और पित्त को शान्त करने वाले होते हैं।

## प्रवाल सम्बन्ध में विशेष कथन

- (१) उत्तम प्रवाल ( मूंगा )—लाल श्वेत वर्ण का होता है, यह मृदु श्रौर सहज में वेधा जा सकता है।
- (२) उसकी अपेक्षा कुछ हींन गुणवाला अवाल—जवापुष्प, सिन्दूर अथवा अनार के पुष्प के रंग का होता है। यह कठोर अर्थात् कोमल नहीं है, और सहज में वेधा नहीं जा सकता है।
- (३) इसकी अपेक्षा होन गुणवाला प्रवाल-ढाक के फूल के सदश लालपीला वर्ण वाला होता है। यह स्निग्ध है किन्तु कोमल नहीं है।

(४) इससे निकृष्ट प्रवाल रक्त-कृष्ण का वर्ण है। यह कठिन और ज्योति-विशिष्ट नहीं है तथा सहज में नहीं वेधा जा सकता है।

व्यवहार योग्य प्रवाल के लचण—विशुद्ध प्रवाल-रक्तवर्ण, चिकना, स्निग्ध, विदारणयोग्य, ज्योतिविशिष्ट, गोलाकार श्रौर स्थूल होता है।

**व्यवहार के अयोग्य मूंगा के लक्तण**—यह पाण्ड, धूसर, दागी, ताम्र की आभा वाला और लघु होता है।

प्रवाल के गुण-प्रवाल-क्षय, पित्त, रक्तसाव, खांसी, वक्षरोग, विषदोष श्रीर भूतदोषनाशक है। यह लघु श्रीर पाचक है।

#### कर्केत

कर्केत मणि रलीपद श्रौर सर्व स्पर्शजदोषनाशक है। यह वर्णभेद से ७ प्रकार का है। उनमे नीला श्रौर रवेत रंग का कर्केत हीनगुणवाला है।

#### भीशम रतन

यह हिमालय पर्वत पर मिलता है। यह सर्व विषनाशक है। यह मणि हाथ में धारण करने से न्याघ्र, सिंह, सर्प आदि हिंसक जन्तुओं का कुछ भय नहीं रहता है। यह जल, अग्नि, दस्यु और शत्रुभय निवारक है। जो भीशम मणि सिवार एवं वगुला के पंख के रंग वाला, कर्कश, प्रभाहीन, पीतवर्ण वाला और मिलन हो वह न्यवहार के योग्य नहीं होता है।

#### नीलमणि के विशेष गुण

नीलमणि श्वास, कास और त्रिदोषनाशक, वृष्य, दीपन, विषम ज्वर, ववासीर श्रीर पापनाशक है।

#### उपरहन

उपरत्न अनेक प्रकार के मिलते हैं। उनमें ७ प्रकार के प्रधान हैं। यथा पालस्क, रुधिर, पूर्तिका, तार्च्य, पीलु, उपल और सुगन्धिक। रत्नों में जो जो गुण हैं उपरत्न में वे थोड़े परिमाण से हैं। सर्वरत्नों के शोधन और मारण के नियमानुसार इनको शोधित और मारित करे। मारित उपरत्न सब रत्न संस्कारों में और औषध में व्यवहृत होते हैं।

#### ग्रहरतन

सूर्यग्रह विरुद्ध हो तो वैदूर्यमणि, चन्द्र होने से नीलकान्त, मङ्गल होने से प्रवाल, बुध होने से पद्मराग, बृहस्पित होने से मुक्ता, शुक्र होने से हीरा, शिन होने से इन्द्रनील, राहु होने से गोमेद और केतु होने से मकरत मणि धारण करनी चाहिये।

## ग्रह ओषधि

सूर्य विरुद्ध होने से वेल की जड़, चन्द्र मे खीराई की जड़, मङ्गल मे अनन्त-मूल, बुध में बृद्धदारक की जड़, बृहस्पित में ब्रह्मयष्टि (भारंगी) की जड़, शुक्र में सिंहपुच्छ (रामवासक) की जड़, शिन के लिये वला की जड़, राहु में चन्दन श्रीर केतु में अश्वगन्धा की जड़ धारण करनी चाहिये।

#### क्षार

क्षार मात्र ही मल निकालने वाले हैं।

#### क्षारत्रय

जवाखार, सज्जीखार श्रौर सोहागा।

#### क्षारचतुष्ट्य

सजीखार, श्रोपरक्षार, यवक्षार श्रोर सोहागा ।

#### पश्रक्षार

पलाशक्षार, घण्टापार्रल ( मोखा ) क्षार, यवक्षार, सज्जीक्षार और तिलक्षार । इस क्षारपत्रक में सोहागा, सज्जीक्षार, श्रोपरक्षार ये भूमि में पाये जाते हैं । शेष वृक्षों की भस्म से तैयार किये जाते हैं । नौसादर भी क्षार कहा जाता है । हमने उपरस के साथ इसका वर्णन किया है । इसमें पारे का कुछ श्रंश मौजूद रहता है ।

नीचे लिखे वृक्षों के क्षार श्रीषध में व्यवहार किये जाते हैं, यथा—

पलारा, पीपल, मोखा, मनसासीज, अपामार्ग, चने का पौघा, आक, इमली, तिल का पेट, जो, अह्सा, जवासा, कटेरी, मूली, चीता, पुनर्नवा, अदरक।

उपर्युक्त क्षारों में यवक्षार, सज्जीक्षार, नौसादर, श्रीषर क्षार श्रीर सोहागा श्रविक व्नवहार में श्राते हैं।

# क्षार के गुण

सव क्षार तीच्णवीर्य, उष्ण, लघु, दीपक, क्लेदक, दाहकर, शोथकारक, कफ-नाशक, क्रिमिन्न, व्रणनाशक, व्रणशोधक श्रीर व्रणरोपक हैं।

क्षार पारे का मुख उत्पन्न करनेवाले एवं गुल्म, त्र्यर्ग, शूल, बहुमूत्र, पथरी त्रीर प्रहणीनाशक हैं। क्षार पाचक हैं किन्तु रक्तिपत्तकारक है। श्रमेक समय श्रस्त प्रयोग की अपेक्षा क्षार प्रयोग से ही श्रिष्ठिक सफलता होती है। श्रिष्ठिक क्षार सेवन से वीर्यक्षय होता है।

### क्षार तैयार करने को साधारण विधि

जिस वृक्ष या पत्तों से क्षार तैयार करना हो उसे आग में जलाकर भस्म करें फिर उस भस्म को सोलह गुने जल में १२ घण्टा भीगने दें, फिर मोटे कपड़े से सात वार छान लेने पर जो जल रहे उसे अग्नि पर गरम करे जब जल सूख जाय तव नीचे जमा हुआ श्वेत अंश ग्रहण करें।

### जवाखार तैयार करने की विधि

जो को जलाकर १६ गुने जल में भिगो कर प्र्वोक्त प्रकार से क्षार तैयार कर तो, यही जवाखार है।

### जवाखार के गुण

जवाखार कटु, ह्निग्ध, लघु, उष्ण, सूद्रम, पाचक, सारक, मूत्रकारक, वात-कफनाशक, आनाह (मलमूत्र का रुक जाना), ग्रहणी, पाण्डु, गुल्म, ववासीर, श्वास, शूल, प्लीहा, हद्रोग और ग्रामदोषनाशक है। यह अग्निगुणवाला और शुक्रनाशक है।

# औषरक्षार के गुण (पाकिम क्षार वा नवसार)

यह मेदनाशक और विस्तिशोधक है। एवं वायुनाशक, क्लेदक, वलनाशक, आनिवृद्धिकारक, विरेचक, कोमल, शीघ्र ही शरीर के सव स्थानो पर असर करने वाला, कुछ पित्त वढ़ाने वाला, लघुपाचक और ऊर्ध्वगत वायु को शान्तिकारक है। यह यदमा, टदर आनाह (पेट फूलना, दरत-पेशाव रुक जाना), शूल, गुल्म, डकार, आम और किमिनाशक है।

#### मिश्रक्षार

पंसारी लोग कभी कभी क्षार श्रिधक उत्पन्न करने के लिये की चढ़ के साथ घास की राख मिला देते हैं श्रीर उस की चढ़ मिलित भस्म को जल में डाल कर ऊपर स्थित तरल पदार्थ श्रिम पर गर्म करके क्षार तैयार करते हैं। इसे मिश्र क्षार कहते हैं।

## सज्जीक्षार

किसी किसी पहाड़ पर या उसके समीपवर्ती स्थानो में यथेष्ट परिमाण में क्षार मिली हुई मिट्टी देखी जाती है। इसको सज्जी मिट्टी कहते हैं। इसमें सज्जी-मित्तका और अन्यान्य पदार्थ रहते हैं। यह मिट्टी चौगुने जल में घोलकर मोटे कपड़े में छान कर साफ करते हैं फिर वह तरल पदार्थ अग्नि पर वर्तन में तपा कर क्षार ब्रहण कर लेते हैं। इसी को सज्जीक्षार कहते हैं।

# सज्जीक्षार के गुण

जवाखार की तरह सज्जीक्षार भी आग्नेय गुणवाला है। यह कटु, उष्ण, तीच्ण और कफ तथा वायु नाशक है। एवं गुल्म, आध्मान, उदररोग, व्रण, क्रिमि, आनाह, प्लोहावृद्धि, यकृतरोग और शुक्रदोषनाशक है।

### कृत्रिम (वनावटी) सज्जीखार

जपर लिखे सज्जीखार के अभाव में वैद्य लोग कभी कभी जवासा श्रीर जवासी की राख से सज्जीखार तैयार करते श्रीर व्यवहार करते हैं।

### टङ्गन-सोहागा

उत्तर भारत श्रीर तिव्वत के सूखे जलाशयों के गर्भ में एक प्रकार की मिट्टी मिला हुआ क्षार देखा जाता है इसको टह्दन या सोहागा कहते हैं। इसको जल में गलाकर पूर्वीक्त प्रकार से छान कर श्राग्निताप से सुखाने पर पात्र के तलदेश में रह जाता है।

## टङ्कन के सेद

टद्भन दो प्रकार का है १-पिण्ड ग्रौर २-दानेवाला। पहले की श्रपेक्षा दूसरा श्रधिक सफेद होता है। पहला उतना सफेट नहीं होता है।

# टङ्कन के गुण

पिण्ड टङ्कन-कटु, उष्ण, रूक्ष, श्रामिवर्द्धक, कफ को नाश करने वाला और नायुपित्तवर्द्धक है। यह कास, श्वास, रज का रकना और स्थावर विष नष्ट करता है। यह दाने वाले टङ्कन से श्रल्पगुण वाला है। श्वेतवर्ण वा दानेदार टङ्कन-कटु, उप्ण, स्निग्ध, तीद्दण, सादा, विरेचक और वलप्रदानकारीं, पाचक एवं कफ, वायु क्षय, श्रामदोष और विषदोष नाशक है। श्वेतटङ्कन पिण्डटङ्कन से विशुद्ध है।

# टङ्कन शोधन विधि

इसको तवे या करछी पर रख कर आग पर फुला ले, वह शुद्ध हो

# क्षार के भेद

दो प्रकार का क्षार देखा जाता है, १-कठिन श्रोर २-तरल। कठिन क्षार का चाह्य प्रयोग श्रोर श्रोषध की सामग्री रूप से व्यवहार किया जाता है श्रोर तरल क्षार कुछ रोगों मे काजी, मद्य, दिध, दुग्ध, छाछ श्रोर त्रिफला के काथ के साथ पिलाया जाता है।

# क्षारद्वय और क्षारत्रय के गुण

सज्जीखार श्रीर जवाखार को क्षारद्वय कहते हैं इनके साथ सोहागा मिला देने से इसे क्षारत्रय कहते हैं। इन तीन क्षारों के जो जो गुण पृथक् पृथक् कहे गये है, दो-तीन क्षार मिलाने पर भी वे ही गुण रहते है। विशेष कर मिलित क्षारद्वय या क्षारत्रय गुल्म रोग नाश करने के लिये श्रात उपयोगी है।

#### क्षाराष्ट्रक

पलाश, सिज, श्रपामार्ग, इमली, श्राक, तिलनाल श्रीर जो इन सात द्रव्यो का क्षार श्रीर सज्जीखार यह क्षाराष्ट्रक कहलाता है। यह क्षाराष्ट्रक श्रीनगुणवाला श्रीर गुलम तथा श्र्लविनाश के लिये श्रेष्ठ है।

#### लवण

साधारणतः ६ प्रकार का लवण देखा जाता है—समुद्री, सैन्धव, विड, सौवर्चल, रोमक श्रौर चूलिका।

# लवण के साधारण गुण

लवण-शोधक, रुचिकारक, पाचक, कफिपत्तवर्द्धक, पुरुषत्व श्रोर वायुनाशक है। यह देह की शिथिलता श्रोर मृदुताकारक, बलघ्न, मुख में जलोत्पचकारी, कपोल श्रोर गलदाहकारी है।

## अति लवण सेवन के दोष

त्रधिक लवण सेवन से आंखें दूखना, रक्तिपत्त, आतो में क्षत, वाल सफेद होना, कुछ, विसर्प और तृष्णा आदि उपद्रव उपस्थित होते हैं।

#### समुद्री लवण

यह पाचक, तोद्दण, लघु, रोचक श्रोर सारक, क्षार गुण युक्त, कफिपत्तवर्द्धक, श्रोर वायुनाराक है।

सैन्धव

संधा नमक पहाड़ में उत्पन्न होता है। पंजाब और सिन्ध से इसकी खान है। यह पाचक, शीतवीर्य, लवणमधुर, लघु, स्निग्ध, अग्निवर्धक, रोचक, चक्षु को हितकर, शुक्रवर्द्धक, त्रिदोषनाशक, सूद्धमस्रोतगामी, कोष्ठ-कठिनता और व्रण-नाशक है।

#### विड लवण

यह एक प्रकार का कृतिम लवण है। यह लवण रसयुक्त, उष्णवीर्य, तींदण क्षारयुक्त, लघु, पाचक, रूक्ष, रुचिकारक, व्यवायी, उर्ध्वगत कफ और अधोगत वायु का अनुलोम कारक ( ठीक तरह से निकालना ), क्षुधा, पित्तवर्द्धक और रोचक है। श्रीर शूल, अर्जाण, कोष्ठवद्धता, गुल्म, हद्दोग और मेहरोग मे शुस फलप्रद है।

### विड लवण बनाने की विधि

- (१) ८ भाग समुद्री लवण, १ भाग हर्रा, १ भाग आंवला, १ भाग शांवित सज्जी एकत्र अच्छी तरह पीस कर मिट्टी के वर्त्तन मे अपनि पर जब तक गांला ना न वन जाय तव तक तपावे।
- (२) ८ भाग समुद्री लवण, १ भाग आँवले का चूर्ण मिलाकर मिट्टी के पात्र में तीच्य अग्नि से पाक करके शीतल होने पर विड लवण तैयार होता है।

# सौवर्चल लवण

सौवर्चल लवण-रुचिकारक, भेदक, श्राग्नदीपक, श्रत्यन्त पाचक, ह्निग्ध, वायुनाराक, श्रात पित्तकर नहीं, विरादगुणयुक्त, लघु, उद्गारशुद्धिकारक, सूद्म स्रोतगामी एवं विवन्ध, श्रानाह श्रोर शूल निवारक है। श्रोषर क्षार श्रोर यह लवण श्रायः एक ही वस्तु है। वनाने की विधि श्रोषर क्षार की तरह है।

## रोमक लवण

इसे सांभर लवण कहते हैं। यह लघु, वायुनाशक, ऋत्यन्त उष्णवीर्य, भेदक, पित्तवर्द्धक, तीच्ण, व्यवायी, सूच्मस्रोतगामी. अभिष्यन्दी और कटु विपाक युक्त है।

राजपूताने के जयपुर राज्य में शाकम्भरी नामक लवण सरोवर है। समुद्र जल की तरह इसका जल नमकीन है। इस जल से उत्पन्न लवण को रोमक या सांभर नमक कहते हैं।

### चूलिका लवण

नौसादर और चूलिका लवण एक ही वस्तु है। और भी तीन प्रकार का लवण देखा जाता है; काच लवण या कालानमक, द्रोणी लवण और औषर लवण।

#### काला नमक

यह शूल, गुल्म, कफ श्रीर वायु विनाश में प्रयुक्त होता है।

### द्रोणी लवण

यह भेदक, कुछ स्निग्ध, उम्णवीर्य, शूलव्न, कुछ पित्तजनक श्रीर विदाही है।

## औषर लवण

श्रोषर लवण-पित्तजनक, मलसंश्राहक, क्षार तिक्तरस, मूत्रकारक, विदाही, शोषकारक श्रोर कफवात-विनाशक है।

#### विष

विष ३ प्रकार का है, यथा-१-स्थावर, २-जङ्गम और ३-गर।
प्रथम से १० प्रकार का और दितीय से १६ सीलह प्रकार का विष उत्पन्न
होता है। तृतीय विरुद्ध भोजन से उत्पन्न दोष से उत्पन्न होता है। जैसे दूध
और मछली मांस या दूध और खट्टी वस्तु एकत्र भोजन।

# स्थावर विप

त्रागे कहा गया है कि स्थावर विप १० प्रकार का होता है। यथा, जर, पत्ते, फल, फूल, छाल, बृक्ष या गुल्म का लासा। लकड़ी, निर्यास, (गाँद) धानु ग्रौर कन्द। इन सव विपों में कन्द विप ही श्रेष्ठ है। ऐसा विप १८ प्रकार का है, यथा—सक्तुक, सुस्तक, श्रद्धी, वालुक, सर्पण, वत्सनाभ, कूम्म, स्वतश्र्वत, कालकूट, मेपश्रद्धी, हलाहल, दार्दुर, कर्वट, मर्कट, ग्रन्थी, हरिद्रा, रक्तश्रद्ध ग्रौर केशर। इन १८ में प्रथम ८ शास्त्रनिर्देशानुसार व्यवहार किये जाते हैं शेप १० वर्जनीय हैं।

## सक्तुक

शक्तुक या पुण्डरीक विष-जिस कन्द विष का मध्य भाग सक्तु से बना हो श्रीर श्वेत वर्ण हो उसे सक्तु विष कहते हैं, यह वड़ा उस्र श्रीर कार्यकारी है।

#### मुस्तक

इसकी किया मन्द गति से होती है। इसके द्वारा व्याधि होती है।

### शृङ्गी

इस विष का कन्द गाय के सींग पर वांध दिया जाय तो उसके दूध का रंग लाल हो जाता है। यह कन्द काला-पीला रंग का है।

# वालुक (सैकत)

वालुक विष-कन्द के भीतर रेत की तरह भरा रहता है। इसके द्वारा ज्वर और अन्यान्य व्याधियाँ दूर होती हैं।

#### सषेप

सर्पप कन्द हल्दी के रंग का और ज्वर को दूर करने वाला है, इसकी वालों की तरह रोमराजी ही विषाक्त है।

#### वत्सनाभ

यह विषकन्द देखने में गाय के वछड़े की नामि की तरह होता है। यह ५ श्रद्धल वड़ा होता है। यह दो प्रकार का है, १-श्वेत और २-कृष्ण। इनमें प्रथम स्वेतवर्ण का शीघ्र फल देनेवाला एवं लघु और रोचक है। द्वितीय कृष्णवर्ण का विपरीत गुणवाला है। और दोनों प्रकार के ही श्रीषघ तथा रसायन में प्रयुक्त होते हैं।

# क्रमम

जो विषकन्द कूम्म के त्राकार का हो उसे कूम्मकन्द कहते है।

# श्वेतशृङ्ग

श्वेतश्रङ्ग वा दार्विक विष देखने में सफेद सींग की तरह अथवा सांप के फन की तरह होता है। यह गाय के सींग पर बांध देने से उसके दूध का रंग ठाठ हो जाता है।

#### कालक्ट

पीपल के पेड़ की तरह एक प्रकार का विष गृक्ष है। इस गृक्ष के दूध या गोद को कालकूट कहते है। इसकी आकृति और वर्ण कौवे की आंख की तरह है। इस गृक्ष का कन्द काला और नीवू की तरह गोलाकार होता है। यह विप इतना तीव्ण होता है कि इसके सूंघने मात्र से ही मानव की मृत्यु हो जाती है। दक्षिण देश के श्वज्ञवेर, मलय और कोकण के पहाड़ पर यह विष गृक्ष उत्पन्न होता है।

## मेषशृङ्गी

इसका त्राकार मेढ़े के सीग की तरह है। गाय के सींग पर इसके वांधने से गाय का दूध लाल रंग का निकलता है।

#### हलाइक

हलाहल वृक्ष का फल गाय के थन की तरह होता है। इसका एक गुच्छा फल देखने में अच्छे पत्तों का छाता जैसा होता है। इस विष वृक्ष के निकट किसी प्रकार का वृक्ष उत्पन्न नहीं हो सकता। यह साधारणतः किष्किन्धा, हिमालय, भारतवर्ष के दक्षिणी तट पर और कोंद्रुण में मिलता है। इसका कन्द अतीस के कन्द की तरह होता है। इसका वाहरी भाग रवेत वर्ण और अन्तर्भाग नीले रंग का होता है।

# दार्दुर

मलय पर्वत के समीप दार्दुर नामक विप वृक्ष उत्पन्न होता है। यह ब्रह्मपुत्र श्रीर कर्दम नाम से भी प्रसिद्ध है। यह कर्दम की तरह कपिल वर्ण होता है।

# ककट

कर्कट विष वानर के रंग का होता है और आकृति केंकड़े की सी होती है। इसके ऊपर कुछ रेखायें दिखाई पड़ती है उन रेखाओं के नीचे का अंश कोमल और शेष अंग कठिन होता है।

## मूलक

यह एक प्रकार का श्वेतकन्द विष है। इसकी श्राकृति मूली श्रोर कुत्ते के दांत की वनावट की होती है। इसको यमद्रं हा श्रोर सौराष्ट्र देश में उत्पन्न होने सौराष्ट्रों कहा जाता है।

#### ग्रन्थि

यह हल्दी के रंग का एक प्रकार का कन्द विष है। इसका रंग काला श्रीर श्रातिशय विषाक्त होता है।

## हरिद्रा

यह एक प्रकार, का कन्द विष है—इसका कन्द हलदी जैसा होता है। विराट देश में उत्पन्न होने से इसे बैराट भी कहते है। इस कन्दविष के दोनों सिरे गोलाकार श्रोर इसका श्रन्तर्भाग पीले रंग का होता है।

#### रक्तभृङ्गी

यह कन्द विष गाय की नासिका में लगाने से नासिका से ख्न गिरने लगता है। इसकी वनावट गाय के थन की सी होती है।

#### पदीपन

यह एक प्रकार का कन्द निष है, इसका त्राकार सूखे त्रवरक की तरह लाल रंग का होता है। यह शरीर से कही छू जाय तो वह स्थान तुरन्त फूल उठता है।

## विष का व्यवहार

कालकृट आदि १० प्रकार के विप रसकार्य में विष तैयार करने से और लौह, ताम्र आदि धातु को स्वर्ण में परिणत करने के कार्य से प्रयुक्त किये जाते हैं। श्रीषध में उनका कभी व्यवहार नहीं होता। सक्तुक, सुस्तक, श्रृङ्गी, कालकृट, सर्षप, व्यत्सनाभ, कूम्म, श्वेतश्रृङ्ग, ये कई विप विशेष रूप से शोधित कर श्रीषध से व्यवहत होते हैं।

विप वर्णभेद से ४ प्रकार का है—१-१वेत, २-रक्त, ३-पीला श्रोर ४-काला। ये यथाकम से परस्पर हीन गुणयुक्त हैं। जैंसे सफेद से रक्त या लाल हीन है इत्यादि।

रवेत वर्ण विष-श्रोषध में प्रयोग करे, यह रसायन है। रक्त वर्ण विष-रसकार्य में श्रावरयक है, इसका प्रयोग विषमक्षण से उत्पन्न विकार दूर करने में करे। पीले रंग का विष-कुछनाशक है, इसका प्रयोग क्षद्ररोग में करे। कृष्णवर्ण विष-मृत्युदायक है। इसका प्रयोग सर्प से काटे हुए मनुष्य पर करे।

### विष के साधारण दोष

विष-रुक्ष, उष्ण, तीच्ण, सूच्म, शीघ्र व्यवायी, विकासी (सिन्धवन्धांस्तु शियिलान् यत् करोति), विसर श्रीर दुष्पाच्य है। यह रुक्ष गुण के कारण वायु-प्रकोपक श्रीर उप्ण गुण के कारण पित्तप्रकोपक है एवं रक्त को दुष्ट करता है, तीच्ण गुण के कारण मोह का उत्पादक श्रीर देहवन्धन-शिथिलकारी है, सूच्म गुण के कारण श्रीद शीघ्र शरीर के सब श्रंशों में व्याप्त होता है और उनको विकल करता है। शीघ्र गुण के कारण शीघ्र प्राण विनाश करता है। व्यवायी गुण के कारण परिपाक को प्राप्त होने से पहले ही सब शरीर में किया करता है। विकासी गुण के कारण त्रिदोष, सप्त धातु श्रीर मल को नष्ट करता है। विसर गुण के कारण श्रीधक विरेचन करता है श्रीर लब्धपाकी गुण के कारण श्रीषध प्रयोग करने से विप्रक्रिया के विरुद्ध कोई फल प्राप्त नही होता। श्रविपाकी गुण के कारण विप दुर्जर श्रीर चिरकाल क्लेरादायी है। स्थावर, जङ्गम श्रीर कृत्रिम थे तीनों प्रकार के विपों में ये सब गुण होने से शीघ्र प्राणनाश करते है।

### इथावर विष सेवन से उत्पन्न दोष

स्थावर विष सेवन करने से ज्वर, हिचकी, दन्तहर्ष, गलप्रह, लालासाव, वसन, प्रारुचि, श्वास और मूच्छी उपस्थित होती है।

#### सहसा विष सेवन का फल

सहसा शरीर में विष प्रवेश करने पर प्रथम चर्म की विवर्णता फिर कम्पन शुरू होता है, फिर दाह होता है, फिर सारा श्रङ्ग विकृत होता है, उसके वाद मुख से फेन निकलता है, उसके बाद दोना कन्धे दूटने लगते हैं, फिर सर्वाङ्ग निस्तब्ध (स्थिर) होकर श्रन्त में मृत्यु हो जाती है। चिकित्सा चेत्र में चिकित्सक इन चिपयों पर लच्य रखकर चिकित्सा करें तो कृतकार्य होंगे।

# विष सेवन जनित विकार की चिकित्सा

- (१) विप भक्षण के वाद विकार उपस्थित होने पर चिकित्सक सबसे पहले रोगी को वमन कराने की चेष्टा करे। इस वमन कार्य में वकरी का दुग्ध सेवन प्रशस्त है। जब तक वमन आरम्भ न हो तब तक वकरी का दूध सेवन कराना चाहिये। प्रत्येक वमन के वाद फिर दूध सेवन करावे। इस तरह जब तक वमन वन्द न हो, तब तक वकरी का दूध सेवन कराना चाहिये। ऐसा करते करते दूध पिलाने पर जब वमन न हो तब समम ले कि रोगी विष मुक्त हो गया।
- (२) विष किया होने पर रोगी को तुरन्त वमन कराने कीं चेष्टा करें और वमन कराते कराते जवतक पित्त न निकलने लगे, तव तक वमन करावे। इस वमन कार्य में सिल पर पिसा हुआ सैनफल, सेधानमक और राई पीसकर वकरी का दूध और मछली धोया जल सेवन कराना प्रशस्त है। इस तरह वमन किया सम्पन्न होने पर रोगी को विरेचन कराना आवश्यक है। विरेचन कराने में जब तक ऑव न निकलने लगे, तब तक विरेचन करावे, इस तरह विरेचन किया पूरी होने पर रोगी जितना पी सके उतना गाय का धृत पिलावे क्योंकि गाय का धृत ही सबसे अधिक विषव्न और जीवनीशक्तिवर्द्धक है।
  - (२) नीचे लिखे योगो की व्यवस्था करने से शीघ्र विष किया नष्ट होती है। कॉटानट का रस और हल्दी (कचा) का रस मिलाकर सेवन करने से विष नष्ट होता है।

गन्धनाकुली (सर्पाक्षी) श्रथवा सोहागा घी के साथ सेवन करने से विष नष्ट होता है।

पुत्रजीवी (जियापोता) का रस नीवू के रस के साथ सेवन करने से विष किया नष्ट होती है। अथवा उक्त दोनो द्रवो को अज्ञनरूप मे व्यवहार करने से विपिकिया नष्ट होती है।

(४) निम्नलिखित द्रव्य विपिक्रिया-नाराक है।

जाती ( चमेली ), नीली ( नील का वृक्ष ), ईश्वरीमूल ( नागदौन की जड़ ), काकमार्छी ( कौत्राठोड़ी ), त्रपराजिता, त्रिफला, कारची ( हिड्डपत्री, यवानी, राई ), इप्ट, मुलहठी, जीरा, सब क्षीरी वृक्षों की छाल, इलायची और गाय का घृत ।

(५) श्रितिरिक्त विषिक्रिया होने से गाय के घी के साथ मृहराज (घमरा), दिध, वज्रक्षार (वाजवृक्ष का क्षार), श्रान्तमूल, कॉटानट का मूल, भुल, मजीठ श्रीर मुलहठी सेवन करावे। श्राथवा घृत श्रीर मधु के साथ श्रार्जुन छाल का चूर्ण सेव्य है। श्राथवा सोहागा, कॉटानट के मूल के रस के साथ मिलाकर सेव्य है।

# प्रशस्त विष के गुण

विष शास्त्र-विधिपूर्वक प्रयोग करने से ग्रासन्न मृत्यु रोगी को भी प्राणदान करता है। यह रसायन, योगवाहीं, त्रिदोष-नाशकर्तां, बृंहण श्रीर वीर्यवर्द्धक है। प्रशस्त विष में जो दोप हैं वे शोधन करने से नहीं रहते। श्रतएव सब प्रकार के विषों को शोधन कर व्यवहार करना चाहिये।

# क़न्द विष संग्रह करने का समय

फल पकने पर कन्द विष ग्रहण करे। यह ताजी काम मे लाना चाहिये। क्योंकि कुछ दिन धूप ग्रौर हना लगने से इसका गुण नष्ट हो जाता है। श्रतएव इसको सुपक श्रवस्था मे ग्रहण कर राई सरसो के जल मे कपड़े का दुकड़ा भिगो कर उसमे लपेट कर रखना श्रावश्यक है।

## कन्द विष की शोधनविधि

- (१) प्रथम कन्द विष की छाल छुड़ा कर फेंक दे, फिर खण्ड खण्ड करके काट कर २४ घण्टे गोमूत्र में भिगो रक्खे। फिर उसे तेज धूप में सुखा लेने पर वह शोधित होता है। सूखने पर उसे चूर्ण कर वस्त्र में छान कर श्रोषध में व्यवहार करते हैं।
  - (२) दोलायन्त्र में उक्त विष २४ घग्टे पाक करने पर भी शोधित होता है।

#### कन्द विष की मारणविधि

सम परिमाण शोधित सुहागे के साथ मर्दन करने से कन्द विष मारित होता है।

प्रसङ्ग क्रम से सोहागे की शोधनविधि

सुहागे को श्रिग्निताप से फुला कर लावां बना लेने से शुद्ध होता है। सुहागे के साथ मर्दित विष सेवन करने से किसी तरह का विकार उपस्थित नहीं होता है।

७ र० चि०

# विषसेवन के योग्य पात्र

विष योगवाही श्रोर रसायन है श्रतः जो व्यक्ति नियमित रूप से घृत श्रोर दुग्ध सेवन करे श्रोर मिताचारी एवं रसायन सेवन के नियम यथार्थ रूप से पालन करे, वही शोधित विष सेवन का उपयुक्त पात्र है।

## विषसेवन के अयोग्य पात्र

जो व्यक्ति क्रोधी हो, जिसका पित्त श्रधिक हो, जो क्लीव श्रीर क्षुधार्त, तृष्णार्त्त, क्लान्त, पसीने से तर हो, रूक्ष शरीर वाला हो श्रीर क्षयरोगी, गर्भिणी एवं वालक श्रीर वृद्ध ये सब विष सेवन के श्रयोग्य पात्र है।

#### विषसेवन के नियम

विषसेवन करने के पहले दिन रोगी श्रश्वगन्धा, गोजिह्वा श्रोर त्रिफला के क्षाय के साथ पारे की भस्म श्रथवा वद्ध पारद (गन्धक के साथ ) सेवन करे। पश्चात् दूसरे दिन से विष भक्षण श्रारम्भ करना चाहिये।

विषसेवी को निम्नलिखित नियम पालनीय हैं।

- (१) वह स्त्री सङ्ग त्याग करे।
- (२) सुस्थ चित्त से श्रौर चिन्तारहित हृदय से भोजन करे।
- (३) गाय का घी और दूध मिला कर शालि तन्दुल का श्रन भोजन करे श्रीर शीतल जलपान करे।
- (४) वकरे का रक्त, जङ्गली पशु का मांस, मद्गुरु मत्स्य श्रीर चीनी, मधु, दुग्ध, श्रादि सब प्रकार के शीत द्रव्य एवं शास्त्रोक्त हितकर द्रव्य भक्षण करे।

नियमित रूप से नित्य विष सेवन से शरीर जरा श्रीर व्याधिमुक्त होकर सबल श्रीर सूदम होता है। विषसेवी संयत होकर उल्लिखित नियम श्रवश्य पालन करे। शीत श्रीर बसन्तकाल ही विष सेवन के लिये प्रशस्त है। वर्षाकाल श्रीर दुर्योग के दिन कदापि विष सेवन न करे। नितान्त श्रावश्यक होने पर श्रीष्मकाल में भी विष सेवन किया जा सकता है किन्तु वर्षाकाल में इसे कदापि सेवन नहीं करना चाहिये।

### विषसेवन की मात्रा

शोधित विष प्रथम दिवस एक सरसों के समान सेव्य है, दूसरे, तीसरे श्रौर चौथे दिन की मात्रा २ सरसों । नवम दिवस की मात्रा चार सरसो भर । दसनें दिवस से एक सरसों मात्रा बढ़ाते हुए ३६ सरसों यानी एक रत्ती तक पूर्ण मात्रा का व्यवहार विधेय है। कुष्ठरोगी प्रतिदिन १ रत्ती या ३६ सरसों श्रर्थात् पूर्ण मात्रा सेवन करे। नियमित रूप से यह विष एक महीना सेवन करने से श्राठ प्रकार का कुष्ठ विनष्ट होता है।

विष इसी तरह ६ मास सेवन करने से मनुष्य परमसौन्दर्यवान हो जाता है। यह एक वर्ष सेवन करने से सर्वरोगनाशक श्रौर दो वर्ष सेवन से दिव्य देह प्राप्त होती है।

# विषसेवन में पथ्य

विषसेवन-काल में नीचे लिखी वस्तुएँ हितकर हैं—घी, दूध, चीनी, गेहूँ, चावल का भात, काली मिर्च, सेंधा नमक, मीठी वस्तुएं श्रौर शीतल जल। विष-सेवी को शीतप्रधान देश, शीत ऋतु श्रौर शीतल जल उपकारी है।

#### विषसेवन में अपध्य

विषसेवी नीचे लिखी वस्तुएं यत्नपूर्वक परित्याग करे, यथा-कटु, अम्ल (खद्टा), लवण, तेल, दिन में निद्रा, अग्नि और धूप सेवन। विषसेवनकाल में घृत विना अन्न सेवन करने से चक्षुरोग, चर्मरोग और नाना प्रकार के बातरोग (वायुरोग) होते हैं।

#### विष का प्रयोग

वातज्वर में—दिधिः के साथ शोधित विष सेव्य ।

पित्तज्वर में—दुग्ध के साथ।

कफज्वर में-वकरों के मूत्र के साथ।

त्रिदोषजज्वर में—त्रिफला के जल के साथ।

जीर्णज्वर में —लोध, चन्दन, वच, चीनी, घृत, मधु श्रीर दुग्ध के साथ।

सर्वप्रकार का जीर्ण ज्वर, प्रमेह श्रीर चर्मरोग में —दन्तीमूल, निसोत, त्रिफला, घृत श्रीर मधु के साथ।

विषम उवर (मैलेरिया श्रौर कालाज्वर) में शिखिकर्ण (नीलकण्ठ वासक) के रस के साथ।

रक्तिपत्त में—मुलहठी, रास्ना, उशीर (खस), उत्पल (नीलकमल) इन द्रव्यों को एकत्र चावल धोये हुए जल के साथ पीस कर निष सेवन करें। - श्वास श्रोर कास में—रास्ना, विडङ्ग, त्रिफला, देवदार, गुरुच, पद्मकाष्ट्र श्रोर त्रिकटु के साथ सेव्य है।

हिक्का में—चीनी, दूध, पारदभरम, प्रवालभरम श्रौर मुलहठी के साथ सेव्य है।

उवकाई वा छुर्दि में — दूघ, उशीर, मधु, जनाखार, हलदी श्रीर कुटज के साथ सेव्य है।

ग्रहणी रोग में—मोथा, इन्द्रजव, पाठा, चित्रक, त्रिकटु, श्रतीस, धाय के फूल, मोचरस, श्राम की गुठली मिलाकर सेवन करे।

सूत्रकुच्छू में हरीतकी, चित्रक की जड़, किसमिस, श्रह्सा श्रीर हलदी के साथ सेवन करे।

यदमा में - च्यवनप्राश के साथ सेव्य है।

पथरी श्रीर उदावर्त में—शिलाजतु श्रीर त्रिकटु के साथ एवं गोमूत्र, सैन्धव लवण, पाथर कुचि के पत्तों के रस के साथ विष मर्दन कर सेवन करे।

गुरुम में—सर्जाखार श्रौर त्रिफला के साथ।

श्रल में —पीपल के चूर्ण के साथ।

प्लीहा वृद्धि में—द्रवन्ती, रास्ना, किसमिस, शठी (कचूर), पीपल, श्रतीस, विडङ्ग, सौफ श्रौर जवाखार के साथ श्रथवा शुलफा, विडङ्ग श्रौर दूध के साथ। कुष्ठ में—काकमाची के रस के साथ।

#### जङ्गम विष

सव प्रकार के जङ्गम विषों में सर्पविष ही श्रीषध के लिये श्रधिक प्रयोज्य है। एक वलवान युवा काले सर्प से विष ग्रहण करे। बुड्ढें काले सर्प वा श्रम्य सर्प का विष श्रीषध के लिये ग्राह्म नहीं है। काले सर्प का विष त्रिदोषनाशक, श्रिमवर्द्धक, सन्निपात, विस्चिका श्रादि रोगों से श्रासन्न मृत्यु मनुष्य को जीवन दान करने वाला है।

# जङ्गम विष की शोधन विधि

(१) ३ दिन गोमूत्र में भिगो कर धूप में छुखाने से सर्पविष शोधित

- (२) असल पीली सरसों के तैल में ३ दिन भिगोकर रखने पर भी सर्प- विष शोधित होता है।
- (२) पान, वकफ़्ल, तुलसी पत्ता और कूठ के काथ में २ दिन भावना देने से सपीविष शोधित होता है।

# जङ्गम विष-सेवनजनित विकार

जङ्गमिवष सेवन करने से निद्रा, तन्द्रा, क्लम, दाह, मुख से फेन निकलना, शोथ, लोमहर्ष, श्रातिसार श्रादि विकार उपस्थित होते हैं।

# सर्पदंशन का प्रतिकार

जमालगोंटा के वीज के भीत्तर की पत्ती को २१ दिन नीवू के रस मे भावना देकर गोली बनावे। वह गोली मनुष्य की लार (थूक) के साथ मिलाकर आंख में अजन देने से सर्प का काटा मनुष्य जीवन प्राप्त करता है। (मत्प्रणीत विष चिकित्सा नामक प्रन्थ में यह विषय विरतारपूर्वक वर्णित है)।

#### उपविष

रनुही (मनसागाछ, सेहुड़, थूहर, तिधारा), आक, लाइली, करवी (कनेर), गुड़ा विषमुष्टि (कुचिला), धतूरा, जमालगोटा, भिलावा, निर्विषा, श्रतीस, श्रकीम, भइ ये उपविषों के नाम है। श्रधिक मात्रा में सेवित होने से ये भी प्राणनाश करते हैं।

सव प्रकार के विप और उपविषो द्वारा मिर्दित होने से पारा पक्षहीन होता है अर्थात् उसमे धातु-ग्रासनशक्ति उत्पन्न होती है। ऐसे पारद द्वारा मकरध्वज तैयार होने से स्वर्ण पारद के साथ निर्शेष रूप से मिल जायगा।

केवल शोधित पारे के द्वारा मकरध्वज तैयार होने से उसके साथ साथ स्वर्ण मिलता नहीं, क्योंकि केवल शोधित पारे में धातु-ग्रासनशक्ति नहीं होती है।

## ं उपविव-शोधन की साधारण विधि

- (१) पद्मगव्य की भावना देने से सभी प्रकार के उपविष शुद्ध होते हैं। (दही, दूध, घी, गोवर श्रौर गोम्त्र इनको पद्मगव्य कहते हैं)
- (२) दोलायन्त्र में एक प्रहर पाक करने से सभी तरह के उपविष शोधित होते हैं

# . स्नुही ( सेंहुड )

सेंहुड़ का लासा-विरेचक, तीव, श्रिप्तवर्दक, कटु श्रीर गुरु है। यह शूल, श्राम, श्रष्ठीला, वातोदर, कफ, गुल्म, उन्माद, प्रमेह, कोड़, श्रर्श, शोथ, मेद, श्रश्मरी, पाण्डु, फोड़ा, ज्वर, प्लीहा, विष, वण श्रीर दूपीविप नष्टकारक है।

सेंहुड़ क्षीर—उष्णवीर्य, कटु, लघु, एवं स्निग्ध है। गुल्म, कोड़ एवं उदररोग में भी विरेचन क्रिया के लिये प्रशस्त है।

# सेंहुड़क्षीर का शोधन

एक तोला इमली के पत्तों के रस में ८ तोला सेंहुड्क्षीर ( दृथ ) घोंट कर धृप में सुखाने से वह शोधित हो जाता है। श्राक का दूध भी इसी तरह शोधित होता है।

#### आक

श्राक दो प्रकार का है, १-सफेद फूल श्रोर २-लाल फूल वाला। दोनों प्रकार के श्राक विरेचक, वायु, कुछ, दाद, विष, दुष्टवण, प्लीहा, गुल्म, श्रशं, उदररोग श्रोर किमिनाशक हैं। श्वेत श्राक-वृष्य, लघु, पाचक, श्राक्ति, श्लेष्मा, श्रशं, कास श्रोर श्वासनाशक है। लाल श्राक के फूल-मधुर रस, तिक्त एवं कुछ, किमि, श्लेप्मा, श्रशं, विष श्रोर रक्तिपत्तनाशक है ये श्रिनवर्द्धक, गुल्म श्रोर जलोदर में विशेष उपकारक है।

## लाङ्गली

लाइली—विरेचक, कुष्ठ, जलोदर, श्रर्था, फोड़े (स्फोटक) श्रीर शूल रोग में उपकारक है। यह क्षारविशिष्ट, क्रिमि श्रीर कास नाशक है। यह तिक्त, कटु, तीव्ण, उष्ण, पित्तकर श्रीर गर्भनाशक है।

## लाङ्गली का शोधन

गोमूत्र में एक दिन भिगो रखने से लाइली शोधित होती है।

#### गुञ्जा

रवेत त्रौर लाल दो प्रकार की गुजा होती है। दोनों प्रकार की घुंघची कि लिये हितकर एवं वायु पित्त त्रौर ज्वरनाशक है। वे मुखशोथ, सिर चकराना, श्वास, मदात्यय एवं चक्षुरोग नाशक है। वे फोड़ा, दाद, क्रिमि, इन्द्रसुप्त

श्रीर कुष्ठनाशक है। दोनों प्रकार की घुंघची की जड़ श्रीर सफेद घुंघची के वीज वमनकारक हैं। दोनों प्रकार की घुंघची श्रूल श्रीर विषदीष में उपकारक है।

# गुङ्जा शोधन

दोनों प्रकार की गुजा ३ घण्टे काजी में सिद्ध करने से शोधित होती है।

## श्वेत गुझा का व्यवहार

विषाक्त शस्त्र द्वारा उत्पन्न वर्ण में श्वेत गुजा के पत्ते गर्म जल से घोकर ख्रौर पीसकर प्रलेप देने से खारोग्य होता है।

# करवी (कनेर)

फूल के रंग भेद से कनेर ५ प्रकार की है:—श्वेत, लाल, पीली, श्याव (राख का रंग) और काली। सब प्रकार की करवी-तिक्त, कषाय, कटु, ज्ञण-नाश्क, नेत्ररोग, कुछ और क्षतरोग में हितकारी हैं। वे उल्लंबीर्य, किमि और दाद रोग में हितकर हैं। सफेद, पीली और लाल करवी अश्व-मारक हैं। श्याव वर्ण की करवी शिरोरोगनाशक एवं वायु और कफनाशक है। पूर्व दिशा में उत्पन्न श्वेत कनेर की जड़ सर्पविषनाशक है। गोदुग्ध पूर्ण दोलायन्त्र में एक प्रहर पाक करने से कनेर शोधित होता है।

# विषमुष्टि ( कुचिला )

कुचिला-शीतवीर्य, तिक्त, कुछ वायुवर्द्धक, मत्तताजनक, लघु, श्रातिशय वेदना को शान्तिकारक, श्रिमवर्द्धक, पित्तरलेष्मा और रक्तपित्तनाशक है।

## कुचिला की शोधन विधि

दो प्रहर दोलायन्त्र में काङी या गोवर के जल मे पाक कर घी में भून लेने से कुचिला शोधित होती है।

#### धतूरा

धतूरा-मत्तताकारक, वर्ण, ृंक्षुघा और वायु वृद्धिकारक है तथा ज्वर और कुष्ठनाशक है। यह कषाय मधुर, उष्णवीर्य और गुरु है एवं जुएँ, फोड़ा, श्लेप्मा, दाद, क्रिमि, कण्ह और विषनाशक है।

# धत्रे का शोधन

४ प्रहर तक गोमूत्र में भिगोकर लोहदण्ड द्वारा खरल में निरतुप (भूसी) करने से धतूरा शुद्ध होता है।

# जयगाल (जमालगोटा)

जमालगोटा-गुरु, स्निग्ध, विरेचक, पित्तकफनाशक है। श्रशुद्ध श्रवस्था में श्रिधिक परिमाण में खाने से यह प्राणनाश करता है।

#### जयपाल का शोधन

जयपाल का छिलका छुड़ाकर दूध में वा महिप के गोवर मिले जल में दोला-यन्त्र से १ दिन पका कर, बीच का पत्ता सा श्रंश श्रलग कर धूप में सुखा लेने पर यह शोधित होता है। शोधित जयपाल को नीवू के रस में भावना देने से बह विशेष उपकारी होता है।

#### भिलावा

भिलावे का फल-विपाक में मधुर, लघु, कषाय रस, पाचक, तीच्ण, उप्ण, छेदी, विरेचक, मेदनाशक, श्राप्तृत्विद्धकारक, स्मृतिशक्ति तथा क्षुधावर्द्धक, श्लेष्मा, वायु, त्रण, उदर रोग, कोढ़, श्रा्श, गुल्म, श्रहणी, जलोदर, वद्ध वायु, उचर श्रोर किमिनाशक है। भिलावे की टोपी (वोटा)—मधुर, पित्तनाशक, केशप्रसारक श्रोर श्रिप्तृत्विकर है। वह उप्ण, शुक्रवृद्धिकर, कफ श्रोर वायुनाशक, सभी प्रकार के उदर रोग, श्रानाह, कोढ़, ववासीर, श्रहणी, गुल्म, उचर, सफेद कोढ़, श्रानिमान्य श्रीर सभी प्रकार के त्रणों का नाशक है।

मिलावें को चूर्णित कर सुर्खी में २ दिन रखकर धो डालने से ( श्रथवा भैंस के गोवर में पानी मिला कर ६ घाटे पाक करके धो डालने से ) शोधित होता है।

### निर्विषा

यह मोथा की नाई एक प्रकार की घास है जो जमीन की मेड़ो पर प्रायः होती है। यह कटु, शीतल, ब्रणरोपक, श्लेष्मा, वायु, रक्तदुष्टि एवं नाना प्रकार के विषदोषों का नाशक है।

इसकी जब लेकर कपाल में, ३ वार फेरने से या लगाने से सिर की व्यथा दूर होती है।

#### अतिविषा

यह उष्णवीर्य, तिक्त, पाचक, क्षुधावर्द्धक, कफ, पित्त, श्रातिसार, विष, त्राम श्रीर वमननाशक है। श्रातिविषा श्रीर निर्विषा दूध में सिद्ध करने से शोधित होती है।

#### अफीम

यह तिक्त, मत्तता और निद्राकारक, वेदनानाशक और आक्तेपक (एक वातरोग) नाशक, स्पर्शशक्तिविनाशक, कफ और श्वासनिवारक, क्षुधावर्द्धक एवं वायु और पित्त बुद्धिकारक, धातुशोषक, रूक्षताकारक, दाह और मेह वर्द्धक है। अति अल्प मात्रा में प्रयोग करने से प्रहणी और अतिसार में हितकर है। रवास्थ्य और सुखमोग पूर्वक दीर्घजोबी होने के लिये अधिक दिन तक अफीम सेवन करना उचित नहीं है।

ं प्रादी के रस में ७ दिन भावना देकर धूप में सुखाने से यह शोधित होती है।

#### भङ्ग

भङ्ग-कफनाशक, तिक्त, धुधावर्द्धक, लघु, उष्णवीर्य, पित्तवर्द्धक, प्रमेह, मत्तता, वाक्शिक्त, मैथुनेच्छा, निद्रा श्रौर हास्यकारक है। यह धनुष्टद्वार, जलातद्व, मदात्यय, श्रितरज श्रौर सूतिका रोग में हितकर है।

## भङ्ग का शोधन

ववूल की छाल के काथ में पाककर सुखाने के वाद गोदुग्ध की भावना देने से यह शोधित होता है। अथवा गोदुग्धमें सिद्धकर घृत में भून लेने से शुद्ध होता है।

#### उपविष-विकार को शानित

अफीम—(१) ४ तोला काटानट की जड़ का रस (अथवा नारी नामक वेलि जलाशय में होती है, उसका रस) सेवन करने से अफीमसेवन-जिनत विकार शान्त होता है।

- (२) सेधानमक, पीपल श्रौर मैनफल पीसकर गरम जल के साथ सेवन करने से उक्त विकार नष्ट होता है।
- (३) सोहागा और तूतिया में घी मिलाकर सेवन करने से प्रचुर परिमाण में वमन होकर अफीमसेवनजनित विष की शान्ति होती है।

धतूरा—(१) ४ तोले वैंगन का रस सेवन करने से धतूरा सेवन से उत्पन्न विकार नष्ट होता है।

(२) कपास के बीज श्रौर फूलों का काथ श्रथवा नमक मिला हुश्रा जल सेवन करने से श्रथवा १ सेर दूध ८ तोले चीनी के साथ पान करने से धतूरा विप नष्ट होता है।

भिलावा—मक्खन के साथ मेघनाद का रस मालिश करने से श्रशुद्ध भिलावा के सेवन श्रोर स्पर्शजनित शोथ की शान्ति होती है। श्रथवा देवदार, मोथा, सरसों श्रोर मक्खन एक साथ मर्दन कर प्रलेप करने से भिलावासेवनजनित विकार की शान्ति होती है। श्रथवा मक्खन, पिसा तिल, दुग्ध श्रोर गीला गुड़ एक साथ मर्दन करके प्रलेप देने से श्रशुद्ध भिलावा के सेवन श्रोर स्पर्शजनित शोथ शान्त होता है।

भङ्ग-सोठ का चूर्ण दही में मिलाकर सेवन करने से भङ्ग सेवन से उत्पन्न विकार नष्ट होता है।

गुआ—चीनी त्रौर दूध के साथ मेघनाद का रस सेवन करने से गुझासेवन-जिनत विकार नष्ट होता है। त्राथवा मधु, खजूर इमली, द्राक्षा, खद्दा त्रानार त्रौर श्रांवला मिलाकर सेवन करने से उक्त विकार नष्ट होता है।

करवी (कनेर)—श्राक की जड़ की छाल, दही श्रीर मिश्री एकत्र घोंट कर सेवन करने से कनेर का विष नष्ट होता है।

स्तृही (सेंहुड़ )—(१) मिश्री मिला हुआ शीतल जल पान करने से अथवा इमली के पत्ते पीस कर सेवन करने से सेंहुड़ का विष दूर होता है।

(२) गेरू मिट्टी जल में घिस कर पिलाने से आक और सेंहुड़ का विष नष्ट होता है।

जमालगोटा—चीनी श्रोर दही के साथ धनिये पीस कर सेवन करने से-जमालगोटा—सेवन से उत्पन्न विकार नष्ट होता है।

# शोधन योग्य अन्य कुछ द्रव्यों की शोधनविधि

गुग्गुलु — गुग्गुलु के केश – मलादि दूर कर उसे गरम दशमूल के काथ में डाल कर श्रीर मथकर वस्त्र में छान लें, फिर तेज धूप में सुखा कर घृत में सान कर गोला बना लें। इस तरह गुग्गुल शुद्ध होता है। श्रथवा गुरुच के क्वाथ में भिगोकर सूर्य की गर्मी से सुखाने पर भी शुद्ध होता है। श्रथवा गुरुच के क्वाथ में भिगोकर सूर्य की गर्मी में सुखाने से भी शुद्ध होता है। श्रथवा गुग्गुल की गोदुग्ध श्रथवा त्रिफला के क्वाथ में दोलायन्त्र से पाक कर वस्त्र द्वारा छान लेने पर भी शोधित होता है।

चुद्धदारक चीज — थोड़ा सेंधानमक मिले जल में अथवा अपामार्ग के काथ में भिगोकर धूप में सुखाने से विशोधित हो जाते हैं। अथवा दूध से भरे हुए पात्र में दोलायन्त्र से पाक करके युद्धदारक बीज शोधित करे। नीवू के बीज, सिहजन के बीज, कपास के बीज और अपामार्ग के बीज अपामार्ग के काथ में भिगो कर धूप में सुखा लेने से विशोधित होते हैं। किन्तु इसमे नमक नही डालना चाहिये। कुटकी, कदुतरोई के बीज, दन्ती बीज, डोंड़का के बीज, कड़वी कद्दू के बीज, और मकालफल ये आंवले के रस में और करोंदा के बीज एवं छोटे करोदा के बीज महराज के रस में शोधित होते हैं।

#### यन्त्र

दोलायन्त्र—एक हांड़ी का आधा भाग द्रव्य से भर कर उसके मुख (किनारे) के दोनों ओर छेद करे और उन छेदों में एक लकड़ी प्रवेश कराकर उस लकड़ी में रस की पोटली लटका दे, इस तरह के स्वेदनयन्त्र को दोलायन्त्र कहते हैं।

स्वेदनीयन्त्र—एक जल से भरी हॉडी के मुख पर कपड़ा बांध दे श्रौर उसके ऊपर पाक की वस्तु रखकर उसे एक सकोरे से डक दे। इस यन्त्र की स्वेदनीयन्त्र कहा जाता है।

पातनायन्त्र—दो वर्तनों द्वारा पातनायन्त्र बनता है। उनमें ऊपर का वर्त्तन जलाधार होता है। इसके गलदेश का नीचा भाग आठ अड्डल परिधि वाला, दस अड्डल विस्तार और चार अड्डल ऊँचा होना चाहिये। यह वर्तन १६ अड्डल चौड़ी पीठ वाले दूसरे भाण्ड के मुख पर बैठा कर दोनों की सन्धि-भेंस के दूध, मण्ड्र के चूर्ण और मात गुड़ द्वारा उत्तमरूप से लेप कर मुखा लेना चाहिये। इस नीचे के भाण्ड के भीतर पारद रक्खे और ऊपर के भाण्ड में जल रक्खे। यह यन्त्र चूल्हे पर रखकर उसके नीचे आग्नि जलावे तो नीचे के वर्तन का पारा उड़ कर ऊपर के वर्तन के तले पर जा लगेगा। इसी को पातनायन्त्र कहते है। ( ऊपर के वर्तन का जल गरम होने पर उसे वार बार बदल देना आवश्यक है)

श्रधः पातनयन्त्र—इस यन्त्र के ऊपर वाले पात्र के भीतरी स्थान में पारद लिप्त करते है, श्रोर उस पात्र को फिर दूसरे जल से भरे हुए पात्र के ऊपर श्रोंधा रखकर उनका संयोग स्थान पूर्ववत् बन्द कर दे। फिर उस ऊपर वाले पात्र के ऊपर जङ्गली उपलो की श्रांच दे, तो ऊपर का पारद नीचे की हांडी के जल में गिरता है। इसका नाम श्रधः पातनयन्त्र है।

कच्छुपयन्त्र—एक जल से भरे पात्र में एक खपरा रख कर, उसके ऊपर विड मिला हुआ पारा कोष्ठिकायन्त्र में करके स्थापन करे। फिर इसके ,ऊपर एक पतला लौह का कटोरा डक कर सन्धिस्थल पर ६ बार अच्छी तरह लेप देवे। फिर प्वीक्त जलपात्र के चारो ओर खदिर या बेर के कोयले जला देवे। अन्यान्य सत्त्व भी इसी प्रकार से द्रवीभूत होते है।

दीपिकायन्त्र—कच्छपयन्त्र के भीतर एक दीपक रख कर उस दीप में पारा रक्खे। किर त्राग्न जला दे, वह पारा कच्छपयन्त्र में पतित होगा। इसको दीपिकायन्त्र कहते है।

डेकीयन्त्र—एक भाण्ड के कण्ठ देश के नीचे एक छिद्र करे और उस छिद्र में एक वांस के नल का एक मुख प्रवेश करावे। दो कांसे के पात्रों में जल भर कर सम्पुट करते हुए, उनमें भी १ छेद करे और उस छेद में पूर्व कहे हुए नल का दूसरा मुख प्रविष्ट कर देवे। यथोपयुक्त द्रव्य मिला हुआ पारद उस भाण्ड में रक्खे और दोनों पात्रों के संयोगस्थल दृढ़ रूप से बन्द कर देवे। फिर उस भाण्ड के नीचे अग्निताप देने से भाण्ड में रक्खा हुआ पारद उस नल द्वारा कासे के पात्र में रक्खे हुए जल में आकर गिरेगा। कांसे का पात्र जब तक गरम जान पड़े, तय तक उसमें पारा गिर रहा है ऐसा समझे। यह यन्त्र डेकी नाम से कहा जाता है।

जारणयन्त्र—१२ ब्रङ्गल के दो लोहे के मूण वनवा कर उनमें से एक में छोटा छिद्र करावे, उस छिद्र युक्त मूण में गन्धक और दूसरे में पारद रक्खे। गन्धक का मूण पारद के मूण के ऊपर स्थापन करके सिन्ध बन्द कर दें। पारद छोर गन्धक दोनों हो द्रव्य वल्ल में छने हुए लह्युन के रस में डुवो दे। फिर उन दोनों के मूग रुद्ध कर एक जल से भरी हांडी में रक्खे और उसके ऊपर फिर दूसरी हांडी ढंक कर सिन्ध स्थल को मिट्टी और वल्ल द्वारा श्रच्छी तरह से लपेट दें।

इसके वाद कपोतपुट में वह यन्त्र रख कर उसके नीचे और ऊपर जङ्गली उपलों की अिन जलावे। अथवा चूल्हे के ऊपर रख कर नीचे तीव्र आमि जलावे। ३ दिन अमि देने के वाद जब चूल्हे और हांडी का जल अपने आप शीतल हो जाय, तब यन्त्र खोलना चाहिये। चूल्हे और जल गरम रहने पर शीतल किया न करे। वह अपने आप शीतल होने से यन्त्रस्थित पारद क्षार आप नहीं होता है या उद्द भी नहीं जाता है, इस नियम से गन्धक का भी जारण होता है।

विद्याधरयन्त्र श्रीर कोष्ठिकायन्त्र—एक हांडी के ऊपर दूसरी हांडी हक कर उनका सन्धि स्थल प्रलिप्त करने से उसे विद्याधरयन्त्र कहते हैं। इसे चतुर्मुख चूल्हें के ऊपर चढ़ा कर नीचे श्रीम जलावे। नीचे के भाण्ड में श्रीपध रख कर दोनों भाण्डों का मुख वन्द कर दें, इसे कोष्ठिकायन्त्र भी कहते हैं।

सोमानलयन्त्र—ऊपर ऋग्नि ऋौर नीचे जल रख कर उनके बीच में पारद पाक करने से वह सोमानलयन्त्र कहा जाता है।

गर्भयन्त्र—पिट्टी भस्म करने के लिये इस यंत्र का न्यवहार होता है। मिट्टी के द्वारा ४ श्रङ्कल लम्बी खोर ३ श्रङ्कल चौड़ी मूषा तैयार कर उसका मुख गोलाकार करे। २० भाग लौह खोर १ भाग गुगगुल श्रच्छी तरह घोंटकर उससे मूषा कई वार लिप्त करे श्रन्त मे श्राधा भाग लचण मिला कर मिट्टी खोर जल द्वारा लेप करे, फिर उस मूषा के भीतर पारद खादि वन्द कर भूमिगर्भ में तुपानल (भूसी की श्राग) से मृदु स्वेद देवे। १ दिन रात वा ३ दिन तक इस तरह स्विज्ञ करने से पारद भस्मरूप मे परिणत होता है।

हंसपाकयन्त्र—एक खपरा वालू से भर कर उसे दूसरे खपरे से ठीक-ठीक सन्धि वन्द कर दे। उसमे पञ्चक्षार, मूत्र, छवण वा विड द्रव्य सहित पाच्य पदार्थ स्थापन कर मृदु त्रिप्ति से पाक करे, टीकाकार इसे हंसपाकयन्त्र कहते हैं।

वालुकायन्त्र—एक चौड़ी मुख वाली काच की शीशी के ऊपर एक श्रञ्जल मोटी मिटी श्रीर कपड़े का लेप कर सुखावे। इस काच कूपी के दो तिहाई ( है ) भाग पारदादि पाच्य पदार्थ से भर कर उसे एक वालिश्त गहरी वालू से भरे भाण्ड के भीतर रक्खे फिर भाण्ड की खाली जगह को वालू से भर दे श्रीर भाण्ड के ऊपर डक्कन रख दे श्रीर सिन्धस्थल मिटी से वन्द कर देवे। फिर उस भाण्ड की चूल्हे पर चढ़ाकर नीचे श्राग्न देवे। ऊपर के डक्कन की

पीठ पर तृण रखने से जब तक वह जलने न लगे, तव तक श्राग्न देना श्रावरयक है, इसीको वालुकायन्त्र कहते हैं। वालू के स्थान पर लवण भरने से वह लवणयन्त्र भी कहा जाता है। भाण्ड में पाँच श्राढक वालू भर कर उसमें रस-गोलकादि पाक करने से, उसको भी बालुकायन्त्र कहते हैं।

**तवणयन्त्र**—वालुकायन्त्र में बालुका के बदले लवण भरने से वह लवण यन्त्र कहा जाता है।

ताम्र पात्र में पारद प्रलिप्त करके उस पात्र के मुख पर ढक्कन रख कर मिट्टी श्रीर लवण द्वारा उसका सन्धिस्थल बन्द करे। फिर उस ताम्र पात्र को एक भाण्ड के भीतर रख कर भाण्ड को लवण या क्षार द्वारा पूर्ण करे श्रीर पूर्ववत् नियम से उसके नीचे श्रीन जलावे। यह लवणयन्त्र हैं। पारद-संस्कार कार्य में इस यन्त्र का व्यवहार होता है।

नालिकायन्त्र—एक लोहे के नल मे पारा रख कर उसे लवण से भरे पात्र मे ( भाण्ड मे ) स्थापन करके पूर्ववत् पाक करे इसे नालिकायन्त्र कहते हैं।

भूधरयन्त्र—एक गढ़े में बालू भर कर उस बालुका के बीच में रसयुक्त मूषा स्थापन कर उसके ऊपर जङ्गळी उपलों की श्राग्नि जलावे तो यह भूधरयन्त्र कहा जाता है।

पुटयन्त्र—एक कसोरे में पाच्य द्रव्य रख कर उसे दूसरे कसोरे से ढक कर रख दे श्रोर सन्धिस्थल श्रच्छी तरह वन्द कर दे। इसका नाम पुटयन्त्र है। चूल्हे के वीच कण्डों से ढक कर पुटयन्त्र—स्थित पारद दो प्रहर तक पाक करते हैं।

कोष्टिकायन्त्र श्रीर खेचरीयन्त्र—धातुश्रों के सत्त्वपातनार्थ कोष्ठीयन्त्र का व्यवहार होता है। यह १ हाथ लम्वा श्रीर १६ श्रङ्कल चौड़ा होना श्रावश्यक है। दो लोहे के पात्र तैयार कराकर एक का वेष्टन करना होगा। एक पात्र के वेष्टन में दूसरा पात्र प्रविष्ट हो सके, इस भाव से दोनों पात्र तैयार कराने होगे। छोटे पात्र में मूर्चिछत पारा रख कर वह पात्र वड़े पात्र के भीतर बैठा दे श्रीर वड़ा पात्र काझी से भर दे। इसका नाम कोष्ठिकायन्त्र है।

टी प्रहर तक इस यन्त्र में स्विज (स्वेदन) करने से पारद उठता है। इसे रोचरीयन्त्र भी कहते हैं। इस यन्त्र में पाक करने से पारद में षड्गुणता सम्पादित होती है। सूचम कान्त लौह के होने से पारद श्रिधकतर गुणशाली होता है।

तिर्यक्पातनयन्त्र—एक कलरा के मुख पर एक वक्र किये हुए नल का मुख संयुक्त करे श्रीर उस नल का दूसरा मुख दूसरे कलरा की कुक्षि में छिद्र करके उसमें प्रविष्ट करे। दोनों कलरों के मुख श्रीर नल से संयुक्त स्थानों को मिट्टी से श्राच्छी तरह वन्द कर दे। इसी का नाम तिर्यक्पातन है। इसके एक कलरा में पारद श्रीर दूसरे कलरा में स्वादु शीतल जल रक्खा जाता है। पारद के कलरा के नीचे तीव श्रिप्त देने से यह पारा उत्थित होकर नल द्वारा दूसरे कलरा के जल में जा गिरता है।

पालिकायन्त्र—एक लोहे के वने हुए गोलाकार पान पात्र में ऊर्ध्वभाव से श्राप्रभाग मुझा हुत्रा दण्ड लगाया जाय तो उसे पालिकायंत्र कहते हैं। गन्धक-जारण के लिये इस यन्त्र का व्यवहार होता है।

घटयन्त्र—४ प्रस्थ (२५६ तोला) जल जिसमे श्रा सके श्रीर मुख ४ श्रङ्खल का हो, इसका नाम घटयन्त्र है। इसे श्राप्यायनयन्त्र भी कहते हैं।

इष्टकायन्त्र—एक गोलाकार गर्त कर उस गर्त में १ सकोरा रख दे। श्रौर उसके चारों श्रोर १ श्रङ्कल ऊंचा घरा वनावे। १ ईट के दुकड़े के वीच में एक गर्त करके वह ईट उस सकोरे में रक्खे। ईट के वीच के गर्त में पारद रख कर उसके ऊपर १ कपड़ा श्रौर कपड़े के ऊपर गन्धक रक्खे। फिर दूसरा १ सकोरा लेकर उसे दक दे एवं सकोरा श्रौर गर्त के श्रास—पास के घेरे का संयोग स्थान मिट्टी से श्रम्ची तरह वन्द कर दे। इसका नाम इष्टकायन्त्र है। जङ्गली उपलो की श्रिप्त सं कपोतपुट में मृदु श्रिप्त से इसे पाक करे। इस यन्त्र से गन्धक जारण श्रौर सम्पादन होता है।

हिङ्गुलारुष्टि-विद्याधरयन्त्र—एक हॉडी मे हिङ्जल रख कर उसके ऊपर दूसरी हॉडी वैठाकर उनका सन्धि स्थान श्रन्छी तरह वन्द कर दे, इसको हिङ्जला-कृष्टि-विद्याधर यन्त्र कहते हैं। ऊपर की हांड़ी का जल गरम हो जानेपर उसे वदल कर शीतल जल भर देना श्रावश्यक है।

डमहयन्त्र—१ हांडी के ऊपर दूसरी हांडी का मुख मिला कर उलटी रक्खें श्रीर उनका संयोगस्थल श्रच्छी तरह वन्द करने से डमख्यन्त्र कहा जाता है। इसका व्यवहार पारदभस्म करने में होता है। नाभियन्त्र—एक सकोरे के भीतर चारो श्रोर मिद्दी लगा कर वीचो वीच गर्ताकार करे, उसमे पारद श्रोर गन्धक रख कर उसके चारो श्रोर एक श्रद्धल ऊंचा घेरा लगा दे श्रोर ऊपर गाय के थन के श्राकार की मूषा ढक कर जल श्रोर मिद्दी द्वारा उसका संयोगस्थल श्रच्छी तरह वन्द कर दे। फिर वंवूल का क्राथ खूब गाढ़ा लेही सा करके उसमे जीर्ण किह (मण्हर) का चूर्ण, गुड़ श्रोर चूना मिला कर, श्रच्छी तरह मर्दन करने से वह जलमृत्स्ना नाम से कहा जाता है। इस पदार्थ का प्रलेप देने से उसमे जल प्रवेश नहीं कर सकता। खड़िया, नमक श्रीर मण्हर भैंस के दूध में मर्दन करने से, उसे चिह्नमृत्स्ना कहते है।

इस विह्नमृतना द्वारा प्रलेप देने से, वह तीव ताप सह सकता है। इस विह्नमृत्सना द्वारा रुद्ध होने से पारा निकल नहीं सकता। उक्त प्रकार से मूषा का संयोगस्थल रोक कर उस सकोरे में जल भरे श्रीर नीचे श्रीन जलावे, इसको नाभियन्त्र कहते है। इस यन्त्र द्वारा पारद जीर्ण होता है श्रीर गन्धक धूमहीन श्रीर शुद्ध हो जाता है।

ग्रस्तयन्त्र—एक मूषा दूसरी एक मूषा के भीतर घुसा रहेगा, दोनो मूषात्रों के त्राचन्त त्रवयव गोलाकार हो त्रौर केवल तलभाग चपटा हो, इसको ग्रस्तयन्त्र कहा जाता है। पारा बन्धन करने में इसका व्यवहार होता है।

स्थालीयन्त्र—एक हांडी में ताम्रादि धातु रख कर उसका मुख ढक कर सिन्धस्थल वन्द करे श्रोर हाडी के नीचे श्रिप्त जलावे, इसका नाम स्थालीयन्त्र है।

धूपयन्त्र— त्राठ श्रङ्कल प्रमाण एवं श्राठ श्रङ्कल ऊंचा एक लौहपात्र तयार करा कर उसके कण्ठ से नीचे दो श्रङ्कल प्रमाण स्थान में जलाधार स्थापन करके उसके ऊपर कुछ पत्तली पत्तली लोहे की शलाकाये तिरछी रक्खे श्रौर उस जलाधार के नीचे धूपन पदार्थ निहित करे, उन शलाकाश्रों के ऊपर सूद्रम स्वर्णपत्र स्थापन कर, दूसरे पात्र से उलटा कर उक दे श्रौर सिध स्थल मिट्टी से बन्द कर दे। फिर लोहपात्र के नीचे श्रिम जला देवे। इस विधान से सब स्वर्णपत्र जारित होंगे श्रौर स्वर्ण द्रवीभूत होकर पात्र के भीतर गिर जायगा।

गन्थक, हरिताल श्रोर मैनशिल की कज्जली श्रथवा जारित सीसक, ये सव पदार्थ स्वर्णपत्र के धूपनार्थ प्रशस्त है। रौप्य जारण के लिये रौप्य की पत्र पर जारित वन्ध की श्रथवा उपयुक्त समम्म कर श्रन्य उपरसों की धूप दी जाती है। इसको धूपयन्त्र कहते हैं। जारण किया साधन के लिये यह यन्त्र व्यवहार

कन्दुकयन्त्र—एक वड़ी हांडी जल से भर कर उसके मुख पर एक कपड़ा दढ़ रीति से वांध दे। उस कपड़े के ऊपर स्वेद्य वस्तु रख कर उसके ऊपर ढक्कन रख कर मुख वन्द कर दे। फिर हांडी के नीचे श्राग्न जलावे। इसका नाम कन्दुकयन्त्र है। कोई कोई इसे स्वेदनीयन्त्र भी कहते है। श्रथवा जल से भरी हांडी के ऊपर तृण विका कर उन तृणों के ऊपर स्वेद्य द्रव्य स्थापन कर ढक दे श्रीर हांडी के नीचे श्रिप्त जलावे, इसको भी कन्दुकयन्त्र कहा जाता है।

खत्वयन्त्र—नील वा श्यामवर्ण, हिनम्ध, दृढ़ श्रौर भारी पत्थर खरल बनाने के योग्य होता है। खरल का परिमाण १६ श्रंगुल छंचा, ९ श्रंगुल चौड़ा श्रौर २४ श्रंगुल लम्बा होना चाहिये। खरल की घर्षणी घिसने की जगह यदि १२ श्रङ्जल हो तो खरल २० श्रङ्जल लम्बा श्रौर १० श्रङ्जल छंचा चेध विशिष्ट होना श्रावश्यक है। ऐसा खरल ही पारद-मर्दन मे श्रेष्ठ है। पारदादि मर्दन की सुविधा के लिये दो प्रकार के (दीर्घाकृति श्रौर गोलाकृति) खरल बनाये जाते हैं। सब खरल श्रौर उसकी पृत्रिका निरुद्गार (जिससे द्रव्य छिटक न पड़े ) श्रौर चिकना कर तैयार करते हैं।

मतान्तर से—दश श्रङ्गल ऊँचा, १६ श्रङ्गल लम्बा, १० श्रङ्गल चौड़ा तल देश में ७ श्रंगुल श्रौर स्थूलता मे दो श्रङ्गल परिमित खरल तयार करते है। यह चिकना श्रौर श्रद्धचन्द्राकार होना उचित है। इसकी घिसने की जगह १२ श्रङ्गल तयार करे। यह कार्यसिद्धि विषय में प्रशस्त है।

मर्दन विषय में गोलाकार खरल श्रिषक सुविधाजनक है, वह १२ श्रद्धल लम्वा श्रीर ४ श्रद्धल गहरा होना श्रावश्यक है। श्रत्यन्त चिकने पत्थर से यह खरल तैयार कराकर उसका मध्यभाग खूब चिकना करे, इसके धर्षण का भाग वपटा श्रीर मूसली में पकड़ने का स्थान सुखकर तैयार कराना चाहिये।

लोहे का खरल ९ श्रङ्कल लम्बा, ६ श्रङ्कल गहरा बनाते हैं, उसमे घिसने का स्थान श्राठ श्रङ्कल बढ़ा होना चाहिये। खरल की सी श्राकृति वाली एक चुल्ली श्रंगारों से भर कर उपर्युक्त लोहे का खरल उसमें स्थापन कर पहें द्वारा हवा करने से वह तप्त खरल कहा जाता है। मिईत पारा पिट्ठीक्षार श्रोर खट्टे पदार्थ के

साथ मिला कर उस तप्त खरल में रवेदित करने से श्रितशीघ्र द्रवीमृत होता है। लौह ( घनकान्तलौह ) द्वारा वना हुआ होने से पारद सहस्रगुना श्रिधक गुण-शाली होता है।

#### स्षा

रसशास्त्रवित् मूषा को कोिश्चिका, कुमुदी, करमादिका, पाचनी श्रोर विहिमित्रा ऐसे काई नामों से कहते है। सिट्टी श्रोर लौह ये दो मूषा के उपादान हैं। मूपा श्रोर उसका ढक्कन दोनों के मिलन स्थान के रोकने को वन्धन, सन्धिलेपन, श्रम्भण, रम्भ्रण, संश्लिष्ट श्रोर सन्धिवन्धन कहते हैं।

पाण्डु, रक्तवर्ण, स्थूल, शर्कराहीन श्रीर वहुत देर तक श्रीन का ताप सहन करने में समर्थ मिट्टी मूषा बनाने में श्रेष्ठ है। श्रभाव में बल्मीक-मृत्तिका (वामी की मिट्टी) श्रथवा कुम्हार की सानी हुई तैयार मिट्टी मूषा के लिये ली जावे।

मृत्तिका के साथ जली हुई भूसी, सन, गोवर या घोड़े की लीद मिलाकर लोहे की मूसली से उसे कूटे। इस तरह साधारण मूषा को मिट्टी तैयार की जाती है।

रवेत पत्थर का चूर्ण, जली हुई भूसी, गोबर, सन, जीर्णवस्त्र, घोड़े श्रादि की लीद श्रीर लौह-मलादि पदार्थ उपयुक्त परिमाण में मूषा की मिही के साथ मिलाते है।

मृतिका २ भाग, सन श्रीर लींद २ भाग, दग्ध भूसी श्रीर पत्थर चूर्णीद १ भाग श्रीर लींह मल श्राधा भाग, ये सब एकत्र मिलाकर वज्रमूषा वनाते हैं। वज्रसूषा—सत्त्वपातन किया में व्यवहार किया जाता है।

योगसूषा—चिकनी वल्मीक की मिही के साथ दहकते हुए कोयले, दग्ध तुष त्रीर यथोचित विड द्रव्य (क्षार वस्तुएं) उसमें मिश्रित करे। इस तरह जो मूबा तैयार होती है, उसे योगमूषा कहते है। इस योगमूषा में पारद पकाने से वह ऋत्यधिक गुणशाली होता है।

वज़द्रावणिका सूषा—गारा, सीसक सत्त्व, सन श्रोर जली हुई भूसी अत्येक समभाग, सबके वजन के समान मूषोपयोगी पूर्वोक्त मृत्तिका। ये सब द्रव्य भेंस के दूध के साथ मिलाकर वज़द्रावण के लिये श्रनेक श्राकृति की मूण वनावे।

8114 10

वरमूषा—वज (लोहचूर्ण), कोयले त्रौर भूसी प्रत्येक सम परिमाण, मृत्तिका चौगुनी, गारा मृत्तिका के सम परिमाण ये सब द्रव्य एकत्र कर वर्र-मूषा तैयार करते हैं। यह एक प्रहर तक श्रिशिको ज्वाला सह सकती है।

गारमूषा—भैंस का दूध ६ गुना, गारा, लोहकीट, कोयला श्रोर सन इन सव द्रव्यों के साथ काली मिट्टी मिलाकर उसके द्वारा जो मूषा वनती है, उसे गारमूषा कहते है। यह मूपा दोपहर तक श्रान में दग्ध करने से भी नष्ट नहीं होती।

चर्णमूषा या रूष्यमूषा—पत्यर का चूर्ण और लाल रंग की मृत्तिका रक्तवर्गीक्त द्रव्य के रस के साथ ('दाडिमं किंशुकं लाक्षा बन्धूकच्च निशाद्रयम् कुसुम्भपुष्पं मिलिष्ठा इत्येते रक्तवर्गकाः') मिद्दित कर उसके द्वारा मूषा तैयार करे फिर उस मूषा में खिदर और हीराकस लेपन करे। इसको वर्णमूषा कहते हैं। धात्वादि का वर्णीत्कर्ष सम्पादन के लिये यह मूपा व्यवहृत होता है, श्वेत वर्गीक्त पदार्थ के साथ मर्दन कर यह मूषा तयार करने से उसको रौष्यमूषा कहा जाता है।

विडमूपा—यथानिर्दिष्ट भिन्न भिन्न मृत्तिका द्वारा मूषा तैयार कर उसमे निर्देशानुसार वस्तुत्रो का लेपन करे, उसे विडमूषा कहते हैं। देह की दृष्ता साधक श्रीषध तैयार करने में इस मूषे का व्यवहार होता है।

गारा (जल में वहुत देर तक भीगी हुई मिट्टी) और सीसक सत्त्व १-१ आग, भूसी ८ भाग, इन सब के बरावर मृत्तिका ये सब एकत्र भेंस के दूध के साथ मर्दन कर कई प्रकार के कौखिकायंत्र (मूपा) तैयार करते हैं। इस मूपा में जुएं का रक्त एवं सुगन्धवाला और काटानट की जड़ लेपन करने से यह वज्रद्रावण मूपा में परिणत होता है। इसे द्रव पदार्थ से पूर्ण कर अग्निताप पर एखने से चार प्रहर तक अग्निताप सहा करता है।

मूषा में कोई पदार्थ द्रवीभूत होते समय कुछ देर के लिये यदि उसकी श्राध्मापन किया वन्द रख कर मूषा उतार लेते हैं तो उसको मूषा की श्राध्मापन किया कहते हैं।

खुन्तकासूषिका—वैंगन की आकृतिवाली मूपा तैयार कर उस पर १२ श्रहुल परिमित १ नाल संयुक्त करे। उसका ऊपरी भाग धतूरे के फूल की सी श्राकृति वाला श्रोर सुदृढ़ करना चाहिये। मूषा का परिमाण ८ श्रद्धल हो श्रोर उसमें छिद्र रहे। इसको वृन्तकामूषिका कहते हैं। इस मूपा द्वारा खपरिया श्रादि मृदु द्रव्यों का सत्त्व संग्रह करते है।

गोस्तनीसूषा—जो सूषा गाय के थन की सी श्राकृतिवाली हो एवं शिखा-युक्त श्रोर श्राच्छादन ( ढक्कन ) युक्त हो उसे गोस्तनीसूषा कहते हैं। धात्वादि की शुद्धि श्रोर सत्त्व द्रावण कार्य में इसका व्यवहार होता है।

मह्मभूषा—एक सकोरे के ऊपर दूसरा सकोरा मुख से मुख मिलाकर रखने से जो मूषा बनती है, उसे मल्लम्षा कहते हैं। यह पर्पटादि रस पदार्थ स्वेदन के लिये व्यवहत होती है।

पक्कसूषा—कुम्हार के कनाये भाण्ड की तरह त्राकृति तैयार कर उसे पका ले। इसे पक्कमूषा कहते हैं। पादुली त्रादि पाक करने में इस मूषा की त्रावश्यकता होती है।

गोलासूषा—एंक गोलाकार मूषा में पुटन द्रव्य रख कर उसका मुख वन्द कर दे। इसे गोलमूषा कहते हैं। इसके द्वारा पुटन द्रव्य शीघ्र द्रवीभूत श्रोर शोधित होता है।

महामूषा—तलभाग में कूर्पर की नाई सूच्म श्रीर फिर क्रमशः चौड़ा कर बैंगन की तरह जो बड़ी मूषा तैयार की जाय उसे महामूषा कहते हैं। लौह, श्रश्न श्रादि के पुटपाक श्रीर द्रावण के लिये यह मूषा व्यवहृत होती है।

मण्डूकमूषा—मेंढक की सी आकृतिवाली श्रीर तल भाग में चौड़ी श्रीर विस्तार में ६ श्रङ्कल परिमित जो मूपा तैयार की जाय उसे मण्डूकमूषा कहते है। यह मूषा धरती मे गाड़कर उसके ऊपरी भाग में पुट देते है।

मुशलम्षा—जिस मूषा का मूल भाग चपटा श्रीर शेष श्रवयव गोलाकार एवं ८ श्रङ्कल जिसकी ऊंचाई हो उसे मुशलमूषा कहा जाता है। चक्रीबद्ध रस श्रयीत पारद का चाकी पाक करने में यह मूषा उपयोगी है।

#### पुट

पुटिवधान ही रसादि द्रव्य पाक का ज्ञापक है, अर्थात् रसादि द्रव्य का पाक सम्यक् हुआ है या नहीं, वह पुट के अनुसार ही जाना जायगा। निर्दिष्ट पाक की श्रपेक्षा न्यून वा अधिक पाक हितकर नहीं होता है। जिस औषध का पाक पूर्ण विहित हुआ हो, वही हितकर होता है। लौहादि धातुओं का निरुत्थ भस्म, गुण की अधिकता और कमशः उत्कर्ष, जल में ह्वना और दबाने से अङ्कली की रेखा का अवेश ये सब केवल पुटिकिया द्वारा ही सिद्ध होते हैं। पुटिकिया द्वारा ही पत्थर और धातुओं का लघुत्व, शीघ्र देह में व्याप्ति, अजिनदीपन एवं जारित पारद की अपेक्षा भी अधिक गुणशाली होता है।

वाहर स्थित पुट संयोग द्वारा धातु आं मे जितनी आगिन प्रवेश करे और जितना ही वह चूर्ण रूप मे परिणत हो उतना ही उसका गुण आधिक होता है।

महापुट—दो हाथ चौड़ा एक चौकोर कुण्ड वनवावे, कुण्ड के नींचे का भाग कमशः चौड़ा हो। फिर उस कुण्ड में एक हजार जंगली उपले रखकर उनके ऊपर मूषावद्ध पुटपाकोपयोगी श्रोषध स्थापन करे, फिर श्रोपध के ऊपर श्रोर भी ५०० जंगली उपलें (जो खेतो मे पशु गोवर करते हैं, वह सूखा हुआ) रख कर श्रामि संयोग करे। इसको महापुट कहते है।

गजपुट—एक हाथ परिमित गहरा श्रीर चौकोर एक कुण्ड तैयार कर हजार जङ्गली उपलों द्वारा उसे कण्ठदेश तक भर दे। वन उपलों के ऊपर पुटन द्रव्य से भरा पात्र स्थापन कर उसके ऊपर फिर ५०० वन उपलों को रख कर उनमें श्रीन संयोग करे। इसका नाम गजपुट है गजपुट श्रीषध में महागुण प्रदान करता है।

वराहपुट—ऐसे ही नियम से मुट्ठी भर कुण्ड तैयार कर पुटपाक करने से उसे वराहपुट कहा जाता है।

कुक्कुटपुट—दो वालिश्त गहरे श्रौर दो बालिश्त चौड़े कुण्ड में पुटपाक करने को कुक्कुटपुट कहते हैं।

कपोतपुट-पारद भस्म करने के लिये मूषा रुद्ध कर भूतल पर ८ वन उपलों द्वारा पाक करने से उसे कपोतपुट कहते हैं।

गोवरपुट—गोचारण स्थान में पड़े हुए, गोखर द्वारा कुटे हुए, सूखे गोमय के चूर्ण को गोवर कहते हैं। यह रस-साधन कार्य में विशेष उपयोगी है। रस भस्म-साधन के लिये उक्तरूप गोवर श्रीर भूसी द्वारा जो पुट देते है उसे गोवरपुट कहते है।

भाण्डपुर-एक बड़े भाण्ड में भूसी भर कर उसके मध्यस्थल में मूषा निहित करे फिर उस भूसी में श्राग्निसंयोग कर उसे दग्ध करे। इसको भाण्डपुट कहते हैं। बालुकापुर-पाच्य (पकाने योग्य) पदार्थी से भरी हुई मूषा को नीचे श्रीर छपर गरम बालू से ढक कर पाक करे। इसका नाम वालुकापुर है।

भूधरपुट—भूतल पर दो श्रङ्खल गड्डा कर उसमें मूपा रक्खे श्रौर उसके ऊपर बन उपलों की श्रम्नि द्वारा पुट देवे। इसको भूधरपुट कहते हैं।

लावकपुर—मूषा के ऊपर सोलह गुनी भूसी अथवा गोवर द्वारा जो पुट दिया जाय, उसे लावकपुट कहते हैं। अति मृदु द्रव्य पुटपाक करने में यह उपयोगी है।

जिस स्थल में पुट का अर्थात् गोवर के कण्डे आदि द्रव्यों का परिमाण निर्दिष्ट न हो, उन स्थलों में पाच्य पदार्थ का बलाबल विचार कर पुट का परिणाम स्थिर कर लिया जाय।

#### रस-परिभाषा

.. कोई द्रव पदार्थ दिये बिना केवल धातु समूह एवं गन्धकादि के साथ पारद मर्दन कर कज्जलवत् चिकना चूर्ण करने से उसे कज्जली कहते हैं। श्रीर वे सब द्रव पदार्थ के साथ मर्दित हो तो उन्हें रसपक्ष कहते हैं।

पारा, सोनामाखी श्रोर गन्धक वारह माग श्रोर श्रभ्र चार श्राना भाग एकत्र खरल में मर्दन कर श्रोर तीव्र श्राग्न पर रख कर मक्खन जैसा तैयार होने पर उसे रसिपिष्ट कहा जाता है।

श्रन्यान्य पण्डित कहते हैं कि गन्धक श्रीर दृध के साथ पारा खरल में मर्दन कर पिष्टवत् तैयार करने से उसे ही पिष्टि कहते हैं।

चतुर्थीश स्वर्ण के साथ पारद मर्दन कर जो पिष्टि तैयार की जाती है उसे पातनिपिष्टि कहते हैं। इससे पारद अच्छी तरह साफ होता है।

रौप्य या स्वर्ण, पारद श्रौर गन्धकादि के साथ मारित कर उसे बारम्बार जर्म्बपातन द्वारा उत्थापित करने से उसे स्वर्ण वा रौप्य की कृष्टि कहते है।

यह कृष्टी वा कृष्णी स्वर्ण में डालने से उसके द्वारा स्वर्ण की वर्णहानि नहीं होती। विशेषतः यह स्वर्णकृष्टी पारद के रजन कार्य में बीजस्वरूप है।

ताम्र और तीच्ण लौह वारम्वार द्रवीभूत कर गन्धक मिले हुए त्र्याक के रस में डाल देने से वह श्रेष्ठ लौहरूप में निकलता है। इस तरह स्वर्ण का संस्कार करने से वह हेमरक्ती कहा जाता है। द्रवीभूत रवर्ण में यह हेमरिक डालने से स्वर्ण का वर्णीत्कर्ष होता है।

रौप्य के भी इस तरह संस्कार कर मनोहर रौप्य रक्त वा वीज तैयार करते हैं। इस का नाम ताररक्ती है। ताररक्ती रौप्य का श्रोर रौप्य रज्जक बीज का भी रज्जक है।

धृत वा बद्ध पारद श्रथवा श्रन्य किसी धातु के साथ कोई धातु संस्कृत होकर यदि रवेत वर्ण हो तो वह चन्द्रदल एवं यदि वह पीतवर्ण हो तो श्राग्निदल कहीं जाती है।

प्रन्थान्तर में भी ऐसा वर्णित है कि वद्ध पारद अथवा अन्य किसी धातु के साथ कोई धातु संस्कृत होकर श्वेत वा पीतवर्ण होने से वह श्वेतवल वा पीतवल नाम से कीर्तित होती है।

सोनामाखी के साथ तांचा १० बार पुटपाक कर, मारित किया ताम्र, श्रोर ऐसा विशोधित सीसा दोनो ४ पल एकत्र मिला कर नीलाइन के साथ सौ वार मारित करने से वह शुल्वनाग नाम से कहा जाता है। यह विशुद्ध है। इस शुल्वनाग के साथ साधित पारद एक मास तक मुख़ में धारण करने से मनुष्यादि के मेहरोग निवारित होते हैं। पथ्यभोजी होकर एक वर्ष तक मुख में धारण करने से वली श्रोर पिलत नष्ट होते हैं, गिद्ध की सी दृष्टिशक्ति प्रखर, शरीर परिपुष्ट श्रोर सब प्रकार के रोग विनष्ट होते हैं।

एक धातु दूसरी धातु के साथ मिलाकर, फिर उसे दग्ध कर द्रवपदार्थ विशेष में वुमाने से यदि वह पाण्ड पीतवर्ण हो तो उसे पिजरी कहते हैं।

रौप्य सोलह भाग श्रोर ताम्र बारह भाग एक्त्र श्रावर्तित कर लेने से उसे 'चन्द्रार्क' कहते हैं।

जिस किसी एक साध्य धातु में दूसरी धातु डाल कर टेढ़े नली की फूंक द्वारा दग्ध करने से वैद्य लोग उसे निर्वापण कहते हैं। इसमें जो धातु निर्वापित करनी हो उसका जैसा परिमाण निर्दिष्ट हो, निर्वापण द्रव्य अर्थात् जिसके द्वारा निर्वापण करते हैं, वह द्रव्य भी उसके समपरिमाण में डाली जाती है।

जिस मृत धातु का भरम जल में डालने से जल के ऊपर तैरता रहे उसे वारितर कहते हैं। त्रौर जो धातुभस्म त्रङ्गष्ठ त्रौर तर्जनी श्रङ्गली द्वारा मर्दित करने से श्रङ्गली की रेखात्रों में प्रविष्ट हो जाय उसे रेखापूर्ण कहते है।

गुड़, गुड़ा, सुखस्पर्श (सोहागा), मधु श्रोर घो के साथ मिलाकर जो धातु भस्म श्राध्मापित करने से वह श्रपनी स्वामाविक श्रवस्था को प्राप्त न हो उसे श्रपुनर्भव धातु भस्म कही जाती है। उस धातु भस्म के ऊपर धान्यादि भारी वस्तु स्थापन कर उसे जल में डालने से यदि हंस की तरह तैंरती रहे तो उसे उत्तम कहते हैं।

किसी धातु भस्म के साथ रौप्य मिलाकर उसे श्राध्मापित करने पर यदि वह भस्म रौप्य पात्र से लग जाय तो उसे निरुत्य वा श्रपुनर्भव धातु भस्म कही जाती है।

निर्वापण द्रव्य विशेष के संख्रव से धातु भस्म जब उस वर्ण विशेष को प्राप्त हो श्रोर वह मृदु श्रोर विचित्र संस्कार युक्त हो, तब उसे बीज कहते हैं। इस बीज संस्कार को वैद्य लोग उत्तरण किया कहते हैं।

संस्रष्ट दो धातुत्रों में एक धातु टेढ़े नली की फूतकार द्वारा दग्ध करने से उसे ताडन कहते हैं।

श्रश्र का चूर्ण, साठी चावल श्रोर काजी के साथ मिलाकर वस्त्र में बांध कर मर्दन करने से वस्त्र में होकर जो श्रश्र कण गिरें उन्हें धान्याश्र कहते हैं।

क्षार, श्रमल श्रोर द्रावक पदार्थों के साथ धातु द्रव्य मिलाकर कोष्ठिकायन्त्र में श्राध्मापित करने से जो सार पदार्थ निकलता है उसी का नाम सत्त्व है।

कोष्टिकायन्त्र में शिखराकार से कोयले भर कर उनमें मूषा स्थापन कर उसके कण्ठ देश तक उन कोयलों से ढक कर आध्मापित करने को 'एककोलीसक' कहते हैं। कार्य विशेष में भिन्न-भिन्न कोयले का व्यवहार होता है। यथा— व्रावण और सत्त्व पातन कार्य में महुआ और खिदर काष्ठ का कोयला उत्तम है। व्रव पदार्थ रहित द्रव्य आध्मापित करने में वांस का कोयला उपयोगी है और स्वेदन कार्य में वेर के लकड़ी का कोयला अशस्त है।

हिंतुल श्रादी के रस के साथ मर्दन कर विद्याधरयन्त्र द्वारा उससे पारा श्राम्पण करने पर उस पारे को हिंदुलाकृष्ट रस कहा जाता है। कांसे के साथ योड़ा हरिताल मिलाकर टेढ़े नली की फूंक द्वारा उसे दग्ध करे, इस तरह कांसे का रात भाग (दस्ता भाग) दूर होने पर शेष ताम्र भाग को घोषाकृष्ट कहते हैं। तीं चण लोह नीलाझन के साथ मिलांकर तीव श्राग्न से श्रानेक वार श्राध्मापित करने पर जब वह कोमल कृष्ण वर्ण श्रोर शीघ्र द्रावणशील हो जाय तब उसे चरनाग कहते है।

मृत ( जारित ) द्रव्य की पुनर्वार स्वाभाविक श्रवस्था प्राप्ति को उत्थापन कहते हैं। द्रव पदार्थ में द्रवीभूत द्रव्य निच्चेप करने को ढालन कहा जाता है।

तीस पल परिमित सीसक त्राक के रस के साथ मर्दन कर कमशः फिर पुटपाक करे। पुटपाक से कमशः क्षय प्राप्त होकर जब एक कर्ष (२ तीला) मात्र शेप रहे तब पुटपाक बन्द कर दे। इसके बाद हजार बार पुटपाक करने पर भो फिर उसका क्षय न होगा। टीकाकार इसको नागसम्भूत चपल कहते हैं।

इसी प्रक्रिया से वज्ज का भी चपल तैयार करते हैं। वह चपल हाथ में लेकर उस हाथ से पारद स्पर्श करने से, पारद वर्द्ध होता है। यह पारद धातु किया में प्रशस्त होता है, किन्तु रसायन कार्य में उपयोगी नही। श्राचार्य लोकनाथ ने इस वज्ज के चपल का नाम खर्पर कहा है।

सीसक का मल जल से घोकर उस पर मिली हुई रज श्रादि धूर कर देने से न्वह कृष्ण वर्ण का हो जाता है। रसवित् पण्डित इसे घौत कहते है।

सम परिमाण मे दो घातु द्रव्य एकत्र मर्दित और आध्मापित करने से उसे द्वान्द्वान कहते है। फिर उन दो द्रव्यों में एक द्रव्य दृसरे द्रव्य की अपेक्षा अधिक भाग होने से उसको अनुवर्ण और न्यून होने से सुवर्णक कहते है। अन्य किसी पदार्थ द्वारा वर्ण का हास होने से धातुविद्गण से उसे भक्षनी कहते है।

धातु विशेष में पारदादि के कल्क द्वारा रोप्य वा स्वर्ण की नाई वर्ण उत्पन्न करने पर वह यदि थोड़े दिन रह कर नष्ट हो जाय तो उसे चुल्लका (गिलटि) कहते है और यदि वह रिज्ञत वर्ण चिरस्थायी हो तथा दग्ध करने पर भी नष्ट हो तो उसे पतज्ञीराग कहते हैं।

द्रवीभूत लौहादि घातु में जो अन्य द्रव्य का प्रचेप दिया जाय उसे श्रावाप, प्रतीवाप श्रोर श्राच्छादन कहते हैं।

कोई धातु श्रिप्तताप से द्रवीभूत कर ८ निमेष समय तक श्रिपेक्षा कर उस पर श्रीड़ा थोड़ा जल निचेप करने से उसको श्रिभिषेक कहा जाता है। उत्तप्त धातु जल में डाल देने को श्रिभिषेक, निर्वापण श्रीर स्नपन कहते हैं। धातु द्रवीभूत होकर जब निर्मल होती है, तव उसमे प्रतीवाप श्रादि श्रर्थात् दूसरे द्रव्य का प्रचेपादि करे। धातु पदार्थ श्राध्मापित करते समय जब उससे शुभ्र वर्ण की श्रिप्त शिखा निकले तव उसे शुद्धावर्त कहते है। वही सत्त्व निकले का समय है। श्रोर जब श्राध्मापन समय में द्रवीभूत द्रव्य की सी शिखा निकले श्रीर द्रव पदार्थ में उन्नत होने ( उथलने ) लगे, तव उसे वीजावर्त कहते हैं।

जो कोई पदार्थ अगिन में जला देने के वाद उस अग्नि से रहकर ही क्रम से अपने आप शीतल हो जाय उसे स्वाइशीतल कहते हैं। और यदि वह द्रव्य अग्नि के ऊपर से उतार लेने के वाद शीतल हो तो उसे विहःशीतल कहा जाता है।

क्षार अमल वा अन्य किसी औषध के साथ कोई द्रव्य दोलायन्त्र में पाक करने से उसे स्वेदन कहते है। मर्दन द्वारा उस पदार्थ का वहिर्गत मल विनष्ट होता है।

यथानिर्दिष्ट श्रौषध के साथ मर्दन कर किसी द्रव्य के नष्ट-पिष्ट करने की मूर्च्छन कहा जाता है। मूर्च्छन किया द्वारा वज्ञादि द्रव्यान्तर संयोग श्रौर कञ्चुकादि दोष निवारित होता है।

स्वेद श्रीर श्रातपादि योग से भस्मीभूत धातु की किर स्वाभाविक श्रवस्था उत्पन्न कराने को उत्थापन किया कहते है। इसके द्वारा मूर्च्छनिकया-जनित व्यापत्ति विनष्ट हो जाती है।

पारदादि का स्वरूप विनष्ट होकर वह पिष्टाकार में परिणत होने से उसे वन्धन किया कहते हैं। इस तरह निर्जित पारद को पण्डितों ने नष्टपिष्टि नाम से कीर्तन किया है।

यथानिर्दिष्ट श्रीषध के साथ मिह्त पारद यथायथ यन्त्र में निहित कर उद्धि, श्रधः श्रीर तिर्यक् भाव से पातित कर निर्वापित करने का नाम पातन किया है। इसके द्वारा वङ्ग श्रीर सीसक-संसर्गजनित कञ्चुक दोष विनष्ट होता है।

जल श्रौर सेंघा नमक के साथ पारद संयुक्त कर तीन दिन एक कलस में निहित (भीतर) कर रखने से उसे श्रास्थापनी श्रौर रोधनिकया कहते हैं।

इस तरह रोधनिक्रया द्वारा पारद लब्धवीर्य होने से उसकी चपलता बढ़ जाती है, उस चपलता की निवृत्ति के लिये जो स्वेदिक्रया निर्दिष्ट है, उसकी नियामन कहते हैं। धातु, पाषाण श्रौर मूलादि श्रौषध के साथ (पारद) मिलाकर उसे घट में रख कर तीन दिन प्रासार्थ जो स्वेद दिया जाय उसे पण्डितजन दीपन कहते हैं।

इतना परिमित पारद इतने परिमित द्रव्य का प्रास कर सकेगा, ऐसी विवेचना कर पारद श्रीर ग्रासार्थ द्रव्य का जो परिमाण निश्चित किया जाता है, उसे श्रासमान कहते हैं।

प्रसिद्ध टीकाकारों ने जारणिकया ३ प्रकार की कही है यथा-१-ग्रासचारण, २-गर्भद्रावण श्रीर जारण। उनमें प्रासचारण ३ प्रकार का है, यथा—१-ग्रास, २-पिण्ड श्रीर ३-पिरणाम। श्रीर जारणि किया १-समुखा श्रीर २-निर्मुखा भेद से दो प्रकार की है। जिस जारणि किया से निर्दिष्ट भाग परिमित वीज गृहीत हो उसे निर्मुखा जारण कहते है। शोधित स्वर्ण श्रीर रीप्य इन दो धातुश्रों को बीज कहा जाता है। चौसठ (६४°) श्रांश परिमित वीज डालने का नाम मुख है, उस मुख के साथ जारणि किया हुश्रा पारा श्रासलोलुप मुखवान होता है श्रथित कठिन धातुश्रों को भी श्रास करने में समर्थ होता है। बनवासी सिद्ध पुरुष इसी को समुखा जारण कहते हैं।

मैनशिल मिश्रित पारद, कोष्ठिकायन्त्र में आध्यात होते समय यदि समस्त धात ही ग्रास करने में समर्थ हो तो वह पारद राक्षसवक नाम से कहा जाता है।

पारदगर्भ में प्रासीपयोगी पदार्थ क्षय होने से अर्थात् वह पदार्थ पारद के साथ मिल जाने से उसे प्रासचारण कहते हैं। प्रसित पदार्थ पारदगर्भ में द्रवीमूत होने से उसको गर्भद्वित वा गर्भद्रावण कहा जाता है।

पारद-जारणकाल में घन-सत्त्वादि पदार्थ वाहर हो अर्थात् पारद के साथ मिश्रित न होकर ही द्रवींभूत हो जाय, तो उसे वाह्यहुति कहते है।

निर्लेपत्व, द्वतत्व, तेजस्त्व, लघुता श्रौर पारद के साथ श्रसंयोग ये पांच हिति के लक्षण हैं। पारद श्राध्मापित करते समय यदि श्रौपध श्रथवा लौहादि धातु द्रवीभूत श्रवस्था में श्रवस्थित रहें तो उसे भी हिति कहते है।

विड श्रीर यन्त्रादियोग से हुति, श्रास, परिणाम श्रादि जो सव संस्कार होते हैं, उन सबका नाम जारण है। जारण किया के करोड़ो भेद है।

रसग्रास के समय जीर्णार्थ जो क्षार, श्रम्ल, गन्धादि पदार्थ, मूत्र श्रौर लवणादि-ये सब पदार्थ दिये जाते है, उन्हें विड कहते है। ं सुसिद्ध बीज घातु प्रादि के साथ रस के जारण द्वारा जो पीतादि वर्ण की उत्पत्ति होती है उसे रखन कहते है।

तैलयुक्त यन्त्र में पारद रख कर उसमें स्वर्णादि डालने से उसे सारणा कहते हैं। यह धातु संस्कार विषय में वेधकर्म की श्रापेक्षा भी श्राधिक कार्यकर है।

व्यवायी ( जो जीर्ण न होकर भी क्रिया प्रकाश करे ) श्रौषधों के साथ पारद मिलाने से वेध नाम से कहा जाता है। लेप, च्लेप, कुन्त, धूम श्रौर शब्द नाम से भी वैधिकया श्रनेक प्रकार की है।

पारद विशेष लौह पर प्रलिप्त कर, जो स्वर्ण वा रौप्य उत्पन्न करना है उसे लेपवेध कहते हैं। उससे जिस प्रकार का पुटपाक करते हैं, वह त्र्यनायास साध्य है। द्रवीभूत लौह मे पारद विशेष प्रक्षेप से जो स्वर्णादि तैयार करना है, उसे क्षेपवेध कहते है।

एक सन्दंश (सन्नाय) मे पारद विशेष धारणपूर्वक उस सन्दंश से द्रवीभूत - लीहादि ग्रहण कर स्वर्णादि तैयार करने से उसे कुन्तवेध कहा जाता है।

अिन में कोई धातु निहित कर उष्ण अिम पर पारद निचेप करने से उससे धूम निकलने के साथ ही साथ जो स्वर्णादि तैयार हो उसे धूमवेध कहा जाता है।

मुख से पारद विशेष धारण कर घ्रन्प परिमित धातु से उस मुख से फ़्रत्कार-पूर्वक जो स्वर्ण, रौप्य तैयार करते है उसे शब्दवेध कहते हैं।

पारद मिलाकर प्रसिद्ध श्रौषधो की मिलनतादि का निवारण कर स्वाभाविक वर्ण का प्रकाश करने से उसे उद्घाटन कहते है।

क्षार श्रोर श्रम्ल श्रोषधों के साथ बड़े यत्न से भाण्ड में पारद निहित कर उसे भूमि के श्रन्दर दवा देते हैं। इसे स्वेदन क्रिया कहते है।

श्रीषध मिला हुत्रा पारद भाण्ड मे रख कर मन्दाग्निपूर्ण चुल्लो में निहित करने को संन्यास कहते हैं।

स्वेदन त्रौर संन्यास ये दो क्रियायें पारद के गुणोत्कर्षजनक श्रौर शीघ्र व्याप्तिकारक है।

### रससेवन की मात्रा

श्रीपध सेवन की मात्रा की कोई स्थिरता नही। रससिद्ध पण्डितों ने प्रत्येक को रससेवन के सम्बन्ध में भिन्न भिन्न मात्रा का निर्देश किया है। रोगी की श्रायु, वल श्रौर शारीरिक श्रवस्था पर लच्य कर चिकित्सक श्रौषध की मात्रा निर्देश करे। चिकित्सों की स्विधा के लिये हम श्रपनी व्यक्तिगत श्रभिज्ञता से उत्पन्न रससेवन मात्रा लिखते हैं।

पारदमस्म की मात्रा अतिदिन १ रत्ती, स्वर्णभरम की मात्रा १ रत्ती, रौप्य भस्म की ३ रत्ती, ताम्रभस्म, लौहभस्म, त्राभ्रभस्म, सीसकभस्म, बङ्गभस्म, पीतल श्रीर कांस्मभस्म अतिदिन २ रत्ती, मुक्ताभस्म की मात्रा दो यव, हरितालभस्म की मात्रा १ सरसों से चौथाई रत्ती तक।

#### रस सेवन के नियम

जो रस मत्स्यादि के पित्त द्वारा भावित हो उन रसों के सेवन करने के वाद्य जल सेचन श्रोर श्रवगाहन किया करने से श्रोषध का बल बड़ता है। रससेवन से विदाह उपस्थित होने पर गात्र पर शीतल जल का सींचना, चन्दनादि लेपन, मन्द-मन्द वायुसेवन, शर्करा मिली हुई ताजी दही सेवन, डाब (नारियल) का, जल पीना, मधुर श्रोर शीतल पानीय श्रोर श्रन्यान्य शीत किया हितकर है।

# रसेन्द्रवेधज स्वर्ण-प्रस्तुतविधि

- (१) गन्धक, हिंडुल, लौहचूर्ण और मनःशिला को ३ दिन अम्ल रस में मर्दन करे। फिर उसे एक सुदृढ़ लोहे की कढ़ाई में डाल कर भून कर चूर्ण करे। फिर वह चूर्ण एक काच की शीशों में भर कर ९ घण्टे बालुकायन्त्र में तीव अप्रिंग से पाक करे। इस अवसर में दूसरी एक मूषा में चांदी गला ले। उसके बाद उक्त बालुकायन्त्र से उत्तप्त अवस्था में (गर्म) वह मिला हुआ द्रव्य थोड़ा सा बाहर निकाल कर गले हुए रौप्य के साथ मिलाओ, तो देखोंगे कि उस मिले हुये द्रव्य के सम परिमित रौप्य स्वर्ण में परिणत हो गया है। इस स्वर्ण का आधा अंश बाजार में विकने वाले विशुद्ध स्वर्ण के तुल्य है।
- (२) ताम्र की हिड्डल के साथ ३ बार जारित कर ३ बार फिर जीवित करे। ऐसा करने से ताम्र विशुद्ध, पीत और लाल वर्ण विशिष्ट होगा। उसके बाद उक्त ताम्र को खपरे के पात्र में त्रिफला के जल में भावना देकर सेंहुड़ के दूध (रस) में मर्दन करे। फिर उस ताम्र को तीव्र अग्नि से मूषा में तपावे तो वह राजमोग्य विशुद्ध स्वर्ण में परिणत होगा।

# विशुद्ध स्वर्ण का वर्ण बढ़ाना

त्तिया /), रसक /), मनःशिला /) भर एकत्र मिलाकर १ तीला निकृष्ट स्वर्ण के साथ गलाने से उसका रंग बढ़ कर विशुद्ध स्वर्ण के से वर्ण का हो जायगा।

# रौप्य प्रस्तुतिविधि

- (१) १२ भाग तीच्ण लोह चूर्ण, ३ भाग बङ्गचूर्ण, ३ भाग सीसकचूर्ण, ३ भाग हरिताल चूर्ण, कांटानट के रस श्रीर सुहागे के चूर्ण के साथ १ दिन श्रान्थमूबा में पाक करे। पाक होने पर वह मिश्रित द्रव्य समपरिमित रौप्य के साथ मिलाने से मिश्रित द्रव्य विशुद्ध रौप्य मे परिणत होगा।
  - (२) ६ पल शोधित चूर्ण किया हुन्ना हरिताल, २ पल भूनाग सत्त्व, १ पल सोहागा, एकत्र कर केले न्नोर जमीकन्द के रस में ३ दिन मर्दन कर एक वोतल में ३ दिन बन्द कर रक्खे, उसके बाद सत्त्वपातन करे। उक्त बन्द किये हुये उस द्रव्य के सत्त्व का १६ गुना तांबा उसके साथ मिलाने से वह विशुद्ध रोप्य मे परिणत होगा।

मिल्लित 'भारतीय रसिवद्या' नामक अन्य में यह विषय विस्तारपूर्वक िखा है।

### रसशाला-निर्माण

महानगरी के वीचो वीच चारों श्रोर श्रहाता ( प्राचीर ) बनवा कर विध्न-नाधारिहत स्थान में रसशाला का निर्माण करना चाहिये। इसमे मनोरम बगीचा सब प्रकार की श्रोपिधयों से भरा श्रोर स्वच्छ कुश्रॉ रहना चाहिये। यहा उपयुक्त समय में शिव-दुर्गों की पूजा होनी चाहिये। श्रहाता ऐसा बनाना चाहिये कि जिससे चोर श्रादि दुष्टजन किसी तरह का श्रिनिष्ट साधन न कर सकें। इस रस-गाला में उपयुक्त संख्या में द्वार श्रोर गवाक्ष रक्खे। ऐसी रसशाला में विश्व चिकित्सक श्रित निर्जन में शान्त मन से रसिकया साधन करे।

रसशाला के पूर्व की छोर गवाक्ष के समीप सूर्य की किरणों द्वारा प्रकाशित म्यान में स्फटिक शिला की तरह समुज्जवल सर्वसुलक्षणयुक्त मृत्तिका की वेदी रचना कर, उस पर रसलिज स्थापन कर रसज्ञ व्यक्ति शास्त्रीय मत से उसका पूजन करें।

रसशाला के श्रिप्तकोण में श्रिप्तकार्य, दक्षिण में पाषाणकार्य, नैर्ऋत्य में शिख्यकार्य, पिंधम में प्रक्षालनकार्य, दायुकोण में शोपणकार्य, उत्तर में वैधकर्म श्रोर ईशानकोण में सिद्ध वस्तुएं स्थापन करे। रसशाला का मध्यभाग रस साधना की वस्तुश्रों से भरपूर रखना चाहिये।

### रसशाला के खपकरण

सत्त्वपातन कोष्टी, सुशोभन भरत्कोष्टी, भूमिकोष्टी, चलत्कोष्टी आदि कोष्टिकायन्त्र, नाना प्रकार की जलदोणी (गमले), दो हापर (आद्वीठी), वांस के वने और लोहे के वने दो नल, स्वर्ण, लौह, कॉसा, ताम्र और पत्थर के कुम्भ, चर्मकारों के अनेक प्रकार के यन्त्रादि पदार्थ, ओखली, पेषणी (शिल-बहा), द्रोणी की तरह खरल, लोहमय खरल (हिसाम दस्ता), तप्त खरल और उसके उपयोगी मईक (मूसलियें), छानने के लिये वारीक चलनी, कषायित चर्मखण्ड, शालाका और मुशल द्रव्य समूह ये रसशाला के उपकरण (सामग्री) हैं।

मूषा ( मिट्टी के सकोरा ), मृत्तिका, तुप, कर्पास, वन उपले ( आरण्य कण्डे ), पिष्टक, धातुमय, मूलमय और जीवमय औषध, शिखित्र ( जलत हुए कोयले ), गोवर, शर्करा और सितोपला ये द्रव्य भी रसशाला में रखने चाहिये। काच, लीह, मृत्तिका एवं कोडी निर्मित वोतल एवं पानपात्र संग्रह करने चाहिये। सूपा आदि वांस के वने द्रव्य, खन्ती, क्षिप्र, शिद्धका ( लोहंदण्ड ), क्षुरप्र ( लोहं का दस्ता ), पाक्य, पालिका, कर्णिका ( कुर्णि ), चाक्, गृहसंमार्जनी ( माड़् ) एवं रसपाक के उपयोगी अन्यान्य द्रव्य भी संग्रह करने चाहिये।

जलते हुए कोयलों को शिखित्र श्रौर कोयलों पर जल डाले विना वुसाया जाय तो उन्हें कोकिल (कोयला) कहते है। सूखे गोवर का नाम पिष्टक है।

### आचार्य लक्षण

रसशास्त्रज्ञ, निघण्ड्ज (आभिधानिक) और सर्वदेश की भाषा जाननेवाले वार्तिक वैद्यजनों को रसपाक के समय साधकों को संग्रह करना आवश्यक है। वे रसपाक की समाप्ति तक नियत समय में अघोर मन्त्र जप करें। रसकार्यः साधन के लिये उद्यमशील, शुनि, शौर्यशाली श्रौर वलिष्ठ परिचारक (सेवक) नियुक्त करना चाहिये। धार्मिक, सत्यवादी, विद्वान, शिव-विष्णु पूजक, दयावान श्रौर पद्म चिह्नवाले वैद्य को रसपाक के लिये नियुक्त करे। जिसके हाथ में पताका, कुम्म, पद्म, मत्स्य श्रौर धनुष का चिह्न श्रीद्वित रहे श्रौर श्रनामिका के श्रधोभाग तक जर्ध्व रेखा श्रिद्धित देखी जाय, उस वैद्य को पीयूषपाणि कहा जाता है। श्रमत हस्त का पीयूषपाणि वैद्य रसकार्य-साधन मे श्रिधक प्रशस्त है। इसका तात्पर्य यह है कि सुलक्षणाकान्त वैद्य को रसिकया साधन मे प्रवृत्त होने से सिद्धि श्रवश्य प्राप्त होती है। श्रौर भाग्यहीन, निर्दय, लुज्ध, गुरुवर्जित श्रौर दम्धहस्त (जिसके हाथ में कृष्णवर्ण रेखायुक्त हो उसे दम्धहस्त कहा जाता है), ऐसा वैद्य रसिक्रया साधन में परित्याज्य है।

भूतिनवारक मन्त्रज्ञ व्यक्तियों को निधिसाधन कार्य में नियुक्त करना चाहिये। वलवान, सत्यवादी, रक्तनेत्र, कृष्णमूर्ति श्रोर भूतों को भयोत्पादक, विद्याशाली व्यक्तियों को बलिसाधन के लिये नियुक्त करे। लोभहीन, सत्यवादी, देवब्राह्मण-पूजक, संयमी श्रोर पथ्यभोक्ता व्यक्तियों को रसायन कार्य में नियुक्त करे। धनवान वदान्य, सर्वउपकरणवान श्रोर गुरुवाक्यरत व्यक्ति साधुसाधन मे प्रशस्त हैं। श्रोर श्रोषध श्राहरण के लिये सब श्रोषधियों का नाम जानने वाला, शुचि, वश्चना-रहित श्रोर नाना विषय श्रोर भाषाज्ञानशाली व्यक्ति ही उपयुक्त होता है।

शुचि, सत्यवादी, त्रास्तिक, बुद्धिमान श्रोर निःसंशय चित्त व्यक्ति की रस-किया सदा ही सुसिद्ध होती है। जो साधक पारद के १० संस्कार सुसिद्ध कर सकते हैं, उन्हीं को रससिद्ध कहते है। रससिद्ध मानव दाता, भोगी, श्रयाचक, जरामुक्त, जगत्पूज्य, दिव्यकान्तिवाला श्रोर नित्य सुखी होता है।

# राजवैच का लक्षण

जो समग्र रसशास्त्र पूर्णरूप से अध्ययन कर पारद के १८ संस्कार, सब रस, उपरस, धातु, उपधातु, रत्न, उपरत्न, विष, उपविष आदि रसचिकित्सा के उपकरणों (सामग्रियों) का शोधन, जारण, मारण, भस्मीकरण, द्रावण और स्वत्व पातनादि कर्म अपने हाथ से सम्पन्न कर, उनके अयोग द्वारा रोगाकान्त जनो के रोगमुक्त करने में समर्थ है, वही यथार्थ राजवैद्य-पदवाच्य है।

### मकरध्वज की पाकविधि

हमने पूर्व मे कहा है कि मकरच्चज आयुर्वेदशास्त्र की. महोषधि है। वर्तमान समय में वज्ञदेश में वज्जभाषा और संस्कृत के वज्ञानुवाद में जो जो आयुर्वेदीय पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं उनमें से किसी में भी असल पाकविधि नहीं लिखी गई है। अधिकांश चिकित्सा-व्यवसायी इच्छा रहने पर भी पाकविधि न जानने के कारण उसका पाक करने में कृतकार्य नहीं होते। मकरप्वजपाक-शिक्षार्थियों की सुविधा के लिये नीचे रसिसन्दूर और मकरप्वज की पाकविधि लिखी गई है।

## रससिन्दूर की पाकविधि

मकरध्वज तैयार करने की वौतल का तलदेश समतल होना आवश्यक है। बाजार में प्रायः जिसको गठीली बोतल कहते हैं, ऐसी बोतल ही मकर्ध्वज के पाक में प्रशस्त है। श्रानेक वीतलों का तलदेश समान न होने से वे कुटज भाव से उठे रहते हैं। ऐसी वोतल में रसिसन्दूर पाक करना उचित नहीं है। जिस बोतल का गलदेश तिर्थनभाव से उठकर मुख नल के साथ मिलता हो ऐसी बोतल मकर-ध्वजपाक के उपयोगी नहीं है। एवं जिस वोतल का गलदेश सरल रेखा क्रम से टठ कर मुख नल के साथ मिला हो ऐसी बोतल मकरध्वजपाक के लिये उपयोगी है। मतलव यह है कि बोतल मजबूत होनी चाहिये। फिर उस बोतल पर मिट्टी वा प्रलेप देना चाहिये, मिट्टी श्रच्छी तरह चिकनी हो। उसमें थोढ़ा सा तुष श्रीर पाट ( सन ) वारीक मिलाकर श्रच्छी तरह मर्दित करना चाहिये। बोतल के तले पर सामान्य प्रलेप देकर उसके सर्वोद्ग पर दो श्रद्धल मोटा प्रलेप देवे श्रीर प्रलेप के ऊपर सूच्म कपड़ा लपेट कर उसके ऊपर फिर अलेप देवे। बोतल के गले पर श्रीर गलदेश के सन्धिस्थल (जोड़) पर भरपूर लेप देवे। प्रलेप देना समाप्त होने पर अलेप को धूप में सुखा छैं। उस समय यदि अलेप फट जाय तो फिर थोड़ी सी मिट्टी लगाकर उस सन्धि को भर देवें। पारद श्रीर गन्धक की सुसिद्ध कजाली, इस मृत्तिका लिप्त बोतल में रक्खें। इसके बाद एक खड़िया द्वारा डाट वनाकर उसके मुख पर लगा देवें; डाट ऐसी बनानी चाहिये जिससे वोतल के मुख में सन्धिन रहे। उसके बाद ऐसी एक हांडी लेवे जिसमें बोतल रखने से

वोतल के चारों श्रोर कम से कम चार श्रङ्कल जगह खाली वनी रहे। इसके वाद उस हांडी के तले वीचो वीच एक ऐसा गोलाकार छिद्र किया जाय जिसमें क्रितिष्ठा श्रिड्डली प्रवेश कर सके। वह कीचड़िलप्त वोतल छिद्र के ऊपर वैठाकर हाडी को खूव सूखी बालू से अर देवे। इस यन्त्र का नाम वालुकायन्त्र है। उसके वाद यह वालुकायन्त्र चूल्हे पर स्थापन कर काष्ठ की धीमी श्रप्ति से पाक करे, एवं कजली द्रवीभूत होने पर ज्वाला की मात्रा भी वढ़ा देवे ( अप्ति कुछ तेज कर देवे )। डाट खोलकर देख ले कि कजाली द्रवीभूत हुई या नहीं। कज्जली ऊपर को उठती हो तो एक लोहे की शलाका अनि से तपा कर उसके द्वारा उक्त वोतल के गलदेश में सिचित द्रवीभूत त्रंश हिला चलाकर डाट मजवूती से लगा कर वन्द कर दे। इस तरह पाक करते करते जब देखे कि वोतल का तलदेश प्रभात के सूर्य की तरह दीप्तिमान हो गया, तब एक स्वच्छ शीतल लोहे की शलाका वोतल के तले तक डाल कर कुछ देर तक रख कर उठा कर देखे कि उसके सिरे पर स्याही लगी है या नहीं यदि शलाका के सिरे पर स्याही लगी रहे तो और भी थोड़ी देर तक अग्नि जलाता रहे। इस समय ज्वाला कुछ मन्द होनी चाहिये। उसके वाद फिर उक्त शीतल शलाका को वोतल के भीतर प्रवेश कर उठाकर देखे कि उसके सिरे पर राख लगी है या नही। उस राख का रङ्ग यदि श्वेत हो तो फिर श्रिगिन न लगाये। इसके बाद यन्त्र को उतार कर जव तक शीतल न हो जाय तब तक नीचे रक्खा रहने दे। पात्र शीतल होने पर वोतल वाहर निकाल कर तोड़ दे श्रौर उसके ऊपर लगा हुआ वालार्क ( प्रातःकालीन सूर्य ) सदृश रसिसन्दूर ग्रहण करे। साधारणतः १२ घण्टे ज्वाला देने से रससिन्द्र तैयार होता है।

### सकरध्वज-पाकविधि

मकरघ्वज-पाकविधि रसिसन्दूर की ही तरह है। किन्तु रसिसन्दूर की अपेक्षा मकरघ्वज-पाक में अधिक समय लगता है, इसे पाक करने में कम से कम रे दिन आवरयक हैं। इसका पाक पहले मृदु अग्नि से आरम्भ करते हैं फिर कम से ज्वाला बढ़ाते जाते हैं। पाक की समाप्ति अवस्था में ताप फिर मृदु (कम) कर देते हैं।

### मकरध्वज की कउजली

त्रासनशक्तिवाला पारा, स्वर्ण की निरुत्य सस्म श्रीर शोधित गन्धक एकत्र पत्थर के खरल में डाल खरल कर काजल सदृश चिकना कर उसके साथ घृतकुमारी का रस मिला कर फिर मर्दन करे उसके वाद खुखा कर बोतल में भर ले।

स्वर्णभस्म के वदले में विशुद्ध स्वर्ण के श्राति सूच्म पत्र भी कज्जली तैयार करने में व्यवहार किये जा सकते हैं।

## स्वर्णादि सस्स

स्वर्ण, लौह, रोप्य, सीसक, दस्ता, वङ्ग, पीतल और कांसे की भस्म तैयार करने के लिये उन्हें पूर्वोक्त प्रक्रिया से विशुद्ध करे। उसके वाद खरल में मर्दन कर उसका चूर्ण तैयार करे। इस प्रक्रिया द्वारा धातुओं का खूब चूर्ण हो जाता है। उक्त चूर्ण को १ दिन त्रिफला के काथ में भावना देकर सुखा ले। उसके वाद रवर्णभस्म की चौथी विधि के अनुसार उनकी भस्म तैयार कर १ बार गजपुट में पाक करने से ही उनका अति विशुद्ध निरुत्थ भस्म तैयार होता है।

इति रसचिकित्सा का प्रथम खण्ड समाप्त।

# द्वितीयः खण्ड

~0000000~

#### प्रथम अध्याय

मै शिवजी के पाद-पद्म में भक्तिपूर्वक प्रणिपात कर रस-चिकित्सा नामक ग्रन्थ का द्वितीयखण्ड (चिकित्सा खण्ड) प्रणयन करता हूँ। इसके पढ़ने से रसचिकित्सा सम्बन्ध मे सम्यक् ज्ञान उत्पन्न होगा।

#### ज्वर-चिकित्सा

नवज्वर—नव ज्वर में साधारणतः प्रथम सप्ताह मे पाचन प्रयोग निषिद्ध है। केवल दोषसंशोधक, आमरस-पाचक और कोष्ठशोधकविका सेवन करने के लिये देना चाहिये। रस-चिकित्सा मे दोष की सामता, निरामता, रोग, व्यक्ति, देश, काल किसी का भी विचार आवश्यक नहीं है। अतएव ज्वर ज्ञात होते ही विवेचनापूर्वक रसौषधि का प्रयोग करे।

नवज्वर में वर्जनीय—नवज्वर में रोगी स्नान, तैलादि मर्दन, स्नेहपान, वमन-विरेचनादि क्रिया, दिवानिद्रा, मैथुन, शीतल जलपान, क्रोध, प्रबल वायु, श्रजादि गुरु द्रव्य भोजन, एवं कषाय रस सेवन न करे।

नवज्वर में पथ्य—नवज्वर की प्रथम श्रवस्था में रोगी, निर्वात गृह में रहे, वायु की श्रावश्यकता होने पर पहुं से हवा करे; उसके द्वारा तृष्णा, पसीना, मूच्छा श्रीर श्रमनाश होता है। तालपत्र के पह्हें की हवा त्रिदोषनाशक है। वांस के वने हुए पंखे की वायु गर्म श्रीर रक्तिपत्त-प्रवर्त्तक है, चॅवर, मयूर पुच्छ, वस्त्र श्रीर वेत के वने हुए पहुं की वायु दोषनाशक, हिनग्ध श्रीर हवा है।

नव-ज्वरी गर्म श्रौर मोटा वस्त्र श्रोढ़ कर लेटा रहे। प्यास लगने पर साधारणतः गरम जल पीने। नात ज्वर, कफ ज्वर, ना नात श्रौर कफ दोनों से उत्पन्न ज्वर में गरम जल पीना चाहिये। मद्यपान से ना पित्त से उत्पन्न ज्वर में गर्म जल ठंडा करके पीने। गरम श्रौर गरम करके शीतल किया हुश्रा जल ये

श्रीन के उद्दीपक, रसके पाचनकर्ता, ज्वरनाशक, स्रोतों के विशेष शोधन करने वाले, वलकारक, रुचिप्रद, पसीना लाने वाले श्रीर मङ्खलदायक हैं। नव ज्वर में पहले उपवास करे किन्तु धातुक्षय-जनित श्रथवा राजयद्मा से उत्पन्न ज्वर, वातज्वर, भयज्वर, क्रोधज्वर, कामज्वर, शोकज्वर श्रीर श्रमज्वर में उपवास नहीं करना चाहिये। वायुप्रधान-धातु, क्षुधातुर, तृष्णार्त, मुखशोष युक्त, श्रमयुक्त, शिशु, वृद्ध, गर्भिणी स्त्री श्रीर दुर्वल मनुष्यों को उपवास वर्जित है। जिससे रोगी का वल न घटे इस विषय में विचार रख कर उपवास करावे। क्योंकि वल ही श्रारोग्य का मूल कारण है। नव ज्वर मे दोष श्रीर श्रान्न यथास्थान में श्रीर यथापरिमाण में नहीं रहते, श्रतएव उस श्रवस्था में उपवास कराने से दोप का परिपाक, ज्वर का हास, श्रान्न की दीप्ति, श्राहार की श्राकांक्षा, रुचि श्रीर शरीर की लघुता सम्पादित होती है। नव ज्वर मे वमन निषद्ध है किन्तु तुरन्त किये हुए मोजन के वाद श्रीर श्रत्यन्त तृप्तिजनक हिनग्ध भोजनादि के वाद ज्वर होने से रोगी यदि वमन योग्य (गर्भिण्यादि से भिन्न) हो तो वमन कराना कर्त्तव्य है।

### बातज्बर-चिकित्सा

हुआ पारा, गन्थक, हिंडुल और समुद्रफेन समभाग में लेकर एक प्रहर तक आदी के रस में घोंटकर दो रत्ती के प्रमाण गोलियां वनावे। यह गोली अदरक के रस और भधु के साथ प्रातः, मध्याह और सन्ध्या में सेवन करने से ३ दिन में वातज और अन्यान्य नव ज्वर निश्चय दूर होते हैं।

ज्वरगजहरिरस—हिड्डल, अअ, पारद और गन्धक अत्येक समभाग, ये सब एकत्र एक प्रहर तक घोंटकर चूर्ण कर रख देवे। यह चूर्ण दो रत्ती प्रमाण अदरक के रस और मधु के साथ २ वार सेवन करने से एक दिन में ही ज्वर वन्द हो जाता है। इस औषध सेवन के वाद यदि दाह हो तो दूध वा चीनी का शर्वत पान करें।

### पित्तज्वर-चिकित्सा

नचु चरेभाङ्करा सोहागा, पारा, गन्धक और हरिताल समभाग में लोकर मर्दन करे, फिर रोहू मछली के पित्त में दो दिन भावना देकर दो रत्ती

प्रमाण गोली बनावे। इस गोली के सेवन से थोड़ी देर में पसीना श्राकर नवज्वर शान्त होता है। जो ज्वर शान्त न होता हो, वह भी इस वटी के सेवन से निश्चय ही दूर होता है। ज्वर छूट जाने के बाद, दाह, सिर चकराना श्रादि उपसर्ग उपस्थित हो तो थोड़ी सी छाछ चीनी मिलाकर सेवन करे। यह श्रोषध प्रत्यक्ष फलप्रद है।

त्रिपुरारि रस्न—हिंडुलु से निकाला हुआ पारा, गन्धक, ताम, लौह, श्रश्र श्रीर विष प्रत्येक समान भाग लेकर उसमें पारे से श्राधा रौप्य मिलाने, फिर श्रादी के रस में उत्तम रूप से मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण गोली वनाने। चीनी मधु श्रथना श्रादी के रस के साथ यह श्रीषध सेनन करने से सव तरह का जनर निनष्ट होता है, यह परीक्षित है।

#### कफडवर-चिकित्सः

स्वच्छुन्द्भेरव — ताम्र भस्म श्रीर मीठा विष समभाग में लेकर धतूरे के पत्तों के रस में सौ बार भावना देकर १ रत्ती प्रमाण गोली वनावे। यह श्रादी के रस, चीनी श्रीर सेघा नमक के साथ सेवन करने से कफज्वर श्रीर श्रन्थान्य सब प्रकार के ज्वर निवारित होते हैं। श्रीषध तैयार करते समय सौ बार से कम भावना होने पर भी श्रीषध कार्यकर होगी। इस श्रीषध के सेवन से ज्वर छूटने पर रोगी यदि श्रस्वस्थता, वेचैनी श्रीर चन्नलता प्रकाश करे तो मट्ठा (छाछ) दाख श्रीर चीनी श्रादि पथ्य देवे।

पर्पटी रस-शोधित पारा १ भाग, गन्धक २ भाग एकत्र कज्जली कर भीमराज ( भांगरा ) अथवा आदी के रस में मर्दन करे, फिर मिलित पारे और गन्धक के चौथाई परिमाण जारित ताम्र और लोह भस्म लेकर उक्त कज्जली सिहत एकत्र लोहपात्र में पाक करे और लोहे के दण्ड से बार बार चलाता जाय। जब गल कर अच्छी तरह मिल जाय तब गोंबर के ऊपर केले का पत्ता विछा कर उसके ऊपर उसे ढाल दे और दूसरा पत्ता लेकर उसमें गोंबर की पोटली बनाकर उससे दाव कर रख दे और विधिवत पर्पटी तैयार करे। फिर उस पर्पटी को खरल में चूणित कर निर्गुण्डी के पत्तों के रस में एक दिन भावना दे। अनन्तर जयन्ती, त्रिफला, धृतकुमारी, भारंगी, अङ्गसा, त्रिकटु, मृज्ञराज, चीते की जड़ और मुण्डी के यथासम्भव रस वा काथ में ७ दिन भावना देकर कोयलों पर

सुखालें। इसे दो रत्ती प्रमाण सेवन करने से श्लैष्मिक (कफ) ज्वर समूल नप्ट होता है। अनुपान-हरीतकी, सोंठ श्रीर गिलोय का काथ श्रथवा पीपल का चूर्ण श्रीर मधु।

### वात-पित्तज्वर-चिकित्सा

नवज्वरमुरारि—पारा, गन्धक और मनःशिला तीनों समान भाग लेकर कांकरोल के पत्ते के रस के साथ मर्दन कर सुखाले। यह श्रोषध दो रत्तो मात्रा में चीनी के साथ सेवन कर चीनी मिले हुए कांटानट का रस श्रनुपान करे। इसके द्वारा-वात पित्तज नवज्वर शीघ्र नष्ट होता है।

वातिपत्तान्तक रस—शोधित पारा, गन्धक, अअ, मोथा, ताम, लोह, सोनामाखी और हरिताल, इन सबको समभाग में एकत्र मर्दन करे एवं मुलहठी, मुनक्का, गिलोय, आमला, सतावर और विदारीकन्द इनके प्रत्येक के यधासमय रस वा काथ में एक दिन भावना देकर उर्द बराबर गोली बनावे। अनुपान-चीनी और मधु। इससे वातपैत्तिकज्वर, क्षय, दाह, तृष्णा, अम और शोथ शान्त होता है। इस औषध के सेवन के बाद शर्करा मिला दूध अथवा मुलहठी के काथ में चीनी डालकर पान करें।

#### वात-कफज्वर-चिकित्सा

महाज्वराङ्करा—शोधित पारा १ भाग, मीठा विष १ भाग, गन्धक १ भाग, धतूरे का वीज ३ भाग, त्रिकट ४ भाग, ये सब एकत्र मिलाकर आदी के अथवा जम्हीरी के रस में मर्दन कर दो रत्ती प्रमाण गोली बनावे। अनुपान—आदी का रस वा जम्हीरी का रस। इस औषध के सेवन से २-३ दिन में बातकफ ज्वर निवृत्त होता है।

कस्तूरीभैरव—हिड्डल, विष, सुहागे का फूला, जयन्ती, जायफल, मरिच, पीपल श्रीर कस्तूरी प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर जल के साथ मर्दन कर दो रत्ती प्रमाण गोली बनावे। यह वातश्लेष्मजज्वर—नाशक है।

### पित्तरलेष्मज्वर-चिकित्सा

चन्द्रशेखर रस-पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, सोहागे का फूला २ भाग, मिरच २ भाग ख्रोर सब के समान चीनी ख्रथवा मैनशिल एकत्र मिलावे। रोहू मछली के पित्त में तीन दिन भावना देकर मर्दन कर दो रत्ती प्रमाण गोली

वनावे। श्रनुपान-श्रादी का रस। श्रोषध सेवन के बाद शीतल जल पान करावे। यह वटिका ३ दिन में श्रतिकठिन पित्तकफज्वर निवारण करे।

रत्निगिर रस—पारा १ भाग, गन्धक १ भाग, छात्र १ भाग, स्वर्ण १ भाग, लौह है भाग, वैक्रान्त चौथाई है भाग, इन द्रव्यों को भागरे के रस में घोटकर पर्पटी की तरह पाक करे, फिर पर्पटी का चूर्णकर उस में कम से सहजना, छाह्सा, सम्हालू, वच, चीते की जड़, भांगरा, भूकदम्ब (गोरखमुण्डी), कटेरी, गिलोय, जयन्ती, छागस्त्य, ब्राह्मी, चिरायता छौर धृतकुमारी इन द्रव्यों के रस वा काथ की ३ बार भावना दे। फिर मूषा में बन्द कर वालुकायन्त्र में लघुपुट से उसे पकावे। यह औषध २ रत्तो मात्रा में मधु छौर पोपल चूर्ण एवं धनिये के काथ आदि श्रनुपान के साथ प्रयोग करने से पित्तरलेध्मज्वर निवृत्त करती है।

(mocate)

# द्वितीय अध्याय सन्निपातज्वर-चिकित्सा

सव प्रकार के ज्वर की चिकित्सा श्रों में सिंद्रापातज्वर की चिकित्सा श्रायन्त कित है। इस रोग की चिकित्सा करते समय चिकित्सक कभी शीघ्रता श्रोर व्याकुलता प्रगट न करे। रोग की प्रबलता श्रोर उपद्रव की श्रिधिकता देखकर श्रायन्त उप्रवीर्य वा विषाक्त श्रोषिध्यां सब से पहले प्रयोग करना उचित नही। प्रथमतः जिससे श्राम श्रोर कफ का परिपाक हो उस पर सब से पहले चिकित्सक को लच्य रखना चाहिये। इसके लिये दोष-परिपाचक रसौषध श्रोर लड्डन की व्यवस्था करे। श्राम श्रोर कफ की शान्ति होने पर वायु श्रोर पित्त की शान्ति की चेष्टा करे, जब तक दोष रोगी के शारीर में प्रबल भाव से मौजूद रहेंगे, तब तक रोगी उपवान सहन कर सकेगा, दोष के क्षय होने पर रोगी फिर उपवास सहन नहीं कर सकेगा।

पूर्व में कहा है कि सन्निपातज्वर में साधारणतः उपद्रवों की प्रवलता हुन्ना करती है, त्र्यतुएव चिकित्सक प्रथम मूलरोग त्र्यर्थात् त्रिदोष का नाशक विशेष भाव से त्र्याम त्रीर कफनाशक दो-एक त्र्योषध प्रयोग करके जिस तरह उपद्रव का नाश हो उपर लच्य रक्खें। उपद्रव घट जाने से क्रमशः मूलरोग की भी शान्ति होगी। तिनेत्ररस—शोधित पारद, गन्धक और ताम्रपत्र ये तीन द्रव्य समभाग लेकर उन तीनों के तुल्य परिमाण गोदुग्ध में उन्हें तेज धूप में मर्दन करे। फिर निर्मुण्डो श्रोर सहजना के रस मे एक दिन घोटे। इसके बाद उसे गोलाकार श्रोर मृपागत कर वालुकायन्त्र में ३ प्रहर तक पकावे, पकाने के बाद खरल में चूर्ण करे किर उसका ८ वा श्रंश है मीठा विप डालकर उसके साथ मर्दन करे। पछकोल कपाय वा वकरी के दूध के साथ यह रस दो रत्ती परिमाण सेव्य है। त्रिनेत्ररस सेवन से सिन्नपातज्वर निश्चय ही शीध नष्ट होता है।

चृहत् करत्रीभैरवरस—वङ्ग, खर्पर, स्वर्ण, कस्त्री श्रौर रौप्य प्रत्येक र तोला, लोह '८ तोला, सोनामाखी, लवङ्ग, जायफल प्रत्येक ४ तोला। ये द्रव्य एकत्र कर द्रोणपुष्पी (गूमा) के रस श्रौर पान के रस मे ७-७ दिन भावना दे। फिर उसके साथ कपूर श्रौर त्रिकटुचूर्ण ४-४ तोले मिला कर एक रत्ती प्रमाण गोलियां तैयार करे। यह वातोल्वण सन्निपातज्वर की उत्कृष्ट श्रौषध है।

सित्रपातसूर्यरस—सित्रपातज्वर में रोगो को तन्द्रा, प्रलाप, संज्ञा-हीनता, छाती श्रोर पसली में दर्द श्रोर मत्तता इत्यादि उपद्रव रहने पर यह श्रोषध सेवन करावे। पारद १ तोला श्रोर गन्धक ३ तोला एकत्र कर कज्जली करे, श्रमन्तर लाल चीते के रस, श्रादी के रस श्रोर निर्मुण्डी के रस में ७-७ वार यथाक्रम से भावना दे। भावना समाप्त होने पर उसके साथ विष ८ तोला, हिंडुल ६ तोला श्रोर रससिन्द्र ८ तोला मिलावे, समस्त श्रोषध एकत्र मर्दन कर रोहू मछली के पित्त में फिर एक वार भावना दे। १ रत्ती की वटी बनावे।

चतुर्भुजरस—स्वर्णसिन्दूर २ तोला, स्वर्ण १ तोला, कस्तूरी १ तोला श्रोर हिरताल १ तोला एकत्र कर घृतकुमारी के रस में मिद्दित करे। २ रत्ती की वटी वनावे। यह श्रोपध एरण्ड के पत्ते में लपेटकर धान्य की राशि में ३ दिन रखते हैं, सिन्निपातज्वर में रोगी की मूर्च्छा, गात्रकम्प, सारे शरीर में वेदना, शैत्यवोध, प्रलाप श्रादि श्रनेक वायु विकारों में यह विशेष उपयोगी है। श्रनुपान—ताड़ की शाखा का रस श्रोर मधु।

महालद्दमीचिलास— अभ्र ८ तोला, रस २ तोला, गन्धक २ तोला, वङ्ग २ तोला, रीप्य १ तोला, हरिताल १ तोला, ताम्र आधा तोला, कपूर २ तोला, जातोफल २ तोला, जैत्री २ तोला, बीजताडक बीज २ तोला, धतूरे के बीज २ तोला, रवर्ण १ तोला ये सब द्रव्य एकत्र कर पान के रस में मर्दन करे। वटी की मात्रा २ रती; अनुपान—आदी का रस वा पान का रस और मधु। श्लेष्मोत्वण सन्निपात ज्वर में यह औषध विशेष उपयोगी है।

चृहत् स्चिकासरण रस्न स्स, गन्धक, सीसा, श्रश्न, विष श्रीर काले सर्प का विष, इनमें से प्रत्येक समभाव से लेकर जल में मर्दन करे, श्रनन्तर रोहू मछली का पित्त, बराह का पित्त, महिषपित्त, वकरी का पित्त श्रीर मयूरपित्त, इन सबों के द्वारा पृथक् पृथक् ७ वार भावना देवे । वटी-सरसो प्रमाण । श्रनुपान डाब का जल वा ताड़ की शाखा का रस । सन्निपात ज्वर की श्रन्तिम श्रवस्था गे रोगी की संज्ञा श्रोर नाड़ी लोप होने पर एवं श्रन्य किसी श्रोषध का फल न होने पर इस श्रोषध का प्रयोग करे । यदि एक वटी का श्रसर न हो तो जब तक नासा-रन्ध्र की बायु गरम गरम प्रवाहित श्रोर नाड़ी उष्ण न हो तव तक श्राध श्राध घण्टे के श्रन्तर से एक वटी सेवन करावे । श्रोषध की किया का प्रकाश ( श्रसर ) होते ही तुरन्त रोगी के माथे पर तिल का तेल सर्दन करे श्रोर प्रचुर शीतल जल की धारा देवे । नहीं तो रोगी का जीवन संशय युक्त हो सकता है । शिशु, वृद्ध श्रीर गर्भिणी को यह श्रोषध नहीं देना चाहिये ।

-----

### तृतीच अध्याय

# विषमज्बर-चिकित्सा

सभी प्रकार के निषमज्वर सान्निपातिक हैं श्रत एव इन में जो दोष प्रवल हो, उस दोष की ही चिकित्सा करनी चाहिये।

त्रिपुरारि रस—हिंडुल से निकाला हुआ पारा, गन्धक, ताम, लौह, अभ श्रीर विष अत्येक सम परिमाण में लेकर उस मे पारे का आधा भाग रौप्य मिलाकर श्रादी के रस में मर्दन कर २ रत्ती मात्रा में विटका बनावे। अनुपान—चीनी मधु वा श्रादी का रस। इसके द्वारा ८ प्रकार का ज्वर, प्लीहा, उद्र, शोध श्रीर श्रातीसार शान्त होता है। यह श्रीषध प्रत्यक्ष फलदायक है।

ज्वराशितलौह—पारद १ तोला, गन्धक १ तोला, सैन्धव १ तोला, विष १ तोला, ताम्र १ तोला, लौह ५ तोला और अभ्र ५ तोला। ये समस्त द्रव्य एकत्र कर लोहपात्र में स्थापन कर निर्जुण्डी के पत्तों के रस के साथ लोहदण्ड से मर्टन करे फिर मरिच का चूर्ण १ तोला इस के साथ मिला कर १ रत्ती प्रमाण विटका दनावे। यह वटी उपयुक्त अनुपान के साथ सेवन करने से सब प्रकार का विपमज्बर, यकृत और प्लीहा वृद्धि शान्त होती है।

पुटपाक-चिपमज्वरान्तक-लोह—हिंद्युल से निकाला हुआ पारा और रोधित गन्धक सम भाग में लेकर कजाली करे, फिर उसके द्वारा पर्पटी पाक करे, फिर वह पर्पटी र तोला, रवर्ण ३ माशे, लोह २ तोला, अअ २ तोला, ताम्र २ तोला, वज ६ माशे, प्रवाल ६ माशे, गेरू ६ माशे, मुक्ता ३ माशे, राङ्वभरम ३ माशे, सीप की भरम ३ माशे, ये सव एकत्र कर जल में मर्दन कर २ सीपियों में वन्द कर मिटी से लेप करे फिर मृदु पुट से पाक करे। जव गन्धक की गन्ध न आवे, तब पाक पूर्ण हुआ समम ले। वातिपत्त वा पित्तकफ प्रधान विपमज्वर में यह औषध सेवन करावे। ज्वर में उदरामय, प्रहणी, शोथ प्लीहा और यहत की वृद्धि आदि में यह अत्यन्त उपकारी है। सतत, सन्तत, तृतीयक, चातुर्यक ज्वर अल्पकाल स्थायी होते हैं, अतः इनके लिये यह औपध सेव्य है। अनुपान—उदरामय हो तो जीरा चूर्ण और मधु एवं प्लीहा वढ़ने पर पीपल, हीग और सेंधानमक।

विषमज्वरान्तक लौह—पारा २ तोला, गन्धक २ तोला, ताम १ तोला, सोनामाखी १ तोला, लोह ३ तोला एकत्र मर्दन कर, जयन्तीपत्र, तालमखाना का क्वाथ, श्राह्से के पत्ते, श्रादी श्रोर पान के रस में क्रम से ५-५ भावना देकर २ रत्ती मात्रा में बटी तैयार करे। श्रोर द्वितीयक, तृतीयक श्रोर चातुर्थक व्वर में वात-पित्त वा पित्त-कफ प्रवल रहने पर निराम श्रवस्था में यह श्रोषध प्रयोग करे। प्लीहा श्रोर यक्रत वढ़ने श्रोर सूखी खांसी होने में यह श्रोषध उपकारी है। श्रानुपान—पीपल का चूर्ण श्रोर मधु।

मृहत् सर्वज्वरहर लौह—पारद, गन्धक, ताम्र, श्रभ्र, सोनामाखी, स्वर्ण, रोप्य श्रोर हरिताल ये द्रव्य प्रत्येक २-२ तोला, एवं लौह ८ तोला ये सव एकत्र मर्दन कर करेला के पत्तो के रस, दशमूल के क्वाथ, पितपापड़े के रस, त्रिफला के काथ, गिलोय के रस, पान के रस, मकोय के रस, निर्मुण्डी के रस, पुनर्नवा के रस श्रोर श्रादी के रस इन द्रव्यों में यथाक्रम से

७-७ भावना दें। १ वटी २ रत्ती प्रमाण। वायु श्रौर पित्त प्रधान, सतत, द्वितीयक, तृतीयक श्रौर चातुर्थक ज्वर वा मलेरिया ज्वर में निराम श्रवस्था में यह श्रौषध सेव्य है। पुरानी प्लीहा, यकृत, शोथ, उदरामय, उत्कासी वर्तमान रहने से यह श्रौषध विशेष फलप्रद है। श्रतुपान-पितपापड़े का रस श्रौर मधु वा निर्गुण्डी के पत्तो का रस श्रौर मधु, प्लोहा वा यकृत संयुक्त ज्वर में पीपल चूर्ण श्रौर मधु, उदरामय युक्त ज्वर में काले जीरे का चूर्ण श्रौर मधु।

मृहत् विषमज्वरान्तक रस—पारा, गन्धक, रसिसन्दूर, स्वर्ण, रौप्य लौह, श्रम, ताम, हरिताल, वङ्ग, मुक्ता, प्रवाल और सोनामाखी ये सब द्रव्य सम भाग मे लेकर मर्दन करे। फिर सम्हालू के पत्तो का रस, पान का रस, मकोय का रस, पित्तपापड़े का रस, पुनर्नवा का रस, पान का रस, गिलोय का रस, श्राहसे के पत्तो का रस, भांगरे का रस और काला भांगरे के रस में यथाक्रम से ३-३ वार भावना देकर २ रत्ती प्रमाण वटी बनावें। सतत, तृतीयक, चातुर्थक एवं चातुर्थक विपर्यय श्रादि ज्वर में श्रामरस की परिपाक श्रवस्था में वा किश्चित श्राम रस वर्तमान रहने पर यह श्रीषध सेव्य है। श्रनुपान—पीपल का चूर्ण श्रीर मधु।

सहाज्वराङ्करा—पारा, गन्धक, ताम्र, हिज्जल, हरिताल, बङ्ग, लौह, सोना-माखी, खर्पर, मैनशिल, श्रम्र, गेरू, सोहागे की खील श्रोर दन्ती के बीज ये सब इन्य सम भाग लेकर मर्दन करे। फिर नीबू के रस, भङ्ग के पत्तो का काथ, तुलसी के पत्तो के रस, कच्ची इमली के रस, इन प्रत्येक के द्वारा ३–३ बार भावना देकर २ रत्ती प्रमाण वटी वनावे। इसके सेवन से श्रन्थेबुष्क, तृतीयक, तृतीयक-विपर्यय, चातुर्थक ज्वर एवं मलेरिया ज्वर में, श्राम रस की बिलकुल परिपाक श्रवस्था में उक्त श्रोपध सेन्य है। प्लीहा श्रोर यकृत की वृद्धि श्रोर शारीर की कृशता दीखने पर यह श्रोपध श्रतीव फलप्रद है। श्रनुपान—स्याह जीरे का चूर्ण श्रोर मधु श्रयवा पीपल चूर्ण श्रोर मधु।

श्रीजयमङ्गल रस—हिङ्जलु से निकला हुआ पारा, गन्धक आंवलासार, नोहागा भुना हुआ, ताम्र, वङ्ग, स्वर्णमाक्षिक, सेंधानमक, मरिच, लौह और रौप्य प्रत्येक वा एक-एक भाग और स्वर्ण २ भाग एकत्र मर्दन करे; इस के वाद धतूरे ने पनों का रम, निर्मुण्टों के पत्तों का रस, दशमूल का काथ और चिरायते का

काय इन प्रत्येक के द्वारा ३-३ वार भावना देकर ३ रत्ती प्रमाण वटी वनावे। सतत, श्रान्येचुष्क, तृतीयक, चातुर्थिक, एवं रक्तगत, मेदोगत श्रादि धातुगत ज्वर में निराम श्रवस्था में यह श्रीषध सेव्य है। मलेरिया ज्वर श्रोर साथ ही प्रमेह दोष रहने पर यह श्रीषध श्रातशय उपकारी है। श्रानुपान—जीरे का चूर्ण श्रीर मधु।

जबरभेरव—स्वर्ण, ताम्र, रोप्य, सीसक, पारा, गन्धक, सोनामाखी, सादा दारमुज और मनःशिल, ये द्रव्य सम परिमाण में लेकर आमहल (खद्यशाक विशेष) शाक के रस में मर्दन करे, फिर मूण में स्थापन कर, लघुपुट में पाक करे। वटी २ रत्ती प्रमाण। अन्येद्युष्क अन्येद्युष्क-विपर्यय, तृतीयक, तृतीयक-विपर्यय और चातुर्थक-विपर्यय उवर में और मलेरिया में ज्वर वेग तीव्र होने पर यह श्रीषध सेवनीय है। अनुपान—मधु; प्लीहा और यकृतः विद्यमान रहने पर पिप्पल चूर्ण और मधु।

# चतुर्थ अध्याय

### रसद्वारा ज्वर चिकित्सा के विशेष सङ्केत

वातज्वर में—पारद, गन्धक और मीठा विष विशेष फलप्रद है। कोई औषध तैयार न हो तो केवल इन २ द्रव्यों को एकत्र कर उपयुक्त मात्रा में उपयुक्त श्रनुपान योग से प्रयोग करने पर वातज्वर श्रारोग्य होता है।

पित्तज्वर में — हिड्डल सर्वश्रेष्ठ श्रोषध है। परन्तु श्रित शिशु, श्रित रुद्ध श्रोर पूर्णगर्भा स्त्री को हिड्डल देना श्रनुचित है। पित्तनाशक श्रनुपान के साथ केवल शोधित हिड्डल प्रयोग करने से पित्तज्वर श्रोर सव प्रकार की पित्तज व्याधि नष्ट होती हैं।

श्लेष्मज्वर में पारद, गन्धक, स्वर्ण और ताम उत्कृष्ट औपध है। कजाली संयोग से स्वर्ण और ताम भस्म श्लेष्मानाशक है, अनुपान योग से प्रयोग करने पर सब प्रकार के श्लेष्मज रोग नष्ट हो जाते हैं।

**ञ्चातिपत्तिज्वर** नें—हिड्डल, गन्धक, मीठा विष श्रौर पारा उत्कृष्ट श्रोषध है।

पित्तकफज्वर में हिरताल श्रीर ताम्र महौषध है। केवल हिरताल भस्म श्रनुपान के साथ प्रयोग करने से दुःसाध्य पित्तश्लेष्मज्वर शीघ्र नष्ट होते है। वातश्लेष्मज्वर सें—पारा, गन्धक, ताम्र, कस्तूरी श्रोर स्वर्ण सहौषध है। सिश्चातज्वर सें—स्वर्णभत्म, हरितालभस्म, कस्तूरी, दारमुज, मीठा विष श्रोर ताम्रभरम उपयुक्त श्रतुपान से प्रयोग करने पर विशेष उपकारक होता है।

विषय उच्चर सें — सेंको विष, तृतिया की भरम, ताम्रभरम, हरिताल भरम, होहभरम, सीसक भरम उपयुक्त अनुपान योग से उत्कृष्ट औषध है।

जीर्णज्वर नें—लौह, ताम्र श्रौर हरिताल भर्म का उपयुक्त श्रनुपान के साथ सेवन से विशेष उपकार होता है।

त्यज्ञ उवर में — स्वर्णभस्म, अभ्रमस्म, लौहभस्म, हरितालभस्म, कौड़ी भस्न, शङ्गभस्म, मुक्ताभस्म और प्रवालभस्म, उपयुक्त श्रनुपान से व्यवहार करे।

सेहजडवर में —वङ्गभस्म, दस्ताभस्म, सीसकभस्म, ताम्रभस्म श्रीर स्वर्ण भस्म प्रयोग करे।

प्लीहा घ्रौर यक्कत् संयुक्त ज्वर सें—लीहमस्म, ताम्रमस्म श्रौर हरितालमस्म श्रौर सेको विपमस्म का व्यवहार करे।

शोधज्वर सें—पारद श्रोर गन्धक का प्रयोग करे। पर्पटीरूप मे व्यवहार करने से श्रव्यर्थ फलप्रद है।

जब सव प्रकार के शास्त्रीय श्रीषध प्रयोग श्रीर पूर्वाचार्यों के मतानुसार चिकित्सा से भी जबर को कुछ श्राराम न हो, तब निम्नलिखित उपायों में से कोई एक श्रवलम्बन करने से श्रवश्य ही जबर शान्त होता है।

(१) हिंडुल से निकाला हुआ पारा ८ तोला, गन्धक ८ तोला, एकत्र कला कर वेर की लकड़ी के कोयलों पर पर्पटी बनाने की रीति से पर्पटी बनाने । यह पर्पटी २ रत्ती, जीरा पिसा हुआ और एक रत्ती हींग अनुपान से सेवन करे । प्रथम यह पर्पटी २ रत्ती से आरम्भ कर कमशः १० रत्ती तक वढ़ावे । यह प्रीप्थ १० रत्ती व्यवहार करने पर भी यदि ज्वर न छोड़े तो जब तक ज्वर त्याग न हो, तब तक प्रतिदिन १० रत्ती मात्रा रोगी सेवन करे । श्रोषध सेवन के दिनों ने रोगी जल और नमक त्याग कर केवल दुग्ध और अन्न अथवा केवल निर्जल हुग्थ पर्य करे । असहा प्यास होने पर जाव का जल दिया जा सकता है । इस स्रोपध के सेवन-दिनों में स्नान निषिद्ध है । मस्तिष्क गरम होने पर शीतल जल

द्वारा मस्तक धो सकते हैं। इस श्रोपध के व्यवहार में प्रथम रोगी कुछ दुर्वल हो सकता है, परन्तु उससे कुछ चिन्ता नहीं करनी चिहये। रोगी क्रमशः रोगमुक्त होने पर सवल होगा। इसके द्वारा यकृत्, प्लीहा, उदरामय, शोथ, क्षय, उदर-शूल, विपम ज्वर श्रादि संयुक्त ज्वर ४।५ सप्ताह में निरामय होते देखा गया है।

- (२) हरिताल भस्म है रती प्रतिदिन प्रातः गाय के घी के साथ सेवन करनी चाहिये। इस श्रोपध के सेवन काल में रोगी को प्रथम थोड़ा थोड़ा कर प्रारम्भ कर प्रतिदिन है पाव से पावभर तक शुद्ध गाय का घी, भात, तरकारी, पूरी इत्यादि के साथ रखना चाहिये। रोगी प्रतिदिन शीतल जल से स्नान करे, श्रावश्यकता होने पर दो वार भी स्नान कर सकता है, मांस-मळ्ळी खाना निषिद्ध है। यह श्रोषध दष्ट-फल है।
- (३) चौथाई रत्ती परिमाण सैको विष भस्म उक्त नियम से सेवन करने पर भी उक्त फल पाया गया है। सैको विप को शोधन श्रोर अस्मीकरण प्रणाली हरिताल की तरह है।
- (४) कज्जली योग से भस्मीकृत ताम्र का अमृतीकरण कर पर्पटी सेवन के नियम से १ रत्ती से आरम्भ कर प्रतिदिन १ रत्ती से बढ़ाकर १० रत्ती पर्यन्त सेवन करे। यह १० रत्ती मात्रा आरोग्य प्राप्त होने तक चालू रहे। आरोग्य देख पड़ने पर प्रतिदिन एक रत्ती कम करता रहे। अनुपान-त्रिकटुचूर्ण १० रत्ती, विडङ्ग चूर्ण १ रत्ती, यह औषध सेवन के लिये ताम्न-विशुद्ध नैपाली ताम्र होना चाहिये और यह कज्जली योग से भस्मीकृत और यथाविधि अमृतीकृत होना भी टिचत है नहीं तो ताम्म-व्यवहार से वमन आदि अनेक रोग उत्पन्न कराके रोगी का अनिष्ठ कर सकता है। अतएव चिकित्सक यह औषध वड़ी सावधानी से प्रयोग करें।
- (५) रसचिकित्सा के अथमखण्ड मे, पारद असङ्ग में कथित 'रसतालक' सव अकार ज्वर की महौपध है। जो ज्वर किसी औषध से दूर न हो उस ज्वर में दीर्घकाल तक यह रसतालक आदी के रस और मधु सहित अथवा उपयुक्त अनुपान सहित व्यवहार किये जाने से ज्वर तो छूट ही जायगा परन्तु साथ ही सब उपसर्ग भी दूर होकर रोगी का शरीर सवल और कान्तियुक्त हो जायगा।

(६) शोधित वंशपत्र हरिताल उपयुक्त परिमाण में ग्रहण करे। उसके वाद उस रवेत अभ के मोटे पात्र से एक लोहे की कढ़ाई में रखकर आदित करे। उसके बाद उस कढ़ाई को चूल्हे पर चढ़ाकर नीचे अग्नि जलावे और उस अभ्रखण्ड के ऊपर एक भारी लोह रखकर ढक दे। आधे घण्टे तक अग्नि की गर्मी में रहने से हरिताल गल जायगा। तब उसे अग्नि पर से उतार कर अभ्न के पात्र को उठा लेने पर कढ़ाई के ऊपरीभाग में माणिक की सी आभा युक्त जो एक प्रकार का द्रव्य पाया जायगा उसे ग्रहण करे। यह द्रव्य दो रत्ती परिमाण में विशेष ज्वर की अवस्था में आदी के रस और मधु के साथ सेवन करने से नूतन-पुरातन सभी प्रकार के ज्वर का वेग बन्द होगा और उपयुक्त पथ्यभोजी होने से रोगी का शरीर नीरोग हो जायगा।

(७) ज्वर में लौह प्रयोग—सव प्रकार के ज्वर में, रक्तहीनता में, क्षय में, प्लोहा श्रौर यकृत के विकार में लौह महौषध है। जव नाना प्रकार के श्रौपधों का प्रयोग करने पर भी उवर न छोड़े, तव कुछ दिन तक विशुद्ध लौहभस्म वा लौह घटित श्रौषध उपयुक्त श्रनुपान से श्रवस्थानुसार व्यवस्था करने से श्रतिशय सुफल पाया गया है। विशेष कर क्षयज ज्वर में लौह प्रयोग से विशेष सुफल देखा गया है। किन्तु लौह अच्छी तरह शोधित श्रौर भस्मीकृत होना चाहिये। श्रसम्यक् रूप से मारितलोह सेवन करने से बहुत कुफल होता है। धातु सम्यक् रूप से जीर्ण हुए बिना उसमे रोगनिवारक शक्ति उत्पन्न नहीं होती। अमारित धातु भक्षण करने से वायु वृद्धि होती है, श्रौर उससे उत्पन्न उपसर्ग लक्षित होते हैं। धातुत्रों में लोह त्राच्छी तरह भस्म कर लेने पर वह सुवर्ण, प्रवाल, मणि-मुक्तादि से भी चिकित्सा चेत्र में श्रिधिकतर सुफल उत्पन्न करता है। कान्तलौह सवसे श्रिधिकतर उपकारी श्रीर श्राश्चर्यवान होने पर भी वह सर्वत्र सुलभ नहीं है। उसके वदले विशुद्ध इस्पात च्यवहार करने से भी सुफल पाया गया है। रस-चिकित्सा प्रथम खण्ड में लौह का शोधन, जारण त्रौर मारण विस्तारपूर्वक वर्णित होने पर भी प्रसङ्ग कम से यहां लौहमारण विशद भाव से वर्णित हुआ है।

शोधन श्रोर भस्म करने के लिये एक बार में श्राधा सेर परिमित लौह ग्रहण करे, इससे कम लौह लेने से भस्मीकरण विषय में श्रच्छा फल न होगा। लौह शोधन में गोमूत्र, त्रिफला का काथ श्रौर केले की जब का रस श्रत्यन्त श्रावश्यक हैं। लौह को अचण्ड श्राग्न के उत्ताप से गला कर केला की जड़ के रस में डाले। ७ वार इस तरह करने से छौह विशोधित होता है। छोहे को थोड़ा सा गरम कर केले की जड़ के रस में डाल देने से वह शोधित न होगा, उसको इतना तपाये कि वह गल जाय। कोई कोई लोहे के छोटे-छोटे पत्र कर उसे गोमूत्र में वहुत दिन भिगो रखते हैं; इससे छोहा जीर्ण हो जाता है। इसके वाद त्रिफला के काथ में बारम्बार मर्दन कर पुटपाक करते रहते हैं। परन्तु कितना लोहा कितने काथ में शोधित और मदिंत होने से लौह प्रयोग में सफलता होगी वह सबसे पहले जानना त्रावश्यक है। त्राधसेर परिमित लौह त्रिफला के काय द्वारा शोधित करने के लिये, दो सेर त्रिफला ग्रहण करे, उसको १६ सेर जल में श्रीटा कर जब ४ सेर शेष रहे तब उतार ले। इसके बाद श्राधसेर लौह को ७ वार श्राग्न ताप से तपाकर ७ वार त्रिफला के काथ में डाले, उससे लौह सर्वदोष-विमुक्त होगा, इसी तरह लोह शोधित होने पर उसे चूर्ण कर ले। कुछ दिन गीमूत्र में भिगोकर, इमामदिस्ता में चूर्णित कर लेने से उत्तम लोह चूर्ण अवश्य हो जाता है, गोमूत्र में भिगोने से पूर्व लोहे के छोटे छोटे पत्र कर लेना आवश्यक है। इस भाव से चूर्ण किया हुआ लौह २ भाग, पारा १ भाग और गन्धक २ भाग घृतकुमारी के रस में घोटकर रस-चिकित्सा के प्रथम खण्डोक्त विधि के श्रनुसार भरम करने से उसके द्वारा शास्त्रोक्त फल पाया जायगा।

ల लौह की भानुपाक-विधि

शोधित लौह को इमामदिस्ता में चूर्ण कर निर्मल जल में वारम्वार धोकर सब तरह उसका मल दूर कर ले फिर उसे अचण्ड धूप में अच्छी तरह सुखा ले। उसके वाद, जितने लोह का भानुपाक करना हो उसके समान त्रिफला लेकर उसे दूने जल में श्रीटाकर चौथाई जल शेष रहने पर उतार ले। इस त्रिफला के काथ में उक्त लौह को उत्तम रूप से ३ दिन भिगोकर धूप में सुखा ले। किसी किसी के मत से ७ दिन धूप में सुखाना ठीक होता है।

## o लौह की स्थालीपाक विधि

लीह का भानुपाक समाप्त होने पर स्थालीपाक करना चाहिये, स्थालीपाक के लिये काथ तैयार करने के लिये जितना लौह हो उसका तीन गुना त्रिफला ले

१० र० चि०

त्रीर १६ गुने जल में सिद्ध कर श्रष्टमांश रहने पर उतार कर छान ले। उसके वाद मजबूत लोहे की कढ़ाही में उक्त काथ श्रीर लोह लकड़ी की श्रामिन से पकावे। उसके बाद रस जल जाने पर उतार ले। इस तरह लोह का स्थालीपाक समाप्त होगा, फिर उसको जल में घोकर धूप में सुखा लेना चाहिये।

# लौह की पुरपाकविधि

स्यालीपाक के बाद लोहे का पुरापक करे, जितना अधिक पुर दिया जायगा, उतना ही लोहे का गुण अधिक होगा। जिस जिस रोग के विनाश के लिये लोहे की भस्म तैयार करनी हो, उस उस रोगनाशक द्रव्य के काथ और स्वरस द्वारा लोह को उत्तम रूप से भावित कर पुर देवे। इससे लोह अधिक गुण वाला हो जाता है।

पुटपाक के पूर्व लोह को कुछ द्रव्यों के काय या स्वरस में मर्दन कर लेने से, वह लोह विशेष फलप्रद होता है। निम्निलखित द्रव्य लोह—मर्दन के हैं श्रर्थात इनके रस श्रयवा काथ में लोह को मर्दन करने से बहुत जल्द लोह जारित होता है। निसोथ, त्रिफला, दन्ती, कुटकी, तालमूलो, बीजताड़क, विछुटी लता, श्रद्धसे के पत्ते, चीता, श्रदरक, विडङ्ग, मृङ्गराज, भेला, सोठ, दाडिमपत्र, सतावर, पुनर्नवा, कुडालिया, कान्तकामक, मोथा, जमीकंद, गिलोय, खुलकुडि, हस्तिकर्ण पलास, हाड-फोड़ा, कशेरू, मान, खारकोण, श्रोर गोजियाशाक ये लोहमारक है। इन्हें त्रिफलादि गण कहते हैं। वायुजनित रोग विनष्ट करने के लिये एरण्डादिगण द्वारा, एवं रलेप्माजनित रोग नष्ट करने के लिये श्रद्धवेरादिगण द्वारा, वासरलेष्माजनित रोग नष्ट करने के लिये गोक्षुरादिगण द्वारा, पित्तरलेष्माजनित रोग नष्ट करने के लिये गोक्षुरादिगण द्वारा, पित्तरलेष्माजनित रोग नष्ट करने के लिये पटोलादिगण श्रीर त्रिदोषजनित रोग नष्ट करने के लिये किंशुकादिगण द्वारा लीह का प्रटपाक करते हैं।

इसके वाद पुटपाक गणों के नाम नीचे लिखते हैं:-

एरण्डादिगण—एरण्ड की जड़, श्रनन्तमूल, द्राक्षा, शिरीष, प्रसारिणी, मापपर्णी, मुद्गपर्णी, विदारीकंद श्रीर केतकी। इनकी एरण्डादिगण कहते हैं, इनके स्वरस द्वारा लाह मर्दित होने से यह लाह वायुजनित सव रोग विनष्ट करता है।

किरातादि गण—चिरायता, गिलोय, नीमछाल, धनिया, सतावरि परवर, लालचन्दन, पद्मशाल्मली, गूलर, मुलहठी ये सव पित्तरोगनाशक है। शृङ्गवेरादिगण—श्रद्रक, निर्गुण्डी, इन्द्रजो, नाटाकरङ्ग, वड्ग करङ्ग, मूर्वी, सहंजना, शिरीष, वरुण छाल, श्राक के पत्ते, पटोल श्रोर कटेरी ये श्लेष्माजनित रोग विनष्ट करते हैं।

गोज्ञरादिगण—गोखरू, तालमखाना, कटेरी और शालपणी से वात-कफ जनित रोगनाशक हैं।

पटोलादिगण—पटोल, खस की जब्, लालचन्द्रन, मूर्ची, गिलोय, पान, कटुरोहिणी, श्रपरानिता, लोध, नीलकमल, वाराहीकंद श्रौर प्रियङ्क, ये पित्तरलेष्मा-रोगनाशक हैं।

किंशुकादिगण—पलाश, गाम्भारी की छाल, सोठ, गनियारी, गोखुक, श्ररल् की छाल, शालिपणी, चाकुले, माषाणी (मापपणी), स्थिरा (पृश्निपणी), पाटला, कटेरी-छोटी-बड़ी, वेल की छाल ये त्रिदोषज रोगनाशक हैं।

# वाजीकरणार्थ पुटपाक द्रव्य

रातावरी, रवेत वेडेला, श्रावला, गिलोय, वीजताडक-वीज, श्रालकुशी बीज, भाँगरा, कसेरू, विदारीकन्द, गोखुरू, कुले खोड़ा वीज, श्रश्वगन्धा श्रोर,पीपल इनका स्वरस वा पुटपाक वाजीकरण में उपयोगी है।

### रसायन के लिये पुरुपाक द्रव्य

विदारीकन्द, तगर पादुका, भांगरा, सतावरि, सिरीश, भेला, गिलोय, चीता, हस्तिकर्ण-पलाश, तालमूली, मुलहठी, मुण्डिरी श्रीर कशेक ये रसायन में व्यवहार्य हैं।

#### POET GIRE TO SE

#### पश्चम अध्याय

## वर्तमान युग में उत्पन्न कुछ ज्वरों की चिकित्सा प्लेग (Plague)

प्लेग एक प्रकार की अन्थिक उत्कट महान्याधि है। प्लेग होने वाले रोगी को जबर बहुत तेज होता है। बगल के नीचे, गले मे, वक्षपर और जड्घा के मूल मे अन्थिया निकलती है और उनमे अत्यन्त जलन होती है। यह रोग अतिशय संकामक और सांघातिक ( छूत की नीमारी और मारक ) है।

इस रोग के होते ही उपाय करना चाहिये। श्रायुर्वेद-मत से इसकी त्रिदोषः युक्त सान्निपातिक ज्वर की तरह चिकित्सा करनी चाहिये। प्लेग प्रधानतः ३ तरह का होता है—(१) ग्रन्थिक, (२) सान्निपातिक, (२) श्रान्त्रिक।

ग्रान्थिक प्लेग ज्वर साधारणतः वागुपित्त – प्रधान होता है। इस प्रकार का प्लेग ज्वर बहुत सहज साध्य है। ग्रान्थिक प्लेग ज्वर में ताम्रभस्म २ रत्ती, धृत ५ वृंद ग्रीर १० वृंद मधु, मिलाकर प्रातः एक बार सेवन करना विशेष उपकारों है। ग्रोगरत्नाकर नामक श्रोषध, धृत ५ वृंद श्रोर मधु १० वृंद मिलाकर तीसरे प्रहर एकवार प्रयोग करने से ज्वर का वेग श्रोर प्रनिथ – प्रदाह तथा वेदना घट जाती है।

### सान्निपातिक प्लेग ज्वर

इसमें साधारणतः पित्तरलेष्मा प्रबल होता है। यह अपेक्षाकृत कष्टसाध्यः व्याधि है। इस व्याधि में प्रथम से रसेन्दुचूर्ण १ जौ मात्रा मे आदी के रस और मधु अनुपान से सफल पाया जाता है। वृहत् कस्तूरीभैरव, बसन्ततिलक और महालक्षीविलास ये अति उत्तम औषध हैं।

### आन्त्रिक प्लेग ज्वर

इसमें साधारणतः पित्त और वायु का प्रकोप होता है। इस रोग में श्रीकृष्ण रस दो रत्तो, जीरा पिसा हुआ और मधु अनुपान से विशेष सपल पाया गया है। ताम्रभस्म, कर्प्रस, रसतालक आदि आति उत्कृष्ट औषध हैं। इस रोग के आत्यन्त वढ़ जाने पर वृहत् सूचिकाभरण, सिचपातभैरव, अघोरनृसिंहरस, आदि सिचपात–रोगाधिकारोक्त औषधों का प्रयोग विशेष फल देता है। इस रोग के विभिन्न उपसर्गों की विभिन्न व्यवस्थाओं में अनेक प्रकार की औषधें हमारे प्रणीत 'आयुर्वेद प्रभाकर' नामक चिकित्सा ग्रन्थ में विशेष भाव से लिखी गई है।

# इन्फ्लुयेङ्गा

यह एक प्रकार का वायुश्लेष्माजनित सान्निपातिक ज्वर है। इसमें सर्वत्र ही कफ की प्रिधिकता रहती है। इसके द्वारा अनेक समय दोनों फेफड़े घिर जाते हैं, गुन मिला हुआ कफ निकलता है और सारे अङ्ग में असहा चेदना अनुभूत दोनी है। यनेक समय मोह और प्रलाप उपस्थित होता है। यानकल श्रनेक समय इस ज्वर ने व्यापक भाव से उपस्थित होकर शहरों का नाश किया है। श्रीरसराज इस रोग की सर्वश्रेष्ठ श्रोषध है। प्रतिदिन प्रातः काल श्रादी के रस श्रोर मधु के श्रनुपान से सेवन करने पर, ज्वरवेग, श्रद्धमर्द, प्रलाप, कफाधिक्य विनष्ट होता है। यह श्रोपध दृष्टफल है। वसन्ततिलकरस, वृहत् कस्तूरीभैरव, ताम्रभस्म, महालच्मीविलास, सर्वाद्वसुन्दररस, पश्चानन रस श्रादि श्रोपध युक्तिपूर्वक यथायोग्य श्रनुपान से प्रयोग करने पर सफल पाया जाता है।

सव प्रकार के इन्पलुयेजा ज्वर के कुछ दृष्टफल व्यवस्थापत्र नीचे दिये हुए हैं-

- (१) त्रादित्यरस ( त्रादी का रस त्रीर मधु ) प्रातः ७ वजे ।
- (२) बृहत् कस्तूरीभैरव (पान का रस श्रौर मधु ) समय १२ वजे।
- (३) रसेन्द्रचूर्ण ( तुलसी का रस श्रीर मधु ) समय ४ वजे।
- (४) वसन्ततिलकरस (वासक का रस श्रीर मधु) रात को ८ वजे।

इस व्यवस्था पत्र के श्रनुसार श्रोषध सेवन श्रोर श्राक के पत्तों पर पुराना घी लगाकर गुनगुने कर छाती पर रखकर पसीना देने से श्रसंख्य रोगियों को लाभ हुश्रा है। एवं नगरविनाशक इस भारी भय से मुक्त हुए हैं।

### **डेंगू**ज्वर

यह एक प्रकार की दारण यन्त्रणादायक वातरलेक्मज व्याधि है। साधारणतः १ सप्ताह में यह ज्वर त्रारोग्य होता है। देहात के लोग त्र्रचानक शहर में त्रा जाने पर कुछ दिन वाद ही इस ज्वर से त्राकान्त हो जाते हैं। छोटे वालक-वालिकान्त्रों को यह ज्वर त्राधिक कष्टदायक होता है। श्रीमृत्युजयरस, कस्तूरी भैरव, रसतालक, वातिविध्वंसी महालक्मीविलास, गरम पत्राननरस त्रादि वात-श्लेष्मनाशक त्रोषधियां विवेचनापूर्वक उपयुक्त त्रानुपान सहित व्यवहार करने से सफल पाई गई है। इस ज्वर के छूट जाने पर रोगी कुछ दिन तक घोर त्र्रक्ति से कष्ट पाता है। उस समय उसके पक्ष में कागजी नीवृ का रस वड़ा ही उपकारी है।

न्यूमोनिया

यह एक प्रकार का वातरलेष्मज सान्निपातिक ज्वर है। इस रोग में कभी एक श्रीर कभी दोनों फेनड़े श्राकान्त होते हैं। दोनों फुस-फुस श्राकान्त होने से उसे डवल न्यूमोनियां कहते हैं। इस रोग में प्रबल ज्वर, कास, श्वासकष्ट, खांसी के साथ ख्न निकलना, स्वेद निकलना, शरीर में दर्द, प्रवल प्थास होना, प्रलाप, मोह, दुर्वलता, गला घड़घड़ाना, श्रानियमित नाड़ी की गति और शरीर में श्रत्यन्त ग्रामुस्थता जान पड़ती है। यह रोग प्रकट होते हो बहुत शीघ्र सुचिकित्सा होनी चाहिये, नहीं तो रोग बड़ी जल्दी बढ़ जाता है और फेफड़े में वायु रुककर रोगी की मृत्यु हो जाती है। फुस-फुस में पचन श्रारम्भ होने के श्रातिरिक्त पसीना श्राना, प्रलाप, श्वासकष्ट श्रादि उपद्रव उपस्थित होते हैं, श्रीर रोग प्रायः निरोग नहीं होता।

# न्यूमोनिया की चिकित्सा

रसचिकित्सा द्वारा न्यूमोनियां रोग श्रांति शीघ्र श्रांति सुफल पाया गया है। परन्तु श्रोषध ख्व उत्तम होना श्रावश्यक है। चिकित्सक की बहादुरी श्रोर कृतित्व श्रोषध के ऊपर ही श्रिधक निर्भर है। रसचिकित्सा की विशेषता यह है कि यह द्रव्य के विशेष प्रभाव पर श्रिधक निर्भर करती है। श्रिधकांश चेत्रों में यह दोष की प्रवलता वा न्यूनता की श्रोर लच्य नहीं रखना चाहता। तान्त्रिक युग में रसिद्ध चिकित्सक रससाधना में इतने श्रागे वढ़ गये थे कि वे त्रिदोष सिद्धान्त की श्रपेक्षा विशिष्ट योग विशेष के ऊपर श्रिधक निर्भर करते थे। योग विशेष के प्रभाव पर सुग्ध होकर वे एक ही योग श्रानेक चेत्रों में प्रयोग करके श्रांत श्रार्थ सुफल दिखाते थे।

रसतालक — शोधित पारा १ भाग, गन्धक १ भाग, लालदार मुज १ भाग हिरताल १ भाग, एकत्र उत्तम रूप से चूर्ण कर वालुकायन्त्र में काच की कुपी रखा ४ प्रहर पाक करे। इसके द्वारा पीताभ रसतालक तैयार होगा। यह श्रोषध एक यव मात्रा में सब प्रकार के न्यूमोनियारोग में रोगी की श्रवस्था का विवेचन कर निम्नलिशित श्रनुपान के साथ प्रयोग करे।

श्रादी का रस श्रोर मधु, तुलसीपत्र का रस श्रोर मधु, वासक पत्तो का रस श्रोर मधु श्रयवा केवल मधु।

इमके हारा ज्वर का वेग कम होता है, जीवनी शक्ति बढ़ती है, हृत्पिण्ड की आग्न्या प्रच्छी रहती है, फेफड़ों के क्षत श्रीर सड़ना निवारित होता है।

महादित्यरस—गोमूत्र में शोधित नैपाली ताम्र ३ भाग, पारा १ भाग, गन्धक २ भाग की कज्जली, इन दोनों द्रव्यों को नीवू के रस में भिगोकर रक्खे। ३ दिन वाद सुदृढ़ पत्थर के खरल में उनको श्रच्छी तरह मर्दन कर प्रचण्ड धूप में सुखाले। उसके वाद उसे वालुकायन्त्र मे ४ प्रहर पाक करे, इस तरह जो श्रीपध पाई जाय उसका नाम महादित्यरस है। यह सब प्रकार के सान्निपातिक, त्रिदोष ज्वर, कास, श्वास, हिक्का, यद्मा श्रादि दुःसाध्य क्षयजरोगों की महोषध है। इसकी मात्रा—१ रत्ती से ४ रत्ती तक है। श्रमुपान श्रादी का रस श्रीर मधु।

न्यूमोनिया रोग में रोगी को विकार उपस्थित होने पर नीचे लिखी श्रोषध प्रयोग करने से उपकार होगा।

भेरवरस—वङ्ग, सीसक, पारा, गन्धक श्रोर मीठा विष प्रत्येक एक भाग, ताम ३ भाग इन सवों को निर्गुण्डी, पुनर्नवा श्रोर श्रामकल के रस में मर्दन कर एक रत्ती परिमाण में गोली वनावे। यह एक वटिका श्रादी के रस श्रोर मधु के साथ प्रयोग करे।

न्यूमोनियारोग में खांसी के साथ रक्त आता दीख पड़े तो नीचे लिखा योग प्रयोग करे।

शोधित हिड्डल २ रत्ती, पटोल (परवल) के रस के साथ सेवन कराने से रक्त गिरना वन्द होगा श्रोर ज्वर तथा पित्तरलेष्मा का वेग कम हो जायगा।

कनकसुन्दर रस—स्वर्ण, रसिसन्दर, मुक्ता, लौह, अश्र, प्रवाल, वैकान्त, रीप्य, ताम्र, वङ्ग, कस्त्री, प्रत्येक दो दो तोला के हिसाब से लेकर घृतकुमारी, वकरी का दूध और धङ्गराज के रस की ३ दिन भावना देकर ४ रत्ती की विटका तैयार करे। दोषानुसार पीपलचूर्ण, अङ्क्से के पत्तों का रस, तुलसी के पत्तों का रस, वंशलोचन चूर्ण, पान का रस, आदी का रस, अर्जुन की छाल का चूर्ण, मृगश्रङ्ग भस्म आदि अनुपान विचारपूर्वक प्रयोग करें। परन्तु आदी का रस अ्त्रीर मधु वा पीपल की चूर्ण और मधु ये दो अनुपान विशेष प्रशस्त हैं।

# न्यूमोनिया रोग में कुछ दृष्टफल-व्यवस्था पत्र

समय श्रीषध श्रनुपान प्रातः ७ वजे महादित्य रस २ रत्ती श्रादी का रस श्रीर मधु १० वजे बृहत् कस्तूरीभैरव पान का रस श्रीर मधु

समय	श्रीष्य	श्चनुपान
१ वजे	वसन्ततिलक रस	वासक पत्तों का रस,
• • •		पीपल चूर्ण श्रौर मधु
४ वजे	रसताल	तुलसी पत्र का रस और मधु
रात के १ वजे	कनकसुन्दर रस	वंशलोचन चूर्ण श्रोर मधु

रोग अतिशय बढ़ने पर उक्त व्यवस्थापत्र के अनुसार श्रीषध व्यवहार करके अनेक रोगी केवल ७ दिन में निरोग हो गये हैं। रोग की अवस्था उत्कट होने पर उक्त श्रोषधियों में दो एक नया उपद्रव होने पर या कम होने पर दो एक श्रोषधि घटाने—बढ़ाने की व्यवस्था भी की जा सकती है श्रीर श्रच्छा फल होता है।

महादेव रस—स्वर्ण, श्रश्न, लोह, वङ्ग, पारद, गन्धक श्रोर वैक्रान्त प्रत्येक १ तोला परिमाण लेकर कपूर के जल में भावना देकर १ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। श्रर्जुन छाल के रस अथवा श्रामलको के रस के साथ सेवन से ज्वर, कास, श्वास श्रोर फेफड़े के सब रोग दूर होते हैं।

नीचे लिखी प्रायः सर्वत्र प्रचलित कुछ श्रोषिधयां भी विवेचनापूर्वक प्रयोग करने से श्रनेक चेत्रो में सफल पायी जाती हैं। नारदीय महालद्दमीविलास, पञ्चानन रस, कफकेतु रस, सर्वोङ्गसुन्दररस, सर्वतोभद्ररस, कफचिन्तामणि श्रादि श्रोपिधयां उपयुक्त श्रनुपान योग से प्रयोग करने पर निमोनियां रोग में श्रिधिक सफलता पाई जाती है।

न्यूमोनिया मे पुराना घृत श्रौर श्राक के पत्ते से स्वेदन कराने से श्रातीव चमत्कार होता है। श्रार्थात् छाती पर पुराना घृत मलकर उसके ऊपर घृताक्त श्राक के पत्ते बिछा दे ऊपर पुरानी रूई वा श्राककी रूई से सेके श्रौर फिर वे ही पत्ते वांध दे तो वहत लाभ हो।

# टाईफाईड वा (अन्त्रज्वर)

यह एक प्रकार का सात्रिपातिक अन्त्रज्वर है। कोई कोई इसको सात्रिपातिक विकार भी कहते हैं। पाश्चात्त्य चिकित्सकों के आधुनिक मत से यह एक प्रकार को संक्रामक व्याधि है। जीवाणुविद्गण कहते हैं कि एक प्रकार के जीवाणु शरीर में प्रवेश कर रक्त, रस और आँतों को दृषित कर इस व्याधि को पैदा करते हैं। रोग का विस्तृत कारण वर्णन करना इस पुस्तक का उद्देश्य न होने पर भी हम संचेप में इस रोग का विषय साधारण भाव से वर्णन करते हैं। हमारी लिखित 'सरलिदान' नामक पुस्तक में इसकी विस्तारपूर्वक श्रालोचना की गई है, यह जबर प्रायः सब चोत्रों में त्रिदोषज ही है।

जल वहने वाली प्रणालियों की श्रव्यवस्था के कारण ड्रेन वा नाली से वाहर निकली हुई द्षित भाप, वहुत दिन के सिचत मलमूत्रादि की दुर्गन्ध, दूषित जल, **उपयुक्त प्रकारा छोर वायु का छमाव, एक साथ वहुत से छादमियों का** निवास, सफाई और पर्दे का अभाव, दूषित खाद्य ग्रहण आदि कारणो से वायु, पित्त कफ-त्रिदीप कुपित होकर इस श्रान्त्रिक ज्वर की उत्पत्ति करते हैं। इससे पेट में दर्द, फूलना, गुड़ गुड़ की श्रावाज, कभी उदरामय, दस्त में मल के साथ रक्त निकलना, सिर, पीठ, छाती श्रौर पेट में वेदना, एवं गात्र मे विशेषकर उदर में लाल रंग की फ़ुंसी निकलना, भूख नहीं लगना, जी श्रकुलाना, जिह्वापर मैल जमना श्रादि उपसर्ग हो जाते है। इस रोग में नाड़ी की गति तेज होती है। किसी किसी को को छव दता देखी जाती है। किसी को दस्त अधिक होते हैं। प्रथम थोड़ा-थोड़ा जाड़ा लगता है, फिर शरीर में गर्मी बढ़ती है श्रोर सिर में दर्द श्रिधिक होता है। रोगी कभी-कभी प्रलाप करता है श्रीर बीच में मोह उपस्थित होता है, इसमें रोगी का पेट फूलता है, पेट दवाने से रोगी को दर्द जान पड़ता है। यह दशा प्रायः ४ सप्ताह तक रोगी की रहती है। कोई कोई चौथे सप्ताह में ज्वर न छूटकर ४-६ सप्ताह तक भोगते हैं। यह रोग साधारणतः तीसरे सप्ताह में वढ़ता है। इस रोग में कभी कभी न्यूमोनियां, बद्धाइटिश श्रौर प्लूरिसी भी होते देखी जती है। यदि आंतो का क्षत वढ़कर आंत कटने लगती है तो, रोगी को वमन, पेट फूलना श्रोर वेदना बढ़ती है श्रोर चेहरा विकृत हो जाता है तव रोगी का वचना कठिन हो जाता है।

# टाईफाईड ज्वर वा आन्त्रिक ज्वर चिकित्सा

टाईफाईड वा आन्त्रिक ज्वर अत्यन्त कठिन व्याधि है। इस रोग की चिकित्सा करने में चिकित्सक को वहुत धैर्य रखना चाहिये। धीरता चिकित्सक का सर्वश्रेष्ठ गुण है। रोगी तथा रोगी के आत्मीय स्वजन सभी चिकित्सक से चिकित्सा और श्रीषध को वदलने के लिये नाना प्रकार के अनुयोग करते हैं, किन्तु

इससे चिकित्सक को अधीर नहीं होना चाहिये, वह ऐसे कठिन रोग में वड़ी होशियारी से आगे बढ़े। इस रोग में रोगी की परिचर्या पर सव का विशेष ध्यान होना उचित है। सबसे पहले यह व्यवस्था होनी चाहिये कि जिससे रोगी का घर, शय्या, पथ्य आदि परिच्छन्न भाव से रक्षित हों। और ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये जिससे रोगी के घर में प्रकाश और हवा अच्छी तरह जाय। रोगी के घर में अधिक लोगों की भीड़ न होने देवे। रोगी के समीप सदा एक सुस्थ जन, स्नेहशील, बलिष्ठ और कर्मपटु परिचारक होशियारी से उपस्थित रहे, क्योंकि अनेक समय इस रोग से रोगी का माथा खराब हो जाता है और रोगी अचानक शय्या छोड़कर चला जाना चाहता है और चोट खाता है। इस भाव से अनेक रोगियों का बहुत अनिष्ट होता है।

मन्धक की कजाली—एक मिट्टी के पात्र में कटेरी, सम्हालू और कड़ा के पत्तों का रस समान रखकर श्राम्त के ऊपर तपावे। उसके वाद उसके ऊपर शोधित गन्धक का चूर्ण डाले, फिर गन्धक गळ जाने पर गन्धक के समान पारा उसमें डाळें। पारा गन्धक के साथ मिश्रित होने पर उस मिश्रित हव्य को हळके हाथ से उतार कर उत्तम रूप से मर्दन कर कज्जळी करें। श्रीषध १ रत्ती मात्रा में भुने हुए जीरे के चूर्ण और हींग के श्रनुपान से प्रयोग करने से सब तरह के श्रान्त्रिक ज्वर में श्रत्यन्त सफळता प्राप्त होती है। श्रनुपान मेंद से यह श्रीषध नाना प्रकार की व्याधियों की नाशक है। सब तरह के श्रान्त्रिक ज्वर में विजयपर्पटी एक महौषध है। यह श्रीषध रोग को सब श्रवस्था में जीरे का चूर्ण २ रत्ती श्रीर हींग १ रत्ती श्रनुपान के साथ प्रयोग करने से श्रांत सुफळ पाया जाता है। विजयपर्पटी के श्रमाव में स्वर्णपर्पटी, लोह—पर्पटी, तामपर्पटी, पद्मामृत पर्पटी श्रयचा रसपर्पटी के श्रयोग से भी विशेष सफळता होती है, उक्त पर्पटियों में से किसी एक का प्रयोग करते समय रोगी पर्पटीसेवन के सब नियम पाळन करे श्र्यांत रोगी नमक श्रीर जळ वन्द कर दृध पिये और श्रिक प्यास होने पर डाव का जळ पान करे।

टाईफाई रोग साधारणतः ग्रहणी, नाड़ी श्रीर श्रामाशय का श्राश्रय करके होता है इसमें श्रांतों में क्षत होता है इस कारण इस रोग मे कोई कठिन द्रव्य पय्य रूप से प्रयोग नहीं करते, तरल खाद्य, एक उवाल का गाय का दूध ही टाईफाईट रोग का श्रित उत्कृष्ट पथ्य है। यदि पर्पटी प्रयोग करता न होने ती

कमला नीवृ (नारंगी) का ताजा रस और अबूर का रस खाने को दिया जा सकता-है। दस्त अधिक हों तो अनार का रस और वार्ली देना छचित है।

मुना जीरा पिसा हुआ और मधु, मोथा का रस और मधु, अनार का रस और मधु आदि अनुपान से सर्वात्त सुन्दर अथवा महागन्धक टाईफाईड रोग में प्रयोग करने से सुफल पाया जाता है। ज्वर का वेग अधिक होने से श्रीजयमङ्गल रस, त्रिपुरारि रस, त्रेलोक्यचिन्तामणि रस आदि औषध उपयुक्त अनुपान से प्रयोग करने पर अच्छा फल मिलता है। टाईफाईड में पेट फुलने पर वज्ररस हींग के अनुपान से देने पर अच्छा लाम पहुँचता है। पेट के दर्द में सर्ववातारि चमत्कार युक्त फल दिखाता है। कोष्ठवद्धता रहने पर केवल आदी रस और मधु के अनुपान से त्रिनेत्र रस प्रयोग से इस रोग में चमत्कारपूर्ण फल होता है।

### पर्पटी सेवन विधि

साधारणतः पर्णटी दो रत्ती से आरम्भ कर १० रत्ती पर्यन्त व्यवहृत होती. है, उसके वाद ओपध की मात्रा घटाते हुए दो रत्ती पर श्रा जाने पर बंद कर देते हैं। ओपध सेवन के आरम्भ काल से समाप्ति पर्यन्त जल और नमक बंद रखते हैं। रोगी को केवल मात्र दुग्ध और श्रव, चीनी मिश्री के साथ सेवन कराते हैं। प्यास असहा होने पर डाव का जल देना चाहिये। कोई कोई दो रत्ती से १० रत्ती तक श्रोपध की व्यवस्था कर १० रत्ती के वाद से ही श्रोषध की मात्रा घटाकर २ रत्ती पर उतार लाते हैं उसके वाद आवश्यकता होने पर फिर मात्रा वदाकर घटाते हैं और इस तरह आरोग्य काल तक पर्पटी व्यवहार करते हैं। कोई कोई दो रत्ती से आरंभ कर प्रति सप्ताह १ रत्ती बढ़ा कर १७ सप्ताह में श्रोषध वन्द करते हैं। कोई २ दो रत्ती श्रोर ३ रत्ती से अधिक मात्रा में पर्पटी व्यवहार नहीं करते। कोई २ पर्पटी व्यवहार के समय गरम जल वा वेलपत्र सिद्ध किया हुआ जल व्यवहार करने का उपदेश देते हैं। किसी २ ने कशेल के पत्तों के रस में भूना हुआ नमक व्यवहार करने का उपदेश दिया है।

### पर्पटी सेवन की विशेष विधि

पर्पटी त्रायुर्वेदीय चिकित्सा शास्त्र की एक दृष्टफल विचित्र महीषध है है युक्तिपूर्वक उपयुक्त त्रानुपान के सहयोग से रोग की त्रावस्था विशेष में प्रयोग करने से इससे श्रपूर्व सुफल पाया गया है। श्रानेक लोगों की धारणा है कि नमक श्रौर जल वन्द कर के कविराजी चिकित्सा में रोगी को उस के श्रान्तिम काल में पर्पटी दी जाती है। परन्तु ऐसी धारणा करना भूल है। पर्पटी कभी श्रन्तिम श्रौषध नहीं हैं। यह सभी च्रेत्रों में श्रौर सभी रोगों में श्रवस्था विशेष प्रयोग की जाती है। परन्तु यह स्रोषध व्यवहार करते समय रोगी स्रोर चिकित्सक दोनों को वड़ी सावधानी रखनी चाहिये। यह श्रोपध सेवन करते समय रोगी जलपान बिलकुल न करने पावे, श्रसह्य प्यास होने पर डाव का जल थोड़ा-थोड़ा पिला सकते है। नहीं तो प्यास लगने पर एक उबाल का ठण्डा दूध थोड़ा-थोड़ा कर वार वार पिलावे, दूध के साथ चीनी श्रौर मिसिरी श्रौर पुराने चावल का सुसिद्ध त्राच दोनो समय खावे। क्षुधा होते ही तुरन्त दुग्ध पान करे। किन्तु यदि क्षुधा न हो तो दूध पीना त्रावश्यक नहीं। विना भूख के दूध पीना हानिकारक होगा, यदि श्रोषध सेवन काल में हठात् रात में स्वप्न-विकार होकर शुक्रपात हो जाय, तो तुरन्त दुग्ध पान करना चाहिये। श्रीषध सेवन कर रोगी कदापि किसी तरह की दुश्चिन्ता, भगड़ा-विचाद, सनोमालिन्य वा मन ही मन किसी के ऊपर कोध वा ईर्षा धारण न करे। धूप में अमण वा घर में बैठ कर धूप सेवन, शीतल वा जल की वायु न लगने देवे, रोगी निर्जन घर में चुपचाप बैठ कर वा सोकर दिन काटे, जिस घर में ऋधिक धूप वा हवा ऋाती जाती हो रोगी ऐसे घर में न रखा जावे। वायु की त्रावश्यकता होने पर ताडपत्र के पंखे की हवा लें। इलेक्ट्रिक पंखे का व्यवहार न करे। यह श्रोषध खाना श्रारम्भ करके हठात् उसका त्याग कर जल श्रोर लवण खाना श्रात्यन्त श्रानिष्टकर है। जल श्रोर नमक खाने के समय प्रथम वहुत थोड़ा-थोड़ा कर त्रारम्भ करे। ऋधिक क्या कहें यह ऋौषध व्यवहार करते समय स्नान करना बन्द रहे। श्रोषध सेवन के समय माथा श्रत्यन्त गरम जान पड़े तो शीतल जल से माथा धो देना चाहिये। प्रयोजन होने पर २ वार श्रयवा २ वार सिर धोया जा सकता है। यह श्रौषध व्यवहार करने ·पर दािंड्म वेदाना त्र्यादि किसी प्रकार की खटाई वा कषाय रस युक्त किसी प्रकार का फल नहीं खाना चाहिये।

यह त्रोषध सेवन से प्रथम चिराभ्यस्त पथ्यादि बन्द करने के कारण कुछ शरीर की दुर्वलता हो जाने पर भी त्रोषध लेने के कुछ दिन बाद से ही शरीर की जीवनी शक्ति वढ़ने लगती है, त्रिदोष की शान्ति हो जाती है। भीतर चाहे कोई दोष किसी प्रकार का क्यों न रहे, सब प्रकार के दोष वा व्याधि जादूगर की माया की तरह तिरोहित हो जाती है। शरीर में नूतन शक्ति का सम्चार होता है, मन में नूतन तेज की उत्पत्ति होती है, नूतन कर्मशक्ति बढ़ती है ग्रोर बहुत काल के लिये शरीर नूतन हो जाता है। किन्तु उिह्मिखित नियम श्राच्छी तरह प्रति-पालित हुए विना उक्त श्रोपध व्यवहार सुफल नहीं होता बल्कि श्रिधिकांश चेत्रों। में कुफल हो जाता है।

पर्पटी सेवन के समय स्नी-सहवास विलक्कल निषिद्ध है। स्त्रियों के साथ आधिक वात चीत करना भी निषिद्ध है। पर्पटीसेवी कृष्माण्ड, ककड़ी, तरवूज, करेला, कुसुम पाक, कांकरील, कलमी और काकमाची सेवन न करे।

### पर्पटी सेवन की मात्रा

पर्यटी २ रत्ती से आरम्भ कर प्रतिदिन १ रत्ती बढ़ा कर १० रत्ती तक की मात्रा सेवन करना उचित है। १० रत्ती के वाद से फिर मात्रावृद्धि न कर आरोग्य काल पर्यन्त उसी मात्रा में व्यवहार करना उचित है। जब यह जान पड़े कि रोग आरोग्य हुआ है तब औषध की मात्रा प्रतिदिन १ रत्ती कम करता हुआ २ रत्ती पर समाप्त कर दे। फिर कुछ दिन २ रत्ती मात्रा में औषध व्यवहार कराकर एकदमा औषध वन्द कर देवे। पर्पटी व्यवहार की मात्रा निरूपण के समय चिकित्सक रोगी की अवस्था समम्भकर मात्रा ठीक करे। आज कल अधिकांश लोग ही हीन-सत्त्व है। इन लोगों के पक्ष मे १० रत्ती की मात्रा में पर्पटी प्रयोग करने से फल अच्छा नहीं होता, इससे रोगी आति सत्वर दुर्वल हो जाता है। इस प्रकार रोगी को पर्पटी देना आवश्यक होने पर २ रत्ती मात्रा में प्रयोग करना उचित है। बालकों के पक्ष में अवस्था समम्भ कर १ रत्ती से २ रत्ती तक मात्रा में यह औषध व्यवस्था करना उचित है।

### पर्पटी निर्माण विधि

सब प्रकार की पर्पटी चनाने के लिये हिक्किल निकाल हुआ पारा ही सबसे अधिक उपयोगी है। क्यों कि यह सब प्रकार से निर्दोष है। साधन रूप पारे में यदि किसी तरह का शोधन में दोष रह जाय तो रोगी को अनिष्ट हो सकता है। अत एव सब चेत्रों में हिक्किल से निकला हुआ पारा व्यवहार करने से किसी तरह की विपद की आशिक्षा नहीं रहती। पर्पटी बनाते समय अत्यन्त मृदु एवं वेर की लक्किं। की अभि से शुभदिन में शुद्ध चित्त से पाकिकिया सुसम्पन्न करे।

तेज श्रिग्न से पाक की हुई पर्पटी विष तुल्य है। मृदु, मध्य पाक की पर्पटी श्रहण करे।

रसपर्यटी वनाने की प्रणाली — पारा श्रौर गन्थक सम परिमाण लेकर कळाली करे। फिर एक लोह के चम्मच को वेर की लकड़ी के दहकते हुए कोयलों पर रख कर उस में वह कळाली डाल दे श्रौर जव वह गल जाय तव गोवर के ऊपर केले का पत्ता रख कर उसके ऊपर वह कळाली डाल दे। श्रौर तुरन्त गोवर श्रौर केले के पत्ते की पोटली से उसे दवाकर रख दे। इस तरह रसपर्पटिका तैयार होती है।

विजयपर्यटी प्रस्तुत-प्रणासी—पारा ४ तोला, गन्धक ८ तोला, रौप्य २ तोला, स्वर्ण १ तोला, मुक्ता ६ माशे श्रीर वैकान्त ६ माशे एकत्र मिलाकर पूर्वीक्त विधान से पर्पटी तैयार करने को विजय पर्पटी कहते हैं।

स्वर्णपर्ये प्रस्तुत-प्रणाली—हिङ्कलोत्य पारा ८ तोला, स्वर्ण १ तोला ये दोनों वस्तुएं मर्दन कर उत्तम रूप से मिलावे। फिर ८ तोला गन्धक मिलाकर हिंद लोह के पात्र में हिंद हाथ से अच्छी तरह मर्दन कर कज्जली बनावे। शेष रसपर्पटी के नियमानुसार पर्पटी बना ले।

पश्चामृतपर्यटी प्रस्तुत-प्रणाली—गन्धक ८ तोला, पारद ४ तोला, लोह २ तोला, श्रभ्र १ तोला श्रौर ताम्र है तोला ये सब वस्तुएं एकत्र लोहपात्र में मर्दन कर कज्जलों करे। फिर रसपर्पटी की तरह पर्पटी बनाले। इसका नाम पश्चामृतपर्पटी है।

लौहपर्पटी प्रस्तुत-प्रणाली—शोधित पारा श्रौर गन्धक सम भाग में लेकर कज्जली करे। फिर पारे के समान लोह भस्म उस कज्जली के साथ मिलाकर हुढ़ रूप से मर्दन करे। जब लौह भस्म कज्जली में श्रहरय हो जाय तब समझे कि यह श्रौपध मिल गई है। श्रनन्तर पर्पटीपाक की तरह पाक करे। इस तरह लौह पर्पटी तैयार होगी।

ताम्रपर्य वनाने की विधि—पारा और गन्धक सम भाग ले कजा की वनाकर उसमें पारद के समान ताम्र मिलावे। श्रौर ताम्र कजा के साथ मिलजाने पर पर्पटी पाक की तरह पाक करे। इस तरह ताम्रपर्यटी तैयार होगी।

#### षष्ठ अध्याय

# ज्वर के उपसर्ग की चिकित्सा

ज्वर में श्रतीसार—यदि ज्वर के साथ श्रतिसार हो तो महागन्धक नामक श्रोपध श्रति उत्कृष्ट फलदायक है—श्रनुपान-श्रनार के पत्तों का रस, मोथा का रस, जीरा भुना हुआ श्रोर मधु।

() महागन्धक वनाने की रीति—पारा २ तोला, गन्धक २ तोला एकत्र कज्जली करे, फिर रसपर्पटी की तरह पाक कर साथ ही जायफल, जावित्री, लोग, नीम के पत्ते, सम्हालूके पत्ते, इलायची प्रत्येक २-२ तोला मिलाकर जल में मर्दन करे। फिर सीप में भरकर मिट्टी द्वारा लेपन कर मृदुपुट से पाक करे। मात्रा ४ रत्ती।

ज्वर में उद्राध्मान—यदि ज्वर के साथ पेट फूलता हो तो वज़रस सर्वोत्कृष्ट श्रोपध है।

् वज्ररस वनाने की विधि—फिटिकरी १ तोला, सोरा ४ तोला एकत्र आतिताप से उत्तप्त कर कांसे के पात्र में डाल कर वज्रक्षार अस्तुत करे, इसके साथ रसिसन्दूर १ तोला मिलावे। यह औपध १ आना भर और घी में भुनी हुई हीग दो रत्ती अयोजनानुसार डाव के जल, शीतल जल, काजी वा कागजी नीवू के रस वा चूने के जल के साथ अयोग करने से सव अकार का उदराध्मान, पेट फूलना, पेट गरम होना दूर हो कर पेशाव सरल हो, पतला दस्त होना बन्द हो और पेट में वायु की गांठ न वंधे। टाईफायेड ज्वर वा आन्त्रिक ज्वर में यह सहजसाध्य और सुलभ औषध आति चमत्कार फल देती है।

**ज्वर में शूल वेदना**—ज्वर के समय पेट मे अत्यन्त शूल उपस्थित होने पर नीचे लिखी श्रोषध अत्यन्त शुभफल प्रदान करती है।

्र श्लागजेन्द्र सोधित कुचिला १० तोला, मरिच का चूर्ण १ तोला, रससिन्द्र २ तोला एकत्र जल में घोंटकर ४ रत्ती प्रमाण विटका वनावे । गरम जल के साथ यह विटका सेवन करने से वज्रहत बक्ष की तरह सब शूल-वेदना नष्ट होती है ।

उत्तर में घमन—ज्वर में वमन उपसर्ग उपस्थित होने पर कुमुदेश्वर रस प्रयोग करने से सुफल देखा जाता है। कुमुदेश्वर रस—ताम्र २ भाग श्रोर बङ्ग १ भाग, एकत्र मिलाकर मुलहठी के क्षाथ द्वारा सात वार भावना देकर ४ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। उसके बाद नागकेशर, मोथा, छोटी इलायची, लाल चंदन, श्रीर श्रमंतमूल ये द्रव्य समपरिमाण में श्रीर इन सब द्रव्यों के समपरिमाण खीलें एकत्र मिलाकर सोलहगुने जल में सिद्ध कर श्राधा शेष रहने पर उतार लें फिर चीनी श्रीर मधु का प्रदोप देकर इस क्षाथ द्वारा उक्त श्रीषध सेवन करने को दे।

जवर में दाह—जवरकालीन दाह नाश करने के निमित्त चिरसुन्दर रस सुफलप्रद है।

- ि चिरसुन्द्र रस—रसिन्द्र, श्वेत चन्दन, मुलहठी, लोध प्रत्येक १-१ तोला, ये सब द्रव्य लालचन्दन के क्वाय में मर्दन कर ४ रत्तीप्रमाण विटका करे। यह श्रोषध घृष्ट होत चन्दन श्रोर मधु के साथ प्रयोग से दाह नाश करती है।
  - ज्वर में पिपासा—स्वर्णसिन्दूर श्राधी रत्ती, षडङ्गपानीय श्रनुपान से सेवन करने पर ज्वरकालीन पिपासा नष्ट होती है।
  - ए ज्वर में सिर दुर्द ज्वर के सिर दुर्द में महालद्मीविलास रस श्रित जल्ह श्रीषध है। श्रमुपान श्रादी का रस, पान का रस श्रीर मधु।
  - ज्वर में गात्र वेदना—वातगजकेशरी ज्वर में गात्रवेदना की एक महोपध है। त्रनुपान—वेल के पत्तों का रस त्रादी का रस त्रीर मधु।

चातगजकेशरी—स्वर्णसिन्दर, लौह, स्वर्णमासिक, गन्धक, हरिताल, मीठा विष, त्रिकटु, सोहागे की खील, कांकड़ार्सिगी, गनियारी की छाल, बेल की छाल, प्रत्येक सम भाग लेकर वेलपत्र और निर्गुण्डी के पत्तों के रस में मर्दन कर चना के वरावर वटिका वनावे।

ज्वर में अरुचि—स्वर्णसिन्दूर पाव है रत्ती लेकर आमले के रस और मधु अथवा वातावी नीवू के रस और सेंघा नमक अथवा आदी का रस और मधु के साथ सेवन करने से सव तरह की अरुचि नाश हो।

- ्र ज्वर में श्वास, कास श्रोर हिचकी की चिकित्सा—श्वासकुठाररस पीपल का चूर्ण श्रोर मधुके साथ सेवन करने से सब तरह का श्वास-कास विनष्ट होता है।
- श्वासकुठाररस वनाने की विधि—पारद, गन्धक, विष, सोहागे की खील श्रीर मैनशिल प्रत्येक २ तोला, मिर्च १६ तोला, त्रिकटु प्रत्येक ४ तोला,

जल में मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण विद्या करे। वहेड़े की गुठली के चूर्ण और मधु और वेर की गुठली की मीगी के चूर्ण और मधु अनुपान के साथ सेवन करे। जबर में खांसी हो तो कासकुठार एक महीषध है।

• कासकुठार वनाने की विधि—हिङ्कल, मरिच, गन्धक, सोंठ, पीपल, मरिच श्रोर सोहागा ये सब द्रव्य सम परिमाण लेकर जल में मर्दन कर दी रत्ती प्रमाण वटिका बनावे। श्रनुपान श्रादी का रस श्रीर मधु।

श्वासकासचिन्तामणि—ज्वरकालीन श्वास श्रीर कास का उपद्रव होने से यह एक महोषध है।

श्वासकासचिन्तामणि वनाने की विधि—सोनामाखीं, स्वर्ण और पारद प्रत्येक एक भाग, गन्धक और अभ्र प्रत्येक दो भाग और लौह ४ भाग, ये सब एकत्र मर्दन कर मुलहठी के रस, कटेरी का रस, बकरी का दूध, पान का रस इनसे प्रथक् २ सात वार भावना देकर २ रत्तीप्रमाण विटका करे। अनुपान-पिप्पली चूर्ण और मधु।

ि ज्वर में हिक्का रहने पर—(१) रसचिकित्सा प्रथमखण्ड में कथित रस श्रीर गन्धक के थोग से प्रस्तुत ताम्रभस्म १ रत्ती मात्रा में घी में भुनी हीग श्रीर गरम जल के श्रनुपान से प्रयोग करने से सब प्रकार की हिचकी को श्राराम होता है।

(२) उत्कृष्ट स्वर्णसिन्द्र बहेड़े का चूर्ण श्रोर मधु के साथ देने से विशेष उपकार होता है, हींग का धुंश्रा नासिका में ग्रहण करने से तुरन्त हिचकी बंद हो जाती है।

(३) कृष्णचतुर्मुख, मयूरपुच्छ भरम श्रीर मधु मिलाकर देने से श्रित दुर्जय हिचकी भी श्राराम होती है।

ज्वर में कोष्ठवद्धता—ज्वर में कोष्ठवद्धता हो तो 'इच्छाभेदी रस' का प्रयोग करने से कोष्ठशुद्धि होती है। नव ज्वर में कभी विरेचक श्रौषध प्रयोग न करे। ज्वर की श्रामावस्था हट जाने पर विरेचक श्रौषध प्रयोग करना उचित है। जव यह श्रमुभव किया जा सके कि मल-विवद्धता के कारण ज्वर नहीं छोड़ता है तभी युक्तिपूर्वक इच्छाभेदी रस का प्रयोग करने से पेट साफ होकर ज्वर द्वट जाता है।

११ र० चि०

# रस-चिकित्सा में विरेचन सम्बन्ध में विशेष विधि

सव प्रकार की चिकित्सा के पूर्व देह शुद्ध करके तव श्रोषघ देना उचित है। रसचिकित्सा का प्रकृष्ट फल पाने के लिये प्रथम विरेचन श्रोषघ सेवन कराकर रोगी की देह शुद्ध कर ले। फिर लघु पथ्य से विरेचनजनित दुर्बलता दूर हो जाने पर रसोषघ प्रयोग करे।

इच्छायेदी रख बनाने की विधि:—सोठ, मिरच, पारा, गन्धक, सोहागा, ये द्रव्य प्रत्येक समभाग श्रीर जमालगोटा के वीजो का चूर्ण २ भाग लेकर एकत्र जल में मर्दन करे, फिर २ रत्ती प्रमाण विद्या वनावे। श्रानुपान—चीनी श्रीर जल। यह श्रीषध खाकर जितनी बार जल पियेगा उतने ही दस्त होंगे। विरेचन कार्य शेष होने पर रोगी को मट्ठा के साथ श्रन्न पथ्य देवे।

इच्छामेदी गुडिका बनाने की विधि:—पारद, गन्धक, सोहागा श्रोर पिप्पली समानांश लेकर सब समष्टी के समान जयपाल बीज का चूर्ण उसके साथ मिलाकर जल में मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण गुटिका बनावे। यह श्रोषध सेवन कर जितना शीतल जल पीये, उतने ही श्रधिक दस्त होगे श्रोर गरम जल पीने पर दस्त वन्द हो जायंगे।

सर्वाङ्गसुन्दर रस बनाने की विधि:—शोधित पारा, गन्धक, सीठा विष, जमालगोटा के वीज, मरिच, पीपल, सोठ, हरीतकी, श्रामलकी, बहेबा, इन द्रव्यों का चूर्ण समानाश में लेकर एकत्र मिलाकर जल में मर्दन कर विदेका करे। मात्रा-३ रत्ती। इससे सब प्रकार का ज्वर, श्रामवात, श्वास, कास, श्रामिनमान्य श्रादि रोग शीघ्र विनष्ट होते हैं।

विरेचन के अयोग्यपात्र—बालक, वृद्ध, दुर्वल, क्षीण, पीनस-रोगाक्रान्त, भीत, हक्ष, शोषरोगी, तृष्णार्त, गर्भिणी, नवज्वरी, अधोग रक्तिपत्तरोगश्रस्त, एवं स्तिकारोगश्रस्ता, रोगिणी ये विरेचन के योग्य नहीं है।

# जबर में सोह और मलाप की चिकित्सा

ज्वर के समय मोह श्रौर प्रलाप उपस्थित होने पर नीचे लिखे योगो से कोई विवेचनापूर्वक प्रयोग करने से उपसर्ग शीघ्र शान्त होते हैं।

(१) गन्धक और पारा सम परिमाण लेकर एकत्र लहसन के रस में

एक प्रहर मर्दन कर लहसन के रस के साथ नस्य देने से रोगी चेतना प्राप्त करता है एवं मरिच के साथ नस्य देने से रोगी की तन्द्रा श्रीर प्रलाप दूर होता है।

- (२) सोहागे की खील, ताम, लौह, चीता, खर्पर, त्रिकटु एवं रसिसन्दूर इन द्रच्यों को त्राक के रस में श्रच्छी तरह मर्दन करे। श्राक के रस के साथ इसका नस्य प्रयोग करने से सान्निपातिक-ज्वरकालीन प्रलाप, मोह श्रादि उपसर्ग शीघ्र दूर होते हैं।
- (३) गन्धक श्रोर पारा समान लेकर कज्जली कर एक दिन धत्रे के रस में मर्दन करे फिर उसके समान त्रिकटु चूर्ण लेकर उसके साथ मिलावे। इस श्रोपध का नस्य देने से सन्निपातज ज्वर श्रोर प्रलाप, तन्द्रा श्रादि उससर्भ नष्ट होते हैं।
- (४) गन्धक, लोह, पारद और पीपल समभाग और मिलित द्रव्य की समिष्टि का ३ गुना जमालगोटा एकत्र मिलाकर जम्हीरी के रस में मर्दन करे। यह श्रोषध जल द्वारा विस कर श्रांख में श्रंजन देने से सब उपद्रव दूर होकर सान्निपातिक ज्वर विनष्ट होता है।
- (५) ताम्र, मैनशिल, तूतिया, सीसा श्रीर रसिसन्दूर प्रत्येक समपरिमाण में लेकर राखाल शशा (खीरा) के रस में एक दिन मर्दन कर चना के प्रमाण विटका चनावे। यह जल में घिस कर रोगी को नस्य देने से सर्वीपद्रव सिहत सान्निपातिक जबर विनष्ट होता है।
- (६) अभ्र, गन्धक, पारद, मरिच, हिड्डल, हरिताल, सेंधानमक और सोहागे की खील समपरिमाण और मिलित सव वस्तुओकी चौथाई भेंस के पित्त द्वारा सईन करे। सान्निपातिक ज्वर के समय रोगी जव कोई औषध गले से नीचे न उतार सके, तब उक्त औषध ब्रह्मरन्ध्र में किञ्चित क्षत कर उसके ऊपर लगा दे। इससे सब प्रकार के उपद्रव सहित सान्निपातिक ज्वर और रोगी की ज्ञानश्रून्यता विनष्ट होती है। इस श्रोषध के प्रयोग के बाद किया आरम्भ होने से सस्तक पर शीतल जल बार बार डाला जाय। इससे औषध का गुण बढ़ता है और रोगी का किसी प्रकार का अनिष्ट नहीं होता। इसके बाद रोगी को ठण्डा द्वय जैसे—डाब का जल, ईख का रस, मिसरी का शरवत, काजी आदि सेवन करावे।

#### सप्तम अध्याय

## मैलेरियाज्वर-चिकित्सा

मैलेरिया ज्वर का कारण वर्णन करना इस पुस्तक का उद्देश्य नहीं है। श्रत एव जिन श्रीषधों के करने से रोग दूर हो सके केवल उन श्रीषधों का उल्लेख नीचे किया जाता है।

चन्द्नादि लोह—लाल चन्दन, सुगन्धवाला, आक्रानादि (पाठा), उशीर, पीपल, हरीतकी, सोंठ, नीलोफर, आमलकी, मोथा, चीता की जड़, विडङ्ग, ये सम भाग लेकर इनकी समष्टि के समान विशुद्ध कान्तलोह भरम मिलाकर जल में मर्दन कर २ रत्तो परिमाण विटका बनावे। दार्वादि पाचन अनुपान से यह श्रोषध सव प्रकार की पुरानी मलेरिया का नाशक है।

चिन्तामणि रस-पारह, गर्मक, विष, त्रिकटु, त्रिफला, मनःशिला, रौप्य, स्वर्ण, मुक्ता, हरिताल, कस्तूरी, प्रत्येक १ तोला, भीमराज (काला भांगरा), तुलसी श्रौर श्रादी के रस में भावना देकर २ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। शिडली (हारसिंगार) के पत्ते के रस श्रौर मधु के श्रवुपान से मलेरिया नाशक है।

रस्तार्द्रल—हरिताल १ माग, हिङ्कलोत्य पारा २ माग, गन्धक ३ माग, मनःशिला ४ माग, ये सब द्रव्य एकत्र पीस कर ताम्रपात्र पर लेप करे। फिर एक हांडी में वह तांवे का पात्र त्राधोमुख वैठावे, ऊपरी माग बालु से भर कर विधिपूर्वक पाक करे। फिर ताम्र पात्र के नीचे से ताम्र चूर्ण प्रहण करे २ रती प्रमाण यह श्रोषध पान के रस में मिलाकर मरिच के चूर्ण के साथ भक्षण करने से शीतयुक्त मलेरिया ज्वर समूल विनष्ट होता है। श्रोषध सेवन के श्रन्त में साठी चावल का भात श्रोर दूध पथ्य करे।

दुर्जलजेता रस—विप २ भाग, कौडी की भरम ५ भाग, मरिच श्रीर सोंठ प्रत्येक ५ भाग, ये सव द्रव्य चूर्ण कर चरत्र में छान ले। किर श्रादी के रस में मर्दन कर मूंग के प्रमाण वटी वनावे। प्रातः श्रीर सन्ध्या में जल के साथ २ वटी सेवन करे। यह मलेरिया, सामज्वर, श्रजीर्ण, पेट, फूलना, दस्त-पेशाब वन्द हो जाना, श्रूल, श्वास श्रीर कास मे प्रयोज्य है।

सर्वज्वरामृतरस—कस्तूरी, प्रवाल, रौप्य, लौह, हरिताल, स्वर्ण, रससिन्दूर, स्वर्णसिन्दूर, रुवज्ञ, सुक्ता, दारुवीनी, मोथा, सोनामाखी, चुम्वक पत्थर, गोखुरू,

जायफल, जावित्री, मरिच, कर्पूर, तृतिया, प्रत्येक १ भाग, प्रश्वगन्धा २ भाग, ये सव एकत्र मर्दन कर निर्गुण्डी के पत्ते, वामनहाटी (भारंगी) की जड़, प्राङ्गसा के पत्ते, त्राक की जड़ त्रीर गोखुरू इनके रस मे पृथक्-पृथक् ७ वार भावना दे। मात्रा २ रत्ती, यह सव प्रकार के दुःसाध्य जवरों को शीघ्र विनष्ट करता है।

मलेरिया ज्वर विषमज्वर के श्रन्तर्गत है श्रत एव विषमज्वर-चिकित्सा में कही श्रीपिधयां युक्तिपूर्वक प्रयोग करने से मलेरिया ज्वर में प्रकृष्ट फल प्राप्त होता है। मलेरिया ज्वर से प्लीहा, यकृत्शोथ, उद्ररोग, यक्ता श्रादि रोग उपस्थित हो सकते हैं, इन की चिकित्साप्रणाली यथास्थान लिखी जायगी।

मलेरिया ज्वर की श्रोषध के श्रनुपान—श्रादी का रस, वेलपत्र का रस, तुलसीपत्र का रस, नीम के पत्तों का रस, सम्हालू के पत्तों का रस, नाटाउगा का रस, हारसिंगार के पत्तों का रस, कालामेघ का रस, गिलोय का रस, चृहत् भाइचीदि, दास्यादि, दशमूल, दार्वादि श्रादि पाचन मे से जो कोई एक या दो का रोगी की श्रवस्थानुसार श्रयोग करने से सुफल होता है।

# प्लीहा और यकृत-चिकित्सा

सर्वतोभद्र रस—यह श्रोषध सव अकार की प्लीहा श्रोर यकृत संयुक्त जवर, शोथ, श्वास, कास श्रादि पीड़ाश्रों को शान्ति देती है।

स्वितोभद्र बनाने की विधि—पारा, गन्धक, ताम्र, श्रम्र, लौह, प्रत्येक सम भाग लेकर श्रादी के रस में भावना देकर २ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। श्रमुपान-हरीतकी १ तोला, सहेलिया की छाल १ तोला १ है सेर जल में श्रोटे, चौथाई रहने पर उतार ले उसके साथ प्रतिदिन प्रातः १ विटका सेवन करे।

श्रक्रिंगस्म—सेंधानमक, पारद श्रीर गन्धक प्रत्येक २ तोला एवं गोमूत्र शोधित नैपाली ताम्र ६ तोला एकत्र १ सप्ताह तक नीवू के रस में भिगोकर रक्खे। उसके वाद उसे श्रच्छी तरह मर्दन कर कुदरती जमीकंद, पीपल, हुलहुल, मीचरस, रोहीतक की छाल, श्रादी, त्रिफला श्रीर त्रिकट के काथ में भावना देकर २ रत्ती परिमाण की विटका बनावे। श्रादी के रस श्रीर मधु के योग से यह श्रीषध सेवन करे तो सब प्रकार की प्लीहा श्रीर यकृत रोग निर्दोष रूप से श्रारोग्य होता है। लोकनाथ रस—पारद, गन्धक, श्रभ्र ये प्रत्येक १ भाग, लौह २ भाग, ताम्र २ भाग, कौड़ी की भस्म ६ भाग ये सब द्रव्य एकत्र कर पान के रस द्वारा मर्दनपूर्वक मूखा में स्थापन कर गजपुट में पाक करे, फिर शीतल होने पर चूर्ण कर २ रत्ती मात्रा सेवन करे। इसके सेवन के श्रन्त में पीपल चूर्ण श्रौर मधु श्रथवा हरीतकी चूर्ण श्रौर गुड़ श्रथवा गोमूत्र, श्रथवा जीरे का चूर्ण श्रौर गुड़ सेवन करे। यह यक्नत, प्लीहा, उदर, गुल्म श्रौर शोथ रोग नष्ट करता है।

षृहत् लोकनाथ रसा—शोधित पारा १ भाग और गन्धक २ भाग, एकत्र कज्जली करे। अनन्तर उसके साथ अअ १ भाग मिलाकर घृतकुमारी के रस द्वारा मर्दन कर उसके साथ ताम्र २ भाग और लोह २ भाग मिलाके, फिर काकमाची के रस द्वारा मर्दन कर उसके साथ गन्धक और कोड़ी की भरम प्रत्येक २ भाग मिलाकर जम्हीरी के रस में मर्दन कर गोला बनावे। इसके बाद यह औषध २ भाग कर २ सकोरों से रख कर और २ सकोरों से ढक कर मिट्टी की भस्म (जली हुई चूल्हे की मिट्टी), नमक और जल द्वारा उन सकोरों का सिम्धियान अच्छी तरह लेपन कर कुछ देर धूप में सुखाकर गजपुट में पाक करे। शीतल होने पर चूर्ण कर उपयुक्त पात्र में रख दे। इसकी मात्रा ४ रत्ती है। अनुपान हरीतकी चूर्ण, पुराना गुड़, गोमूत्र, जीरे का चूर्ण और पीपल चूर्ण। इस औषध के सेवन से यकृत, प्लीहा, पेट बढ़ जाना, शोथ, बाताष्ठीला, प्रत्यष्ठीला, श्रास्न, अग्रमांस, भगन्दर, अग्रिमान्य और कास रोग आरोग्य होता है।

मृत्युक्षय लोह—पारद, गन्धक, श्रश्न ये प्रत्येक १ भाग, लोह २ भाग, ताम ४ भाग, यवक्षार, सज्जीक्षार, सोहागा, विडलवण, कोडीभस्म, श्रह्नभस्म, चीते की जड़, मन शिल, हरिताल, कुटको, हीग, रोहितक की छाल, निशोध, तेतुल चरा की भस्म, खीरा की जड़, खिदर काष्ठ, दारुहल्दी, श्रपांक्षार, तालजटामस्म, इमली, हलदी, कालिया कड़ा, धतूरे के वीज, तूतिया, जमालगोटा के वीज, रसौत इन द्रव्यों का चूर्ण प्रत्येक १ भाग, ये सब द्रव्य एकत्र कर श्रादी श्रीर गिलीय के स्वरस द्वारा पृथक पृथक सात सात भावना देकर फिर है सेर मधु की भावना देकर १ मासे परिमाण विटका वनावे। दोषानुसार श्रनुपान की व्यवस्था करे। इसके सेवन से प्लीहा, ज्वर, कास श्रीर विषमज्वर विनष्ट होते हैं।

लोहमृत्युअय—रस, गन्धक, लोह, श्रश्न, मैनशिल, ताम्र, कुचिला, कोड़ी भस्म, त्तिया, शङ्कभस्म, रसोत, जायफल, कुटकी, यवक्षार, जमालगोटा के वीज, सोंठ, पीपल, मरिच, हीग, सेंधानमक ये सब द्रव्य समभाग लेकर श्रित सूदम चूर्णकर हुलहुल के रस द्वारा ७ वार श्रीर केले के पत्र के रस द्वारा ७ वार भावना देकर सुखा ले। श्रनन्तर हुइहुइ के रस द्वारा फिर मर्दन कर दो रत्ती की वटी वनावे। इसके सेवन से प्लीहा, यकृत, गुल्म, श्रष्ठीला, श्रयमांस, शोथ, सब प्रकार के उदररोग, बातरक्त, प्लीहा एवं श्रन्तर्विद्रिध रोग नष्ट होता है।

प्लीहार्णव रस—हिड्डल, गन्धक, सोहागा, अभ्र, विष इनका सूच्म चूर्ण प्रत्येक एक पल, पीपल और मरिचचूर्ण प्रत्येक आधा पल इन वस्तुओं को एकत्र मर्दन कर दो रत्ती परिमाण विटका वनावे। निर्गुण्डी के पत्तों के रस और मधु के साथ यह श्रोषध सेवन करने से प्लीहा, ज्वर मन्दाग्नि, कास, श्वास, वमनरोग श्रादि विनष्ट होता है।

यहृद्िलोह—लोहचूर्ण ४ तोला, श्रश्न ४ तोला, ताम २ तोला, कागजी नीवू की जड़ की छाल एक पल, मृगचर्म भरम १ पल ये सब द्रव्य एकत्र कर जल द्वारा मर्दन कर ३ रत्ती परिमाण की विटका बनावे। इसके सेवन से प्लीहा, यकृत, कामला, हलीमक, कास, श्वास श्रीर उवर नष्ट होता है। यह बल, वर्ण श्रीर श्रिमकारक श्रीर वातगुल्मनाशक है।

श्रास्ति—शोधित लाल दारमुज, शोधित गन्धक श्रोर सेंघा नमक सम भाग लेकर श्राक के पत्तो के रस में मर्दन कर श्रन्धमूषा के गजपुट में पाक करे। मात्रा-श्राधी रती परिमाण। श्रनुपान-पीपलचूर्ण, पुराना गुड़, गोमूत्र, श्रादी का रस, पेपेका निर्यास, गिलोय का रस।

योगराज रस—पारा ६ माशे, गन्धक १॥ तोला, ताम्र १ तोला, जमीकंद के रस में घोट कर गजपुट में पांक करें। दो रत्ती मात्रा में श्रादी के रस के श्रानुपान से प्रयोग करने पर सब तरह के उदररोग विनष्ट होते हैं।

हरिताल भस्म—गाय के घी के श्रनुपान से हरिताल भस्म है रत्ती मात्रा में सेवन से प्लीहा, यक्तत, श्रग्रमांस, पाण्डु, कामला, ज्वर श्रादि सव रोग श्रारोग्य होते है। रसेन्द्रसार—पारद, गन्धक, वङ्ग श्रोर ताम्र श्राक के पत्तों के रस में खरल कर गजपुट में पाक कर श्राह्सा के पत्ते के रस में ७ दिन भावना देकर २ रत्ती की विदेशा बनाकर सेधानमक श्रोर हरीतकी चूर्ण के श्रानुपान से प्रयोग करने पर सब तरह के प्लीहा श्रोर यकृत जिनत विकार नष्ट होते हैं।

#### कालाज्वर-चिकित्सा

श्रायुर्येद मत से कालाज्वर एक प्रकार का त्रिदोषज विषमज्वर है। विषम ज्वर चिकित्सा की जो श्रोषधियां कही गई हैं, कालाज्वर-चिकित्सा में उन्हें युक्ति पूर्वक प्रयोग करने से श्रित सुफल होगा।

नीचे लिखी श्रोषधियां प्रयोग करने से कालांज्वर में विशेष सुफल होता है।

- (१) शङ्खनाभि की भस्म आधा तोला से १ तोला मात्रा तक नीवू के रस के साथ सेवन करने से कालाज्वर शान्त होता है।
- (२) रसचिकित्सा प्रथम खण्ड में हरिताल प्रसङ्ग में कहा हुआ हरिताल सत्त्व है रत्ती मात्रा में प्रयोग कर हरितालभस्म सेवन की पथ्य व्यवस्था करने से कालाज्वर निर्दोष भाव से हट जाता है। हरिताल भस्म सेवन के समय मत्स्य-मांस त्याग कर उपयुक्त मात्रा में घृत सेवन करते हैं।
  - (३) रसचिकित्सा प्रथम खण्ड में कथित ताम्र प्रसङ्घ में कही हुई ताम्रभस्म प्रातः दो रत्ती मात्रा में श्रोर तीसरे प्रहर रसतालक एक यव मात्रा में प्रयोग करने से कालाज्वर श्रारोग्य होता है।
  - (४) पर्पटीप्रयोग विधि के अनुसार यहंमारोगाधिकार से कथित विजय पर्पटी प्रयोग करने से कालाज्वर निश्चय आरोग्य होता है।
  - (५) कालाज्वर के साथ ही प्लीहा, यकृत आदि उपसर्ग निवारण के लिये प्लीहा और यकृत प्रसङ्ग में कथित महामृत्युष्णय लीह प्रयोग करना चाहिये। रक्तश्र्न्यता के लिये नवायस लीह प्रयोग करने से अच्छा फल मिलता है।
  - (६) यद्मारोगाधिकार में कथित वज्रपर्पटी और पश्चामृतपर्पटी उपयुक्त श्रतुपान के साथ प्रयोग करने से इस रोग में विशेष फल पाया जाता है। काला ज्वर में साधारणतः देखा जाता है कि रोगी का शरीर एकदम घोर काले वर्ण का हो जाता है। प्लीहा और यकृत बहुत बढ़ जाता है, श्रविथमित ज्वर होता

है श्रोर उस ज्वर का भोग वहुत देर तक रहता है। श्रनेक दिन ज्वर भोग

लेने पर भी किसी २ के शरीर पर कई जगह शोथ हो जाता है। मैलेरिया ज्वर श्रानेक दिन भोगने पर भी रोगी कालाज्वर का ग्रास हो जाता है। मैलेरिया ज्वर रोगी को प्रथम शीत वोध होता है, फिर ज्वर का वेग वहुत बढ़ता है, प्यास प्रवल रहती है, गात्रवेदना, कम्प, प्रलाप, पसीना, प्लीहा श्रीर यक्तत वढ़ना, खून की कमी, कामला, पाण्ड, शीर्णता श्रादि उपद्रव देखे जाते हैं। यह रोग शरत्काल से वसंत तक रोगी को भोगना पड़ता है।

(७) पुरपाक विपमज्वरान्तक लोह, श्रीजयमङ्गल रस, विषमज्वरान्तक लोह, त्रिपुरारि रस, त्रैलोक्यचिन्तामणि रस श्रादि श्रोषध वृहत् भाग्यादि, दास्यादि, दार्व्यादि पाचन के श्रनुपान से प्रयोग करने पर श्रिधकांश चेत्रों में सुफल पाया गया है।

# सान्निपातिक कैलेरिया ज्वर वा पाणिसास् मैलेरिया ज्वर

श्रायुर्वेद-मत से इसको एक प्रकार का घोर साजिपातिक विषमज्वर विशेष समक्त कर चिकित्सा करने से सुफल पाया गया है। यह ज्वर प्रथम से ही साजि-पातिक लक्षणकान्त होने से श्रातिशय कष्टसाध्य एवं श्राधिकांश चेत्रों में श्रासाध्य हो जाता है। श्रायुर्वेदोक्त श्राभिन्यास (जिसका श्रासर मन बुद्धि तक हो ऐसा त्रिदोप) ज्वर की तरह यह भी प्रलाप, संज्ञाश्रत्यता, कुन्यन, चक्षु, कर्ण, नासिकादि इन्द्रियों की कर्मशक्तिका लोप, हिमाज्ञता, रक्त पेशाव, वाक् रोध, माथा श्रूमना, पसीना निकलना, विवर्णता, श्राच्छ्वता श्रादि भयद्वर उपसर्भ उपस्थित होते हैं। यह ज्वर होते हो किसी श्रच्छे वैद्य का श्राश्रय लेना चाहिये। प्रथम से श्रच्छी चिकित्सा होने से इस भयद्वर दुःसाध्य व्याधि से कदाचित् सुक्ति प्राप्त होती है। इस रोग से रोगी प्रायः २-३ दिन में ही प्राण त्याग कर जाता है।

#### सान्निपातिक यैलेरिया ज्वर की चिकित्सा

स्वच्छुन्द् नायक—इस रोग की १ श्रात उत्कृष्ट श्रोषध है। निर्माण विधि— पारद, गन्धकलोह श्रोर रोप्य समभाग लेकर मयूर, मत्स्य, वराह, वकरा श्रोर भेंस के पित्त में भावना देवे। उसके वाद हुलहुल, निर्मुण्डी, तुलसी, रवेत श्रपराजिता, श्वेत चीता की जड़, श्रदरख, लाल चीता की जड़, भड़ा, हरीतकी, काकमाची के रस वा काथ में यथाक्रम से भावना देवे । इसके वाद उसे धूप में सुखाकर अन्धमूषा में वालुकायन्त्र द्वारा ४ प्रहर तक पाक करे। पात्र शीतल होने पर उतार कर २ रत्ती मात्रा में यह श्रीषध श्रादी के रस श्रीर मधु के साथ घोटकर रोगी को खाने को देवे। उसके बाद गोल मिरच के चूर्ण के साथ सम्हालू के पत्तो का रस श्रीर दशमूल का क्वाय पान करावे।

भेरवरस—पारा, गन्धक, हरिताल प्रत्येक १ भाग श्रोर मीठा विष ३ भाग, दारमुज १ भाग, कृष्णसर्पविष १ भाग, हिङ्कल ८ भाग ये सव द्रव्य एकत्र जल में मर्दन कर मूंग प्रमाण विष्ठका वनावे। श्रादी के रस श्रीर मधु के साथ सेवन करने से इसके द्वारा सब प्रकार के साज्ञिपातिकज्वर श्रारोग्य होते हैं।

## जीर्णज्वर-चिकित्सा

ि त्रेलोक्यिकितामणि रस—स्वर्ण ३ भाग, रौप्य २ भाग, अस्र २ भाग, लोह ५ भाग, प्रवाल ३ भाग, मुक्ता ३ भाग ये सव द्रव्य घृतकुमारी के रस में मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण विटका बनावे श्रौर छाया में सुखा ले। इसका श्रनुपान वकरी का दूध है। यह श्रौपध सेवन से सब प्रकार के जीर्ण ज्वर श्रौर यद्मा श्रारोग्य होते हैं। यह श्रौषध दृष्टफल है, एवं विना विचारे इसका प्रयोग करे। यह वालक, वृद्ध, गर्भिणी सबके लिये विना विचारे प्रयोग कर सकते हैं।

रसप्रभाकर—पारद, गन्धक, पारद भरम, स्वर्ण, रौप्य, लौह, ताम्र, श्रभ्र, हिरताल सत्त्व, वङ्ग, मुक्ता, प्रवाल, सोनामाखी, ये द्रव्य लेकर निर्णुण्डी के पत्ते, पान, काकमाची, खेतपापड़ा, त्रिफला, करेला के पत्ते, दशमूल, पुनर्नवा, गिलोय, श्रङ्से की छाल, भागरा, कशेक इनके रस में ३ दिन भावना देकर एक रत्ती परिमाण विटका वनावे। श्रमुपान—पीपल का चूर्ण श्रीर पुराना गुड़्। इसके द्वारा सब प्रकार के जीर्ण ज्वर श्रारोग्य होते है।

जीवानन्दाम् — अभ्र ४ तोला, जीरा २ तोला, कनक धतूरे के बीज २ तोला, एकत्र चूर्णकर श्रद्धसा, कटेरी, श्रामलकी, मोथा श्रोर गिलोय इन प्रत्येक के एक पल परिमित रस वा काथ में पृथक् पृथक् मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण वटिका करे। यह श्रोषध सेवन करने से सब प्रकार के विषमज्वर श्रारोग्य होते है।

वृहत् सर्वज्वरहर सौह—लौह १६ तोला, पारद २ तोला, गन्धक २ तोला, त्रिफला, त्रिकडु, विबद्ग, मोथा, गजपीपल, पीपरामूल, हलदी, दारुहल्दी, त्रौर चीते की जड़ प्रत्येक १ तोला। ये सव एकत्र आदी के रस में मर्दन करे। विका—२ रत्ती प्रमाण। अनुपान-आदी का रस।

रसराज—पारद १ भाग, सोनामाखी १ भाग, मैनशिल २ भाग, गन्धक २ भाग, हरिताल १८ भाग, ताम्र ४ भाग, भिलावा ३ भाग। ये सब एकत्र चूर्ण कर सिज के निर्यास की भावना देवे। फिर उसे एक मिट्टी के भाण्ड में रखकर सकोरे से भाण्ड का मुख वन्द कर उत्तम रूप से लेप देवे। फिर चूल्ही पर चढ़ाकर १२ घण्टे पाक करे। मात्रा—४ रत्ती। श्रनुपान—पान का रस।

जीर्णज्वरगजिसह—सीसक, धूप, गन्धक, सोहागा, मीठा विष, हरिताल, पारद, ताम्र, प्रत्येक १ भाग ये द्रव्य वट के दूध में मर्दन कर अन्धमूपा में पाक करे फिर भांगरे और आदी के रस में मर्दन कर चना प्रमाण गोली वनावे। अनुपान-निर्णुण्डी के पत्तों का रस और मधु। यह सब प्रकार के जीर्णज्वरों का नाशक है।

जीर्णज्वरकुठार—पारद, गन्धक, वङ्ग, अश्र प्रत्येक १ भाग, एकत्र जम्हीरी के रस में मर्दन कर सुखाले, उसके वाद चीते की जड़ के काथ और घत-कुमारी के रस द्वारा ७ वार भावना देकर एक वार गजपुट में पाक करे। उसके वाद चूर्ण करके रख दे। इसकी मात्रा दो रत्ती। अनुपान-पुराना गुड़ और पिसा हुआ जीरा।

## अभिन्यासज्दर-चिकित्सा

श्रभिन्यास एक प्रकार का उरकट सान्निपातिक ज्वर है। यह प्रायः श्रसाध्य है, कदाचित् कोई ही रोगी इसके प्रास से वचता है।

बृहत् वडवानल रस—पारद-गन्धक, श्रश्न, मैनशिल, मीठाविष, दारमुज, काले साप का विष प्रत्येक १ तोला, जमालगोटा के वीज १५० प्रहण करे। इसके वाद उन्हें एकत्र चूर्ण कर मत्स्य, महिप, मयूर, छाग के पित्त में भावना देकर शीतल जल में मर्दन कर एक रत्ती प्रमाण वाटिका वनावे। उत्कट श्रभिन्यासज्वर में यह श्रीषध प्रयोग कर श्रनेक चेत्रों में रोगों की श्रासन्न मृत्यु से रक्षा की गई है।

वृहत् सूचिकाभरण, सिन्नपातानल रस, कुलवधूनस्य त्राटि श्रौपध प्रयोग कर शीतिक्रिया करने से श्रनेक चेत्रों में रोगी वच गये हैं। परन्तु यह श्रौपध खूव विवेचना पूर्वक प्रयोग करने से रोगी का सान्निपातिक भाव हट जायगा; रोगी शीतल द्रव्य के लिये तीव त्राकांक्षा प्रदर्शन करता रहेगा। इस समय रोगी के मस्तक पर शीतल जल की घारा देना, डाब का जल, काजी, दही, मट्ठा, श्रद्भूर का रस श्रादि पथ्य देना चाहिये।

## हतीजा ज्वर चिकित्सा

यह एक प्रकार का उत्कट सानिपातिक ज्वर है। इस ज्वर में सनिपातान्तक रस विशेष उपकारी है। इसके बनाने की रीति-पारद, गन्धक, हिङ्कल, खर्पर, ताम्र श्रीर श्रमलवेतस प्रत्येक समान भाग में लेकर भांगरे के रस में भावना देकर ४ रत्ती परिमाण में चटिका बनावे। श्रादी का रस श्रीर मधु के श्रनुपान से व्यह श्रीपध प्रयोग करने से हतीजा नामक सन्निपात रोग विनष्ट होता है।

## अर्द्धेशरीरगत ज्बर

इस ज्वर में शरीर के आधे भाग में ज्वर होता है और आधा भाग शीतल रहता है जिस आई में ज्वर रहता है उस नासिका पुट से आईनारीरवर रस का नस्य लेने से आईशरीरगत ज्वर निश्चय ही निवारित होता है।

श्चर्तारोश्वर रस-पारद एक भाग, गन्धक २ भाग, विष १ भाग श्रीर गोलमरिच ४ भाग ये सब द्रव्य त्रिफला के काथ मे ५ वार भावना देकर वटिका बनावे। जम्हीरी के रस के साथ मर्दन कर नस्य देवे।

#### सन्तत उवर (कफे)

यह ज्वर त्रिदोपज है। वातप्रधान सन्ततज्वर ७ दिन में, पित्तप्रधान सन्तत ज्वर १० दिन में श्रोर कफप्रधान सन्तत ज्वर १२ दिन में साद्वातिक हो जाता है। इस ज्वर की चिकित्सा में दो वातों का विशेष लच्य रखना चाहिये—(१) धातुपाक श्रोर (२) मलपाक, इस ज्वर में धातुपाक होने से रोगी के वचने की श्राशा नहीं रहती, मलपाक होने से रोगी कमशाः श्रारोग्य प्राप्त करता है। इस ज्वर को रोगी वहुत दिन तक भोगना है। इस ज्वर की चिकित्सा में चिकित्सक वहुत विवेचना के साथ श्राप्रसर होवे, एवं धातुपाक श्रोर मलपाक की श्रोर लच्य रखकर श्रीपध प्रयोग करे। जल्दी—जल्दी ज्वर का वेग प्रयोग की लिये उप्रवीर्य श्रोपधियों का प्रयोग न करे।

स्वच्छन्द्भेरव—पारद, गन्धक, मीठा विष, जावित्री, पीपल समभाग से जल में मर्दन कर श्राधी रत्ती परिमित बटिका तैयार करे। सन्तत जबर की प्रथम श्रवस्था में यह श्रीपध प्रयोग करने से विशेष सफलता होती है। श्रनुपान— श्रादी का रस, सेंधानमक श्रीर चीनी।

श्री मृत्युक्षय रस—विष १, मरिच १ पीपल १ गन्धक १ सोहागा १, श्रीर हिंडुल २ भाग एकत्र जल में मर्दन कर मूंग के समान विष्का वनावे। श्रायान—श्रादी का रस श्रीर मधु। प्राया प्रचित यह सुलभ श्रीषध सेवन कर वहुत श्रिधक उपकार पाया गया है।

ज्वरारिरस—हिङ्कल गन्धक, पारद, ताम्र सीसक, श्रभ्र, सोहागे की खील, विट लवण श्रौर मैनसिल ये समभाग लेकर सौन्दाल के पत्तों के रस में १० दिन भावना देकर एक रत्ती परिमाण विटका तैयार करे श्रादी के रस श्रनुपान से यह श्रौषध सेवन करने से सन्ततज्वर में बहुत उपकार होता है।

सर्वज्वरारि—स्वर्ण, रसिसन्दूर, प्रवाल, वङ्ग, लौह, ताम्र, तेजपात, श्रज-वाइन, सोंठ, सेंधानमक, मरिच, छुडा, खिदर, हलदी, दारहल्दी, रसौत, सोनामाखी ये समभाग में लेकर जल में मर्दन कर २ रत्ती परिमाण विटका वनावे। इसके सेवन से उप ज्वर एक दिन में वन्द हो। यह श्रीषध प्रयोग करके शीत किया करे। डाव का जल, चीनी, वैगन, मट्ठा श्रीर श्रव पथ्य देवे।

सततक उचर ( श्रामाशयस्थक फकृत उचरे ) चिकित्सा जो उचर दिन रात में दो चार हो उसे सततक उचर कहते है। वृद्धाचार्यों ने इसको द्वैकालिक उचर कहा है। द्वैकालिक का केवल यह अर्थ है कि दिन में एक चार श्रीर रात में एक वार श्रीर रात में एक वार श्रीर रात किसी तरह दो बार होना।

सर्वज्वरारि — पारा श्रीर गन्धक समभाग लेकर कज्जली करे, फिर उसमें सींठ, पीपल, मरिच, जमालगोटा की छाल, बेर, चिरायता श्रीर मोथा, इनका चूर्ण पारद के समान भाग में लेकर सब द्रव्य एकत्र मिलावे। फिर निर्णुण्डी के पत्ते श्रीर श्रादी के रस में भावना देकर एक रत्ती परिमाण विटका वनावे। इस विटका के सेवन के बाद रोगी का शरीर गर्म कपड़े से ढक दे। इस श्रीपध के सेवन से सब प्रकार का ज्वर विनष्ट होता है। श्रनुपान—श्रादी का रस श्रीर मधु।

ज्वरकालकेतुरस—पारद, गन्धक, सीठा (विष), ताम्र, हरिताल, ग्राभ्र प्रत्येक समभाग लेकर, सीज के रस में घोटकर गजपुट में पाक करें। सधु के साथ दो रत्ती मात्रा में यह श्रीषध सेवन करने से सब प्रकार का ज्वर निवारित होता है।

## तृतीयकज्वर (इकतरा)

जो जवर एक दिवस अन्तर देकर आवे उसे तृतीयक ज्वर कहते हैं। आहिकारि एस-खर्पर, शहू प्रत्येक १ भाग, तृतिया है भाग, ये एकत्र मिलाकर गोजिया, जयन्ती और वटशाक (वैगन) के रस के साथ ७ दिन भावना देकर ४ रत्ती परिमाण वटिका वनावे। काले जीरे के चूर्ण के अनुपान से सेवन करने पर इसके द्वारा सब प्रकार का तृतीयक ज्वर विनष्ट होता है।

# चातुर्थकज्वर (तिजारी)

जो ज्वर दो दिन वीच में देकर आवे उसे चतुर्थक ज्वर कहते हैं। चातुर्थकारि रस-हरिताल, मैनशिल, तूतिया, शह्वमस्म और गन्धक प्रत्येक समान भाग, धृतकुमारी के रस के साथ मिलाकर दो सकोरों के बीच रखकर गजपुट की आच देवे (पाक करे)। शीतल होने पर औषध निकाल कर धृतकुमारी के रस में मईन कर दो रत्ती मात्रा में विटेका बनाये। इसके सेवन से चातुर्थक ज्वर नष्ट होता है। प्रथम तक पीकर फिर धृत और मिरच के चूर्ण के साथ यह औषध सेवन करे।

#### बातबलाखक ज्वर

इस ज्वर में थोड़ा थोड़ा शोथ देखा जाता है और शरीर में श्लेष्मा होने से सब अवयवों में जडता जान पड़ती है। थोड़ा थोड़ा शोथ (सूजन) देखकर कोई कोई उसे वेरी-वेरी मानते हैं, किन्तु यह ठीक नही है। वातरलेष्मा ज्वर की चिकित्सा करने से यह ज्वर शीघ्र नष्ट होता है। आदी के रस, पान के रस और मधु के अनुपान से महालद्मीविलास नामक औषध अयोग करने से इस ज्वर में उपकार देखा जाता है। शोथ अधिक होने से स्वर्णपर्पटी अथवा रसपर्पटी, जीरा पिसा हुआ २ रत्ती और हींग के अनुपान से व्यवहार करने से सुफल होता है। त्रिपुरारि रम आदी के रस और मधु के साथ अयोग करने से यह दुःसाध्य वातवलासक ज्वर निथय दूर होता है।

#### प्रलेपक ज्वर

इस ज्वर मे रोगी के शरीर पर थोड़ा-थोड़ा पसीना और थोड़ा-थोड़ा ज्वर होता है, माथा भारी होता है और शीत जान पड़ता है। यह ज्वर यद्मा रोगी को होता है। इस से शोप, धातुक्षय, रक्तहीनता आदि कठिनता से दूर होने वाले उपसर्ग उत्पन्न होते रहते हैं। श्रीजयमङ्गल रस प्रलेपक ज्वर की सर्वश्रेष्ठ औपध है। अनुपान—जीरे का चूर्ण और मधु। पुटपाकविपमज्वरान्तक लोह, त्रैलोक्यचिन्तामणि रस, विजय पर्पटी इस रोग की महौषध है।

सुवर्णमालतीर स्न-स्वर्ण १ भाग, मुक्ता २ भाग, हिङ्क्ष ३ भाग, मरीच ४ भाग, खर्पर ८ भाग इनको मक्खन के साथ मर्दन करे। जब तक मक्खन की चिकनाई दूर न हो तब तक मर्दन करे फिर २ रत्ती परिमाण गोली बनावे। पीपल के चूर्ण और मधु के साथ मर्दनकर अयोग करने से दुःसाध्य अलेपकज्बर आरोग्य होता है।

#### क्वीतज्वर-चिकित्सा

शीतज्वरारि —शोधित हरताल श्रौर पारद सम भाग लेकर करेला के पत्तों के रस में मर्दन कर बालुकायन्त्र में पाक करें। इसकी मात्रा २ रत्ती। श्रवुपान — पीपल का चूर्ण श्रौर मधु, तुलसीपत्र का रस श्रौर मधु, घृत श्रौर मधु। पथ्य-दूध, श्रवा, मूंग का जूस श्रौर घृत। यह सव प्रकार के शोत ज्वरों का नाशक है।

हुताशन रस—पारद, खर्पर, हरिताल, तूतिया, सोहागा की खील श्रौर गन्धक प्रत्येक १ तोला श्रौर ताम्र ६ तोला एकत्र करेला के पत्तों के रस में मर्दन कर वालुकायन्त्र में पाक करे। उसके वाद उसके साथ ६ तोला गोल मरिच चूर्ण मिलावे, इस मिली हुई श्रौपध की मात्रा २ रत्ती है। श्रनुपान-पान का रस श्रौर मधु। यह सब प्रकार के शीत—ज्वरों का नाशक है।

अतुमर्व रस हिरताल श्रीर सीप समभाग ले, श्रीर दोनों की समष्टिका है नवां भाग तूर्तिया ले। उन्हें एकत्र घृतकुमारी के रस में मर्दन कर गजपुट में पाक करे, पुट शीतल होने पर श्रीषध चूर्ण कर १ रत्ती मात्रा मे प्रयोग करे। श्रमुपान चीनी श्रीर मधु।

## राजिज्बर-चिकित्सा

कटेरी, सोंठ श्रौर गिलोय के काथ के साथ श्रीजयमङ्गल रस सेवन करने से सर्वप्रकार का रात्रिज्वर श्रारोग्य होता है।

चिन्तामणि रस—पारद, गन्धक, विष, लौह, धतूरे के वीज, प्रत्येक १ भाग ले, उसके बाद उसके साथ चीता, सोंठ, पीपल श्रीर मिरच प्रत्येक २ भाग मिलाकर श्रादी के रस श्रीर गोड़ा नीबू के रस में मर्दन कर बृहत् भाग्यादि काथ के श्रमुपान से प्रयोग करने पर सब प्रकार के रात्रिज्वर श्रारोग्य होते हैं।

#### दाह-जवर-चिकित्सा

शूलपाणि—रस १ तोला, गन्धक १ तोला, ताम २ तोला, एकत्र नीवू के रस में मर्दन कर गजपुट में पाक करें। मात्रा-२ रत्ती। इसको पान के रस कें साथ प्रयोग करें। इसके द्वारा सब प्रकार का दाह ज्वर निवारित होता है।

रामेश्वर रस—हपा, कांसा, तामा प्रत्येक १ तोला, गन्धक ३ तोला, इनको लाल कांटानट के रस में मर्दन कर ६ बार गजपुट में पाक करे। मात्रा— २ रत्ती। श्रनुपान—पान का रस श्रीर मधु। यह दाहज्वर-नाशक है।

#### सप्तधातुगत विषमज्वर चिकित्सा—

(१) रसधातुगत विषमज्वर-चिकित्सा—इस ज्वर मे कृष्णरस २ रत्ती, १ रत्ती हींग श्रोर २ रत्ती जीरा पीसा हुत्रा श्रोर मधु केश्रनुपान से व्यवहार करने पर सुफल पाया जाता है। इस ज्वर मे वमन श्रोर उपचास हितकर है।

#### रक्तधातुगत विषमज्बर-चिकित्सा

हिङ्कुलेश्वर रस—पटोल का रस, श्राङ्क्से के पत्तों का रस, पीपल चूर्ण, चीनी का सरवत, भीगे हुए त्रिफला का जल, श्रानन्तमूल श्रीर मुलहठी के काथ श्रीर मधु के श्रानुपान से व्यवहार करने पर उपकार पाया जाता है।

नीम के पत्तों के रस में शोधित हिङ्कल २ रत्ती उक्त अनुपान के योग से और कृष्ण चतुर्मुख भीगे हुए त्रिफला के जल के अनुपान से सेवन करने पर सुफल मिलता है। किसी किसी चेत्र में रसमाणिक्य अमृतादि काथ के साथ सेवन से विशेष उपकार होता है। इस रोग में माथे पर जल सीचना और रक्तमोक्षण हितकर है। मांसधातुगत विषमज्वर-चिकित्सा— विरेचन श्रिधकार का सर्वोज्ञ-सुन्दर रस इस रोग की श्रेष्ठ श्रोषध है। श्रीमृत्युज्ञयरस श्रादी का रस श्रोर मधु, त्रिनेत्र रस श्रोर वातारि रस वेल के पत्ते का रस श्रोर मधु, हरिताल भरम कांटानट का रस श्रोर मधु के साथ सेवन करने से मांसगत विपम ज्वर निवारित होता है। इस रोग में विरेचन हितकर है।

मेद्गत विषमज्वर चिकित्सा—इसमें ताम्रभरम श्रादी का रस श्रीर मधु के श्रनुपान से दो रत्ती मात्रा मे प्रयोग करने से श्रमोध सुफल पाया जाता है। इसमें वमन, विरेचन श्रीर स्वेद का प्रयोग हितकर है।

श्रिस्थगत विषमः वर चिकित्सा—इस रोग में श्रीजयमङ्गल रस उपसर्ग भेद से जीरा, पान, श्रादी, पीपल, वेलपत्ता, नाटार डागा, घृत श्रीर मधु के श्रनुपान से प्रयोग करे। हरितालभरम गाय के घृत के श्रनुपान से प्रयोग करने से उपकार होता है। पश्चामृतपर्पटी प्रयोग से श्रनेक चेत्रों में विशेप उपकार होते देखा गया है। यह रोग कष्टसाध्य है। इसमें तैलमर्दन श्रीर स्वेद प्रयोग हितकर है।

मजागत विषमज्बर-चिकित्सा—यह रोग उत्पन्न होते ही हरिताल-भरम है रत्ती मात्रा में गाय के घी के श्रजुपान से प्रयोग करना श्रति हितकर है। विजयपर्पटी का प्रयोग इस में श्रिति हितकर है। पारदभरम का घी के श्रजुपान से प्रयोग भी शुभफल देता है। यह रोग श्रत्यन्त कृच्छ्रसाध्य है।

गुक्रगत विषमज्वर-चिकित्सा—इस ज्वर में रसतालक, गिलोय अथवा सतावर वा अश्वगन्ध चूर्ण वा विदारोकन्द वा आलकुशी वीज के चूर्ण वा गूलर के चूर्ण के अनुपान से अयोग करने पर विशेष हित होता है। हरितालभस्म, विजय-पर्पटी, पारद भस्म, त्रैलोक्यचिन्यामणि, स्वर्णभस्म और वज्रपर्पटी इस रोग में सुफल देती है। यह अतिशय दुःसाध्य व्याधि है।

# अन्तर्वेग ज्वर की चिकित्सा

ह्वराङ्क्षश्चा रस-पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, हिड्डल ३ भाग, जमाल-गोटा के बीज ४ भाग, ये द्रव्य दन्तीमूल के क्वाय में मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण विटका बनावे । श्रनुपान-चीनी का जल। श्रन्तवेंग ज्वर में नवज्वरेभाडुश

१२ र० चि०

नामक गुटिका सेवन करने से विशेष उपकार होता है। यह श्रोषध सेवन कराकर छाछ, चीनी का शर्बत, डाब का जल, कांजी श्रादि पथ्य देते हैं।

#### हारिद्रिक विषमज्बर वा पीतज्बर

इस ज्वर में रोगी का शरीर एक दम हलदी के वर्ण का हो जाता है। मल, मूत्र, शूक इत्यादि सभी हल्दी के रंग के हो जाते हैं।

यह संक्रामक श्रीर दुःसाध्य है। इसका विशेष विवरण हमारी लिखित पुस्तक 'सरलिवान' में देखिये। इस ज्वर में 'नारायणचूर्ण' कुले खाडा (हारसिंगार) के पत्तों का रस, पुनर्नवा का रस, नीमके पत्तों का रस इनके साथ प्रयोग करे। ताम्रमस्म २ रत्ती मात्रा में श्रादी के रस श्रीर मधु के साथ प्रयोग करे। हरिताल भस्म गाय के घी के साथ प्रयोग करें श्रथवा रसतालक पटोलपत्र के साथ प्रयोग करे। ये सब श्रित हितकर हैं। गुह्रच्यादि क्वाथ के साथ स्वर्णभस्म वा पुटपाक विषमज्वरान्तक लौह के प्रयोग से भी सुफल पाया जाता है। ताम्रपर्पटी इस रोग की एक श्रेष्ठ श्रीषध है।

#### ग्रन्थिज ज्वर

यह एक प्रकार का बातश्लेष्मज ज्वर है। यह प्रायः वालकों को होता है। यह संक्रामक व्याधि है। इसमें शरीर के अनेक स्थानों की अन्थियो पर पीड़ा युक्त सूजन होती है। इसका ज्वर अति प्रबल होता है। प्लीहा और यकृत बढ़ जाता है। एवं यह रोग अधिक दिन स्थायो होता है। यह ज्वर त्रिदोषयुक्त होता है, इससे क्षयरोग तक भी हो जाता है।

महालद्मीविलास रस—ग्रादी का रस, पान का रस और मधु मिलाकर सेवन करने से प्रन्थिज ज्वर श्रारोग्य होता है। फूली हुई गांठों के ऊपर श्रादी का रस, श्रफीम, सहजना की छाल का रस और मुसब्बर (एलुआ) का प्रलेप हितकर है। रसतालक इस ज्वर की सर्व श्रेष्ठ श्रीषध है। इसका श्रनुपान—श्रादी का रस, पान का रस श्रीर मधु। कस्तूरीभैरव रस और वसन्ततिलक रस भी उक्त श्रनुपान से प्रयोग करने पर सुफल पाया जायगा। रसमाणिक्य प्रयोग भी श्रनेक क्षेत्रों में इस व्याधि में बहुत लाभ किया है। इस रोग की प्रथम श्रवस्था में श्रीमृत्युजयरस तुलसी पत्र का रस श्रीर श्रादी के रस के साथ प्रयोग करना हितकर है। सर्वाङ्गसुन्दर रस श्रादी के

रस श्रौर मधु के साथ प्रयोग करने से सुफल पाया गया है। इस रोग की जटिल श्रवस्था में पारदभस्म प्रयोग से विशेष सुफल पाया जाता है।

#### औपत्यक ज्वर

पहाड़ की तलहटी में जो लोग निवास करते हैं, वे श्रनेक समय मरने का गँदला जल भी पीते रहते हैं। यदि मरने का जल किसी प्रकार दूषित हो जाय, तो उसके पीने से पित्त विगड़ जाता है। किसी-किसी क्षेत्र में श्लेष्मा भी विकृत हो जाता है। श्रोपत्यक ज्वर पित्त-कफ से उत्पन्न होता है। श्रत एव पित्त-श्लेष्मा जनित ज्वर में जिन श्रोषियों के प्रयोग का उपदेश दिया गया है, इसमें भी उन्हीं का प्रयोग करना विशेष लाभकारक होगा।

श्रक्भरम—इस रोग की श्रेष्ठ श्रोषध है। श्रनुपान-श्रादी का रस श्रोर मधु, पान का रस श्रोर मधु। एवं घृत श्रोर मधु के श्रनुपान से पूर्ववत् सेवन करे।

दुर्जलजेता रस-भी व्यवहार किया जा सकता है, श्रनुपान पूर्ववत्।

त्रिपुरारि रस—श्रादी के रस श्रीर सधु के श्रनुपान से श्रत्यन्त सुफल होता है।

#### एकज्बर

यह एक प्रकार का त्रिदोषन सान्निपातिक ज्वर है। इस रोग में ज्वर नहीं छोड़ता, कुछ घण्टो तक सिर्फ ज्वर का वेग कम हो जाता है। परन्तु फिर ज्वर का वेग वढ़ जाता है। इसमें रोगी नाना प्रकार के जिटल उपद्रवों से युक्त होता है। वमन, प्यास, वेगयुक्त नाड़ी, प्लीहा श्रीर यक्तत वढ़ जाना, शरीर में दर्द, श्रास्थरता, कोष्ठवद्धता, शिरःपीड़ा श्रादि उपसर्ग विद्यमान होते हैं। ज्वर छूटते समय रोगी को श्रत्यन्त पसीना श्राता है। श्राधुनिक चिकित्सकों के मत से यह मलेरिया ज्वर में गिना जाता है।

#### एकज्वर-चिकित्सा

प्रथम कुछ दिन श्रीमृत्युज्ञय रस ना हिज्जलेश्वर रस ना त्रिपुरारि रस ना स्वल्प लद्दमीविलास रस, श्रादी, पान श्रीर तुलसी पत्र के रस के साथ प्रयोग कर वीच-वीच मे कभी-कभी उत्कृष्ट मकरष्वज प्रयोग करे। जब देखे कि सम्पूर्ण रूप से श्राम रस का परिपाक हुआ है, तव नवज्वरमुरारि श्रथवा बृहत्

कस्तूरीभैरव वा ज्वराङ्कश रस प्रयोग करे। यदि इनसे उपकार न हो तो ज्वरान्तक योग प्रयोग करने से निश्चय ज्वर छूट जायगा।

ज्वराङ्क्ष्रा रस—सोहागा,पारद, गन्धक प्रत्येक १ भाग, ताम्र भस्म २ भाग ये एकत्र खरल में मर्दन कर उसके साथ मिरच चूर्ण, शङ्कभस्म, इमलीक्षार श्रौर सोनामाखी प्रत्येक १ भाग मिलाकर नीबू के रस में मर्दन कर चने के प्रमाण विटका वनावे। यह एकज्वर नाशक है।

नवज्वरमुरारि—पारद, गन्धक, मनःशिला एकत्र समभाग में लेकर मर्दन करे। उसके बाद उसे कांकरोल के पत्तों के रस में मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण विका वनावे। श्रनुपान-कांटानट का रस श्रीर चीनी। यह एकज्वर नाशक है।

ज्वरान्तक योग — कान्तलौह चूर्ण ३ भाग, पारा १ भाग, गन्धक २ भाग श्रीर सोहागा १ भाग एकत्र नीम की छाल के काथ में मर्दन कर गजपुट में पाक करे। उसके बाद उसमें मछली के पित्त की भावना देकर २ रत्ती मात्रा में विटका बनावे। श्रादी के रस के श्रनुपान से यह श्रीषध सब प्रकार के एकज्वर का नाशक है।

#### पचन जनित ज्वर वा विषाक्त ज्वर

श्रायुर्वेद मत से यह एक प्रकार का सान्निपातिक क्षतज ज्वर है। किसी प्रकार से जिटल रोग भोग काल में शरीर के किसी स्थान में चोट लग जाने से यह रोग पैदा होता है। शरीर में किसी प्रकार का विष प्रवेश करने से ऐसा ज्वर होता है। शरीर का कोई स्थान सद्भा श्रारम्भ होने पर भी यह दुःसाध्य ज्वर होता है। सद्भा (पचन) निवारित हुए विना यह ज्वर श्रच्छा नहीं होता। इस में रक्त-शोधक, पित्तनाशक श्रीषध हितकर है। कृष्णरस, रसमाणिक्य, गोदन्त हरिताल भस्म, रसतालक इस ज्वर की सर्वश्रेष्ठ श्रीषध है। विजयपर्पटी, हरिताल भस्म श्रीर जेत्र विशेष में रसपर्पटी व्यवहार से इस रोग में विशेष लाभ पाया गया है।

#### बातज्बर

यह ज्वर सिन्ध का आश्रय करके होता है, इसमे शरीर की गांठ-गांठ में दर्द होता है, ज्वर का वेग अधिक होता है और अरुचि होती है। आयुर्वेद मत से यह वातश्लेप्मज उत्कट ज्वर विशेष है। श्रानन्दभेरव रस—पारद, गन्धक, विप, प्रत्येक सम भाग, मरिच चूर्ण ४ भाग, सोहागे, की खील ४ भाग ये सव भांगरा श्रीर खहे श्रनार के रस में भावना देकर २ रत्ती प्रमाण विदेका वनावे। पान के रस श्रीर मधु के श्रनुपान से यह सव प्रकार का वातज्वर विनाश करता है।

वातिवनिशिनी—हिरताल, गन्धक, पारद, श्रफीम, सोंठ, पीपल, मिरच, हिड्डल, सोहागे की खील एकत्र श्रादी के रस में मर्दन कर मूंग के वरावर वटी बनावे। श्रनुपान-श्रादी का रस श्रीर मधु।

लद्मीविलास रस-कृष्ण श्रश्न १ पल, पारद है पल, गन्धक है पल एवं वला, सतावर, नागवला, विदारीकन्द, काले धतूरे के बीज, समुद्रफल के बीज, गोखुरू के बीज, बृद्धदारक (विधारा) वीज, भङ्ग के बीज, जायफल, जावित्री श्रीर कपूर, प्रत्येक का चूर्ण २ तीला एवं स्वर्ण भस्म २ माशा। इन्हें पान के रस में मर्दन कर चने के वरावर विदेका बनावे। श्रनुपान-श्रादी का रस, पान का रस श्रीर मधु। यह सब प्रकार के बात जबर का नाशक है।

#### इलीपद जनित ज्वर

वातारि श्रभ्र—दशमूल, निर्गुण्डी, रवेत निरोध, पुनर्नवा, मनसासीज, चव्य, वसाक, चीता, विधारा, वला, ऋषभक, शालपणी, पाठा, सोदाल श्रौर लाल चित्रक, इनके रस में सहस्रपृटित श्रभ्र मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण विका करे। श्रनुपान—वेल पत्र तथा श्रादी का रस श्रौर मधु। यह श्लीपद जनित ज्वरनाशक है।

वातारि रस-पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, हरीतकी १ भाग, श्रावला १ भाग, वहेरा १ भाग, चीते की जड़ ४ भाग और गुग्गुल ५ भाग। एरण्ड के तेल के साथ मर्दन करे। विटका ६ रत्ती श्रमाण। श्रनुपान—सोठ और एरण्ड मूल का काथ। यह श्लीपद जिनत ज्वरनाशक है।

#### मोह ज्वर

यह एक प्रकार का सान्निपातिक ज्वर है। सान्निपातिक श्रन्त्र-ज्वर के साथ इसका बहुत सादृश्य है। निम्नलिखितं श्रोपिधयां इस ज्वर मे विशेष फलप्रद हैं। मृतसञ्जीवनी विदका—विष, पीपल, सोठ, गोल मरिच, गन्धक, सोहागे

सृतसञ्जीवना वाटका—विष, पापल, साठ, गाए मार्प, पापक, साहाग की खील, ताम्र भस्म, धत्रे के वीज, हिंडुल ये सम भाग लेकर भङ्ग के पत्तों के रस में एक दिन मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे। त्राक की जड़ के काढ़े के साथ सेवन करने से यह थोड़े ही समय में मोहज्वर नामक सान्निपातिक ज्वर विनष्ट करता है।

श्रामिकुमार रस—पारद ४ तोला, गन्धक १ तोला, कज्जली कर एक दिन गोयालिया के पत्तों के रस में मर्दन करें। उसके वाद उसके साथ २ तोला विष मिलाकर सब द्रव्यों को काच की शीशों में रखकर वालुकायन्त्र में १ है दिन पाक कर उसके साथ १ है तोला विष श्रोर १ है तोला पीपल का चूर्ण मिलाकर मर्दन करें। इसकी मात्रा १ रत्ती, श्रनुपान—श्रादी का रस श्रोर मधु। यह सान्निपातिक मोहज्वर श्रोर श्रन्यान्य नाना प्रकार की व्याधियों का नाशक है।

त्रपनी लिखी हुई ज्वरचिकित्सा नामक वृहत् पुस्तक में हमने सब प्रकार के ज्वरों की विस्तृत विवरण के साथ चिकित्साविधि लिखी है।

#### आक्षेप जनित ज्वर

यह श्रित दारुण सान्निपातिक ज्वर है। प्रथम से ही सुचिकित्सा होने से यह कदाचित् श्रारोग्य होता है।

सिन्निपातानल रस
पारद, गन्धक, काले सांप का विप, दारुमुज छौर ताम्र प्रत्येक समभाग लेकर लाइली (पृश्चिपणी) की जड़, देवदाली की जड़, लाल चीते की जड़, भूमि आंवले की जड़, पञ्चिपत्त और आदी के रस में भावना देकर १ रत्ती प्रमाण विटका वनावे। आदी के रस और मधु के साथ वह औषध सेवन से सब प्रकार का आचीप जिनत उचर निवारित होता है। इस रोग में रोगी आषध सेवन में असमर्थ हो तो उसे बहुत सूचिकाभरण रस ब्रह्मरम्भ भेद कर प्रयोग करने से उपकार होता है। सर्व प्रकार के सान्निपातिक उचर की चिकित्सा आत्यन्त कठिन है। इस चिकित्सा में चिकित्सक विशेष विवेचना से कार्य करे।

साजिपातिक ज्वर में विष प्रयोग के बाद विशेष विधि—साजिपातिक ज्वर में रोगी धनुस्तम्भ, वाक्रोध, संज्ञाहीनता, श्रादि कठिन उपद्रव युक्त हो श्रीर सब प्रकार की चिकित्सा करके चिकित्सक रोग शान्त करने में श्रसमर्थ हो तो रोगी के श्रात्मीय स्वजनों की सम्मति लेकर उसकी मुमूर्ष श्रवस्था में कृष्ण सर्प विप घटित श्रीषघ प्रयोग करे।

इस श्रोपध के प्रयोग के बाद १ ई घंटा बीतने पर रोगी साधारणतः संज्ञा पाने पर वारम्वार मस्तक हिलाता रहता है श्रोर कमशः रोगी का शरीर विशेष गरम

होता है। ऐसे लक्षण होने पर रोगी वच जाता है। यह न होने से रोगी के जीवन की त्राशा नहीं की जा सकती।

इसके वाद रीगी को एक शीतल जल से भरे हुए टब (नांद) के अन्दर वैठा देंने, टब का जल गरम होने पर गरम जल अलग कर शीतल जल भर देंवे। यदि रोगी आहार चाहे तो चीनी मिश्री का सरबत, डाब का जल, पक्का केला खाने को देंवे। रोगी को झान होने पर जब वह टब में से आहार्य प्रार्थना करे, तभी उसे टब में से उठाकर सूखे गमछा से उसका शरीर पींछ देंवे। यदि रोगी का शरीर तैलाक (चिकना) जान पड़े तो चावल का आटा शरीर पर मर्दन कर सारे अझ पर कपूर और चंदन लेपन करे। रोगी की अवस्था विवेचना कर अतिदिन इस प्रकार शीतिकिया करनी चाहिये। आठवे दिन रोगी को फिर रस चीनों के साथ पान करावे और उक्त रस रोगी के कान, नेत्र, नासिका और जिहा पर निषेक करे। इससे रोगी का वह रोग शान्त होगा। इसके वाद रोगी को अनुर परिमाण मे दही मिला हुआ। अब मोजन करने को देवे। इससे रोगी कमशः स्वास्थ्य लाभ कर निश्चित आयु काल पर्यन्त जीवित रहेगा। शास्त्र में कहा है कि सिन्नपात रूप महायोर मृत्यु सागर में जो रोगी निमिन्जित हुआ है उसका जो चिकित्सक उद्धार करे, स्वयं ब्रह्मा भी उसके धर्म की इयत्ता नहीं कर सकते।

पृथिची पर जितने प्रकार की व्याधियां है उनमें ज्वर ही श्रेष्ठ है। इसलिये घृद्ध वैद्यो ने इसको रोगों का राजा कहा है। वस्तुतः सब प्रकार के उपसगों से युक्त ज्वर की चिकित्सा आयत्त होने से चिकित्सक सब का पूज्य हो तो इसमें संदेह ही क्या है?

rocollinos.

#### अष्टम अध्याय ज्वरातिसार

जनरनाशक श्रोषध श्रिधकांश चेत्रों में विरेचक हैं। श्रतएव वे श्रितसार को वढ़ानेवाली हैं। श्रोर श्रितसार की दवाइयां धारक (संग्राही) होने से ज्वर को वढ़ाने वाली हैं। इस कारण ज्वरातिसार में ज्वर विकार और अतिसार अधिकार की ओषधियों का प्रयोग न कर केवल ज्वरातिसार अधिकार की ओषधियां विवेचना पूर्वक व्यवहीर करे।

#### ज्वरातिसार चिकित्सा

नोचे लिखी श्रोषियां ज्वरातिसार नाशक हैं:--

- (१) कतक सुन्दर रस-हिक्कल, मरिच, गन्धक, पीपल, सोहा गे का फूला, विष और धतूरे के बीज ये समभाग लेकर, भिगोये हुए भङ्ग के पत्तों के जल में सर्दन कर चना के प्रमाण विषक्ष बनावे। अनुपान-मोथा का रस और मधु। इसके द्वारा ज्वरातिसार और अग्निमान्य समूल विनष्ट होता है।
- (२) **सृतसञ्जावनी विटिका**—पीपल १ भाग, मीठा विष १ भाग, हिड्डल २ भाग एकत्र जम्हीरी के रस मे घोटकर १ रत्ती प्रमाण विटिका वनावे। अनुपान-शीतल जल। यह ज्वरातिसार, विस्चिका श्रोर सन्निपात नाशक है।
- (३) गगनसुन्द्रस्—हिङ्कल, सोहागा, गन्धक, समभाग लेकर आक के रसमें ३ दिन भावना देकर १ रत्ती प्रमाण विटका वनावे । अनु पान-श्वेत धूना २ रत्ती और मधु अथवा बकरी का दूध । इसके सेवन से रक्तस्नाव, आमशूल और मन्दाप्ति संयुक्त प्रवल ज्वरातिसार निवारित होता है ।
- (४) प्रागिश्वरस्न—पारद, गन्धक, अभ्र, सोहागे का फूला, देवदाली, यजवाइन और जीरा प्रत्येक ४ तोला, यवाखार, हींग, पांचो नमक मिलित, विडङ्ग, इन्द्रयव, धूना, चीता प्रत्येक दो तोला, ये सब द्रव्य जल में मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण गोली वनावे। मधु के साथ सेवन से इसके द्वारा सब प्रकार का ज्वरातिसार निवारित होता है।

विशेष द्रण्टय—यदि रोगी दुर्बल न हो तो उपवास ही ज्वरातिसार की सर्व श्रेष्ठ श्रीपध है। उपवास द्वारा श्राति सहज में दोष का परिपाक होता है। प्रथम दो-एक दिन उपवास श्रीर सम्पूर्ण विश्राम देने के बाद सामान्य श्रीषध प्रयोग करने से रोगी श्राति सहज में रोग मुक्त होता है। परन्तु रसचिकित्सा में यह नियम नहीं घटता। रोग परीक्षा करके प्रथम से ही रसीषधि प्रयोग करने से फल श्रच्छा ही होता है।

#### नवम अध्याय

#### अतिलार-चिकित्सा

श्रितसार चिकित्सा श्रारम्भ करने के पूर्व चिकित्सक श्रितसार की श्रामावस्था श्रीर पकावस्था का विषय श्रच्छी तरह जानकर चिकित्सा श्रारम्भ करे। क्योंकि श्रामातिसार में धारक श्रीपध श्रीर पकातिसार में पाचक श्रीपध प्रयोग नहीं की जाती। श्रामातिसार में धारक श्रीपध श्रयोग करने से नाना प्रकार के रोगों की उत्पत्ति होती है। श्रितसार होते ही डाक्टर को गुलाकर रोग की श्राम श्रीर पकाचस्था सम्यक् रूप से विवेचना किये विना इन्जेंक्शन द्वारा श्रितसार बन्द करने से परिणाम में रोगी की कितनी हानि होती है वह वर्णनातीत है किन्तु श्रामातिसार में यदि खूव श्रियक परिणाम में मल निकल कर रोगी का धातु श्रीर वल क्षीण हो तो श्रामावस्था में भी धारक श्रीपध प्रयोग करे। क्योंकि वल क्षय होने के कारण रोगी की मृत्यु हो सकती है।

श्रामातिसार के गुरुत के कारण श्रपक्व मल जल में डालने से इव जायगा, श्रीर पक्वातिसार में पक्वमल जल में डालने से तैरने लगेगा, श्रपक्क मल यदि श्रातिशय पतला हो तो जल में गिराने से तैरने लगेगा श्रीर पक्क मल किन होने से श्रीर उसमें श्लेप्मा का दोप रहने से वह इव जायगा। कफातिसार में कफ के भारीपन के कारण पक्कमल भी जल में इब जाता है। श्रामातिसार में पेट में मरोड़, गुड़गुड़ शब्द होता है, मुख में लार पैदा होती है श्रीर थोड़ा-थोड़ा करके दुर्गन्थ युक्त मल निकलता है। श्रातिसार में बलवान रोगी के पक्ष में उपवास ही श्रेष्ठ श्रीषथ है। उपवास द्वारा दोष का परिपाक श्रीर समता सम्पादित होती है।

#### अतिसार चिकित्सा वातातिसार-चिकित्सा

श्रानन्दभेरवरस—हिड्डल, विष, त्रिकटु, सुहागे का फूला श्रोर गन्धक ये समभाग में लेकर जम्हीरी नीवू के रस में घोंटकर १ रत्ती परिमाण चटिका करके वेल, सोंठ के काथ वा मोथा, दाडिम वा गन्धभादुल ( प्रसारिणी ) के रस के साथ प्रयोग करे, इससे वातातिसार विनष्ट होता है।

## पित्तातिसार-चिकित्सा

कणाद्यलोह—पीपल, सोठ, पाठा, पीपल, मरिच, श्रामला, बहेड़ा, हरीतकी, चीता, विडङ्ग, मोथा, वेल, लालचन्दन श्रौर सुगन्ध बाला प्रत्येक समभाग, सर्व समष्टि के समान लौह प्रहण कर जल में मर्दन कर ४ रत्ती प्रमाण विटका वनावे। जामन की छाल के रस के श्रनुपान से यह सब प्रकार के उपद्रवयुक्त पित्तातिसार—नाशक है।

वृहत् कनकासुन्द्रस्म—पारा, गन्धक, मरिच, सोहागा भुना हुआ, काले धत्रे के वीज समभाग में लेकर भारंगी के रस में दो प्रहर मर्दन कर उसके साथ एक भाग अभ मिलावे। उसके बाद २ रत्ती परिमाण में विटका बनाकर वकरी के दूध के अनुपान से सेवन करने पर सब प्रकार का पित्तातिसार आरोग्य होता है।

इलेष्मातिसार-चिकित्सा

वृहत् गशनसुन्द्रस्य पारा, गन्धक, श्रभ्र, लौह, कौड़ी की भस्म, रौप्य, श्रतीस प्रत्येक समभाग लेकर धनिया, बेल, श्रौर सोठ के क्वाथ में भावना देकर १ रत्ती परिमाण विटकां बनावे। श्रतीस चूर्ण, बेल, सोठ का क्वाथ, मोया का रस, कुड़े की छाल का रस, श्रनार के पत्तों के रस के श्रनुपान से यह श्रौपथ प्रयोग करने से कफातिसार श्रारोग्य होता है।

#### आमातिसार-चिकित्सा

प्राणिश्वरं स्स-पारा, गन्धक, अभ, सोहागे का फूला, सतावरी, अजवाइन, जीरा प्रत्येक ४ तोला, जवाखार, हीग, पञ्चलवण, विडङ्ग, इन्द्रयव, धूना और चीता प्रत्येक २ तोला। ये द्रव्य एकत्र लेकर उत्तम रूप से जल में मर्दन कर दो रत्ती परिमाण विटका बनावे। प्रसारिणी के रस के अनुपान से यह श्रीषध प्रयोग करने पर सब प्रकार का श्रामातिसार विनष्ट होता है।

जातीफल रस—पारद, गन्धक, अअ, रसिसन्दूर, जायफल, इन्द्रयव, धतूरे के वीज, सहागा भुना, त्रिकटु, मोथा, हरीतकी, आम की गुठली का बीज, बेल, नोठ, शालवीज, अनार के फल का गूदा, ये सब द्रव्य समभाग लेकर भीगे हुए मा के जल में मर्दन कर १ रती प्रमाण बटी बनावे। कुड़े के मूल की छाल के काय के अनुपान ने यह सब प्रकार के आमातिसार का नाशक है।

#### रक्तातिसार-चिकितसा

कपूररस—हिङ्जल, मोथा, इन्द्रजो, जायफल, श्रफीम श्रीर कपूर प्रत्येक समभाग लेकर जल में मर्दन कर २ रत्ती की गोली वनावे। कुडे की छाल का रस, श्रनार के पत्तों के रस के श्रनुपान से यह श्रीषध सेवन करने से सब प्रकारका उपसर्ग युक्त रक्तातिसार श्रारोग्य होता है।

ु श्रहिफेन चटिका—श्रफीम श्रौर पिण्ड खजूर एकत्र समभाग में मर्दन कर १ रत्ती मात्रा में प्रयोग करने से रक्तातिसार श्रारोग्य होता है। श्रनुपान-कुडे की छाल श्रौर श्रनारफल के छिलके का क्वाथ।

#### त्रिदोषज आतिसार-चिकित्सा

त्रिदोपज श्रतिसार में रसपर्पटी, पश्चामृतपर्पटी, श्रयवा विजयपर्पटी, युक्तिः पूर्वक व्यवहार करने से श्रवश्य श्रारोग्य होता है। नीचे लिखी कुछ श्रोषियों से भी श्रवश्य सुफल होता है।

- (१) **श्रितसार वारणरस**—हिंडुल, कर्पूर, मोथा, इन्द्रजो, समभाग लेकर चूर्ण करे। उसके वाद श्रफीम भिगोये हुए जल से भावना देकर एक रत्तीः प्रमाण गोलियां वनावे। श्रमुपान—कुडे की छाल श्रोर श्रमार के फल की छाल का कवाथ।
- (२) पारद, ताम्र, गन्धक, प्रत्येक २ तोला, विष १ तोला, इमली है तोला ये द्रव्य कांजी द्वारा उत्तम रूप से मर्दन कर १ गोला बनावे उसके बाद उस गोलक मे ६ ब्राङ्कल गर्त कर पान के पत्र द्वारा वह गर्त पूर्ण कर सब गोलक पान से दक दे, उसके वाद उस गोलक को गजपुट में पाक करे। पाक समाप्त होने पर उसके साथ १ तोला गोल मरिच और १ तोला पकी इमली मिलावे। उसके बाद १ रती। प्रमाण वटिका वसाकर बकरी के दूध के ब्रानुपान से प्रयोग करे।
- (३) सर्वाङ्गसुन्दर रस-पूर्वीक महागन्धक नामक श्रोषध का पुटपाक-न करने से सर्वाङ्गसुन्दर तैयार होता है। इसकी मात्रा २ रत्ती। श्रनुपान-कुड़े की छाल श्रोर श्रनार के फल की छाल का काथ।
- (४) शिशुत्रों के उदरामय श्रातिसार, ज्वर, श्वास, कास श्रादि रोग में महागन्धक नामक श्रोषध श्रमृत की तरह कार्यकरी है।

#### शोधातिसार

शोथातिसार में रसपर्पटी सर्व श्रेष्ठ श्रोषध है। श्रनुपान जीरा पिसा हुत्रा २ रत्ती श्रोर मधु।

## शोकज अतिसार चिकित्सा

शोकज अतिसार में बातातिसार की श्रोषध अयोग करने से सुफल पाया जाता है। इस रोग में पञ्चामृतपर्पटी अयोग से हमने अनेक चेत्रों में सिफलता होते देखी है। रसपर्पटी, हीग, जीरा पिसा हुआ श्रोर मधु के श्रनुपान से अयोग करने पर भी शोकातिसार में सुफल पाया गया है।

#### प्रवाहिका चिकित्सा

प्रवाहकुटार रख-पारद १ तोला, गन्धक १ तोला ग्रहण कर कळाली करे। उसके बाद उसे त्राक के दृध में २ दिन और मनसासीज (सेंहुड़) के दूध में २ दिन मर्दन कर, पीली कौड़ी की भस्म २ तोला और राष्ट्व भस्म २ तोला मिलाकर पूर्वोक्त रूप से फिर २ दिन त्राकन्द और सीज के दूध में मर्दन कर आदी और चीता के रस में फिर मर्दन कर सुखावे। उसके बाद उसे गजपुट में पाक कर २ रत्ती मात्रा में घृत और गोल मरिच के चूर्ण के अनुपान से प्रयोग करने पर सब प्रकार का प्रवाहिका रोग आरोग्य होता है।

#### दशस अध्याय

#### ग्रहणी चिकित्सा

प्रहणी रोग में प्रथम श्राग्निदोपक श्रोषध प्रयोग करे। दोष की सामता श्रोर निरामता की श्रोर लच्य रख कर ग्रहणीगत दोष का परिपाक करके चिकित्सा करे।

#### वातज ग्रहणी-चिकित्सा

श्रिनकुमार रस—पारद, गन्धक, विष, त्रिकटु, सोहागा भुना, लौह, वन श्रजवाइन, श्रफीम प्रत्येक सम भाग लेकर सर्व समष्टि के समान श्रभ्र लेवे। उसके वाद उसे चीते के काथ में मर्दन कर मरिच प्रमाण विटका बनावे। यह वातज प्रहणी की श्रेष्ट श्रीषध है।

श्रहणीकपाट रस—लौह, पारद, हरिताल, सोनामाखी, सोहागा, प्रत्येक १ भाग, कौड़ी भस्म २३ भाग, गन्धक १ भाग एकत्र जम्हीरी के रस में मर्दन कर गजपुट में पाक करे। उसके वाद चूर्ण कर २ रत्ती मात्रा में घृत श्रीर गोल मरिच चूर्ण वा प्रसारणी के रस के साथ प्रयोग करे। यह वातज ग्रहणी नाशक है।

## पित्तज ग्रहणी की चिकित्सा

पीयूपवल्ली रसः—पारद, गन्धक, श्रम्र, रौप्य, लौह, शङ्ख भस्म, सोहागें का फूला, हिंद्य, कचूर, तालीसपत्र, मोथा, धिनया, जीरा, सेंधा, धाइ के फूल, ध्रातीस, सोंठ, गृहधूम, हरीतकी, भिलावा, तेजपात, जायफल, लवङ्ग, गुडत्वक् (दारचीनी), इलायची, सुगन्धवाला, वेल, शुंठी, मेथी श्रौर भङ्ग सम भाग लेकर वकरी के दूध में मदन कर ४ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। श्रमुपान—वकरी का दुग्ध। यह पित्तज ग्रहणी नाशक है।

ग्रहणीशार्द्रल रस—शोधित पारद श्रीर गन्धक की कज्जली २ तोला, स्वर्ण भस्म दो श्राने भर, लोंग, नीम के पत्ते, जायफल, जावित्री श्रीर छोटी इलायची प्रत्येक २ तोला एकत्र जल में मर्दन कर २ सीपियों में वन्द कर गजपुट में पाकं करे। ४ रत्ती मात्रा में यह श्रीषध मोथा के रस श्रीर मधु के श्रनुपान से व्यवहार करे तो पित्तज ग्रहणी, सृतिका, श्रामशूल, श्वास, कास, क्षय श्रादि रोगः श्रारोग्य होते हैं।

#### इलेब्मज ग्रहणी रोग चिकित्सा

वज्रकपाट रस—पारद, गन्धक, श्रकीम, मोचरस, त्रिकटु, त्रिफला ये सव एकत्र चूर्णकर भङ्ग श्रोर भांगरे के रस में ७ दिन भावना देकर ३ रत्ती परिमाण विदेश वनावे। श्रनुपान-मधु। इसके द्वारा श्लेष्मज श्रहणी श्रारोग्य होती है।

विजय वटिका—गन्धक १ भाग, पारा १ भाग, कुड़े की छाल की भस्म २ भाग, स्वर्ण, रजत, ताम्र प्रत्येक १ भाग एकत्र आदी के रस में मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण वटिका बनावे। कुडे के काय अथवा बकरी के दूध के अनुपान से यह औषध रलेष्मज ग्रहणी नाशक है।

#### संग्रह ग्रहणी-चिंकित्सा

संग्रहणीकपाट—स्वर्ण, मुक्ता, पारद, गन्धक, सोहागा, श्रश्न, कौडी भरम, मीठा विष प्रत्येक १ तोला, शङ्ख भरम ८ तोला, एकत्र श्रतीस के काथ में भावना देकर मुखाकर गजपुट में २ प्रहर पाक करे उसके बाद पुट शीतल होने पर श्रोषध निकाल कर लोह के पात्र में धतूरा, चीता श्रोर तालमूली (काली मूसली) के रस मे भावना देकर २ रत्ती प्रमाण वंटिका बनावे। यह सब प्रकार की श्रहणी का नाशक है। श्रनुपान—वातज श्रहणी में घृत श्रोर मिरच का चूर्ण, पित्तज श्रहणी में मधु श्रोर पीपल चूर्ण, श्लेष्मज श्रहणी में भांग का काथ श्रथवा घृत श्रोर त्रिकटु चूर्ण।

# । घटी यन्त्र नामक ग्रहणी-चिकित्सा

शम्बूकादि वटी—सीप की भस्म और सेंघानमक सम भाग लेकर मधु के साथ घोटकर ६ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे। तक के अनुपान से यह औषध चटीयन्त्र नामक प्रहणी नाशक है।

## त्रिदोषज ग्रहणी-चिकित्सा

ताम्रयोग—पारद १ भाग, गन्धक र भाग एकत्र कज्जली कर नीबू के रस में मर्दन कर उसके ऊपर ३ भाग शोधित नैपाली ताम्र के छोटे छोटे दुकड़े उाले। ७ दिन में यह ताम्र गल जायगा, इसके बाद उसको फिर नीबू के रस में मर्दनकर जमीकन्द के भीतर गर्त कर उसमें उक्त द्रव्य भर कर ४ श्रङ्गल प्रमाण मृत्तिका लेप देकर गजपुट मे पाक करे। इस तरह जो ताम्र भस्भ पाया जाय, वह ताम्र भस्म, त्रिफला का चूर्ण, विडङ्ग चूर्ण और त्रिकटु चूर्ण प्रत्येक १ रत्ती मात्रा लेकर घृत श्रोर मधु के साथ रोगी को खिलावे। यह सब प्रकार की दुंसाध्य ग्रहणी रोग का नाशक है। प्रयोजन होने पर विडङ्ग को छोड़ श्रन्यान्य द्रव्यों की मात्रा प्रतिदिन एक रत्ती परिमाण में बढ़ाकर १२ रत्ती तक नढ़ावे। उसके वाद श्रारोग्य दर्शन होने पर फिर मान्ना घटा कर श्रोषध सेवन गमाप्त करे।

दुग्धवटी—पारद, गन्धक, मीठा वित्र, ताम्र, श्रम्र, लौह, हरिताल, रिल, दाहमुन श्रोर श्रमीम ये सम भाग लेकर दूध में मर्दन कर श्राधे जी परिमाण पटिका बनावे। यह श्रोपध सेवन करते समय रोगी नमक श्रोर जल पन्द कर केवल दूध पथ्य करे। इस श्रोपध का श्रनुपान दुग्ध है। इससे दुर्निवार प्रदर्श, शोव श्रीर विपमज्वर निवारित होता है। यह श्रोपध दृष्टफल है।

श्रन्य प्रकार की दुग्धवटी—मीठा विप, श्रफीम प्रत्येक १२ भाग, कान्त-लीह ६ भाग, श्रभ्र ३० भाग, ये एकत्र दुग्ध में सर्दन कर २ रत्ती परिमाण विटका वनाकर प्रातः काल दुग्ध के श्रनुपान से प्रयोग करे। यह श्रोषध सेवन कर नमक श्रोर जल खाना—पीना वन्द रक्खे। यह सेवन करने से बहुत दिन की श्रहणी, प्रहणी संयुक्त शोथ, ज्वर श्रादि श्रनेक व्याधियां श्रारोग्य होती हैं।

जव नाना प्रकार की श्रोषध न्यवहार करके भी किसी प्रकार प्रहणी श्रारोग्य न की जासके, तव पर्पटी सेवन के नियम से रसपर्पटी, स्वर्णपर्पटी, ताम्रपर्पटी, लोहपर्पटी, विजयपर्पटी रोगी श्रोर रोग की श्रवस्थानुसार न्यवहार करने से तथाकथित श्रसाध्य दुर्निवार प्रहणी श्रारोग्य होती है। डाक्टरी चिकित्सा द्वारा त्यागे हुए इनटेस्टाईनैल टी-ची में प्रहणी रोगाधिकारोक्त श्रोषध न्यवहार से श्रानेक रोगी निर्दोप भाव से श्रारोग्य हुए हैं।

श्रनेक श्रहणी रोग में श्रहणी रोग भोगते—भोगते रोगी के पेट, श्रामाशय, पक्षाशय श्रोर श्रहणी में धाव हो जाता है। इस समय दुग्ध पथ्य कर उल्लिखित पर्पटी में से कोई एक युक्तिपूर्वक व्यवहार करने से श्रात उत्तम फल होता है। किसी चिकित्सा से यदि पेट की पीड़ा दूर न हो तो वह पर्पटी चिकित्सा से श्रारोग्य होती है। श्रहणी रोगी की श्रान्तम श्रवस्था में जब रोगी को क्षय, श्राचि, वमन, शोथ, जीर्णज्वर श्रादि श्रारेष्ठ लक्षण प्रकाशित हों श्रोर रोगी के वचने की श्राशा न रहे तब नीचे लिखी श्रोषध प्रयोग करने से मुमूर्ष रोगी भी जीवन लाम करता है।

विजयपर्टी—पारद, हीरक, स्वर्ण, रौप्य, मुक्ता, ताम्र, अश्र समभाग में ये ग्रहण करें। उसके वाद मिलित द्रव्यों की कज्जली बनाकर पर्पटी पार्क के नियम से पर्पटी तैयार करे। ज्वराधिकार में कथित पर्पटी सेवन के नियम से यह पर्पटी सेवन करने से सब प्रकार की असाध्य प्रहणी, यदमा, अन्त्रक्षय, विपमज्वर, जीर्णज्वर और सब व्याधि विनष्ट होती है। यह दृष्टफल है।

#### एकादश अध्याय

# अर्घा (ववासीर)-चिकित्सा

जो श्रोषि श्रोर पथ्यादि वायु का श्रनुलोम, श्राम्न की दीप्ति श्रोर बल की वृद्धि करती हो, श्रश् रोगी को उन्हीं श्रोषध श्रोर पथ्यादि की व्यवस्था करे। मलमूत्रादि का वेग रोकना, मैथुन, तेज सवारी पर यात्रा, उत्कट भाव से बैठना, एवं वायुवृद्धिकर श्रश्च-पानादि श्रशरोगी सर्वदा परित्याग करे।

## बातोल्वण अर्श की चिकित्सा

अर्शकुटारस्स—पारद १ तो०, गन्धक २ तो०, ताम्र ३ तो०, लौह ४ तो०, शुंठी २ तो०, दन्तीमूल २ तो०, पीलू बीज २ तो०, चीतामूल ३ तो०, जवाखार ५ तो०, सोहागा ५ तो०, सेंधव ६ तो०, ये द्रव्य ३२ तोला सीज के रस और ३२ तोला गोमूत्र में मर्दन कर मृदु अग्निसे पाक करे। औषध का जलीय अंश जल जाने पर ४ रत्ती मात्रा में विटका बनाकर जमीकंद के भुतें और पुराने गुड़, अनार के रस अथवा छाछ के अनुपान से प्रयोग करे। यह बातज अर्थनाशक है।

# पित्तज अर्श-चिकित्सा

तीदणमुखरस — अभ्र, स्वर्ण, ताम्र, तीच्ण लौह, मुण्ड लौह, पारद्भस्म, गन्धक, मण्हूर और सोनामाखी, प्रत्येक समान भाग में लेकर घृतकुमारी के रस मर्दन कर तीन दिन तुष (भूसी) की अभिन से पाक करे। औषध शीतल होने पर ४ रत्ती मात्रा चीनी के साथ प्रयोग करे। इससे सब प्रकार के पित्तज अर्था आरोग्य होते हैं।

# इलेष्मज अर्श चिकित्सा

पञ्चाननवटी—रसिसन्दूर, श्रश्र, लौह, ताम्र प्रत्येक १ तोला, भिलावा १ तोला, इन सवको कुद्रती जमीकंद के रस में मर्दन कर ४ रत्ती परिमाण वटिका यनाकर पृतके श्रनुपान से श्रोपध सेवन करने से सब प्रकार का श्रश्ये दूर होता है।

रिलागन्यकविका—मैनशिल श्रौर गन्धक समभाग लेकर भृङ्गराज के रन मे भावना देकर पृत श्रौर मधु के साथ मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण विका यनावे। एत श्रौर मधु के श्रनुपान से यह श्रौपध रलेप्मज श्रश्रीनाशक है।

अर्कयोग—पारद १ भाग, गन्धक १ भाग, एकत्र कज्जली कर नीवू के रस में मर्टन करे। उसके वाद उसके ऊपर ३ भाग ताम्र डाले। ७ दिन वाद उसे फिर नीवू के रस में त्रोर जङ्गली जमीकन्द के रस में मर्टन कर एक दिन गजपुट में पाक करे। दो रत्ती परिमाण यह श्रीषध घृत श्रीर मधु के साथ सेवन करने से सव प्रकार का श्रर्श निवृत्त होता है।

#### रक्तज अर्श चिकित्सा

- (१) रस चिकित्सा प्रथम खण्ड मे ताम्र प्रसङ्ग में कही हुई ताम्र भस्म २ रत्ती, कुड़े की श्रोर श्रनार की छाल के काथ के श्रनुपान से सेवन करने पर सब प्रकार का रक्तज श्रर्श निश्चत होता है।
- (२) पञ्चानन रस—पारद भरम, श्रश्र, लौह, ताम्र, गन्धक, प्रत्येक सम भाग लेकर समष्टि के समान शोधित भिलावे की मीगी लेकर पहले घी मे श्रीर फिर जमीकन्द के रस में मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। श्रनुपान- घृत, श्रनार का रस, लालचन्दन श्रीर मुलहठी के काथ, तिल कल्क श्रीर वकरी के दूध श्रीर देशी चीनी। इन श्रोषधियाँ के साथ सेवन से सब प्रकार का रक्तज श्रश्री श्रारोग्य होता है।
- (३) रसपर्पटी रक्तार्श की सर्वश्रेष्ठ श्रोषध है। श्रिधक रक्तस्राव होकर एकदम वहुत रक्तहीनता उपस्थित होने पर विजयपर्पटी व्थवहार करने से क्षय श्रीर रक्तार्श निवृत्त होता है।

## सब के प्रकार अर्श की नाज्यक कुछ ओषधियां

श्राङ्गरस—पारद, गन्धक, मण्ह्र, त्रिफला, चीता, त्रिकटु श्रीर मृङ्गराज ये समभाग में लेकर सेमर श्रीर गिलोय के रस मे भावना देकर ६ रती प्रमाण चटिका बनावे। श्रज्ञपान-दोषानुसार छाछ, हरीतकी चूर्ण, गरम जल, पुराना गुड़, कुडे की छाल, श्रनार के फल के छिलके का क्वाय, नागेश्वर फूल की रेणु इत्यादि।

रस गुडिका—रससिन्दूर १ भाग, विदृद्ध २ भाग, मरिच ३ भाग, अभ ३ भाग, ले एकत्र गङ्गा-पातड् (कचूर) के रस में मर्दन कर २ रत्ती परिमाण विटका वनावे। पूर्वोक्त श्रनुपान के साथ व्यवहार करने से सब प्रकार का अर्था आरोग्य होता है।

१३ र० चि०

फनक सुन्द्र रख-पारद, सोनामाखी, जारित कान्तलीह, श्रभ्र, सीसक, स्वर्ण, गन्थक प्रत्येक १ भाग एकत्र ये द्रव्य मिलाकर मृदु श्रिप्त से विद्याधरयन्त्र में पाक करे। शीतल होने पर उसके साथ एक भाग त्रिकटु चूर्ण मिलाकर १ रत्ती मात्रा में प्रयोग करे। यह सब प्रकार के श्रश्च श्रीर श्रनुपान सेद से श्रन्यान्य श्रनेक प्रकार के रोगों का नाशक है।

--00<del>254</del>00--

#### द्वादका अध्याय

#### ्भगन्दर चिकित्सा

## वातिक श्रतपोनकसंज्ञक भगन्दर चिकित्सा

वारिताण्डवरस्त निशुद्ध पारद १ माग, गन्धक २ माग एकत्र कज्जली कर घृतकुमारी के रस में मईन करे। फिर ३ माग शोधित ताम्रपत्र प्रहण कर उक्त घृतकुमारी के रसमर्दित कज्जली द्वारा लेप प्रदान, करे। अनन्तर एक मिट्टी के पात्र के नीचे का कुछ त्रश आरण्यकण्डो की राख से भरकर उक्त ताम्रपत्र उसके ऊपर रख दे, फिर वैसी ही राख से सब पात्र को चारो ओर से घेर दे। पात्र का सुख एक सकोरा से डककर २ प्रहर तक चुल्ली के ऊपर तीव्र अिन से पाक करे। पात्र शीतल होने पर हांडी में से औषध बाहर निकाल कर जम्हीरी के रस में ७ वार अन्धमूषा में रख गजपुट से पाक करे। इसकी मात्रा १ रत्ती है। अनुपान चृत और मधु। यह औषध सेवन के अन्त में तालमूली आधा तोला और लहसुन है तोला, कांजी के साथ पीस कर सेवन करे। यह औषध सेवन के समय दिन में सोना, मैथुन और शीतल द्रव्य सेवन त्याग कर स्वादिष्ट वस्तुओं का आहार करे। इसके द्वारा शतपोनक नामक दु साध्य भगन्दर आरोज्य होता है।

# पैत्तिक उष्ट्रग्रीव नामक अगन्दर चिकित्सा

भगन्द्रकुठार—पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, एकन्न मर्दनपूर्वक कज्ञली कर घृतकुमारी के रस द्वारा ३ दिन मर्दन कर २ भाग ताम्र श्रीर २ भाग लोह उसके साथ मिलावे, श्रानन्तर उसकी एक हाड़ी में रखकर सकीरे से दक दे। उसके ऊपर भस्म रख कर एक चूल्हे पर २ प्रहर पाक करे। शीतल होने पर चूर्ण कर नीवू के रस में ७ भावना दे पुटपाक में दग्ध करे। यह एक रत्ती मात्रा में

सेवन करने से पेत्तिक उष्ट्रप्रीव नामक भगन्दर आरोग्य होता है। अनुपान-घृत 'श्रोर मधु।

श्लेष्मिक परिस्नाविनामक भगन्द्र चिकित्सा

भगन्दरकिरारी—हिंद्धल, गेरू, रसौत, मैनशिल, गूगल, पारद, किंद्धम, गन्धक, लोह, संधानमक, श्रतीस, चन्य, शरफोका, विडङ्ग, श्रजवाइन, गजपीपल, मरिच, श्राकको जड़, चरुण-मूल, श्वेत धूना, हरीतकी ये सब द्रव्य समभाग लेकर कटु तैल में मर्दन कर ६ रत्ती प्रमाण गोली वनावे। मधु के साथ सेघन करने से इसके द्वारा श्लैष्मिक परिस्नावि नामकं भगन्दर विनष्ट होता है।

# सामिपातिक गम्बूकावर्त नायक भगन्दर

भास्कर योग—शोधित ताम्रपत्र ८ तोला, पारद ४ तोला, गन्धक ८ तोला एकत्र कज्ञली कर जम्हीरी के रस में मर्दन करे, फिर ग्रन्थमूषा में उक्त तीनों द्रव्य जन्द कर ५ वार लघु पुट देवे। १ रत्ती मात्रा में यह श्रोपध घृत श्रोर मधु के साथ सेवन करने सं सब प्रकार का भगन्दर विनष्ट होता है। यह शम्बूकावर्त नाशक है।

श्रहयज उत्यागीं नागक धगन्दर चिकित्सा

झणराच्चस तैल — कर् तेल १ ई छटाक लेकर फिर पारद, गन्धक, हरिताल, सिन्दर, मैनशिल, लहसुन, विप श्रोर ताम्र प्रत्येक २ तोला उसके ऊपर डाले। उसके वाद इन द्रव्यों को उत्तम रूप से मर्दन कर सूर्य की धूप मे पाक करे। यह तेल प्रयोग करने से शल्यन उन्मार्गी नामक भगन्दर शीघ्र विनष्ट होता है।

# त्रयोदश अध्याय अग्निमान्यादि रोगाधिकार श्रामानीर्ण चिकित्सा

श्रामाजीर्ण में कफनाराक किया हितकर है।

श्रिवनकुमार रख—पारा, गन्धक, सोहागे का फूला अत्येक १ भाग, विप, कीड़ीभस्म, शङ्खभस्म अत्येक ३ भाग, मरिच ८ भाग ये सव एकत्र पक्के जम्हीरी के रस में मर्दन कर ४ रत्ती प्रमाण गोली वनावे। इसके सेवन करने से आमा-जीर्ण विनष्ट होता है। अनुपान-आदी का रस और मधु, नीवृ का रस और चूने का जल इत्यादि।

रामबाणरस—पारद, गन्धक, विष, लोंग प्रत्येक १ भाग, सरिच २ भाग, जायफल है भाग, एकत्र कची इमली के रस में मर्दन कर उर्द प्रमाण गोली वनावे । श्रजुपान-त्रादी का रस श्रोर मधु । यह श्रामाजीर्णनाशक है ।

क्षुधासागररस — त्रिकटु, त्रिफला, पञ्चनमक, तीन क्षार प्रत्येक १ भाग, मीठा विष दो भाग एकत्र जल में मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण विटका वनावे। श्रनुपान-लवज्ज चूर्ण श्रोर मधु वा श्रादी का रस श्रोर मधु।

तन्त्रनाथ गुडिका—पारद, गन्धक, मीठा विष, त्रिफला, त्रिकटु, जीरा प्रत्येक १ भाग, लोह, ग्राञ्च, शाह्व, कौड़ीभरम प्रत्येक २ भाग, लवङ्गचूर्ण १४ भाग, ये एकत्र जम्हीरी नीवू के रस मे ७ दिन भावना दे २ रत्ती प्रमाण विटका वनावे। श्रानुपान-पान का रस श्रोर मधु। यह श्रामाजीर्ण श्रादि सव प्रकार की मन्दािम का नाशक है।

श्रिकरस—मिरच, मोथा, कुडा, वच प्रत्येक १ भाग, विष ४ भाग, पारद, गन्धक १-१ भाग एकत्र श्रादी के रस में मर्दन कर मूंग समान गोली वनावे। गरम जल श्रथवा श्रादी के रस के श्रनुपान से सेवन करने पर यह सब प्रकार के श्रामाजीर्ण का नाश करता है।

#### विदग्धाजीर्ण-चिकित्सा

अक्तिष्पाक चटी—सोनामाखी, पारद, गन्धक, हरिताल, मनःशिला, निसोत, दन्ती, मोथा, चीता, सोठ, पीपल, मरिच, हरीतकी, अजवाइन, काला जीरा, हीग, कुटकी, सैंधव, वन अजवाइन (अजमोद), जायफल और जवाखार ये सब द्रव्य चूर्ण कर आदी के रस, हुड़हुड के रस, निर्गुण्डी के रस और तुलसी पत्र के रस में मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण बटिका बनावे। शीतल जल के साथ सेवन करने से यह औषध विद्यधाजीर्ण नाशक है।

श्राग्निकर वटी—जारित ताम्न श्रीर पीपल चूर्ण सम भाग लेकर शीतल जल से मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। शीतल जल श्रीर हरीतकी चूर्ण के श्रानुपान से यह विटका सेवन करने से विद्याधाजीर्ण श्रारोग्य होता है।

सर्चरोगान्तक वटी — पारा, गन्धक, मीठा विष, श्रजमोद, त्रिफला, सजीक्षार, जवाखार, चीते की जड़, सेंधानमक, जीरा, सोचर नोन, विडङ्ग, सामुद्र-लवण, त्रिकटु प्रत्येक सम भाग लेकर शोधित कुचिला सब के समान लेकर

जम्हीरी के रस में मर्दन कर मरिच प्रमाण विष्ठका वनावे। श्रमुणन हरीतको चूर्ण, शुण्ठी चूर्ण श्रीर पुराना गुड़। यह सब प्रकार के श्रिममान्य का नाशक है। विदग्धाजीर्ण में पित्तशान्तकरी किया हितकर है।

#### विष्टव्धाजीर्ण-चिकित्सा

इसमें वायुनाशक किया हितकर है।

महाशङ्ख वटी—शङ्ख भस्म, पांची नमक, इमली क्षार, त्रिकटु, हींग, विष, पारद, गन्थक, लौह, वङ्ग ये द्रव्य उत्तम रूप से मर्दन कर प्रथम श्रापां (चिचिदा), चीतामूल के क्षाय में भावना देवे। उसके वाद जम्हीरी, विजीस नीवू, श्रमलवेतस्, श्रामहल (चीघितया), इमली, वेर श्रीर करज के रस में इस भाव से भावना दे कि जिससे श्रीषध में खट्टापन उत्पन्न हो। उसके वाद २ रत्ती मात्रा में विटका वनावे श्रीर उष्ण जल के श्रनुपान से यह श्रीषध सेवन करने से सब प्रकार का विष्टन्धाजीर्ण श्रारोग्य होता है।

श्रजीर्शकण्टक रस—पारद १ पल, गन्धक १ पल, हरीतकी २ पल, सीठ, पीपल, मिरच, सेंधव प्रत्येक ३ पल, भङ्ग ४ पल, इन सबकी कागजी नीवू के रस में ७ वार मैर्दन कर ७ वार सुखाले । इसकी मात्रा-२ रत्ती । श्रनुपान-पान, बरम जल श्रीर सेंधव चूर्ण । यह सब प्रकार के विष्टब्धाजीर्ण का नाशक है ।

#### रमशोषाजीर्ण चि।केत्सा

क्रव्याद् रस—पारद ८ तोला, गन्धक १६ तोला, ताम ४ तोला, लौह ४ तोला, सव का चूर्ण कर श्रामि पाक से गलावे श्रीर श्रण्डी के पत्ते पर ढाल कर पर्पटी का श्राकार करे। फिर इसका चूर्ण कर लेवे। फिर किसी लोहपात्र में पके जम्हीरी का रस १०० पल रखकर उसमें वह चूर्ण डाले श्रीर मृदु श्राग्न की ज्वाला से पाककर सुखाले। श्रान्तर पञ्चकोल, विजीरा नीवू श्रीर खैकल (श्राम्लवेंत) के रस में ७ वार भावना देवे। फिर इसके साथ सोहागा ८ तोला, विड लवण ४ तोला, मिरच ४ तोला मिलाकर चना की कांजी में ७ वार भावना दे। फिर ४ रत्ती परिमाण वटी प्रस्तुत करे। इस वटी को तक श्रीर सैन्धव के साथ सेवन करे। यह श्रीषध सेवन से ६ घण्टे में सव जीर्ण हो जाता है। यह रसशेषाजीर्ण की एक उत्कृष्ट श्रीषध है।

#### दिख्चिका चिकित्सा

मृहच्छुह्व खरी — सेंहुड, श्राक, इमली की छाल, श्रापाड् (चिचिड़ा), केला, तिलनाल, पलाश इनका क्षार प्रत्येक ८ तोला; पांचो नमक प्रत्येक ८ तोला, सज्जीखार, जवाखार श्रोर सोहागे का फूला मिलित ८ तोला ये सब द्रव्य सूच्म चूर्ण कर एक पात्र में एक्खे श्रोर ८ तोला परिमित शङ्ख के टुकड़े श्राग्न में कम से ७ वार तपाकर ४ सेर नीवू के रस में ७ वार वुफावे, इस तरह बुफाने से शङ्ख द्रवीभृत होता है। श्रान-तर सोठ का चूर्ण २ पल, मिरच का चूर्ण २ पल, पीपल १ पल, शोधित हींग श्राचा पल, पीपरामूल, चीता, श्रजवाइन, जीरा, जायफल श्रोर लवज्ञ प्रत्येक का चूर्ण ४ तोला, एवं पारद, गन्धक, दिष, सोहागा भुना, मनःशिला प्रत्येक का चूर्ण २ तोला ले। फिर सब चूर्ण एकत्र मिलावे श्रोर श्राधा सेर खटी वस्तु में उसे मर्दित कर उद्दे वरावर विटका वनावे। यह विसूचिका रोग की श्रतीव उत्कृष्ट श्रोषध है।

वीरअद्राश्च — हजार अगिन का अश्र ४ तोला लेकर उसे ९० दिन चीते के रस मे भावना देकर आदी के रस मे मईनकर २ रत्ती की विटका वनावे। इन्हें पान वा आदी के रस के साथ सेवन करे। यह भी विस्चिका रोग की उत्कृष्ट औषध है।

विध्वंसनामा रस—पारा, गन्धक, सोहागा प्रत्येक १ भाग लेकर एकत्र मर्दन कर ७ वार जायफल के काथ की भावना देकर २ रत्ती परिमाण वटिका वनावे। चीनी के शर्वत के त्र्यनुपान से यह त्रौषध सेवन करने से विस्चिका नष्ट होती है।

#### अलसक चिकित्सा

वज्रधर रस—पारद, गन्धक, ताम्र, ग्राम्र, यवक्षार, सोहागा, वर्ण की छाल, वासक ( श्रह्सा ) की जह, श्रपामार्ग क्षार श्रोर सेंधानमक, प्रत्येक समभाग लेकर श्रच्छी तरह मर्दन करे। उसके बाद हाथीशुण्डा के रस श्रोर श्रामहल (चौपतिया ) के रस के साथ मर्दन कर पुटपाक करे। पात्र शीतल होने पर श्रोपध चूर्ण कर १ रत्ती मात्रा मे श्रोषध प्रयोग करे। श्रनुपान—श्रादी का रस श्रीर मधु।

#### दण्डालसक चिकित्सा

राजशेखर चटी:—पारद भरम १ भाग, मीठा विघ २ भाग, हरीतकी चूर्ण, गन्धक, त्रिकटु प्रत्येक १ भाग, ये एकत्र मिलाकर ७ बार पान के रस में ग्रीर कनक (धत्रें) के रस में मर्दन कर श्रीर ७ वार भावना देकर चना प्रमाण विदेका चनावे। श्रीर उन्हें छाया में सुखावे। गरम जल के श्रनुपान से यह वटी दण्डालसकादि सब प्रकार के उदर रोग का नाशक है।

#### विलिध्वका चिकित्सा

वडवामुकी वटिका—ताम्रभरम, लौह, श्रभ्र, विडङ्ग, ईशलाङ्गलीया, त्रिकटु, सुगन्ध वाला, नीम की छाल, हलदी और मीठा विष ये सव द्रव्य समभाग लेकर मङ्गराज, कुचिला, वाला (सुगन्ध वाला) श्रोर श्रादी के रस में मर्दन कर, १ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे। श्रादी के रस के श्रनुपान से यह वटिका विलम्बिका रोग नाशक है।

विशेष द्रप्रदयः—चिकित्सक सदा ही सर्वतो भाव से जठरामि की रक्षा करे, जठारामि रक्षित होने से कभी रोगी का किसी तरह अनिष्ठ नही होता है। सौ दोष कुपित हो और रोगी चाहे सौ व्याधियों से क्यों न पीडित हो, परन्तु कायागि रक्षित होने से ही जीवन रक्षित होगा। चिकित्सक समामि की रक्षा करे, विषमामि में वायु प्रशमक, तीचणागिन में पित्त प्रशमक और मन्दामि में श्लेष्मा विशोधक कार्य करे।

#### त्रयोदश अध्याय

### आभ्यन्तर कफोत्पन्न एवं पुरीषोत्पन्न क्रिमि चिकित्सा

किमिनाशकरस—पारा, गन्धक, श्रम्र, लौह, मैनशिल, धाई के फ़ल, त्रिफला, लोध, विडङ्ग, हलदी, दारुहल्दी, ये सब समभाग में लेकर श्रादी के रस में ७ वार भावना दे। फिर चने प्रमाण विटका बनावे। श्रनुपान-त्रिफला का चूर्ण वा भीगे त्रिफला का जल श्रीर मधु। यह सब प्रकार के श्राभ्यन्तर किमिनाशक है।

कीटमर्दरस—पारदं १ भाग, गन्धक २ भाग, श्रजवाइन ४ भाग, विडंग ८ भाग, कुचिला १६ भाग, भारगों के वीज ३२ भाग, सब द्रव्य एकत्र चूर्ण कर आधा तोला परिमाण मधु के साथ सेवन से किमि रोग का विनाश होता है। अनुपान-मोथा (नागरमोथा) का रस। यह अतीव किमिष्न है।

किमिमुद्गरस—पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, श्रजवाइन ३ भाग, विडङ्ग ४ भाग, कुचिला ५ भाग, पलाश बीज ६ भाग, सवका चूर्ण एकत्र कर ६ रत्ती परिमाण सेवन करे। इसे मधु के साथ चाटकर मोथा का रस श्रजुपान करे। यह श्रिविद्धक श्रीर किमिरोग तथा किमि से उत्पन्न श्रन्थान्य रोगनाशक है।

किमिधृलि-जलण्लवरस-पारद, गन्धक, बङ्ग शङ्खभस्म, प्रत्येक १ भाग, हरीतकी चूर्ण ४ भाग ये सब श्रोषध एकत्र पाक कर पटोल के रस द्वारा मईन कर विनौले के समान विटका बनावे। प्रातः इसमें तीन वटो सेवन कर छपर से शीतल जल पीवे। यह पित्तज किमिरोग के लिये व्यवस्था है।

क्रिसिकाष्टानलरस—पारद, गन्धक, वङ्ग, हरिताल, कौड़ी की भस्म, मैन-शिल, कृष्णवर्ण काच (कालानसक), सोमराजी (वाकुची) के वीज, विडङ्ग, दन्तीवीज, जमालगोटा के वीज, शिलाजीत, सोहागा, चीते की जड़ प्रत्येक २ तोला, परिमाण लेकर सीज के क्षार द्वारा मईन कर उई बराबर वटिका तैयार करे। यह वातज, पित्तज, श्लेष्मज क्रिमि-विनाशक है।

विडङ्गलौह—पारद, गन्यक, मरिच, जायकल, लवङ्ग, पीपल, हरिताल, शुंठी, सोहागा अत्येक १ भाग, सब वस्तुश्रों के तुल्य विडङ्ग मिलाकर इन सबके समान लौह। इनको एकत्र कर जल द्वारा मर्दन कर १ मासे के प्रमाण गोली वनावे। श्रनुपान-विडङ्गचूर्ण श्रथवा चूने का जल श्रीर श्रनन्नास के पत्तों का रस।

#### रक्तजात क्रिमि को चिकित्सा

कुष्टरोगाधिकार में कही हुई कुष्ठ रोग की चिकित्सा की तरह करे।

- (१) हरिताल भस्म है रत्ती मात्रा में गाय के घी के साथ प्रयोग करने से सब प्रकार का रक्तज किमिरोग श्रारोग्य होता है।
- (२) ताम्रभस्म श्रादी के रस श्रीर मधु श्रथवा गाय के घी श्रीर मधु के श्रानुपान से सेवन करने पर सब प्रकार के रक्तज किमि श्रारोग्य होते हैं।
- (३) पारद भस्म गव्य घृत के अनुपान से सेवन करने पर भी रक्तज क्रिमि

## चतुर्दश अध्वाय पाण्डुरोग चिकित्सा वातज पाण्डुरोग चिकित्सा

पाण्डुहारि चूर्ण—मोथा, वच, देवदार, मानमूल, कुटकी, इन्द्र जौ, निसीत की जड़, कालाजीरा, चव्य, दारुहल्ही, त्रिफला, हलदी, दन्तीमूल, त्रिकटु ग्रौर चीते की जड़ प्रत्येक २ तोला एवं ताम, लौह ग्रौर ग्राम प्रत्येक १ पल, सर्व समष्टि का दूना मण्ड्र, मण्ड्र का ८ गुना गोमूत्र । सबसे पहले गोमूत्र में मण्ड्र पाक करे, एवं पाक समाप्त होने पर उपर्युक्त द्रव्यादि मिलावे। मात्रा—दो ग्राना भर। श्रनुपान—उष्ण जल। इसके सेवन से वातज पाण्डु, हलीमक ग्रौर शोथ श्रादि नाना प्रकार के रोग शान्त होते हैं।

हंसमण्डूर—एक भाग सूच्म मण्डूर आठगुने गोमूत्र के साथ पाक कर उसके साथ त्रिफला, त्रिकटु, मोथा, विडङ्ग, चव्य, चीते की जड़, दाहहल्दी, पीपरा-मूल, देवदारु, प्रत्येक एक एक भाग मिलावे, उसके बाद मण्डूर के समान गव्य घृत उक्त श्रोषधियों के साथ मिलाकर ६ मासे मात्रा में तक के साथ सेवन करे। वह वातज पाण्डुनाशक है।

नवायस लौह—त्रिकटु, त्रिफला, मोथा, विडंड श्रौर चीतामूल प्रत्येक १ भाग, लौह ९ भाग, एकत्र जल में मर्दन कर ९ रत्ती प्रमाण विटका वनावे। श्रमुपान—वृत श्रौर मधु, कुलेखाडा (तालमखाना) पत्तो का रस, नीम के पत्तो का रस, तक वा गोमूत्र के साथ पान करने से सव प्रकार का पाण्डरोग विनष्ट होता है।

### पित्तज पाण्डुरोग चिकित्सा

निशालोह—हलदी, दारुहल्दी, श्रामलकी, हरीतकी, वहेंडा, कुरको प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर सबके समान लौहभस्म उनके साथ मिलाकर १ माशे की वटी वनावे। घृत श्रोर मधु श्रनुपान से यह श्रोषध पित्तज पाण्डु का नाश करती है।

दार्व्यादिलोह—दारुहल्दी, त्रिफला, त्रिकरु, विडङ्ग प्रत्येक समभाग श्रीर सबके समान लौह एकत्र मिलाकर ६ रत्ती प्रमाण वटी वनावे। श्रनुपान-घृत श्रीर मधु, यह पित्तज पाण्डरोग विनष्ट करता है। पित्तपाण्ड्विर गुटिका—पारद ४ भाग, गन्धक ४ भाग, लोह ४ भाग, वीता, मोथा, विडङ्ग, सोठ, पीपल, मस्चि, श्रामलकी, हरीतकी, वहेंडा, कुटजी प्रत्येक १ भाग ये द्रव्य एकत्र मर्दन कर ४ रत्ती की वटी वनावे। प्रातः समय पान के रस, नीम के पत्तो के रस और मधु के साथ १ वटी सेवन करने से पित्तज पाण्डुरोग श्रारोग्य होता है।

### इलेष्मज पाण्ड्रोग चिकित्ला

त्तरवानन्द्रस-पारद, गन्धक, लौह, अभ्र, विप अत्येक १ भाग, मरिच,
.८ भाग, सोहागा भुना हुआ ४ भाग ये सव द्रव्य मृङ्गराज के रस में ७ वार श्रोर खेट्टे अनार के रस में ७ वार भावना देकर २ रत्ती प्रमाण गोली वनावे । सन्ध्या- काल मे पान के रस और मधु के साथ यह विटका सेवन करने से कफज पाण्डरोग निवारित होता है।

कासेश्वरदस—पारा, गन्धक, हरीतकी, चीते की जड़ प्रत्येक १ भाग, मोथा, इलायची, तेजपात प्रत्येक १ भाग त्रिलंड, पीपरामूल, विप, नया केशर, एरण्डमूल प्रत्येक १ भाग और सव द्रव्य के समान पुराना गुंड के साथ ये द्रव्य उत्तम रूप से, मर्दित कर धतूरे के रस में भावना दे। उसके वाद बैर की गुठली के समान गोली वनावे। शहद के साथ रात को सेवन करे। इसके द्वारा श्लेष्मज पाण्डुरोग आरोज्य होता है।

### त्रिदोषज पाण्डुरोग चिकित्सा

प्राणवस्त्रभरस—पारद, गन्धक, एवं कुड़ुम, लोह, ताम्र, कोडी की भरम, तूर्तिया, हीग, त्रिफला, सीज की जड़, जयपाल, दन्ती की जड़, निसोत प्रत्येक १ तोला मात्रा में लेकर बकरी के दूध में मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण गोली वनावे। श्रनुपान-मधु वा शीतल जल। इसके द्वारा श्राति प्रवल प्रतापी दुर्निवार पाण्डरोग श्रारोग्य होता है।

त्रेलोक्यसुन्द्रस्य—पारद १ भाग, श्रभ्र ६ भाग, लौहमस्म ८ भाग, एवं त्रिकटु, त्रिफला, मन्धक, तालमूली (मूपली), मोचरस, गिलोय का सत, प्रत्येक ५ भाग ये सव द्रव्य एकत्र कर १० दिन में २० बार भावना देवे। फिर सह-जना श्रोर चीतामूल के रस मे पृथक् २ कर ८ बार भावना देकर १ माशे परिमाण

विदेश वनावे। श्रनुपान-चीनी श्रौर मधु। इसके सेवन से पाण्डु, शोध, क्षय श्रौर उपद्रव सहित ज्वरातिसार शीध्र विनष्ट होता है।

#### पाण्डुजनित शोध-चिकित्सा

पाण्डुधनपङ्करोषण रस—पारदभस्म, ताम्रभस्म, गन्धक श्रौर मीठा विष प्रत्येक १ भाग ये सब द्रव्य चीतामूल के रस में मर्दन कर मृदु श्राप्त से पाक कर र रत्ती मात्रा में प्रयोग करे। श्रनुपान-कुलेखाडा (तालमखाना) के पत्तो का रस, पुनर्नवा का रस श्रौर मधु। यह पाण्डुजनित शोधनाशक है।

पुनर्नवा मण्ड्रर—शोधित मण्ड्रर ५ पल, पाकार्थ गोमूत्र ८५ सेर एकत्र कर पकावे, श्रासच पाक होने पर पुनर्नवा, निसोत, सोठ, मिरच, पीपल, देवदार, विडङ्ग, श्रामला, कुडे की छाल, चीते की जड़, हलदी, वहेड्ग, हर्र, चन्य, दन्ती-मूल, दारुहल्दी, मोथा, पीपरामूल, इन्द्रजी, कुटकी प्रत्येक का चूर्ण १ तोला मिलाकर श्रालोडन कर डतार ले। मात्रा-४ मासे। इसके सेवन से पाण्डु शोथ श्रादि श्रनेक प्रकार के रोग नष्ट होते हैं।

पञ्चाननवरी—अभ्र, गूगल, गन्धक, ताम्र और पारद अत्येक समभाग, सवके समान जयपाल के बीज चूर्ण एकत्र कर २ रत्ती प्रमाण विटका वनावे। इसके सेवन से पाण्ड और शोथ रोग विनष्ट होता है। अनुपान-घल घिसया (द्रोणपुष्पी) का रस।

#### कामला चिकित्सा

तियोनि—एक भाग कज्जली नीवू के रस के साथ मिलाकर ४ भाग सूच्म ताम्र पत्र पर उसे लेपन करे और धूप में सुखावे। फिर दो सकोरों में वे ताम्र पत्र रखकर उनके नीचे—ऊपर गन्धक और चारों और नकिन्नकनी देकर सकोरों के ऊपर मिही लेप देवे। शुष्क होने पर ६ घण्टा गजपुट में पाक करे। शीतल होने पर औषध चूर्ण करे। यह १ रत्ती मात्रा में गुड़ और हर्र के चूर्ण के साथ मिलाकर सेवन से कामला, शोथ और पाण्डुरोग विनष्ट होता है।

लोहभस्म—सब प्रकार की रक्तहीनता, पाण्ड, कामला, हलीमक, क्रम्भ-कामला त्रादि रोगों में लोहभस्म त्रतीव हितकर है। दो रत्ती परिमाण वारितर लौहभस्म घृत त्रौर मधु के साथ प्रयोग करने से सब प्रकार का दुःसाध्य कामला रोग, त्रारोग्य होता है। त्रानुपान-पुनर्नवाष्टक पाचन।

#### हलीमक चिकित्सा

चन्द्रसूर्यात्मकरस—पारद, गन्धक, लौह, श्रभ्र प्रत्येक १ भाग, सोहागा श्रीर कौड़ीभस्म प्रत्येक है भाग, गोखुरू बीज १ भाग इस तरह सव द्रव्य लेकर वाष्पयन्त्र से भावित करे। इसके बाद परवर, पित्तपापड़ा, भारंगी, विदारीकन्द, सतावरी, गिलोय, श्राह्सा, दन्ती, काकमाची, इन्द्रायन, पुनर्नवा, करोरू, शालिख शाक, द्रोणपुष्पी प्रत्येक के रस मे भावना देकर १ रत्ती परिमाण विटका बनावे। श्रानुपान—गिलोय, श्राह्सा श्रीर त्रिफला का काथ श्रीर मधु। यह हलीमक नाशक है।

कुम्भकामला चिकित्सा

- (१) धात्रीलौह—ग्रामला, लौहमस्म, शुंठो, पीपल, सरिच, हलदी, एकत्र -समभाग में मर्दन कर ८ रत्ती मात्रा में घृत श्रौर मधु के श्रनुपान से सेवन करे। -यह दुःसाध्य कामला-नाशक है।
- (२) हरिताल भस्म है चौथाई रत्ती परिमाण में गव्यष्टत श्रौर मधु के श्रनु-'पान से सेवन करने पर दु-साध्य कुम्भकामला रोग निश्चय श्राराम होता है।
  - (३) विजय-पर्पटी व्यवहार से भी श्रिधिक उपकार पाया जाता है। पाण्डु, कामला श्रीर हलीमकरोग में नीचे लिखे श्रनुपान प्रशस्त हैं—
- (१) हरीतकी चूर्ण, गोमूत्र, गिलोय का रस, त्रामले का चूर्ण, त्रिफला का क्वाय, पुनर्नवारस, दारुहलदी घिसी हुई, हलदी का चूर्ण, विडङ्गचूर्ण, मोथा का रस, चीनी घी, मधु, गोल सरिच का चूर्ण, कुले खाड़ा (तालमखाना) का रस, त्राह्से के पत्तो का रस, नीम के पत्तो का रस, निसोथ का चूर्ण, त्रिकटु चूर्ण, मुलहठी, चिरायता श्रौर खैर का क्वाथ।

---0;<del>-0;-0;-0--</del>

### पश्चद्या अध्याय उदावर्त और आनाह चिकित्सा

### खदावर्त चिकित्सा

वृहत् इच्छाभेदीरस—शोधित पारद, सोहागा, मरिच, गन्धक सब द्रव्य समान भाग, गन्धक का दूना निसोत श्रोर श्रातीस श्रोर ९ गुना जमालगोटा का चूर्ण एकंत्र कर खरल में श्राक के पत्तों के रस में २ घड़ी मर्दन करे। फिर श्रारण्यकण्डों की सृदु श्राग्न से पाक कर १ रती प्रमाण वटी वनाकर शीतल जल के साथ सेवन करे। जब तक गरम जल न पियेगा तब तक दस्त वन्द न होंगे। पथ्य-दिध श्रीर श्रज्ञ। यह सब प्रकार के उदावर्त श्रीर श्रामगुल्मादिः विविध पीड़ा का शान्तिकारक है।

#### आनाह चिकित्सा

चैद्यनाथ विद्या-हर्रे, सोंठ, पीपल, मरिच, रसिसन्दूर ये सब प्रत्येकः १ भाग, जयपाल २ भाग, इनको खानकुनी (मण्ह्रकपणीं) श्रीर श्रामरूल (चाङ्गरी=चौपितया) के रस में मर्दन कर १ रत्ती परिमाण विद्या वनावे। यह सब प्रकार के उदावर्त, गुल्म श्रीर कुष्ठादि विविधरोगों की नाशक है। श्रानुपान-चीनी का जल।

नाराचरस—पारद, गन्धक, मरिच प्रत्येक एक भाग, सोहागा, पीपल, सोंठ प्रत्येक २ भाग सबके समान लघु दन्तीबीज। ये सब सेंहुड़ के दूध में तीन दिन मर्दन कर नारियल के मध्यभाग में स्थापनपूर्वक प्रवल अग्नि में पाक करे। फिर श्रीषध निकालकर २ रत्ती प्रमाण वटिका करे। इस श्रीषध द्वारा नाभि पर प्रत्येप देने पर भी विरेचन होता है। यह प्रवल श्रानाहनाशक है।

वारिशोषण रस—गन्धक २४ भाग, वङ्गमस्म १२ भाग, पारद ६ भाग, कृष्णाश्च १४ भाग, लोह ८ भाग, ताम्च ९ भाग, स्वर्ण २ भाग, रौप्य ७ भाग, हीरा १३ भाग, सोनामाखी १६ भाग, हीराकस १८ भाग, त्तिया ६ भाग, हिरताल, ४ भाग, मैनसिल ३ भाग, शिलाजतु ५ भाग, मोथा १ भाग, सोहागा २ भाग, ये सब द्रव्य एकत्र चूर्ण कर जम्हीरी के रस द्वारा ७ वार भावना देकर उसके द्वारा गुटिका तैयार करे। फिर गुटिकात्रों के २ भाग कर २ मिट्टी के पात्रों में रखकर दूसरे पात्रों से ढक दे, फिर उनका मुख वंद कर धूप में मुखावे। फिर एक हांडी के वीचे वालू रखकर उस वालू पर दोनों मूषा स्थापन करे फिर उनका उपरी भाग वालू से भर दे फिर हांडी का मुख सकोरे से ढक दें फिर चूल्हे पर हांडी रखकर १ श्रहोरात्र श्राग्न से पाक करे। शीतल होने पर चूर्ण कर वक्तल (मीलसिरी) के वीजों के क्वाथ, त्रिफला के क्वाथ, वृद्धदारक वीज के क्वाथ, श्रपराजितामूल का रस और मत्स्यिपत्त द्वारा प्रथक् पृथक् रूप से ७-७ भावना दें श्रोर २ रत्ती प्रमाण वटी वनावे। श्रनुपान—त्रिफला और त्रिकटु का क्वाथ। यह उदावतं, प्लीहादि विविध रोगमाशक है।

#### ' लोडवा अध्याय

7

### शुलरोग चिकित्ला

### बातजशूल चिकित्सा

पञ्चात्मकरस—रससिन्द्र, ग्रिश्र, श्रम्लवेतस, ताम्र, गन्धक, विप, त्रिफला इन सव का चूर्णकर समान भाग ले, फिर जयन्ती, मुण्डी, वृहती, गिलोय, भारंगी, जामन को छाल, नोलकमल, प्रत्येक के रस द्वारा पृथक् २ भावना दे। उसके साथ मिलित सव द्वारों का ग्राधा भाग पांची नमक मिलाकर त्रादी के रस के साथ एक दिन पीस कर चने वरावर गोली वनावे। प्रतिदिन प्रातः, सम्याह ग्रीर रात के समय इसकी ३ वटी सेवन कर उर्द, ईख, पिठ्ठी, गुरुपाकी श्रन्न ग्रीर गाय का दृध सेवन करे। यह वातज-श्रूल नाराक है।

श्रुत्तराज लौह—कान्तलौह २ तोला, अभ्र १ तो०, चीनी, मधु, घृत प्रत्येक ८ तोला एकत्र कर लोहदण्ड द्वारा मर्दन कर विडङ्ग, चन्य और चीतामूल का चूर्ण प्रत्येक १ तोला उसके साथ मिलावे। ४ रत्ती मात्रा में प्रातः शीतल जल से सेवन करे। इसके सेवन से विविव श्रुल, अम्लिपत्त, अर्था, प्रहणी, प्रमेह और विसूचिका रोग नष्ट होता है।

#### पित्रज शूल चिकित्सा

सप्तासृत लोह — मुलहठी, त्रिफला प्रत्येक एक-एक भांग, लोह चूर्ण ४ भाग, ये सव उपयुक्त परिमाण में घृत श्रीर मधु के साथ सर्दन कर एक श्राना भर मात्रा में गाय के दूध के साथ सेवन करने से शूल श्रीर श्रम्लिपत्त श्रादि रोग नष्ट होता है।

जिफला लोह—तीचण लोह चूर्ण और त्रिफला चूर्ण सम्भाग में लेकर द्ध में मर्दन कर सेवन करने से पित्तजशूल रोग में विशेष फल पाया जाता है।

त्रिनेत्ररस—पारद १ भाग, ताम्र ३ भाग, गन्धक ९ भाग एकत्र अम्लरस में मर्दन कर पुटपाक में भस्म करे। मात्रा—१ रत्ती। अनुपान—आदी का रस, संधानमक, अण्डी का तेल, मधु, हीग और जीरे का चूर्ण। इसके सेवन से सब प्रकार का श्रूलरोग विनष्ट होता है। वृहत् त्रिनेत्र रस—हरिण के सींग का चूर्ण, जारित स्वर्ण, पारद एवं ताम सम भाग में लेकर ४ प्रहर श्रादी के रस में मर्दन कर मूषाबद्ध करके पुटपाक करे। मात्रा—१ माषा। श्रनुपान—वृत श्रीर मधु। यह पित्तज श्रलनाशक है।

#### इलेष्मज-शुल चिकित्सा

श्रीनसुख—पारद, सोनामाखी, ताम्र, काला श्राभ्र, गन्धक, हरिताल, भनःशिला, सैन्धव, मीठा विष, हींग, चीते की जड़, वन श्रादी, कचनार की छाल, रक्तनटे शाक (रक्त मारिष), निर्गुण्डी, जलगीपल, श्राह्मा श्रीर कुचिला ये सब द्रव्य समभाग में लेकर भङ्ग श्रीर जयन्ती के रस के साथ मर्दन कर कुक्कुट मुट मे पाक करे। श्रनुपान—शृत श्रीर सोंठ का चूर्ण श्रथवा हींग, सौवर्चल नमक श्रीर उष्ण जल। मात्रा—६ रक्ती। यह श्लेप्यन श्रुल नाशक है।

शह्वादि चूर्ण—शह्व भस्म, सैन्धव, सोचर नोन, विड नोन, सांभरनोन डिद्भिदलवण, सोहागे का फूल, जायफल, सतावर, श्रजवायन, त्रिकट, हींग, ये सव द्रव्य प्रत्येक ८ तोला लेकर एकत्र चूर्ण करे। मात्रा—६ रत्ती। श्रनुपान—श्रादी का रस श्रीर मधु। इसके सेवन से श्लोब्मज शहल शीव्र विनष्ट होता है।

#### ं त्रिदोषज शुल चिकित्सा

सर्वोद्वासुन्द्र रस—शोधित अभ, पारद और गन्धक, प्रत्येक सम भाग, ये सब एकत्र काली मूसली के रस के साथ मर्दन कर गोला बनावे। उस गोले को एक कुप्पी में रक्खे और खिंड्या द्वारा उसका मुख बन्द कर उस कुप्पी को कपरोटी करे और धूप में सुखावे फिर उस कृपिका को मिट्टी में दवा कर पुट देवे। पाक हो जाने पर कृपिका के मुख में लगी हुई खिंड्या सिहत कृपिका की दवा का चूर्ण करे और उसके साथ जवाखार, सर्जीखार, सोहागा, पांचो नमक, त्रिकट, त्रिफला, हीग, गूगल, इन्द्रजो कोच, चीते की जढ़, अजवाइन, अजमोद, सब समभाग ले मिलावे,। मात्रा—६ रत्ती। प्रातः सेवनीय। फिर उष्ण जल अनुपान करे। प्रतिदिन १ वार सेवन करे। यह त्रिदोपज शूल नाशक है।

धात्री लौह—आमले का चूर्ण ८ पल, लौह चूर्ण ४ पल, मुलहठी चूर्ण २ पल, सव एकत्र कर आमले के काथ में भावना दें। भावना के लिये आमला

१४ पल, जल ११२ पल श्रोर शेष २८ पल। मात्रा--६ रत्ती। घृत श्रोर मधु के श्रानुपान से सेवन करे। इसके सेवन से त्रिदोषज शूल विनष्ट होता है।

### परिणास शुल चिकित्सा वातिक परिणाम शुल की चिकित्सा

त्रिगुणाख्य रस--सोहागा, हरिण का सींग, स्वर्ण, गन्धक, रसिसन्दूर सव सम भाग लेकर श्रादी के रस में मर्दन कर पुटपाक में दग्ध करे। मात्रा— २ रती। श्रनुपान— वृत श्रीर मधु। फिर सेंधानमक, जीरा श्रीर हीग का चूर्ण सम परिमाण लेकर वृत श्रीर मधु के साथ लेहन करे। इसके सेवन से वातिक परिणाम शूळ शीघ्र निवृत्त होता है।

श्रूलगजकेशरी—पारद १ भाग, गन्धक २ भाग एकत्र कज्जली करे। फिर जम्हीरी नीबू के रस में मर्दन कर उसके द्वारा ६ तोले ताम्रपुट के भीतरी भाग को लिप्त करे। फिर एक मिट्टी के भाण्ड में ८ तोला नमक रख कर उसके ऊपर वह ताम्र सम्पुट स्थापन करे श्रीर ज्सके ऊपरी भाग पर ८ तोला नमक देकर मुख रुद्ध करे एवं गजपुट में पाक करे। श्रानन्तर ताम्रपुट निकाल कर चूर्ण कर एक पात्र में स्थापन करे। २ रत्ती परिमाण में यह श्रीषध पान के रस के साथ सेवन करे। इसकी सेवन कर हींग, सोठ, जीरा, बच, मरिच, इनके सम परिमित चूर्ण को मिलाकर १ तोला गरम जल के साथ सेवन करे। यह वातिक परिणाम श्रूल के लिये ब्रह्मास्त्र है।

### पैत्तिक परिणामशुल चिकित्सा

त्रिपुरभैरव—पारद ४ भाग श्रीर गन्धक ८ भाग लेकर कज्जली कर नीवू के रस में मिद्दित करे श्रीर उसके द्वारा १२ भाग तामे के पन्न प्रालिप्त करे। मात्रा—२ रत्ती। श्रनुपान-धृत श्रीर मधु। इसके सेवन से पैत्तिक परिणाम शूल शान्त होता है।

वृहत् विद्याधराभ्र—पारद, गन्धक, विडङ्ग, मोथा, त्रिफला, त्रिकहु, निसोत, दन्ती, चीता, मूपाकर्णी, पीपरामूल प्रत्येक २ तोला प्रहण करे। कृष्ण- श्रभ्र चूर्ण ८ तोला, लौह ३२ तोला, घृत और मधु के साथ मर्दन कर बेर प्रमाण विदक्षा वनावे। श्रनुपान—गोदुग्ध श्रथवा नारिकेल जल। इसका प्रातः सेवन करने से श्रसाध्य वातज श्रौर पित्तज परिणाम शूल विनष्ट होता है।

# इलै हिमक परिणामशूल चिकित्सा

श्वान्तक रस— त्रिकटु, त्रिफला, चीता, मोथा, निसोत प्रत्येक १ तोला, किंजली १ तोला, लौह, श्रभ्र श्रोर विडङ्ग प्रत्येक २ तोला इन सबका चूर्ण त्रिफला के क्वाथ में मर्दन कर ६ रत्ती प्रमाण विटका बलावे। श्रनुपान--काजी। यह श्लैष्मिक परिणाम शूल निवारक है।

### त्रिदोषज परिणाम शुरू-चिकित्सा

श्लकेशरी—पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, एकत्र एक प्रहर मर्दन कर उसके साथ ३ भाग ताम्रभरम मिलावर पुट में बंद करे। एक भाण्ड में छपर नीचे नमक रखकर उसमें श्रोपधपूर्ण मूषा रथापन पूर्वक गजपुट में पाक करे। यह श्रोपध २ रत्ती मात्रा में पान के रस के साथ सेवन करने के वाद छपर से हीग, सोठ, वच श्रोर मरिच का चूर्ण १ तोला मात्रा में गरम जल के साथ सेवन करे। इसके द्वारा श्रसाध्य त्रिदोषज शूल भी विनष्ट होता है।

उद्यभ स्कररस—पारद १ तोला, गन्धक ४ तोला एकत्र कळ्ली कर नीवू के रस में १२ घण्टा खरल में मर्दन कर कल्क तैयार करे। २ तोला सृदम ताम्रपत्र खोर पूर्वोक्त कळ्ली कल्क नीवू के रस में हुवा कर खरल में स्थापनपूर्वक तेज धूप में रख दे। फिर गोला सा बनाकर मूषा रुद्ध करे फिर ख़बख़टपुट में तीन वार पुट दे। मात्रा—२ रत्ती। छानुपान—पान का रस। यह त्रिदोपज परिणाम शूल का नाश करता है।

### अन्नद्रवशुल-चिकित्सा

श्रुत्तगजिन्द्रकेशरी—पारा ८ तीला, गन्धक १६ तीला, हरिताल २४ तीला, एकत्र ३ दिन मर्दन कर कज्जली करें, फिर ८ तीला ताम्रपत्र का पुट तैयार कर उनके बीच में वह कज्जली रक्खे, फिर एक पात्र में वह ताम्रपुट स्थापन कर उसके छपर श्रीर नीचे सेधानमक पीस कर पात्र भर दे। पात्र का मुख वंद कर मिट्टी लेप कर दे। सूख जाने पर गजपुट में पाक करे। पाक समाप्त होने पर पुट सिहित श्रीषध चूर्ण कर कपड़े से छान ले एवं सेधा नमक के भीतर श्रीपथ रख दे। २ रत्ती की मात्रा में हरीतकी चूर्ण श्रादी के रस के साथ सेवन से श्रावह श्राल श्रारेण्य होता है।

१४ र० चि०

श्लावज्ञ-ग्रम, ताम, लीह प्रत्येक ८ तीला एकत्र मर्दन कर १२ पल वूध ग्रीर १२ पल वी के साथ पाक करे, जब ग्रासन्न पाक हो तव विडङ्ग, त्रिफला, चीते की जड़, त्रिकटु प्रत्येक का चूर्ण ८ तीला उसमे मिलावे श्रीर साफ मिही के वर्तन में रखदे। मात्रा-२ रत्ती से श्रारम्भ कर कम से १० रत्ती तक वड़ावे। श्रारोग्य दर्शन होने पर श्रीषध को मात्रा कम कर श्रीषध समाप्त करे। श्रानुपान—शृत श्रीर मधु श्रयवा वारुणीमद्य। इसके सेवन के श्रन्त में दुग्ध श्रीर नारियल का जल श्रानुपान करे। यह श्रव द्रव श्रादि श्रल शीध विनष्ट करता है।

#### आमगुल-चिकित्सा

ताम्राप्टक होग, त्रिकटु, मुलहठी, सोंचर नोन, इमली का क्षार श्रीर ताम्र भस्म ये ८ द्रव्य सम भाग में लेकर एकत्र उत्तम रूप से मर्दन कर गरम जल के साथ पीवे। इसके सेवन से श्रामशूल श्रित शीघ्र विनष्ट होता है।

वडवानल रस —हिरताल, सोनामाखी, स्वर्ण, मनःशिला, कान्त लौह, गन्धक, ताम्र, पारद, प्रत्येक सम भाग, सब के समान श्रजवाइन, श्रजवाइन के चूर्ण के सिहत सब चूर्ण सम त्रिकरु—ये सब द्रव्य एकत्र मर्दन कर हिक्क मिले हुए जल द्वारा ७ दिन सतावार श्रीर जयन्ती, काकमाची, निर्णुण्डी श्रीर श्रादी के रस मे १-१ दिन भावना दे श्रीर मिरच के समान विटका कर छाया में सुखावे। यह उण्ण जल के साथ सेवन करने से श्रसाध्य उपसर्ग युक्त श्रामशूल शीघ्र दूर करता है।

### पाइवंशुल चिकित्सा

शृलहरण योग —हरीतकी, त्रिकटु, कुचिला, हींग, सेंघानमक, एवं गन्धक सम परिमाण में लेकर जल द्वारा मर्दन कर छोटे चेर बराबर गोली बनावे। घ्रमुपान-गरम जल या गरम दूध। यह सब प्रकार के शूल का नाशक है।

शूलनाशिनो—शोधित विषमुष्टि (कुचिला) १० तोला और गोल मरिच १ तोला, एकत्र जल में मर्दन कर ६ रत्ती प्रमाण गोली बनावे। गरम जल हे साय सेवन करे तो पार्र्वशूल को नष्ट करता है।

### कुक्षि ग्रल-चिकित्सा

त्तार ताम्र—पारद १ साग, गन्धक २ साग एकत्र मिलाकर उसके द्वारा पारद के समान ताम्र पत्र प्रलिप्त करे। उसके वाद सैन्धव, जवाखार, सज्जीखार

श्रीर सोहागा, के साथ कपड़े में बांध कर उसके ऊपर मिट्टी का लेप देवे। स्खिन पर पुट पाक कर ताम्र पत्र चूर्ण करे। फिर धतूरे का रस, चीते की जड़ का काथ, श्रादी के रस श्रीर त्रिकटु के काथ के साथ ३ दिन मर्दन करे। फिर उसके साथ सव द्रव्यों का नेह सोलहवां माग मीठा विष मिलावे। मात्रा २ रत्ती, श्रादुपान—गरम जल। यह कुक्षिश्रूल शीघ्र विनष्ट करता है।

### हच्छूल चिकित्सा

सणिकाञ्चनयोग—रसिसन्दूर १ तोला, अर्जुन छाल २ तोला, हरिण के सींग की भस्म २ तोला एकत्र शीतल जल में मर्दन कर ६ रत्ती प्रमाण वटी वनाकर छत और मधु के अनुपान से प्रयोग करने पर सब तरह का हुच्छूल नियत्त होता है।

### वस्तिशूल चिकित्सा

ह्नार वटी—मीठा विष १ भाग, श्रश्न भस्म २ भाग, शङ्ख भस्म ४ भाग, इसली क्षार ८ भाग, ताम्रभस्म १६ भाग श्रीर त्रिकटु सब समष्टि के समान । इन द्रव्यों में तुलसी, मृद्गराज, विजीरा श्रीर श्रादी के रस की भावना देकर विदेश वनावे। मात्रा-१ रती। श्रतुपान—गरम जल। यह वस्तिशूल विनष्ट करता है।

### म्ब्रज्ञाल-चिकित्सा

श्रूलगजेन्द्र—रसिसन्द्र १ भाग, हीग १ भाग, ब्रह्मक्षार (पलाशक्षार) २ भाग, कुचिला ३ भाग एकत्र वरुण-छाल श्रौर गोखरू के क्षाथ में भावना देकर ६ रत्ती परिमाण बटिका बनावे। गरम जल के श्रनुपान से यह बटिका सेवन करे। इससे सब प्रकार का शूल निवृत्त होता है।

#### चृत्र चिकित्सा में अनुपान

चातजराल के अनुपान—शुण्ठी और एरण्डमूल का काथ, हीग, सेंघा नमक, काजी, बेल की जड़, जौ और नीवू के जड़ का काथ, अजवाइन चूर्ण, अतीस का चूर्ण, जवाखार, वारुणी मद्य, सोचरनोन, कालाजीरा, और पकी इमली।

पित्तजशूल के अनुपान — पुराना गुड़, घृत, पटोल और नीम की छाल का क्वाथ, आमलकी चूर्ण, विदारीकंद का रस, गूलर और मुनक्का का क्वाथ, नृण पञ्चमूल का क्वाथ, सतावर का रस, मुलहठी का चूर्ण, त्रिफला और सोन्दाल ( अमलतास ) का क्वाथ, कुटकी चूर्ण और हरिण के सीग का सस्म।

कफजराल का अनुपान—पञ्चकोल का क्वाय, हरीतकी का चूर्ण, बच चूर्ण, जनाखार और दशमूल का काथ, सोठचूर्ण और हींग, शङ्कभस्म और गोमूत्र ।

ग्रासराल का अनुपान—अजवाडन का चूर्ण, मोथा चूर्ण, हरीतकी चूर्ण,

सोठ चूर्ण।

परिणासशूल का श्रानुपान— घृत-मधु, सतावर का रस, हरीतकी, मुलहठी, पीपल श्रीर गिलोय का क्वाथ, मोथा का रस, हींग, सेंधानमक, जीरे का चूर्ण, जम्हीरी नीवू का रस, सोठ, एरण्डमूल का क्वाथ, हरिण के सीग की भरम श्रादि युक्तिपूर्वक प्रयोग करे।

#### सप्तद्श अध्याय

## गुल्स-चिकित्सा

### वातज गुल्म चिकित्सा

गुरुमकालानलरस—पारद, गन्धक, हरिताल, ताम्र, सोहागा प्रत्येक चूर्ण २ तोला, यवक्षार १० तोला, सोथा, त्रिकटु, गजपीपल, हरीतकी, वच, कुड़ा प्रत्येक १ तोला, ये सब वस्तुएं एकत्र मर्दन कर पित्तपापड़ा, सोथा, सोठ, त्र्रापां ( जिचिटा ) एवं श्राकनादि ( पाठा ) प्रत्येक के रस द्वारा ७-७ भावना देकर चूर्ण करे। हरीतकी चूर्ण त्र्रथवा क्वाय के साथ ४ रत्ती परिमाण यह श्रोषध सेवन करने से सब तरह का गुल्म विशेषतः वातज गुल्म नष्ट होता है।

सहानाराच रस—पारद, सोहागा, सरिच, प्रत्येक १ भाग, गन्धक, पीपल, नोठ प्रत्येक २ भाग, दन्तीवीज ९ भाग, ये सव एकत्र सद्देन कर २ रत्ती परिसाण रिक्षा वनावे । श्रनुपान-उष्ण जल । यह वातज गुल्म नाशक है ।

### पित्तज गुल्म चिकित्सा

दीमामर रस—पारद, गन्धक, ताम्र प्रत्येक समभाग लेकर शाक (सागीन) व के पदाः के रस के साथ मर्दन कर मूपा में वन्द कर गजपुट में पांच वार पांच करें। उसके बाद उसके साथ सम परिमाण में जयपाल-चूर्ण मिलाकर कर गांत्रा में प्रयोग करें। प्रानुपान-दाख श्रीर हरीतकी का काथ। वह सब करा के जिना गुरन का नाशक है।

गुलमनाशिनी गुडिका--गन्धक, सोठ, मरिच, चीता, प्रत्येक २ भाग, पारद, सोहागे की खील एवं जयपाल प्रत्येक १ भाग, ये सब एकत्र जल में सदन कर १ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे। इससे पित्तज गुल्म निवृत्त होता है। ग्रनुपान-चीनी का सर्वत ।

इलेब्सज-गुल्म चिकित्सा

विद्याधर रस-पारद, गन्धक, हरिताल, सोनामाखी, त्वर्ण, मैनशिल प्रत्येक समभाग। पिप्पली के काथ त्रौर सेहुड़ के दूध में एक दिन मर्दन करे। सात्रा-४ रत्ती । श्रनुपान-गोमूत्र श्रथवा गोदुग्ध ।

प्राणवहमभ रस—लोह, ताम, कौड़ो, तूतिया, हींग, त्रिफला, सेंहुड़ की जब का क्षार, जवाखार, जयपाल, सोहागा, निसोत मूल प्रत्येक ८ तोला परिमाण लेकर वकरी के दूध में मर्दन करे। २ रत्ती परिमाण वटिका बनावे। अनुपान-जल वा मधु । इसके द्वारा कफज गुल्म शीघ्र विनष्ट होता है।

त्रिदोषज गुल्म-चिकित्सा

गुरुप्तनाशक जूर्ण-पारद, गन्धक १-१ भाग, सैन्धव २ भाग, सोहागा ३ भाग, तूतिया ४ भाग, कौड़ी ५ भाग, राह्व ६ भाग ये द्रव्य चीते की जड़ के क्षाथ, करज के रस श्रीर श्रादी के रस के साथ १-१ वार मईन कर ३ वार पुटपाक करे। मात्रा-२ रत्त्ो। श्रनुपान—मरिच का चूर्ण श्रौर मधु। यह सव अकार के गुल्मों का नाशक है।

गुल्म रोग चिकित्सा का अनुपान

- (१) वातजगुरम में —नीचे लिखे त्रानुपान युक्तिपूर्वक प्रयोग करे। क्सला नीबू का रस, हीग, दाड़िम का रस, सेंघानसक, कांजी, पुराना सच, लहसुन का रस, दशमूल का काथ, कुलथी का काथ और एरण्ड का तेल।
- (२) पित्तज गुरुम सें—नीचे लिखे श्रनुपान प्रयोग करे। घृत-मधु, श्रामला का चूर्ण, त्रिफला का जल, धनियाँ, पटोल का काथ, निसीत का चूर्ण, कुटकी चूर्ण, दन्ती चूर्ण, नीम की छाल का काथ, नारंगी का छिलका, दाख और हरीतकी का काथ, मुलहर्टी का काथ और दुग्ध।
- (३) नीचे लिखी वस्तुएं कफज गुल्म नाशक है—सोठ श्रौर एरण्डमूल का काथ, अजवाइन का चूर्ण, गोमूत्र, हरीतकी चूर्ण, त्रिकटु, चीते की जद का चूर्ण, जवाखार ।

(४) रक्तगुरुष का अनुपान—आमलकी का रस, गोल मरिच का चूर्ण, अंटनी का दूध, पीपल का चूर्ण, अहसे के पत्तो का रस, पलाश का क्षार, घण्टा पाइल का क्षार, जवाखार, हीग, त्रिकटु और सेहुड़ का दूध।

श्राग्तिकुमार रस--जयपाल, पारद, गन्धक, श्रावला, हरीतकी, वहेदा, सोठ, पीपल श्रोर मरिच ये ९ द्रव्य प्रत्येक समभाग लेकर १६ भाग गोमूत्रके साथ ३ दिन मर्दन कर वेर प्रमाण विद्या बनावे। गरम जल के श्रनुपान से यह विद्या सेवन करने से सब प्रकार के गुल्म श्रारोग्य होते है।

काङ्कायन गृहिका—शठी (कचूर), कुडा, दन्तीमूल, चीतामूल, अड़हुल की जड़, सींठ, वच, निसीत की जड़, प्रत्येक ८ तीला, हीग २४ तीला, जवाखार १६ तीला, अमलवेत १६ तीला, अजवाइन, सफेद जीरा, मरिच, धनिया, प्रत्येक २ तीला, कालाजीरा, अजवाइन प्रत्येक ४ तीला। ये सव चूर्ण एकत्र कर नीवू के रस में मर्दन कर ४ रत्ती परिमाण गीली वनावे। अनुपान-उष्ण जल, मुद्रादि यूष, घृत और बूध आदि। यह त्रिदोषजगुल्म की परीक्षित औषध है।

महागुरमकालानल रख़—गन्धक, हरिताल, ताम्र, तीचण लोह प्रत्येक १ भाग लेकर घृतकुमारी के रस में मर्दन कर गजपुट मे पाक करे। मात्रा— २ रत्ती। श्रमुपान—सोठ का काथ। यह सब प्रकार के गुल्म का नाशक है।

### रक्तजगुरम चिकित्सा

रक्तगुरमकुटार—पारद, गन्धक, ताम्र, कांस्य, सोहागा, हरिताल प्रत्येक समभाग लेकर जल में मर्दन कर २ रक्ती मात्रा में दटी वनावे। त्रिफला के क्वाथ के श्रनुपान से यह रक्त गुल्मनाशक है।

सर्चेश्वर एस — स्वर्ण १ भाग, ताम्र १० भाग, त्रिकटु, त्रिफला, लौह प्रत्येक है भाग, विष है भाग, ये सब एकत्र जल में मर्दन कर २ रत्ती की वटिका वनावे। ऊंटनी के दूध के त्रानुपान से यह रक्तज गुल्मनाशक है।

रक्तोद्रकुठार—पारद, तृतिया, जयपाल, पीपल, सोन्दाल ( ग्रमलतास ) मज्जा प्रत्येक १ भाग, इनको सेहुड के दूध में मर्दन कर १ रत्ती की वटिका बनावे। यह दस्तावर श्रीर रक्तगुल्मनाशक है। श्रनुपान—इमली का रस। पथ्य—दही श्रीर श्रम्न। इस श्रोपध के सेवन करने से उद्देग उपस्थित होने पर दिधिभोजन करने से श्रारोग्य होता है।

#### अष्टाद्दा अध्याय

#### शोध चिकित्सा

#### वातज शोथ चिकित्सा

शोथाङ्करारस—पारद, गन्धक, लौह, ताम, सीसा, श्रभ्र, प्रत्येक समभाग लेकर एकत्र मिलावे उसके बाद निर्गुण्डी, हापरमाली, कैथ की छाल, इमली की छाल, पुनर्नवा, वेल की छाल श्रीर कसेक इनके रस में भावना देकर वेर प्रमाण गोली वनावे। श्रनुपान-दशमूल का काथ, पुनर्नवा रस, सोंठ श्रीर एरण्डमूल का काथ, गोमूत्र, वेलपत्र का रस, कोष्ठवद्धता हो तो एरण्ड का तेल भी दूध के साथ प्रयोग करे।

वातजशोध सं—जीरा पिसा हुआ और हींग के अनुपान से रसपर्पटी एक उत्कृष्ट श्रोषध है।

पित्तजशोथ चिकित्सा

सर्वशोधारि—हिङ्कल, जयपाल, मरिच, सोहागा भुना, पीपल समभाग लेकर जल में मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण वटी वनावे। श्रतुपान—घृत। यह पित्तज शोथनाशक है। किन्तु रोगी श्रत्यन्त दुर्वल हो तो यह श्रोषध प्रयोग करना उचित नहीं है।

शोधकालानल रस—चीतामूल, इन्द्रयव, गजपीपल, सैन्धव, पीपल, लवड़, जायफल, सोहागा, लौह, श्रश्न, गन्धक श्रौर पारद, ये समभाग लेकर जल मे मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण वटी बनावे। श्रनुपान—कुलेखाड़ा (ताल-मखाना) का रस। यह पित्तज शोधनाशक है।

#### इलेब्मज शोथ चिकित्सा

पञ्चामृत रस—पारद, गन्धक, सोहागा, विष, मरिच प्रत्येक १ भाग, ये सव एकत्र चूर्णकर जल में मर्दन करे। यटी-१ रत्ती। श्रजुपान-श्रादी का रस। यह श्लेष्मज शोधनाशक है।

जिकट्वादि लौह—त्रिकटु, त्रिफला, दन्तीमूल, श्रापां (चिचिटा), विटङ्ग, चीतामूल, मोथा, शुष्कमूली श्रीर पुनर्नवा इनका चूर्ण समभाग लेकर सर्व चूर्ण समिष्ट के समान लौह प्रहण करे। उसके वाद उसे जल में मर्दन कर १ माशा

प्रमाण वटी वनावे । अनुपान-पुनर्नवा और सींठ का काथ । यह रलेष्मज शोथ नाशक है।

### बिद्रोषजगोष-चिकित्सा

शितेशाख्यर्स-पारद, गन्धक, सोहागा, ताम, लौह ये समभाग में लेकर आदी के रस में मर्दन करे, उसके बाद दो रत्ती मात्रा में एरण्ड श्रीर श्रापां रवेत ( विविज्ञ ) के रस में मर्दन कर प्रयोग करे। यह त्रिदोषज शोध नाशक है।

### ररिवसान्य और प्रहणी जितत शोध-चिकित्सा

हुग्धवटी—हिङ्जल, धतूरा वीज श्रीर बिष समभाग एकत्र धतूरे के रस में एक प्रहर मर्दन करे। सूंग समान वटिका वनावे। श्रनुपान—दुग्ध। पथ्य—दुग्ध श्रीर श्रक्त, लवण श्रीर जल निषिद्ध। इसके सेवन से नाना प्रकार के शोधादि शान्त होते हैं।

(२) दुग्यवटी—विष १२ रत्ती, अभ्र ६० रत्ती, लौह ५ रत्ती और अफ़ीम १२ रत्ती इन द्रव्यों को एकत्र दुग्ध में मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे। यह गोदुग्ध के साथ सेव्य है। इसके सेवन के दिनों में दुग्ध और अब के अतिरिक्त अन्य कोई द्रव्य न भोजन करे। इसके सेवन से अहणी, अग्निमान्य, रोोध आदि रोग नष्ट होते हैं।

द्धि बढी—ईट का चूर्ण, गृहधूम (धूमसा) और हलदी, इनके द्वारा शोधित पारद और शृहराज के रस में शोधित गन्धक १-१ तोला लेकर एकत्र कजली करे। तदनन्तर तृतिया, विष, हरिताल, खर्पर, ताम्र, एलवालुक (एलुआ), सोनामाखी और कान्तलीह प्रत्येक ४ माशा परिमाण लेकर कज्जली के साथ मिला कर निर्णुण्डी के पत्ते, लता फटकी = माल कागुनी (अनन्ता, ज्योतिष्मती), अप-राजिता, जयन्ती और लाल चीते की जड़, इन द्रव्यों के रस में भावना देकर। नरसों प्रमाण दिका बनावे। उष्ण जल के साथ ७ चटी सेवन करे।

श्रतुपान—१ यव कज्ञली श्रोर १ यव पीपल का चूर्ण। यह शोय संयुक्त श्रहणी श्रोर ज्वरादि रोग में प्रयोज्य है। कास लक्षण वर्तमान रहने से कदापि यह श्रोपध प्रयोग न करे।

पप्य-दिध श्रौर चीनी। रोगो की उम्र श्रौर रोग की श्रवस्था समक्क कर

तक वटी—पारद और गन्धक १ माशा, विष २ माशा, ताम्र ४ माशा, पीपल चूर्ण और मण्हर १ तीला, ये द्रव्य एकत्र मर्दन कर काले जीरे के क्वाथ में ७ दिन भावना देकर २ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे। अनुपान-तक।

पथ्य--तक श्रोर श्रन । जल श्रोर लवण निषिद्ध । इसके सेवन से शोथ, पाण्ड, ग्रहणी श्रोर सन्दाग्नि निवृत्त होती है ।

क्तीर वरीं—हिड्डल २ तोला, विप, अफीम, लवड़, जायफल और धत्रे के वीज प्रत्येक १ तोला, इन द्रव्यों को एकत्र भड़ के रस में ( अथवा भीजी भड़ के जल में ) मईन कर मूँग प्रमाण गोली वनावे।

श्रन्त । जल श्रीर लवण वर्जनीय । श्रदम्य पिपासा होने पर नारियल का जल पान करे । इसके सेवन से शोथ, श्रहणी, श्रितसार श्रीर जीर्ण ज्वर निवृत्त होता है । चोट के लगने से सूजन हो तो स्वेद (वफारा) श्रीर प्रलेप की व्यवस्था करे । विपज रोथि से त्रिदोपजनित रोथि की चिकित्सा करे । इसमे हरिताल भस्म है रत्ती पुनर्नवाष्टक पाचन के साथ प्रयोग करे ।

#### शोधरोग से अनुपान

बातज्ञाथ में — सोठ का चूर्ण, पुनर्नवा और एरण्डमूल के रस, दश-मूल के क्वाय, यान (मानकंद) चूर्ण, गोमूत्र, वेल के पत्तों का रस और गोल मरिच का चूर्ण।

पित्तज शोध में —कुले खाड़ा (तालमखाना) के पत्तो का रस, परवर का रस, त्रिफला का क्वाथ, कुटकी चूर्ण, निसोतचूर्ण, शालपर्णी, सोथा, सुगन्धवाला ग्रीर सोंठ का क्वाथ।

श्लेष्मजशोध में —सेहुड़ का दूर्घ, पुनर्नवा का रस, गोमूत्र, पीपलचूर्ण, हरीतकी चूर्ण, सोन्दाल ( ग्रमलतास ) का रस, देवदाह ग्रौर शुंठी का काथ। विरायता श्रौर देवदाह चूर्ण। एवं स्खी मूली का काथ।

#### कनविंदा अध्याय

### वृद्धिरोग चिकित्सा

#### बातजवृद्धि-चिकित्सा

भक्तोत्तरीय चूर्ण—ग्रञ्ज, गन्धक, पीपल, पांचीनसक, जवाखार, सज्जीखार, सोहागा, त्रिफला, हरिताल, मैनशिल, पारद, श्रजमोद, श्रजवाइन, सतावरि, जीरा, हींग, मेंथी, चीतामूल, चव्य, वच, दन्तीमूल, निसोत, मोथा, शिलाजतु, लौह, रसौत, नीम के बीज (निबौली), पटोलपत्र और विधारा वीज, प्रत्येक २४ तोला, शोधित धतूरे के बोज १०० ये सब एकत्र चूर्ण कर ले। इसे भोजन के पीछे सेवन करे। मात्रा—१ श्राना भर (नेह तोला)। श्रनुपान—उष्ण जल। यह वातज वृद्धिरोग की एक श्रतीव उत्कृष्ट श्रोषध है।

#### पित्तज वृद्धि चिकित्सा

सिन्दूररा — लौह, अभ, रससिन्दूर समभाग में लेकर घृतकुमारी के रस में मदन करे। १ रत्ती प्रमाण वटी बगावे। अनुपान — पुनर्नवा का काथ। यह पित्तजबृद्धि नाशक है।

#### शोषजबृद्धि चिकित्सा

अर्थमासृताध्र—दशमूल, निर्गुण्डी, श्वेत आक, निसीत, पुनर्नवा, सेंहुड़, चव्य, अइसा, विधारा, वेडे़ला, (वला), गीरक्ष (ऋषभक), शालपणी, पाठा, सोन्दाल (अमलतास) और लालचीता, इनके रस में सहस्रपृटित अअक मर्दन कर ४ रत्ती परिमाण पटिका वनावे। अनुपान-आदी का रस और मधु।

#### रक्तज्ञवृद्धि-चिकित्सा

रसरालेन्द्र—हिड्डलोत्थ पारा श्रीर कसेरू के रस मे शोधित गन्धक प्रत्येक १ तोला, स्वर्ण श्रीर रीप्य प्रत्येक ४ माशा, एवं सीसा २ माशा, ये सब एकत्र कर श्रह्सा, काकमाची, चीता, निर्मुण्डी, कुडा, स्थलपद्म श्रीर पद्म इनके काथ में ७ वार पृथक् पृथक् भावना देकर १ रत्ती प्रमाण विटका वनावे। श्रनुपान—गिलोय का रस श्रीर मधु। यह सब प्रकार की रक्तजबृद्धि को शीघ्र दूर करता है।

### मेदज वृद्धिरोग-चिकित्सा

चृद्धिवाधिका वटिका—पारद, गन्धक, लौह, वङ्ग, ताम्र, कांसा, हरिताल, त्रित्या, शङ्घभस्म, कौड़ीभस्म, त्रिकटु, त्रिफल्हा, चन्य, विडङ्ग, विधारा वीज, शटी (कचूर), पीपलमूल, पाठा, हनुषा (हाऊवेर), वच, इलायची, देवदार श्रीर पांचों लवण प्रत्येक समभाग लेकर हरीतकी के क्वाथ में मर्दन करे। १ माशा प्रमाण गोली वनावे। श्रनुपान-उष्ण जल। मात्रा-२ रत्ती। इसके द्वारा श्रसाध्या मेदजबृद्धि श्रारोग्य होती है।

### मूत्रज वृद्धिरोग-चिकित्सा

सेन्ध्रवादि गुडिका—सेन्ध्रव, गुड, रेणुका, जीरा, त्रिफला, मिलावे, विडङ्ग, सींठ, चीता, गिलीय, भारंगी, वच, चोरक देवदारु, नील का पेड़, श्रतीस, श्रजमोद श्रजवाइन, पीपरामूल, मोथा चन्य, पीपल, राठी (कचूर), लाल चन्दन, रवेत चन्दन, कट्फल (कायफल), सोमराजी (वाकुची), वेल, सोठ, दन्ती, सतावर, कुटकी, श्रजगन्धा, श्रश्वगन्धा, गजपीपल, मरिच, त्रिजातक, लवङ्ग, सहजना, जातीफल, छार छवीला, जावित्री प्रत्येक २ तोला। गुगगुल श्रीर लोह प्रत्येक १ सेर, शिलाजतु ऽ॥ श्राधा सेर ये सब द्रव्य एकत्र चूर्ण कर सब के समान चीनी उसमे मिला कर जल में मर्दन कर के बटी बनावे। सात्रा—६ रत्ती। श्रजुपान—उष्ण जल श्रीर दूध। यह मूत्रज गृद्धि श्रादि नाना रोग नष्ट करती है।

अन्त्रज वृद्धिरोग-चिकित्सा

चातारि रस—पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, त्रिफला मिलित ३ भाग, चीतामूल ४ भाग, गुरगुल ५ भाग ये सब एरण्ड तैल में मर्दन कर ६ रती प्रमाण वटी वनावे। अनुपान—सींठ और एरण्डमूल का काय। औषध सेवन के अन्त में पीठ पर अण्डी का तेल मलवाकर स्वेद प्रदान करे। विरेचन होने पर स्निग्ध, और उप्ण द्रव्य भोजन करावे। यह सब प्रकार के अन्त्रज वृद्धिरोग को शीछ विनष्ट करता है।

बृद्धिरोग के अनुपान

वातज वृद्धिरोग में—एरण्ड तैल, आदी का रस और मधु, गोमूत्र और रास्नादि पाचन । पित्तज खुद्धिरोग में—पुनर्नवा का रस वा काथ, रक्त चन्दन, मुलहठी का काथ, घृत सधु और पञ्चवल्कल (वट, पीपल, गूलर, पाकर और सौलश्री) का क्वाथ।

कफ्रज वृद्धिरोग में — त्रिकटु चूर्ण, जवाखार चूर्ण, त्रिफला का क्वाय, जोसूत्र सिद्ध हरीतकी चूर्ण, निर्मुण्डी के पत्तो का रस और तुलसी पत्र का रस।

acoxeco

## विंशतितस अध्याय अम्लपित्त -चिकित्सा गतज अम्लपित्त-चिकित्सा

श्रुधावती गुडिका—अजवाइन, त्रिकटु, गन्धक, पारद, अभ्र, गिलोय, वन्य, त्रिफला, जीरा सफेद और स्याह, पुनर्नवा, निसोत की जड़, दन्ती-मूल, वच, घेट्र-कोल (घन्टा पाइल) मूल, अनन्तमूल, स्यामालता और डग्न कुनि (शंखपुष्पी) मूल प्रत्येक २ तोला, एवं मण्डूर ४ तोला, ये सव द्रव्य एकत्र आदी के रस मे मईन कर गुडिका वनावे। अनुपान—काजी। प्रतिदिन १ वटी सेवन करे। इसके सेवन से प्लीहा, वातज अम्लिपत्त, परिणामश्रल, आनाह और आमवात आदि रोग शीघ्र विनष्ट होते है। एवं तेज, वल और अग्नि बढ़ती है।

श्रास्य प्रकार की चुधावती गुडिका—गन्धक, लौह, पारद, श्रश्न, त्रिफला, त्रिकटु, सताविर, श्रजवाइन, वच, चव्य, जीरा सफेद व काला, प्रत्येक ८ तोला, घेद कील मूल (घण्टा कर्ण), पीपरा मूल, पुनर्नवा, मान, इन्द्रजी, डानकुनि मूल, (शंखपुष्पी) कसेल, कमल, गिलोय, दन्तीमूल, निसोत, हुलहुल की जड़, श्रापां (चिचिदा) मूल, लालचन्दन, भृड्गराज, खुलकुड़ी, (मण्ड्कपणी) श्रीर पटोल प्रत्येक ४ तोला, ये सव द्रव्य श्रादी के रस में मर्दन कर वेर की गुठली के समान गोली चनावे। श्रनुपान—काड़ी। प्रतिदिन प्रातः १ वटी सेवन से वातज श्रमलित श्रादि श्रनेक रोग नष्ट होते है। इसके सेवन के समय मधर द्रव्य विशेष कर दुग्ध श्रीर चीनी वर्जित करे।

#### पित्तज अम्लापित्त-चिकित्सा

भारकरासृत श्रश्न—श्रह्मा की छाल, करोरू, गिलोय, नीम छाल, चेत पापटा, मोथा, सङ्गराज, रवेत पुनर्नवा, वला, भटकटेरी श्रीर सतावरी अत्येक १ पल रस में मर्दित सहस्र पृटित श्रभ्र, सतावरि के रस मे १२ वार भावना देकर २ रत्ती प्रमाण गोली वनावे, इसके सेवन करने से श्रम्लिपत्तशूल, श्रब-द्रवशूल होर तृष्णा छाटि रोग शान्त होते हैं।

लीलाविलास-पारद, गन्धक, लौह, ताम्र और अभ्र ये ५ द्रव्य समान भाग लेकर श्रामले श्रोर वहेडे के रस मे ३ दिन थोड़ा-थोड़ा मईन करने के वाद भूतराज के रस में मर्दन करे। मात्रा-२ रत्ती। यह मधु, दुग्ध, कुम्हडे का जल श्रीर श्रामलकी का रस श्रथवा चीनी के साथ सेव्य है। इसके सेवन से श्रम्लिपत्र श्ल युक्त वमन और हत्-प्रदाह नियृत होता है।

## कफज अस्लिपत्त चिकित्सा

पञ्चानन गुडिकाः—पारद श्रीर गन्धक ४ तीला, लेकर कज्जली करे, डसके द्वारा १ एल परिमित ताम्रपत्र चारों श्रोर से लिप्त करें। तदनन्तर वह ताम्रपत्र मूषावद्ध कर गजपुट में पाक करे। इससे ताम भस्म होती है। यह ताम चूर्ण १ पल, पारद, गन्धक, लौह, श्रश्र, यमानी, शुलफा, त्रिकटु, त्रिफला, निसोत, चव्य, दन्तीमूल, आपां (चिचिदा) मूल, चीतामूल और हाह जोड़ा का मूल, प्रत्येक है पल, ये द्रव्य आदी के रस में मर्दन कर उर्द प्रमाण विदेका वनावे । इसके सेवन से अम्लिपत्त रोग नष्ट होता है।

अभ्लिपित्तान्तक रस--रससिन्द्र, ताम्र, अभ्र श्रीर लोह प्रत्येक १ भाग, हरीतकी चूर्ण ३ भाग ये सव समभाग में मर्दन कर उर्द बराबर वटिका वनावे। मधु के साथ सेवन करे। इसके सेवन से कफज अम्लिपत्त रोग शान्त होता है।

# द्वन्द्रज अम्लिपत्त-चिकित्सा

वृहत् क्षुधावती वटी-- अभ्र २ पल, लौह १ पल, मण्ड्र है पल, ये सव एकत्र कर डान कुनि (शंखपुष्पी), श्वेत हुड्हुड् इनके रस में स्थालीपाक करे, सता-वरि, भीमराज, कशेरू श्रीर कांटानट के रस में द्वितीय स्थालीपाक एवं त्रिफला श्रीर नागरमोथा के रस में तृतीय स्थालीपाक कर फिर उन द्रव्यों का चूर्ण करे। पारद, गन्धक २-२ तोला, ये दोनों द्रव्य उत्तम रूप से मर्दन कर कज्जली करले उसके बाद पूर्वीक्त अभादि चूर्ण, यह कज्जली श्रौर वच, चन्य, श्रजवाइन, जीरा, काला जीरा, सतावरि, त्रिकटु, मोथा, विडङ्ग, पीपरामूल, त्रापां ( चिचिढ़ा ) मूल, ्वतामूल, निसोत, हुड़्हुड़, सान, मृझराज, घेंद्र कोल, (घण्टापाइर), खान कुनिमूल (मंह्कपणीं), करोरू श्रोर कालिया कड़ामूल प्रत्येक ४ तो०, त्रिफला मिलित १३ पल ये सब द्रव्य लौहपात्र में ३ वार भावना देकर श्रोर सिल पर पीसकर वेर की गुठली के समान विटका बनावे। इसे कांजी के साथ सेवन करे। इसके सेवन के समय मधुर द्रव्य, विशेषतः दुग्ध श्रोर नारिकेल भोजन निषिद्ध है। इसके सेवन से श्रम्लिपत्त, परिणाम शूल, पाण्डु, गुलम, यदमा, सब प्रकार का कास, श्रक्ति, सन्दाप्ति श्रोर प्लीहा श्रादि नाना प्रकार के रोग नष्ट होते हैं।

## अम्लिपित्तरोग चिकित्सा का अनुपान

वातप्रधान श्रम्लिपित्त चिकित्सा में—पीपल का चूर्ण श्रीर मधु, जम्हीरी नीवू का रस, हींग, त्रिफला चूर्ण, जीरा चूर्ण श्रीर सैंधव चूर्ण।

पित्तप्रधान श्रम्लिपत्त चिकित्सा में —वासक ( श्रह्सा ) रस, पलता ( परवर ) का रस, गिलोय का रस, सतावर का रस, चीनी, धनिये का काथ, चेत्र पापड़ेका रस, भांगरे का रस, चीते का काथ, दारुहल्दी का काथ, कुम्हडे का रस।

श्लेष्मा प्रधान श्रम्लिपित्त चिकित्सा भें—नीम की छाल का क्वाथ, सुलहठी का चूर्ण, गूगल, पीतशाल श्रीर जवासे का काथ, मोथा का रस, कटेरी का क्वाथ, हरीतकी श्रीर दाख का काथ, श्रामले का रस, निसोध का चूर्ण, जो का चूर्ण, पीपल श्रीर हरीतकी का काथ, सोठ श्रीर पटोल का काथ, श्रक्से का काथ।

#### -ocumero-

## एकविंशतितम अध्याय प्लीहा और यक्तरोग चिकित्सा

ज्वर चिकित्सा वर्णन करते समय ज्वर के उपसर्ग स्वरूप प्लीहा ऋौर यकृत रीग की चिकित्सा विधि लिखी गई है। इस ऋष्याय में दोषानुसार पृथग्भाव से प्लीहा श्रोर यकृत चिकित्सा विधि लिखी जाती है।

चातिक प्लोहा की चिकित्सा—(१) समुद्र में उत्पन्न सीप की भस्म ६ माशा, पीपल का चूर्ण ३ माशा, दूध ऽ। एकत्र सेवन करने से वातिक प्लीहा चिनष्ट होती है।

- (२) शङ्घ नाभिभस्म है तोला नीवृ के रस के साथ सेवन से भी प्लीहा विनष्ट होती है।
- (३) चा सुकी श्रूषण रस-पारा, गन्धक, वङ्ग, ताम्र ये सब समभाग लेकर आकन्द (आक) के रस में ३ घण्टे मर्दन कर मिट्टी लेपन कर पुटपाक करे। फिर वासक (अक्सा) के रस की भावना देकर २ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे। अनुपान-सेंन्धव चूर्ण। यह भी वातिक प्लीहा नाशक है।

### पैत्तिक प्लीहा चिकित्सा

- (१) गन्धक, हरिताल, सोनामाखी, ताम्र, मैनशिल श्रौर पारद प्रत्येक समभाग में मिलाकर पीपल के क्वाथ श्रौर सेंहुड़ के दूध मे एक दिन भावना देकर २ रत्ती प्रमाण वटिका बनावे। श्रनुपान-मधु श्रौर गाय का दूध। यह पैत्तिक दलीहानाशक है।
- (२) चित्रकादि लौह—चीता मूल, सींठ, वासक (श्रह्सा) मूल, गिलीय, शालिपणी, ताल जटा की भस्म, श्रापा (त्तिचिढ़ा) मूल भस्म श्रोर पुराना मान, प्रत्येक का चूर्ण ६ तोला, लोह, श्रश्न, पीपलचूर्ण, ताम्र, जवाखार, पांचों नमक, प्रत्येक का चूर्ण २ तोला, गोमूत्र १५ सेर । मृदु श्रग्नि से पाक करे । मात्रा—१ माशा । श्रनुपान—सेमर के फूलो का वासी काथ श्रोर राई का चूर्ण । यह पैतिक प्लीहा का शीघ्र विनारा करता है ।

### इलेडियक प्लीम्ना-चिकित्सा

क्लीहाशार्द्रल रस्न—पारद, गन्धक, त्रिकटु प्रत्येक समभाग, इन तीनों के समान ताम्रमस्म एवं मैनशिल, कोडोभस्म, त्तिया, हीग, लौह, जयन्ती, रोही-तक (रोहेड़ा), जवाखार, सोहागा, सेंधानमक, विडलवण, चीता ख्रीर जयपाल, ये द्रव्य पारद के समान। इनको निसोत, चीता, पीपल ख्रीर ख्रादी के रस में पृथक् २ तीन दिन भावना देकर १ रत्ती प्रमाण विटका वनावे। ख्रनुपान-पीपल चूर्ण ख्रीर मधु। इसके द्वारा शीघ्र कफज प्लीहा विनष्ट होती है।

### रक्तजप्लीहा-चिकित्सा

(१) हरितालभस्म है रत्ती, गाय के घी के साथ सेवन करने से रक्तज प्लीहा विनष्ट होती है। (२) ताम्रभस्य-२ रत्ती परिमाण, त्रादी के रस त्रौर सधु के साथ सेवन करने से रक्तज प्लीहा त्रारोज्य होती है।

(३) विजयपर्यटी, हींग श्रीर पीपलचूर्ण के श्रनुपान से सेवन करने पर

रक्तज प्लीहा श्रारोग्य होती है।

#### यकृत चिकित्सा

- (१) प्लीहा रोग चिकित्सा में जिन श्रोषियों का उपदेश हुआ है, यकृत रोग चिकित्सा में भी उन्हीं श्रोषियों का विवेचना पूर्वक प्रयोग करने से सुफल पाया जाता है।
- (२) यकृत मे ताम्रभस्म २ रत्तीं मात्रा मे विडङ्ग और पीपल चूर्ण अथवा आदी के रस के साथ अथवा तालमखाने के पत्ती के रस के साथ सेवन करने से अतिदुर्निवार यकृत आराम होता है i
- (३) महाशङ्ख द्रावक, बृहत् लोकनाथ रस, हरितालभस्य, हरितालसत्व, यकुदरि लोह, महामृत्युज्ञय लोह, ताम्र, लोह, हरिताल घटित श्रोषध सेचन से यकृत मे श्रच्छा फल होता है।

### प्लीहा और यकृत चिकित्सा से अनुपान

चीतामूल चूर्ण, जवाखार चूर्ण, अजवाइन चूर्ण, विडङ्ग चूर्ण, हरिह चूर्ण, आक के पत्तो का रस, पीपल चूर्ण, हरीतकी चूर्ण, लहसुन, बेड़ेला (वला), गोमूत्र, पुराना गुड़, सहजना का क्वाथ, सेमर फूल का वासी क्वाथ, श्वेत सरसो का चूर्ण, आपां (चिचिढ़ा) मूल का रस, सरफोका की जड़ पिसी हुई, हींग, पके आम का रस, रहेड़िया की छाल का क्वाथ, गिलोय का रस, कुलेरवाड़ा (तालमखाना) का रस, पपीते का रस आदि अनुपान युक्तिपूर्वक व्यवहार करे।

#### **~∞;%;∞**~

#### द्वाविंचातितम अध्याय

### कालरा (हैजा) चिकित्सा

कालरा रोग का कारण श्रोर व्यवस्था वर्णन करना इस पुस्तक का श्रालोच्य दिपय कही है। हमारी लिखित सरल निदान' नामक पुस्तक में यह विशदभाव से वर्णित हुश्रा है। इस श्रध्याय में कालरा रोग की विभिन्न श्रवस्था में कौन-कौन श्रोपध किस प्रकार प्रयोग करने से रोगी श्रासच मृत्यु के ग्रास से वच सकता है, केवल यही संचेप रूप से लिखते हैं। श्रिधकांश चेत्रों में कालरा चिकित्सा के लिये लोग वैद्य को नहीं बुलाते। साधारण लोगों की यह धारणा है कि श्रायुर्वेद मत में कालरा की चिकित्सा नहीं है किन्तु यह धारणा श्रमपूर्ण है। श्रायुर्वेद मत में कालरारोग की श्रात चमत्कारपूर्ण सुचिकित्सा है। उपयुक्त श्रालो-चना, प्रयोग श्रोर प्रचार के श्रमाव से श्रायुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति दिन-दिन पीछे पड़ती जाती है। श्रायुर्वेदीय चिकित्सक चन्द यदि मिलकर चेष्टा करें तो भारतवर्ष में कालरा चिकित्सा चेत्र में भी श्रायुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति ही प्रवर्तित हो जाय।

#### विड्भेदलक्षण कालरा को चिकित्सा

यदि हैं से दस्त अधिक हों तो नीचे लिखी औषधें प्रयोग करें।

(१) कर्पूरस्य—इसके वनाने की विधि रक्तातीसार चिकित्सा में लिखी है। वहा देखिये। इसे मिगोये हुए कपूर के जल के श्रनुपान से सेवन करे।

श्रभयनृसिंह रस—हिंडुल, विष, त्रिकटु, जीरा, सोहागे का फूला, गन्धक, श्राप्त, पारद प्रत्येक समान भाग, सवके समान श्रफीम, ये सब द्रव्य नीवू के रस में मर्दित कर १ रत्ती प्रमाण वटी वनावे। श्रनुपान—भुने जीरे का चूर्ण, मधु श्रौर कपूर भीगा जल।

#### वमन प्रधान कालरा को चिकित्सा

इस रोग में नीचे लिखी श्रोषधें हितकर है—

- (१) वमनामृतयोग—गन्धक, कमलगद्या, नारंगी का छिलका, मुलहठी, शिलाजतु, छद्राक्ष, सोहागे की खील, हिरण की सीग, सफेद चन्दन, कपूरकचरी श्रीर गोरोचन ये सब द्रव्य समभाग लेकर विल्वमूल के क्वाथ में ३ दिन मर्दन कर ७ रत्ती परिमाण विदेका बनावे। श्रमुपान—डाव का जल, मुलहठी का चूर्ण, नारंगी का छिल्का, श्रथवा खीरा के वीज पिसे हुए।
- (२) वृषध्वजरस—शोधित पारा, गन्धक, लौह, सुलहठी, चन्दन, आसला, छोटी इलायची, लवज्ञ, सोहागा, पीपल श्रौर जटामांसी, ये सब द्रव्य समभाग; शालपणी श्रौर ईख के रस में पृथक् पथक् ७ दिन भावना देकर वकरी के दूध में ३ घण्टा मर्दन करे। श्रजुपान—शालपणी का रस।

१४ र० चि०

### रक्तभेद और दमनयुक्त कालरा की चिकित्सा

मीचे लिखी श्रोषियां रक्तभेद श्रौर वमन युक्त कालरा में हितकर है।

- (१) रसेन्द्रयोग--रसिसन्द्र, श्रफीम, पिण्ड खजूर, जायफल, मोथा, लालचन्दन, पीपल, मुलहठी ये सब समभाग में लेकर जल में मर्दन कर ४ रत्ती की विटका बनावे। दूर्वा के रस के श्रनुपान से प्रयोग करने पर खूनी दस्त श्रीर वसन युक्त हैजे में बहुत सफलता होती है।
- (२) मकरध्वज है रत्ती, श्रनार के रस श्रीर मधु के साथ प्रयोग करने से इस श्रवस्था में उपकार होता है।
- (३) कर्पूर रस, सर्वोङ्गसुन्दररस, महागन्धक, पीयूषवर्क्षी रस आदि श्रीषध इस श्रवस्था में कुडे की छाल श्रीर श्रनार के फल की छाल के क्वाथ के साथ प्रयोग से उपकार होता है।
- (४) वृषध्वज रस श्रौर वमनामृत योग, डाब का जल, भिगोये हुये कपूर का जल, मोथा का रस, श्रनार का रस, लालचन्दन श्रौर मुलहठी के क्वाथ के साथ प्रयोग करने से विशेष सफलता होती है।
- (५) महाशह्लवटी, श्राग्नितुण्डी रस श्रादि श्रोषध, कमला नीबू के पिसे हुए छिलके का क्वाय, जायफल पिसा, खीरा के बीज पिसे, स्तनदुग्ध, शालिपणी का रस श्रभाव में क्वाथ के साथ प्रयोग करने से एवं कुड़े के क्वाथ, श्रमार के रस वा फल के त्वक् के क्वाथ, कपूर भिगोया जल श्रादि के श्रनुपान से प्रयोग करने से सफलता होती है।

#### ज्वर संयुक्त कालरा की चिकित्सा

नीचे लिखी श्रोषधें ज्वर संयुक्त हैजे में हितकारी हैं।

- (१) वृहत् कस्तूरीभैरव रस, त्रादी का रस त्रौर मधु के त्रानुपान से प्रयोग करने पर विशेष सुफल पाया जाता है।
- (२) वृहत् चन्द्रोद्य मकरध्वज स्वर्णसिन्दूर श्रौर कपूर प्रत्येक ८ तोला, जायफल, मिरच, लवङ्ग प्रत्येक २२ संख्या, कस्तूरी है तोला, इन्हें जल में मईन कर ४ रत्ती प्रमाण वटी बनावे। पान के रस श्रौर मधु के श्रनुपान से यह विटेका प्रयोग करने से ज्वर संयुक्त कालरा में प्रभूत उपकार पाया गया है। परन्तु यह श्रीपथ विशेष विवेचनापूर्वक प्रयोग करे।

### दस्त और के के उपसर्ग से युक्त हैने को चिकित्सा

नीने लिखी श्रोपिधयां दस्त श्रोर के के उपद्रव से युक्त है जे में विशेष उपकारी हैं।
(१) श्रीनितुण्डोरस—पारद, विप, गन्धक, श्रजवाइन, श्रामला, हर्र, दनेंदा, मज्जीकार, जवासार, चीते की जड़, सेंधानमक, जीरा, सोचर नीन, विडङ्ग, करकनलोन, सोंठ, पीपल, गोल मरिच, अत्येक समभाग लेकर समष्टि के समान शोधित कचिला लेवे। उसके वाद मिलित द्रव्यों को गोंडा नीवू के रस में श्रच्छी तरह मर्दन कर २ रत्ती परिमाण विटका बनावे। कप्र भीगा जल श्रथवा कचा नारियल के जल के साथ यह श्रोषध प्रयोग करने से वमन श्रीर भेद (दस्त) युक्त हैजा में श्रारोग्य होता है।

(२) महोद्धि रस—विप, रसिसन्दूर १-१ भाग, जायफल २ भाग, सीहागा २ भाग, पीपल १ भाग, सींठ ६ भाग, कौडीभरम ६ भाग, लवज्ञ ५ भाग एकत्र जल में मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण वटी बनावे। अनुपान—डाब (नारियल कचा) का जल ग्रभाव मे शीतल जल, उिह्नाखित दो ग्रीषधें कम से १-१ घण्टा के ग्रन्तर से प्रयोग करने पर दस्त श्रीर कै से युक्त कालरा श्रारोग्य होता है।

### आक्षेप संयुक्त कालरा चिकित्सा

सिन्नपात ज्वर चिकित्सा प्रसङ्ग में कहा हुआ चतुर्भुज रस कुड़े के चूर्ण श्रौर मधु के साथ प्रयोग करने से श्राचीप संयुक्त कालरा रोग श्रारोग्य होता है।

### दस्त और वमन रहित हैं जे की चिकित्सा

- (१) इस जाति का कालरा अत्यन्त मारक है अतएव यह मालूम होते ही अच्छी चिकित्सा करनी आवश्यक है। यह रोग उत्पन्न होते ही रसचिकित्सा अथमखण्ड में ताम्रभरम २ रत्ती मात्रा में आदी के रस और मधु के साथ प्रयोग करने से सुफल होगा।
- (२) इस रोग में अचानक शरीर ठण्डा पड़ जाना, वोल बंद हो जाना आदि कठिन उपसर्ग उपस्थित हो जाने से विवेचनापूर्वक बृहत् कस्तूरीभैरव, बृहत् सूचिकाभरण रस आदि सन्निपात ज्वर रोगाधिकार में कही ओषियां प्रयोग करे।

### पक्षाघात मंयुक्त कालरा चिकित्सा

(१) तालकेश्वर रस — रसिसन्दूर, हरिताल प्रत्येक १ भाग, भङ्ग १ भाग, गुड़ के साथ मर्दन कर १ मासे परिमाण गोली वनावे। श्रादी के रस श्रोर मधु के श्रनुपान से यह श्रोषध उपयोग करने से पक्षाघात संयुक्त कालरा श्रारोग्य होता है। पूर्वीक्त ताम्रभस्म से भी इस रोग मे वहुत उपकार होता है।

#### कालरा रोग में उपसर्ग की चिकित्सा

- (१) वमन में—वमनामृत योग, वृषध्वज रस, डाव का जल, खीरा के वीज पिसे हुए, अनार का रस, आमले का रस, गिलीय का रस, मोथा का रस, वडी इलायची पिसी हुई, आम और जामन के पत्तो का औटाया हुआ जल, आदि किसी एक के साथ प्रयोग करने से वमन बंद हो जायगा।
- (२) हिचकी में पिष्पत्यादि लौह-पिप्पली, श्रामला, दाख, वेर के वीज की मीगी, मुलहठी, चीनी, विडङ्ग, कुडा प्रत्येक समभाग में लेकर समष्टि के समान लोहा श्रहण कर जल में मर्दन कर ५ रत्ती परिमाण विटका वनावे। श्रहणान-पीपल का चूर्ण, मधु, गरम जल, तुलसी का काथ, वासक (श्रह्सा) का क्वाथ, विजौरे नीवू के रस, सेंधानमक, मुलहठी के चूर्ण श्रादि के श्रहुपान से प्रयोग करने पर हैजेवाले रोगी की हिचकी वंद होती है।
- (३) श्वास में -- श्वासकुठार रस प्रयोग करने से त्राति सुफल पाया जाता है। त्रानुपान--कुड़े का चूर्ण श्रीर मधु।
- (४) संज्ञालोप में इस अवस्था मे बृहत् कस्त्रीभैरव के अयोग से विशेष सुफल पाया जाता है। और अन्तिम अवस्था में बृहत् सूचिकाभरण रस अयोग करे। औषध की किया आरम्भ होने के वाद शीत किया करने से रोगी आरोग्य होता है।
- (५) शीताङ्ग में इहत् कस्त्रीभैरव प्रयोग से विशेष सुफल पाया जाता है। श्रनुपान-श्रादी का रस श्रीर मधु, बृहत् चन्द्रोदय मकरध्वज, सिद्ध मकरध्वज, चतुर्भुज रस श्रादि श्रीपध, मृतसङ्गीवनी सुरा श्रीर मृगमद श्रासव, श्रनुपान में प्रयोग करने पर रोगी श्रासन्न मृत्यु से बच सकता है।
- (६) पिपासा में—महोदधि रस अथवा कुमुदेश्वर रस अयोग करने से विशेष सुफल पाया जाता है। अनुपान-आम की छाल का क्वाथ, पीपल चूर्ण

श्रोर मधु श्रयवा पडइपानीय। कुमुदेश्वर रस श्रोर महोदधि रस के बनाने की विधि तृष्णारोगाधिकार में लिखी है।

- (७) सूत्ररोध में वज्रक्षार वा श्वेत चूर्ण नामक श्रोषध, पाथर कुचि (पयरचूर) के पत्तों के रस श्रोर मधु श्रथवा स्थलपग्न (भागी) का रस, ईख की चीनी के साथ प्रयोग करने से लाभ होता है। यदि इससे पेशाव न उतरे तो चरण की छाल श्रोर गोख़ के काथ के साथ पाषाणभेदी रस प्रयोग करे। इससे श्रात कृच्छ्रसाध्य कठिन मूत्ररोध निवृत्त होता है। कन्दूरी वृक्ष की जड़ के रस में श्रोर तृणपञ्चमूल (कुश, कास, शर, दर्भ, इक्षु) के क्वाथ में शोरा एक श्राना श्रोर घो में भुनी हीग र रत्ती डालकर प्रयोग करने से मूत्र इकना श्रोर पेट फूलना निवृत्त होता है। ककड़ी के बीज पिसे हुए श्रोर ईख की चीनी के श्रनुपान में रस सिन्दूर १ रत्ती मात्रा में प्रयोग करने से श्रतिदारण मूत्रनिरोध श्रारोग्य होता है।
- (८) शृलवेदना में—(क) मकरध्वज १ रत्ती, शोधित कुविला एक ज्याना भर, गोलमरिच का चूर्ण दो रत्ती एकत्र मर्दन कर गरम जल के साथ प्रयोग करने से श्रतिदारण शूल वेदना ज्यारोग्य होती है।
- (ख) घृत में भुनी हीग २ रत्ती, विड लवण एक श्राना भर गरम जल के साथ प्रयोग करने से कालरा की शूल वेदना श्रारोग्य होती है।
- (ग) ताम्रभस्म २ रत्ती, घृत श्रीर मधु श्रथवा श्रादी का रस श्रीर मधु श्रथवा गरम जल वा नीवू के रस के साथ प्रयोग करने से दारुण श्रुल वेदना श्रारोग्य होती है।
- (९) पसीने में प्रवाल भरम २ रती, मुलहठी के चूर्ण और मधु के साथ सेवन कराकर अवीर और सींठ चूर्ण मर्दन करने से रोगी निश्चित रूप से आरोग्य होता है।
- (१०) नाड़ोलोप में हहत् कस्तूरीभैरव रस, चतुर्भुज रस, बृहत् चन्द्रोदय मकरध्वज, सिद्ध मकरध्वज और सबके अन्त में बृहत् स्विकाभरण अयोग करे।
- (११) खल्लीरोग में इस अवस्था में वृहत् वातचिन्तामणि कुड़े का चूर्ण और मधु के साथ प्रयोग करने से वहुत उपकार होता है। रसराज रस, वात-

नाशिनो, महालच्मीविलासरस श्रादि श्रौषध विवेचनापूर्वक प्रयोग करना उचित है। वातन्याधि श्रधिकार के कुछ तैल भी विवेचनापूर्वक प्रयोग करने से सुफल होता है।

श्वेतचूर्ण—सोरा ४ तोला, फिटकिरी २ तोला, सैन्धव १ तोला उत्तमरूप से सूचम चूर्ण करे फिर लोहे की कढ़ाई में रखकर अमिताप से गलावे। हलके हाथ से ऊपर का मैल उतार दें, फिर कांसे के पात्र में ढाल कर अन्य कासे के पात्र द्वारा ढककर रख दें।

**--∘;≈;**०--

## त्रयोविंदा अध्याय उदररोग चिकित्सा वायुजनित उदररोग चिकित्सा

त्रेलोक्यसुन्द्ररस्य—पारद, गन्धक, त्राभ्र, सैन्धव, मीठा विष, काला-जीरा, विडङ्ग, गिलोय का सत, चीते की जड़, वड़ी इलायची, जवाखार प्रत्येक त्राधा भाग ये द्रव्य निर्गुण्डो के रस त्रीर जम्हीरी नीवू के रस के साथ मर्दन कर २ रत्ती मात्रा की वटी वनावे। घृत के साथ मर्दन कर यह श्रोषध सेवन करे।

त्रेलोक्यडुम्बुररस—पारा २ भाग, गन्धक ४ भाग, श्रश्न, चीता, विडङ्ग, गिलोय का सत, सीसा, कालाजीरा, त्रिकटु, सैन्धव, जवाखार प्रत्येक १ भाग ये सव तुलसीपत्र श्रीर विजौरा नीवृ के रस मे मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण वटी बनावे। उसके वाद घृत के साथ मर्दनकर प्रयोग करे। यह वातोदर नाशक है। श्रनुपान हीग २ रत्ती, जीरा पिसा हुश्रा २ रत्ती श्रीर मधु।

चायुजनित उद्ररोग में श्रमुपान—हीग, जीरा चूर्ण, गरम दूध श्रौर एरण्डतेल, चीतामूल चूर्ण, गोमूत्र, दशमूल का क्वाथ श्रौर एरण्डतेल, सैन्धवलवण चूर्ण, जम्हीरी नीवू का रस इत्यादि।

### पित्तजनित उदररोग की चिकित्सा

इच्छामेदीरस—सोंठ, मरिच, पारद, गन्धक, सोहागा प्रत्येक १ भाग, जयपाल २ भाग ये सब एकत्र जल में मर्दन कर २ रत्ती परिमाण वटी बनावे। श्रतुपान—चीनी का जल। जितने चुल्लू चीनी का जल पान करे उतने ही दस्त हो, यह पित्तजडदररोग नाशक है।

उदयमार्तण्ड रस-पारद २ भाग, गन्धक और ताम्रपत्र प्रत्येक ८ भाग एकत्र जम्होरी के रस में मर्दन करे। उसके बाद उक्त द्रव्य उक्त रस में डुवाकर धूप में रख दे। ताम्र द्रवीभूत होने पर जिमीकंद के रस में मर्दन कर गजपुट में पाककर २ रत्ती मात्रा में घृत और मधुसहित प्रयोग करे। यह पित्तजनित सब प्रकार के उदररोग का नाशक है।

पित्तजनित उद्ररोग में श्रनुपान— घृत श्रौर मधु, चीनी का शर्वत, दूध, निसोत चूर्ण, सोन्दाल (श्रमलतास) की मज्जा, त्रिफला का चूर्ण इत्यादि।

#### कफजानित उदररोग की चिकित्सा

उदरान्तक रस—ग्रभ, लौह, पारद, गन्धक, मैनशिल, हरिताल, ताम्र, विकट्ट, चीते की जड़, कुडा, काली मूसली, मीठाविप, श्रजवाइन ये सव सम भाग नीव् के रस में मर्दन कर दो रत्ती प्रमाण वटी वनावे। मधु के साथ यह वटी सेवन करने से श्लेष्माजनित सब प्रकार के उदररोग नष्ट होते हैं।

महाविह्न रस—पारद, गन्धक, प्रत्येक ८ भाग, हलदी, त्रिफला, मैनशिल प्रत्येक २ भाग, निसीत, जयपाल, चीता प्रत्येक ३ भाग, त्रिकटु, दन्ती और जीरा प्रत्येक ७ भाग इनका चूर्ण करे। जयन्ती, सेंहुड़ का दृध, भांगरा, चीता और अण्डी के तेल में ७ वार भावना देकर ४ रत्ती प्रमाण विद्या बनावे। गरम जल के साथ एक विद्या सेवन करने से सब प्रकार के उदररोग नष्ट होते हैं। यह औषध सेवन कर शीतल जलपान न करे। इस औषध के सेवन करने से विरेचन होने पर तक संयुक्त अन्न भोजन करे।

### त्रिदोषजनित उदररोग की चिकित्सा

नाराचरस—ताम्र, पारद, गन्धक, जमालगोटा के वीज, त्रिफला, त्रिकड, सज्जीखार, जवाखार, सोहागा ये सब समान भाग ले मर्दन कर ४ रत्ती परिमाण उल्ण जल के साथ प्रयोग करे। यह त्रिदोपजनित उदररोग की श्रित उत्कृष्ट श्रोषध है।

वङ्गेश्वररस—पारद श्रीर वङ्ग प्रत्येक १ भाग, ताम्र श्रीर गन्धक प्रत्येक ४ भाग इन सवको एकत्र कर श्राक के दूध के साथ पीसे श्रीर सृदु श्राग्न से पुट देवे। मात्रा—२ रत्ती। श्रीषध सेवन के श्रान्त में पृत्युक्त श्राक का चूर्ण सेवन करे। यह त्रिदोषजनित उदररोग को समूल नष्ट करता है।

ताम्र प्रयोग-तामे को भस्म कर दो रत्ती मात्रा में आदी के रस श्रोर मधु के साथ प्रातः प्रयोग करे। इसके द्वारा त्रिदोषजनित उदररोग विनष्ट होता है।

### जलोदर-चिकित्सा

जलोद्रारिय्स—पीपल, मरिच, हलदी का चूर्ण श्रीर ताम्र सम भाग लेकर इन्हें सेहुड़ के दूध में मर्दन कर सब चूर्ण के समान जयपाल का चूर्ण उसमें मिलावे। मात्रा-१ माशा। इसके सेवन से विरेचन होकर सब तरह का जलोदर शीघ्र नष्ट होता है।

उद्रादि रस—पारद, तूतिया, जयपाल के बीज श्रीर पीपल सम भाग लेकर सोन्दाल (श्रमलतास ) फल की मज्जा श्रीर सेंहुड़ के दूध में मर्दन करे। ४ रत्ती परिमाण वटिका बनावे। श्रनुपान—इमली का रस। यह सब तरह के जलोदर की एक परीक्षित श्रीषध है।

### प्लीहोदर-चिकित्सा

रोहितकाद्य लौह—रोहितक छाल, त्रिकटु, त्रिफला श्रौर त्रिमद (विडङ्ग, मोथा, चित्रक) प्रत्येक समभागः सब के समान लौह। ये सब एकत्र मधु के साथ लौहपात्र में मर्दन कर ले। मात्रा-६ रत्ती। श्रनुपान-गोमूत्र, पिसा हुश्रा लहसन श्रौर पीपल चूर्ण।

रतीहारिस्स—पारद, गन्धक, विष, त्रिकटु, त्रिफला प्रत्येक १ तोला, जयपाल ५ तोला, ये सब पलाश बृक्ष के रस में मर्दन करके १ रत्ती परिमाण विटका बनावे। श्रनुपान-श्रादी का रस। यह प्लोहोदर रोगी को सेवन कराने से प्रत्येक चेत्र में सुफल पाया गया है।

पिट्पत्याद्यलौह—पीपरामूल, चीता, श्रभ्र, त्रिकटु, त्रिफला, त्रिमद, कर्पूर श्रीर सैन्धव इनका चूर्ण समभाग । सब चूर्ण के समान लौह चूर्ण । इनको जल में मर्दन करके छः रत्ती परिमाण विटका बनावे । श्रनुपान—रोहितक श्रीर हरीतकी का काथ ।

राह्वद्रावक—शङ्खचूर्ण, जवाखार, सज्जीखार, सोहागा, पाची नमक, फिटिकरी श्रीर नौसादर ये सव कांच की कूपी में रखकर वारुणीयन्त्र में चुवा ले।

महाशङ्खावक—इमली की छाल, पीपर की छाल, सेंहुड की छाल, श्राक की छाल, श्रापाइ (चिचिदा) इनका पृथक् २ क्षार जल तैयार करे श्रीर उसमें से नमक निकाल ले, फिर सोहागा, जवाखार, सज्जीखार, पांची नमक, हीग, हिरिताल, लवझ, नौसादर, जायफल, गोदन्ती हिरिताल, सोनामाखी, गन्धवोल, विष, समुद्रफेन, सोरा, फिटिकिरी, शङ्ख चूर्ण, शङ्खनाभिचूर्ण, प्रस्तरचूर्ण (पत्थर का चूना), मेनिशिल, हीराकसीस, ये सब समभाग चूर्णकर वेत के रस की भावना देकर काच की कूपी में स्थापना करे। फिर ७ दिन वस्त्र से ढककर गरम जगह में रक्खे। फिर मन्द श्रिग्न से वारुणीयन्त्र से पाक कर सत्त्व पातन करे। वह द्रवांश किसी काच के पात्र में पातित कर रख देवे। मात्रा-१ रत्ती। श्रनुपान-पान का रस। इसके द्वारा श्रित श्रसाध्य प्लीहोदर भी शान्त होता है।

महाद्रावक रस—सोनामाखी, कांस्यमाखी, संधानमक, रसौत, समुद्रफेन, सज्जीखार, दारुमुज (शंखिया) ये सब द्रव्य प्रत्येक १ भाग, सोहागा ७ भाग, नौसादर ३॥ भाग, फिटकिरी ३॥ भाग, जवाखार १४ भाग, धातुकासीस, पद्मकासीस मिलित १४ भाग, ये सब द्रव्य समभाग चूर्णित कर कपरौटी किये हुए काच के पात्र में रखकर वकयन्त्र में कम से श्राग्न की तेज बृद्धि करे श्रोर यथाविधि सावधानी से पाक कर उसका श्रक निकाल ले। मात्रा-८ रत्ती वा ७-८ बूंद। श्रानुपान-सोठ वा लवण का चूर्ण। इसके द्वारा कठिन प्लीहोदर भी शीघ्र श्रारोग्य होता है।

#### मलसञ्चय जनित उदर रोग की चिकित्सा

इच्छाभेदी रस—पारद १, गन्धक २, मरिच ३, सोहागा ४, सोंठ ४, हरीतकी ६, जयपाल ७ भाग एकत्र जल में मर्दन कर २ रत्ती परिमाण वटिका बनावे। श्रनुपान—उष्ण जल। यह सब प्रकार के मलसञ्चय जिनत उदर रोग का नाशक है।

### क्षत जनित उदर रोग चिकित्सा

क्षत जिनत उदर रोग में विजयपर्पटी वा स्वर्णपर्पटी वा श्रभाव में रसपर्पटी श्रयोग से भी श्रिति सुफल पाया जाता है। हरिताल भस्म श्रयोग से भी श्राशातीत सफलता होती है।

### चतुर्विश अध्याय

### पाकादाय के क्षत की चिकित्सा

### (गैरिट्क आलसार)

श्रनेक कारणों से बहुत दिन तक श्रजीर्ण रोग भोगने से रोगों के पाकाशय में क्षत हो जाता है। इस चेत्र में नीचे लिखी श्रीषधे विशेष फलप्रद हैं।

- (१) शूल चिकित्सा प्रसङ्ग में कथित त्रिनेत्ररस घृत श्रौर मधु के श्रनुपान से सेवन करने पर पाकाशय का क्षत निवृत्त होता है।
- (२) पर्पटी सेवंन के नियम से विजयपर्पटी सेवन करने से पाकाशय का क्षत निरोग होता है। वज्रपर्पटी विशेष रूप से सुफल देती है। परन्तु यह विशेष विवेचना कर प्रयोग करना चाहिये।
- (२) शोधित गन्धक है तोला से है तोले तक घृत श्रौर मधु के साथ श्रिया गरम दूध के साथ सेवन करने से पाकाशय का क्षत निवृत्त होता है।
- (४) गोदन्ती हरिताल भस्म है रत्ती मात्रा में घृत के श्रनुपान से प्रयोग करने से पाकाशय का क्षत निवृत्त होता है।

रसेन्द्र चूर्ण—स्वर्ण, पारद, गन्धक, हरिताल, दारमुज ( शंखिया ), ताम्र, समभाग ले एकत्र चूर्ण कर वालुकायन्त्र से गजपुट मे ४ प्रहर पाक करे। पात्र शीतल होने पर उतार कर उसके तले में लगी हुई श्रीषध चूर्ण कर है रती मात्रा में घृत श्रीर मधु के साथ प्रयोग करे। यह सब प्रकार के पाकाशय-क्षत का निवारक, श्राग्निवर्धक श्रीर ज्वर निवारक है।

#### पित्तिशिला चिकित्सा

### (गलस्टोन)

पित्तशिला में नीचे लिखी श्रौषधें हितकर हैं—

(१) अश्मरी रोगाधिकार में कहा हुआ पाषाणभेदी रस, त्रिविकम रस, श्रूलरोगाधिकार में कहा हुआ त्रिनेत्र रस, इस रोग मे प्रयोग करने से आरोग्यकर होता है। अनुपान-वृहत् वरुणादि कषाय, कुलथी की दाल का क्वाथ, पुनर्नवा रस, पाथर कुची (पाषाणभेद) का रस जवाखार का चूर्ण और हींग।

- (२) ताम्र भस्म २ रत्ती मात्रा, तालमखाने (कुलेखाड़ा ) के रस और मधु के साथ प्रयोग करने से सब प्रकार की पित्तशिला निश्चय त्राराम होती है।
- (२) श्रित विशुद्ध वारितर लौहमस्म २ रत्ती मात्रा मे मघु के साथ मईन कर प्रयोग करे फिर तृणपञ्चमूल का क्वाथ श्रनुपान के लिये प्रयोग करे। यह सब प्रकार की पित्तशिला का नाशक है।
- (४) विशुद्ध शिलाजीत एक त्राना भर मधु के साथ मर्दन कर वीरतरादि गण क्वाथ के त्रानुपान से प्रयोग करने पर सव प्रकार की पित्तशिला त्रारोग्य होती है।
- (५) ताम्रपर्यटी, लौहपर्पटी श्रौर पञ्चामृतपर्पटी श्रयोग से पित्तशिला में श्रित सुफल पाया जाता है।
- (६) विशुद्ध हरिताल भस्म है रत्ती मात्रा में घृत के श्रनुपान से प्रयोग करने पर पित्तशिला श्रारोग्य होती है। श्रनुपान—कुलथी का क्वाथ।
- (७) (क) पित्तशिला की घोर पीड़ा नष्ट करने के लिये वातारि रस कुड़ा, गोखुरू, वरुण की छाल, पाषाणभेद, सोठ और एरण्डमूल के क्वाथ के साथ प्रयोग करे। (ख) मकरध्वज १ रत्ती और शुद्ध कुचिला ४ रत्ती एकत्र मिलाकर वरुण छाल, कुलथी, कुडा, सोंठ और गोखरू के क्वाथ के साथ प्रयोग करे।

-----

### पश्चविंदा अध्वाय

### मूत्रकृच्छ् चिकित्सा

वातज सूत्रकुच्छू में वरणादि सौह—वर्षण की छाल १६ तोला, आमला १५ तोला, धाय के फूल ८ तोला, हरीतकी ४ तोला, शालिपणीं, लौह, अश्र प्रत्येक २ तोला, इन सब का एकत्र चूर्ण कर प्रातः ४ रत्ती मात्रा सेवन करे। अनुपान-शुण्ठी, गिलोय, अश्वगन्धा, श्रामला, गोखुरु इनका क्वाथ। यह वातज मूत्रकृच्छू नाशक है।

पित्तज सूत्रकृष्कु सें-त्रिनेत्र रसः—वङ्ग, पारद, गन्धक ये द्रव्य सम भाग में ग्रहण कर दूर्वा, मुलहठो, गोखुरू श्रोर सेमल के रस में एक दिन लोह-पात्र में मर्दन करे। फिर उसे मूषाबद्ध कर भूधरयन्त्र में पाक करे, शीतल होने पर उतार कर, पूर्वोक्त दूर्वा, मुलहठी, गोखुरू और सेमर के क्वाथ में भावना दे। उसके बाद ३ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। फिर दूर्वा, मुलहठी और सेमर के काथ में और दूध में खीर बनाकर सेवन करावे। प्रातः शीतल जल पान करने की देवे। यह पित्तजमूत्रकृच्छू का विनाश करता है।

कफज सूत्रकृष्ट्य में-सूत्रकृष्ट्यान्तक रस-रसिन्दूर, हरिताल, त्तिया, समभाग ले इन्हें एक दिन शतावरी के रस में मर्दन कर सरसों के तैल में तीन घण्टा पाक करे। मात्रा—४ रत्ती। श्रोषध सेवन के श्रन्त में, तुलसी, तिल कल्क, वेल मूल की छाल-इनका काथ, काजी, सुरा वा हुड़हुड़ का रस पान करने को देवे।

त्रिदोषज सूत्रकृच्छु सें—(१) ताम्रपर्धी, हीग, घृत और मधु के अनुपान से सेवन करने पर त्रिदोषज मूत्रकृच्छ्र आरोग्य होता है। (२) वारितर लौह भरम ५ रत्ती मात्रा में मधुं के साथ मिलाकर सेवन करने से सब प्रकार का दुःसाध्य मूत्रकृच्छ्र आरोग्य होता है। (३) कज्जली और जवाखार समपरिमाण में लेकर चीनी और तक के साथ मिलाकर सेवन करने से सब प्रकार का मूत्रकृच्छ्र आरोग्य होता है।

श्रिभघातज मूत्रकृष्ठ में रसिनदूर १ रत्ती मात्रा में मधु के साथ मिलाकर प्रयोग करे। उसके बाद सोठ, गिलोय, श्रश्वगंध, गोखरू श्रीर श्रामले का क्वाथ श्रनुपान रूप से प्रयोग करे। इसके द्वारा सब प्रकार का श्रिभघातज मूत्रकृष्ठ श्रारोग्य होता है।

पुरीषज मृत्रकुच्छु में-वातारि रस-पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, एकत्र मर्दन कर कज्जली करे, प्रथमतः गुग्गुलु ५ भाग एरण्ड तेल में मर्दन कर उसके साथ पूर्वोक्त कज्जली श्रौर त्रिफला-चूर्ण ३ भाग श्रौर चीतामूल चूर्ण ४ भाग मिलावे श्रौर उसे, एरण्डतेल द्वारा फिर मर्दन करके १ माशा परिमाण विटका वनावे। श्रमुपान-सींठ श्रौर एरण्डमूल का क्वाथ। श्रौषध सेवनान्त में रोगी के पीठ पर एरण्डतेल मलकर स्वेद प्रदान करे। विरेचन होने पर स्निग्ध श्रौर उपा द्वय भोजन करावे।

पथरी से उत्पन्न मूत्रकृष्ठ्य में-पाषाणमेदीरस-पारद १ भाग, गन्धक २ भाग एकत्र मर्दन कर उसमें अगस्त्य के पत्ते, पुनर्नवा, श्रह्सा श्रीर

श्रपराजिता के रस द्वारा पृथक् पृथक् ३ दिन भावना देवे। सूख जाने पर उसे मूत्रावद्ध कर पाक करे। मात्रा-३ रत्ती। श्रनुपान—कुलथी के क्वाथ के साथ इन्द्रायन के वीज श्रोर भुई श्रामला की जड़ पीसकर सेवन, करे।

शुक्रज मृत्रहच्छु में-(१) पाषाणभेदक रस—पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, एकत्र श्वेत पुनर्नवा के रस के साथ मर्दनकर मूषारुद्ध करे श्रोर यथाविधि गजपुट में पाक करे। मात्रा-१ माशा से २ माशा तक। श्रनुपान—गाम्भारीमृल श्रोर गोखरू का क्वाथ। इसके द्वारा शुक्रजमूत्रकृच्छ्र शीघ्र विनष्ट होता है।

(२) योगेन्द्रस्य—रसिसन्द्र १ तोला, स्वर्ण, लौह, अभ्र, मुक्ता और वज्ञ प्रत्येक है तोला, य सव घृतकुमारी के रस में भावना देकर धान्य राशि मे ३ दिन रख कर २ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे। श्रनुपान—त्रिफला का जल वा चीनी और शतावरी का रस।

(३) शिलाजतु, सोनामाखी, इलायची श्रौर हींग एकत्र समभाग में चूर्ण कर ४ रत्ती मात्रा में गुनगुने दूध श्रौर गुढ़ के साथ सेवन करने से शुक्रज मूत्र-कृच्छू वज्राहत घृक्ष की तरह नष्ट होता है।

(४) केवल मात्र शोधित शिलाजतु, १ तोला मधु के साथ चाटने से शुक्रज मूत्रकृच्छ्र त्यारोग्य होता है।

शर्कराज मूत्रकुछ में-तारकेश्वर रस—पारद, गन्धक, लौह, वज्ञ, श्रुश्र, जवाखार, जवाखार, गोखुरू बीज श्रीर हरीतकी समभाग में लेकर एकत्र मर्दन कर, कुम्हडे के जल, तृणपञ्चमूल के क्वाय श्रीर गोखुरू के रस में भावना देवे। इसके वाद २ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। श्रनुपान—गूलर का चूर्ण श्रीर मधु।

रक्तज मूत्रकृच्छु में-मूत्रकृच्छुहार—विदारीकन्द, गोखुरू, मुलहठी, नागेश्वर प्रत्येक श्राधा तोला। पाक का जल ८१॥ डेड सेर शेष ८।=डेड पाव। प्रचेप मधु ४ माशा। इस क्वाथ के साथ रसिसन्दूर सेवन से सप्ताह में रक्तज मूत्रकृच्छू विनष्ट होता है। तृणपश्चमूल के क्वाथ के साथ सेवन से भी यह श्रारोग्य होता है।

# , सूत्रकृच्छ चिकित्सा में अनुपान

वातज मूत्रकृच्छू में—सोठ, गिलोय, श्रश्वगन्धा श्रौर गोखुरूका क्वाथ, पुनर्नवा का रस, कुलथी का क्वाथ, दशमूल का क्वाथ, सोठ श्रौर एरण्ड की जड़ का

क्वाथ, शालिपणी का रस, पाषाणभेदी का रस, शतमूली का रस, वच श्रीर लालचन्दन क्वाथ विवेचना पूर्वक प्रयोग करे।

पिराज सूत्रकुच्छु में — िकसिमस का क्वाय, विदारीकन्द, ईख का रस, तृणपञ्चमूल का क्वाय, आमले का रस और गुड़, आमले का रस और दार- हलदी का चूर्ण, ककड़ी के बीज पिसे हुए, मुलहठी, पाषाणभेद का रस, गोखुरू और वरुण छाल का क्वाय, हरीतकी, गोखुरू, सोन्दाल ( अमलतास ), जवासा और पापाणभेदी का क्वाय विवेचना पूर्वक प्रयोग करे।

कफज सूत्रहच्छु में—इलायची का चूर्ण श्रौर गोमूत्र, केले की जड़ का रस, श्रयवा सुरा, गोखुरू का क्वाय, कुड़ा, गोखुरू, वर्षण की छाल श्रौर पाषाण भेद का क्वाय।

त्रिदोषज सूत्रकृष्ठ्य में—ईषदुष्ण दुग्ध श्रौर गुड़ श्रौर इन्द्र जो का काथ। पुरोषज सूत्रकृष्ठ्य में—गोखुरू का क्वाथ श्रौर जवाखार का चूर्ण।

शुक्रज सूत्रकृच्छु सें— घृत मिला हुआ दूध, इलायची का चूर्ण और हींग। सर्व प्रकार के सूत्रकृच्छु में— श्वेत वेडेला (बला) की जड़ का क्वाय जवाखार और चीनी समभाग में, कटेरी का रस मधु के साथ, गोरक्ष शालपणी का क्वाय सैंधव मिलाकर त्रिफला पीसा हुई और शीतल जल।

#### ----

## षड्विंदा अध्याय

### सूत्राघात-चिकित्सा

वातकुण्डलिका से-तारकेश्वर रस—रसिन्दूर, श्रभ्र, गन्धक, तीनों समभाग में लेकर मधु में मिलाकर १ माशा परिमाण वटी वनावे। श्रनुपान-गूलर के फल का चूर्ण और मधु। यह वातकुण्डलिका नाशक है।

श्रष्ठीला में-त्रिविक्रम रस-शोधित ताम्र मे समपरिमाण बकरी का दूध मिलाकर एकत्र पाक करे। जब दूध निःशेष हो जाय तब उस ताम्र के समान कज्जली एकत्रित कर निर्गुण्डी के रस में मर्दन करे श्रीर ३ घण्टा बालुकायन्त्र में पाक करे। मात्रा—२ रत्ती। श्रनुपान-जम्हीरीनीवू की जड़ का चूर्ण श्रीर जल। यह श्रष्टीला रोग की एक परीक्षित श्रीषध है।

वातवस्ति सें-लघुलोकेश्वर रस-विशुद्ध पारा १ भाग, गन्धक ४ भाग, एकत्र मर्वन कर कोड़ी मे भरकर, पारद का है चौथाई सोहागा, दूध द्वारा पीसकर उसके द्वारा कोडी का मुख वंद कर दे फिर वह कोड़ी मूषा में रख कर कपरौटी कर सन्धिस्थान श्रच्छी तरह वन्द कर पुटपाक मे दग्ध करे। शीतल होने पर चूर्ण कर ४ रत्ती परिमाण श्रौषध श्रौर मिरच का चूर्ण, जातीमूल का चूर्ण श्रोर जायफल का चूर्ण प्रत्येक ४ रत्ती एकत्र कर वकरी के दूध श्रौर चीनी के साथ पान करने से वातवस्ति विनष्ट होती है।

सूत्रातीत सें-पाषाणभेदी रस—इसके वनाने श्रौर प्रयोग करने की विधि श्रश्मरीजन्य मूत्रकृच्छ्र में मूत्रकृच्छ्र रोगाधिकार में देखिये।

मृत्रजठर में — वज्रक्षार, हीग, श्रगस्त्य के पत्तों का रस श्रौर मधु के साथ सेवन करे। वातारिरस-सोंठ श्रौर एरण्ड मूल के साथ सेवन करे।

सूत्रोत्सङ्ग में योगेन्द्र रस, चिन्तामणि, चतुर्मुख, त्रिनेत्र रस, त्रिविक्रम रस, तृणपञ्चमूल के क्वाथ के साथ प्रयोग करने से शुभ फल प्राप्त होता है।

मूत्रग्रिय में लघुलोकेश्वर, त्रिविकम रस श्रोर वातारि रस की व्यवस्था करे।

मूत्रत्य में — वरुणाद्यलोह, योगेन्द्र रस, चिन्तामणि, चतुर्मुख आदि श्रौषध वरुणादिगण वा तृणपञ्चमूल के क्वाथ के साथ प्रयोग करे।

सूत्रशुक्त में—शिलाजतु दो रत्ती मात्रा में तृणपञ्चमूल के क्वाथ के साथ चा पाचन के साथ सेवन करे।

उष्णवात में — त्रिनेत्र रस प्रयोग करने से सुफल पाया जाता है।

सृत्रसाद में — त्रिविक्रम रस, योगेन्द्र रस, चिन्तामणि रस, वरुणाद्य लौह, मूत्रकृच्छान्तक रस, पित्त श्रौर कफनाशक श्रनुपान से प्रयोग करे।

विड्वियात में — वातारि रस दुग्ध श्रीर एरण्ड तैल के श्रनुपान से प्रयोग करने पर विड्विधात श्रारोग्य होता है। इसके साथ त्रिनेत्र रस वरुणादिगण के क्वाथ के साथ प्रयोग करे।

विस्तिकुण्डल में — प्रथम वातारिरस प्रयोग करे, श्रनुपान-सोंठ श्रीर एरण्डमूल का क्वाथ। उसके वाद योगेन्द्र रस दे, श्रनुपान-तृणपन्नमूल का क्वाथ। उसके वाद शिलाजतु एक श्राना मात्रा में चीनी श्रीर दशमूल के क्वाथ के

त्रातुपान से प्रयोग करे। उसके बाद त्रिविकम रस प्रयोग करे। रोगी दुर्बल न हो तो ताम्र भस्म दो रत्ती, घृत त्र्रीर मधु प्रथवा वरुणछाल त्र्रोर गोखुरू के ववाथ से प्रयोग करे। वस्ति का मुख कफ से घिर जाने पर पाषाणभेदी रस, त्रिनेत्राख्य रस, ताम्रभस्म, शिलाजतु त्र्रीर जवाखार, वृहत् वरुणादि क्वाथ के साथ प्रयोग करे।

### सूत्राघात में अनुपान

तृणपञ्चमूल का क्वाथ—गोयालि लता के मूल का क्वाथ, वीरतरादिगण का क्वाथ, वरुणादिगण का क्वाथ, वकरी का मूत्र, भेड का मूत्र, 'कटेरी का रस, भिगोये कुड्कुम का जल, धिनया और गोखुरू का क्वाथ, श्वेत चन्दन धिसा हुआ और चीनी, सतावर का रस, त्रिफला और सँधानमक मिली हुई काड़ी, जवाखार और चीनी मिला हुआ कुम्हडे का रस।

-according

### सप्तविंदा अध्याय

### अइमरी ( पथरी )-चिकित्सा

वातज श्रथमरी में—पाषाणवज्ररस—शोधित पारा १ भाग, गन्धक, २ भाग, श्वेत पुनर्नवा के रस मे १ दिन खल मे मर्दन कर भूधरयन्त्र मे पाक करे। शीतल होने पर निकाल कर गुड़ के साथ वटी बनावे। श्रनुपान—इन्द्रायन की जड़ श्रौर कुलथी का क्वाथ। मात्रा-२ रत्ती।

पित्तज श्रश्मरी में — त्रिविक्रम रस अयोग करने से विशेष सुफल पाया जाता है। श्रनुपान-वृहद्वरुणादि कषाय।

कफज अश्मरी में-पाषाणभिन्नरस—पारद ८ तोला, गन्धक १६ तोला, शिलाजतु ८ तोला, ये सब एकत्र कर यथाक्रम से श्वेत पुनर्नवा, अरूसा और श्वेत अपराजिता के रस में एकदिन मर्दन कर सुखाकर भाण्ड में बंद करे और दोलायन्त्र में स्वेद प्रदान करे। मात्रा-२ रत्ती। अनुपान-कुलधी का क्वाथ।

शुकाश्मरी में—निशुद्ध शिलाजतु एक श्राना भर शुण्ठयादि क्वाथ के साथ प्रयोग करने से शुकाश्मरी श्रारोग्य होती है।

### अइमरी चिकित्सा में अनुपान

हलदी का चूर्ण, गुड़, काजी, कड़वी ककड़ी की जड़, मधु और चीनी, सोंठ, वहण की छाल और गोखरू का क्वाथ, वृहद् वहणादि पाचन, वीरतरादि गण का क्वाय, तृणपद्म मूल पाचन, जवाखार, हीग, ऊषकादि गण का चूर्ण, इत्यादि द्रव्य विवेचनापूर्वक प्रयोग करे।

#### **~**

### अष्टाविंदा अध्याय

### प्रमेह-चिकित्सा

### इलेप्पज दश प्रकार के प्रमेह की चिकित्सा

- (१) उद्कमेह में-विडङ्गादि लोह-विडङ्ग, मोथा, त्रिफला, पीपल; सींठ, जीरा श्रोर कालाजीरा प्रत्येक समभाग, सब के समान लौह एकत्र मर्दन करे। इससे उदक्षेह श्रारोग्य होता है। श्रनुपान-हरीतकी, कायफल, मोथा श्रीर लोध का क्वाथ। मात्रा ४ रत्ती।
- (२) इन्तुमेह में -बङ्गेश्वर रस—रसिन्दूर १ तोला श्रौर बङ्गभस्म १ तोला, एकत्र मधु के साथ मर्दन कर ४ रत्ती परिमाण वटिका बनावे। श्रनुपान-पाठा, विडङ्ग, श्रर्जुन छाल श्रौर धामना का क्वाथ श्रौर मधु इक्षुमेह नाशक है।
- (३) सान्द्रमेह में-मेघनाद रस-रसिन्दूर, कान्त लौह, अभ, शिलाजतु, सोनामाखी, मनःशिला, त्रिकटु, त्रिफला, सफेद आक, जीरा, कपास के वीज और हलदी का चूर्ण ये द्रव्य, समभाग में एकत्र कर चीते के रस मे इ० वार भावना देकर ६ रत्ती परिमित विटका बनावे। अनुपान-हलदी, दारुहल्दी, तगरपादुका और विडक्क का कोथ। यह सान्द्रमेहनाशक है।
- (४) सुरामेह में-हरिशङ्कर रस-रसिन्दूर श्रीर श्रभ समभाग में लेकर श्रामले के रस में ७ दिन भावना दे। मात्रा-४ रत्ती, श्रनुपान-कदम्ब, शाल, श्रर्जुन श्रीर श्रजवाइन का क्वाथ।
- (५) पिएमेह में-इन्द्रचटी-रसिसन्दूर, वङ्ग, अर्जुन की छाल इन्हें सम-भाग में लेकर सेमर मूल के रस में मर्दन कर ६ रत्ती प्रमाण विटका वनावे। अनुपान—दाह हलदी, खदिर, घव और विडङ्ग का क्वाथ।

१६ र० चि०

- (६) शुक्रसेह में सेहर्केशरी चङ्ग, सुवर्ण, कान्तलीह, पारद, मुक्ता, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात श्रीर नागकेशर ये सब द्रव्य समभाग में चूर्ण कर धृतकुमारी के रस में भावना देकर २ रत्ती परिमित वटिका वनावे। श्रानुपान -- देवदार, कुडा, श्रानु श्रीर चन्दन का काथ।
- (७) सिकतासेह सें-प्रमेहसेतु—पारद १, वङ्ग-२ श्रीर गन्धक ६ भाग एकत्र कूपीपक करने से प्रमेहसेतु तैयार होता है। यह सिकतामेह नाशक है। श्रानुपान—दाह हलदी, त्रिफला, गणियारी श्रीर-पाठा का काथ।
- (८) शितमेह सें-आनन्द्भेरव रस-वङ्ग, स्वर्णभस्म, रससिन्दूर इनको समभाग लेकर मधु के साथ मर्दन करे। सात्रा-२ रत्ती। अनु पान-पाठा, दूर्वा और गोखुरू का काथ। यह शीतमेह नाशक है।
- (९) शनैर्मेह में-पञ्चानन रस-पारद, गन्धक, लौह, अभ्र, प्रत्येक १ तोला, वड ८ तोला ये सब एकत्र मधु के साथ मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे। अनुपान-अजवाइन, खस, हरीतकी श्रीर गिलोय का काथ।
- (१०) लालासेह में-बृहत् हरिशङ्करं रस-पारद, गन्धक, लोह, स्वर्ण, वङ्ग श्रोर स्वर्णमाक्षिक ये द्रव्य सम भाग एकत्र करके श्रामले के रस में ७ दिन भावना दे। मात्रा-२ रत्ती। यह लालामेह निवारक है। श्रेनुपान-जामन की छाल, हरीतकी, चीता श्रोर छातिम छाल का क्वाय।

### पित्तज छ प्रकार के प्रवेह रोग की चिकित्सा

- (१) चारमेह में -वङ्गावलेह वङ्गमस्म ४ रत्ती मधु के साथ लेहन कर फिर गुड़ १ तोला और गन्धक है तोला एकत्र कर सक्षण करे। अथवा गिलोय का सत है तोला और चीनी १ तोला, एकत्र कर सेवन करे। यह वङ्गावलेह क्षारमेह की एक उत्कृष्ट औषध है। अनुपान-लोध, सुगन्धवाला, दारुहल्दी, धाइ के फूलों का काथ। -
- (२) नीलमेह में-विद्यावागीश रस रसिसन्दूर, अअ, सीसक, स्वर्ण, प्रत्येक एक भाग, महानिम्ब चूर्ण ४ भाग, ये सब द्रव्य एकत्र कर १ माशा परिमाण में मधु के साथ लेहन करे। अनुपान-पटोल, नीम की छाल, आमला और गिलोय का काय। बहुत् हरिशहर रस का इस रोग में अयोग करने से अच्छा फल पाया जाता है।

<+ 1

- (३) मसीमेह सें-चन्द्रअभावटी—रसिसन्दर, अअ, लोह, सीसा, वङ्ग, इलायची, लवङ्ग, जावित्री, जायफल, मौयाफूल (महुआ का फुल), मुलहठी, आमला, चीनी, कपूर, खेरसार, सतावर, कटेरी, अम्लवेत ये सब द्रव्य समभाग लेकर विष-लाइली के रस द्वारा १ दिन भावना देकर वेर की गुठली के समान वृद्धिका बनावे। मात्रा—४ रत्ती। अनुपान-मोथा, हरीतकी, पदमाख और कुडा की काथ।
- (४) हरिद्रामेह सें-चन्द्रकर्ला रस-इलायची, कपूर, शिलाजतु, ध्रांचला, जायकल, नागेश्वर, सेम्र मूसला, रसिसन्दूर, वङ्ग और लौहभस्म प्रत्येक समभाग । भावनार्थ-गिलोय और सेमर का काथ । मात्रा—१ माशा । श्रनुपान-चश्र, मोथा, श्रामला और हरीतकी का काथ ।
- (५) माञ्जिप्टमेह में-मेहान्तक रस-गन्धक, लौह, रौप्य, वङ्ग, अभ्र प्रत्येक ३ भाग, स्वर्ण ख्रर्द्ध भाग ख्रोर सवके समान काली मूसली का चूर्ण, एकत्र जल में मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण विटका वनावे। ख्रनुपान-खस, लोध, लाल चन्दन ख्रोर खर्जुन छाल का काथ। यह माजिष्ठ मेहनाशक है।
- (६) रक्तमेह में-योगीश्वर रस—रससिन्दूर, श्रभ, वङ्ग प्रत्येक सम भाग, महानिम्व (वकायन) के बीजो का चूर्ण ३ भाग ये सब एकत्र जल में मर्दन कर ६ रत्ती प्रमाण विटका वर्नावे। श्रनुपान—नीम छाल, श्रर्जुन छाल, श्रामला छाल श्रीर हरिद्रा का काथ।

### वातज ४ प्रकार के प्रमेह की चिकित्सा

- (१) वसामेह में मेहकुलान्तकरस्य वङ्ग, श्रिश्न, पारद, गन्धर्क, चिरा-यता, पीपलामूल, त्रिकटु, त्रिफला, निसोत, रसौत, विडङ्ग, मोथा, वेल, सोठ, गोखुरू के वीज, श्रमार के वीज प्रत्येक १ तोला, शिलाजतु १ तोला ये सब ककड़ी के रस में मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण विद्यां बनावे। यह वसामेह विध्वंसी है। श्रमुपान-गणियारी (श्ररनी) का काथ।
- (२) मजासेह जें-मेहकुअरकेशरी—पारद, गन्धक, लोह, श्रभ्र, सीसा, वङ्ग, स्वर्ण, हीरा, मुक्ता सब समभाग एकत्र कर सतावरि के रस में मर्दन कर एक गोला बनावे। इसे धूप में सुखाकर शराव सम्पुट कर उनका सन्धिस्थल मेही से लिप्त कर दे, इसके बाद इसे गढ़े में गोवर की श्रग्नि से १२ घण्टा

पुटपाक करे। इसके एक मास सेवन से ही मजामेह विनष्ट होता है। श्रानुपान-शीशम का काथ।

- (३) सौद्रमेह में-वेदिवद्यावटी—(१) पारद, श्रभ्र, कान्तलौह, सीसा प्रत्येक समभाग में लेकर ब्राह्मी के रस में १ दिन मर्दन कर वालुकायन्त्र में पाक करे। फिर श्रौषध निकालकर श्रभ्र, शिलाजतु, सोनामाखी, मण्हर वैकान्त, हीराकस, प्रत्येक पारद के समान एवं मोथा, लालुचन्दन, पुनाग, नारियल की जड़, कैथ, हलदी, दाहहल्दी, प्रत्येक द्रव्य समष्ट्रि के तुल्य लेकर जम्हीरी के रस में मर्दन कर रत्ती प्रमाण विद्या बनावे। श्रनुपान-श्रामलकी श्रौर गिलोय का रस श्रौर मधु।
- (२) बृह्द चङ्गेश्वर रस- वङ्ग, पारद, गन्धक, रूपा, कपूर, श्रञ्ज, प्रत्येक २ तोला, स्वर्ण श्रोर मुक्ता प्रत्येक ४ माशा ये सब द्रव्य कसेरू के रस में भावना देकर २ रत्ती प्रमाण वटिका बगावे। श्रनुपान-कच्ची हलदी का रस श्रोर मधु।
- (४) हस्तिमेह में-चङ्गाष्टक-पारद, गन्धक, रोप्य, लौह, खर्पर, श्रम्न श्रौर ताम्र प्रत्येक समभाग, सर्व समान बङ्ग। ये सुब एकत्र मर्दन कर गजपुट में पाक करे। मात्रा—२ रत्ती। श्रनुपान-श्रामलकी रस, हरिद्रा चूर्ण श्रौर मधु। यह हस्तिमेह नाशक है।

### द्रन्द्रज प्रमेह-चिकित्सा

वातिपत्तज प्रसेह में-भीमपराक्रम—प्रथमतः एक कराह में सीसा अदिन ज्वाला पर चढ़ावे, गल जाने पर उसमें थोड़ी-थोड़ी इमली की छाल की भरम डालकर लगातार करछी से चलाता रहे। फिर भरमीभूत होने पर, वह सीसा १ भाग, और पारद १ भाग एकत्र मर्दन कर मिलावे। एक तिल भर से मात्रा आरम्भ कर क्रमशः इसकी मात्रा बढ़ाकर सेवन करे। यह बातज और पित्तज प्रमेह नाशक है। अनुपान-विडङ्ग, दारुहलदी, खदिर, खश और गुवाक का काथ।

वातकफड़ प्रसेह में मेहारि—पारद २ भाग, गन्धक १ भाग, एकत्र मर्दन कर कळाठी करे, वह कळाठी काले धतूरे के रस के साथ एक दिन मर्दन कर एक कृपी में रक्खे, कूपी का मुंह अभ्र के दुकड़े से ढक दे। कूपी के ऊपर सात कपरोटी (कपरिमेटी) कर ३ दिन सुखावे, और नमक से भरे हुए भाण्ड में स्थापित कर १२ घण्टे पाक करे। शीतल होने पर कृपी तोड़ कर उसमें से रस संग्रह करे। वह रस २ भाग, अभ्र १ भाग और लोह १ भाग एकत्र मर्दन करे।

यह श्रीषध ६ रत्ती मात्रा में मधु, चीनी श्रीर गिलोय के रस श्रयवा मधु श्रीर पीपल के चूर्ण के साथ सेवन से वातरलेप्मज प्रमेह समूल नष्ट होता है। श्रानु-पान—हरीतकी, कट्फल (कायफल), मोथा, लोध, खस श्रीर लालचन्दन का काथ, गिलोय का रस, हरिद्रा का चूर्ण, पीपल का चूर्ण इत्यादि।

पित्तरलेष्मज प्रमेह में मेहवद्धरस—जारित पारद, जारित कान्तलौह, जारित मुण्डलौह, शिलाजतु, शोधित स्वर्णमाक्षिक, मैनशिल, त्रिकटु, त्रिफला, श्रद्धोल वीज, कैय का चूर्ण, हलदी का चूर्ण प्रत्येक समभाग, ये सब द्रव्य ३० बार्र भांगरे की भावना देकर सुखावे। यह मेहवद्ध नामक श्रीषध १ माशा मात्रा में सधु के साथ चाटने से पित्तरलेष्मज प्रमेह विनष्ट होता है।

### त्रिदोषज प्रमेह-चिकित्सा

निम्नलिखित श्रोषियां त्रिदोषज प्रमेह में हितकर हैं-

- (१) उद्यभास्कर रस—पारद, गन्धक, लौह, श्रश्न, सोहागा, शिला-जतु, श्रमलवेत, कट्फल (कायफल) और वङ्ग, प्रत्येक एक एक भाग, पश्चमूत्र (गाय, वकरी, भेड़, मेंस और गधी का मूत्र ) के साथ ३ दिन मर्दन करे। फिर जम्हीरी के रस के साथ ४ दिन एवं जटामासी और गोख़ के काथ के साथ २१ दिन मर्दन करके मूषा में वन्द करे और कुक्कुटपुट में पाक करे। शीतल होने पर यथाक्रम से उसमें घृतकुमारी, चीते की जड़, त्रिकटु, जायफल, स्वर्णक्षीरी (सत्यानाशी), कुचिला, नखी, श्रमलवेतस इनकी भावना देकर एक एक दिन मर्दन करे। मात्रा— ३ रत्ती। श्रमुपान—गिलोय का रस श्रीर मधु।
- (२) मेहमर्न रसं—ग्रभ के साथ ७ वार मर्दित सीसे की भस्म चूर्ण कर उसके साथ समभाग कान्तलौह मिलावे। किर गोमूत्र श्रौर शिलाजीत के साथ मर्दन कर सुखाकर चूर्ण करे। यह श्रौषध सीसे के पात्र में रख देवे। मात्रा—२ रत्ती। श्रनुपान—ग्रामले का रस।
- (३) रामबाण रसं—वङ्ग के साथ मर्दित रौप्य १ भाग श्रौर सीसे के साथ मर्दित स्वर्ण १ भाग श्रौर जारित पारद २ भाग, एकत्र श्रालकुशी मूल के रस के साथ तीन दिन मर्दन कर सुखावे। फिर उसके साथ सोनामाखी, वैकान्त श्रौर राजावर्तभस्म प्रत्येक समष्टि के समान भाग में मिलाकर उत्तमरूप से मर्दन करे। फिर तुष पुट में ६ वार पाक करे। फिर श्रालकुशो वीन श्रौर ववूल के

क्वाथ में तीन बार भावना दें। यह तीन रत्ती मात्रा में गिलोय के सत के साथ मिलाकर सेवन करे।

(४) उमाद्यास्थु रस-पारद और अश्र समान भाग, तृतिया दोनों के समान। ये सब जम्हीरी के रस के साथ तीन दिन मर्दन कर मूपारुद्ध करें और यथाक्रम से ७ बार पुटपाक करें। फिर उसमें विजीरा, मोथा और वहेंड़ के क्वाथ की ४ वार, अर्जुन छाल के क्वाथ की २ वार एवं मुलहठी, चीनी, केतकी, जीरा, रम्भा, खजूर और तेजपात का रस अत्येक की ३ भावना दे। इस तरह रस तैयार होने पर उसे तीन रत्ती मात्रा में प्रयोग करें। अनुपान—सताविर का रस और मधु।

### प्रमेह चिकित्सा में अनुपान

मधुमेह में—सुपारी श्रीर वर्बूल का क्वाथ। जलमेह में—पालिधा-मदार का क्वाथ। इक्षुमेह मे—जयन्ती का क्वाथ। सुरामेह में—नीम का क्वाथ। सिकता-मेह मे—चीते का क्वाथ। शनैमेंह मे—खदिर का काथ। पिष्टमेह में हलदी श्रीर दाव्हलदी का क्वाथ। सान्द्रमेह मे—छातिम की छाल का क्वाथ। शनैमेंह मे—त्रिफला श्रीर गिलोय का क्वाथ। लाला मेह में—त्रिफला श्रीर सीन्दाल (श्रमलास) का क्वाथ। शुक्रमेह मे—द्वी, शैवाल, केवटी मोथा, करझ श्रीर कशेल का कषाय, श्रज्जन श्रीर चन्दन का कषाय। नीलमेह मे—पीपर का कषाय। हरिद्रामेह मे—सोन्दाल (श्रमलास) का क्वाथ। शुक्रमेह में—न्यग्रीधादि गण का क्वाथ। क्षारमेह मे—त्रिफला का क्वाथ। माजिष्ठमेह मे—लालचन्दन का क्वाथ। साव प्रकार के प्रमेह मे—गिलोय का रस, सतावर का रस, कची हलदी का रस, गेदा के पत्तों का रस, कच्चा दूध, हिन्न का रस, व्वाक के फूलो का रस श्रीर सेमर का रस।

### प्रमेह-विडिका की चिकित्सा

(१) पारद भस्म और वज्जभस्म एकत्र समभाग में मिलाकर १ रत्ती मात्रा में मधु के साथ प्रयोग करने से सब प्रकार की प्रमेह पिडिका आरोग्य होती है। क्षत वेशों होने से हरिताल भस्म प्रयोग करे।

### जनत्रिंश अध्याय

### सोमरोग-चिकित्सा

नीचे लिखी श्रोपिधयां सोमरोग चिकित्सा में विवेचना पूर्वक प्रयोग करें।

- (१) तालकेश्वर रस—हिरताल, पारद, गन्धक, लौह, श्रभ्र, वङ्ग ये सव द्रव्य समभाग में लेकर मधु में मर्दन कर ४ रत्ती परिमाण श्रौषध मधु के साथ सेवन कर फिर पके गूलर का चूर्ण श्रमुपान करे।
- (२) हेमनाथ रस-पारा, गन्धक, स्वर्ण, सोनामाखी प्रत्येक १ तोला, लौह, कपूर, वज्ज ख्रोर प्रवाल प्रत्येक है तोला; ख्रफीम के जल, मोचा (सेमर वा केला) के रस ख्रोर गूलर के रस मे ७ वार भावना देकर २ रत्ती प्रमाण विटका वनावे। ख्रनुपान—जामन के बीज का चूर्ण, गूलर का रस ख्रोर मधु।
- (३) सोमनाध रस—जारित लौह २ तोला, पारद, गन्धक, इलायची, तेजपात, हलदी, दाहहलदी, जामन, खस, गोखुरू, विडङ्ग, जीरा, पाठा, श्रामला, श्रामार, सोहागा, चन्दन, गूगल, लोध, शाल, श्राजुन श्रीर रसौत प्रत्येक १ तोला; ये सब द्रव्य वकरी के दृध में पीस कर २ रत्ती प्रमाण विटका वनावे।
- (४) सोमेश्वर रस—शाल वृक्ष का सार, श्रर्जुन छाल, लोध, कदम्ब, श्रागर, चन्दन, गणियारी, हलदी, दारु हलदी, श्रामला, श्रागर, गोखुरू, जामुन, खश श्रोर गूगल प्रत्येक श्राधा पल। पारद, गन्धक, धनिया, मोथा, इलायची, तेजपात, श्रम्भ, लोह, रसोत, पाठा, विडङ्ग, सोहागा श्रोर जीरा प्रत्येक ८ तोला, वी के साथ मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। श्रानुपान—श्रद्धसा के पत्तों का क्वाथ श्रोर गूलर का चूर्ण।
  - (५) वसन्तकुसुमाकर रस—वैक्रान्त १ भाग, स्वर्ण, अअ, मुक्तां और अवाल अत्येक २ भाग, वङ्ग ३ भाग, रससिन्द्र ४ भाग। इन सबकों जम्हीरी नीवृ के रस, गाय के दूध, खश के क्वाथ, अडूसा की छाल और ईख के रस में ७ वार भावना देकर २ रत्ती अमाण विटका बनावे। अनुपान—आमलकी स्त्रीर गूलर का रस और मधु।
  - (६) चन्द्रकान्ति रस-शोधित पारद, गन्धक, श्रश्च, रौप्य, हरिताल, कांसा, लौह, सोनामाखी, स्वर्ण, प्रत्येक समभाग । इन द्रव्यों के समान वङ्ग, एकत्र

मर्दित कर, श्राम की छाल के क्वाय, श्रामले का रस, कुलयी का क्वाय, लज्जावती का रस, वट की वर्रीह का रस, सेमल की जड़ का रस प्रत्येक की ३-३ भावना देवे। किर जायकल, लवड़, दारुचीनी, मोथा, इलायची श्रोर जावित्री ये सव द्रव्य समभाग से पूर्वोक्त द्रव्य के समान लेकर चूर्ण कर एकत्र मिलावे। मात्रा-२ रत्ती। श्रनुपान—श्रामला श्रोर केला की जड़ का रस।

### सोमरोग चिकित्सा का अनुपान

श्रामले का रस, गूलर का रस, जामन के बीज का चूर्ण, केले की जड़ का रस, केले के फूल का काथ, विदारीक द का रस, मोथा का रस, पाठा का क्वाय, वाश के पत्तों का क्वाथ, भसीडे का रस, त्रिफला का क्वाथ, जो का क्वाथ, ताल श्रीर खज्र के वृञ्च की जड़ का रस, नोना की छाल का रस, तेला कुचा (कुन्दुर) मूल का रस, पश्चवल्कल (वट, पीपर, गूलर, पाकर श्रीर वेत) का क्वाथ, करीह के पत्तों का रस।

## त्रिंश अध्याय

### उपदंश रोग-चिकित्सा

चातज उपदंश में —रसताल, घृत श्रोर मधु के श्रनुपान से एक जौ मात्रा में प्रयोग करे।

ं पित्तज उपदंश में —रसमाणिक्य, वृत श्रौर मधु के श्रनुपान से २ रती मात्रा में प्रयोग करे।

कफज उपदंश में —हरतालभस्म, गाय का घी और हलदी का चूर्ण के अनुपान से प्रयोग करे।

त्रिदोषज उपदंश में — कृष्णरस, दो रत्तों मात्रा में गाय के घी श्रौर मधु के साथ मर्दित कर प्रयोग करे।

रक्तज उपदंश में -वरादि गुग्गु जु — श्रामलको, हरीतकी, वहेड़ा, श्रर्जुन, पीपर, खैर, विजयसार इन द्रव्यों का चूर्ण समभाग में लेकर इनकी समष्टि के समान गुग्गुलु मिलावे। उसके बाद सब द्रव्यों को एकत्र जल में मर्दन कर है तोला मात्रा में विटका वनावे। गरम दूध से यह वटी सेवन करने से सब प्रकार का उपदंश निवृत्त होता है।

नीचे लिखे प्रलेप ( मलहर ) उपदंश रोग में हितकर हैं—

- (१) सौराष्ट्री मृत्तिका, गेरु, तृतिया, हीराकस, सैन्धव, लोध, रसौत, हरि-ताल, मनःशिला, रेणुक और इलायची समभाग में चूर्ण कर मधु के साथ मर्दन कर प्रलेप करने से सब प्रकार का उपदंश आरोग्य हीता है।
- (२) हरिताल श्रौर मनःशिला पुट में दग्ध कर अलेप करने से उपदंश श्रारोग्य होता है।
- (२) त्रिफला श्रोर रसौत एकत्र खरल कर प्रलेप करने से उपदंश श्रारोग्य होता है।
- (४) भागीं की जड़, अपामार्ग की जड़, सफेद चन्दन और मनःशिला, एकत्र पीसकर मधु मिलाकर प्रलेप करने से उपदंश आरोग्य होता है।

### दूषित योनि जनित फिरंग रोग-चिकित्सा

वातज फिरङ्ग में-रसगुग्गुलु—पातन यन्त्र में शोधित पारद ३०० रत्ती, चीनी ३०० रत्ती, शोधित महिषाक्ष गुग्गुलु ४०० रत्ती, घृत १०० रत्ती, ये सब एकत्र श्रच्छी तरह मर्दन कर २० गोली बनावे। यह प्रथम से ३ दिवस प्रतिदिन ३-३ करके और चौथे दिवस से प्रतिदिन १-१ गोली सेवन करे। १४ दिन में सब श्रोषध समाप्त होगी। इस श्रोषध के सेवन काल में पर्पटी सेवन के सब नियम पालन करे।

पित्तज फिरङ्ग में-भैरव रस—पारद १०० रत्ती, चीनी ३०० रत्ती, ये दोनों द्रव्य लोहे के पात्र में नीम के दण्डे से ३ घण्टे मर्दन कर उसमें १०० रत्ती रवेत खैर (कत्था) मिलाकर काजल की तरह एकदिल कर २० गोली वनावे। गोलियां गेहूं के आटे के साथ रख दे। जव देखे कि उपदंश विषके कारण शरीर में सर्वत्र फुंसी निकल आई है तब यह श्रीपध सेवन कराना आरम्भ करे। इसकी सेवन विधि रसगुरगुलु के समान है। १४ दिन में सव गोली पूर्ण कर दे। पथ्यापथ्य-रसगुरगुलु के समान।

कफज फिर्झ में -रसरोखर रस—पारद २ रती, अफीम १२ रती ये दोनो द्रव्य लोहपात्र में नीम के दण्डे से तुलसी के रस में घोंटकर उसके साथ हिझल दो रत्ती मिलाकर फिर तुलसी के रस में घोटे। फिर जावित्री, जायफल, खुरासानी अजवाइन श्रौर अकरकरा प्रत्येक दो रत्ती, इन सबसे द्विगुग सफेद कत्या

उसके साथ मिलाकर तुलसो के रस में घोंटकर चने के समान गोली बनावे। प्रतिदिन सायंकाल दो गोलो सेवन करे। मिर्च, खटाई, तेल, मिठाई परहेज करे।

त्रिदोषज फिरङ्ग रोग में-रसकपृर—मैदा की एक छोटी लोई सी वनाकर उसमें ४ रती पारद रखकर मुख इस प्रकार बंद करें कि भीतर पारा दिखाई न पड़े श्रोर ऊपर भी पारा न रहें। फिर उसके ऊपर लवड़ का चूर्ण लपेट कर ऐसी होशियारी से निगल जाय कि दॉत न लगे। इसके सेवन के बाद पान खाय। इसके सेवन काल मे शाक, खटाई, श्रयक परिश्रम, धूप सेवन, मार्ग चलना श्रोर श्रीसङ्ग त्याग करे।

सतामृता घटी—पारद है तोला, कत्था है तोला, श्रकरकरा १ तोला, मधु १ है तोला, एकत्र मर्दन कर ७ गोली बनावे। प्रातः १ गोली जल के साथ खाय। ७ दिन तक नमक, खटाई न खाय।

धूम प्रयोग—पारा २ तोला, गन्धक २ तोला, कज्जली कर विडङ्ग चूर्ण २ तोले के साथ एकत्र कर मिलावे। फिर ७ गोली बनाकर एक-एक गोली प्रतिदिन (चिलम मे रखकर) धूम प्रयोग करे ऋथवा धूनी दे। ७ दिन में उपकार पाया जाता है।

### ब्रध्न (बद) चिकित्सा

व्रध्न में वातारि रस, वरादि गुग्गुलु, भैरवरस, रसतालक, रसशेखर रसा आदि श्रीषध प्रयोग करे।

## लिङ्गार्श-चिकित्सा

मनःशिलादि प्रलेप—मैनशिल, तृतिया, शिलाजीत, नीला सुरमा, रसौत श्रीर हरिताल समभाग में लेकर घृत में मर्दन कर प्रलेप कर देने से लिङ्कार्श श्रारोग्य होता है।

# गनोरिया (सुजाक ) वा विषाक्त प्रमेह चिकित्सा

नीचे लिखी श्रोषधियां विषाक्त प्रमेहनाशक है:—

(१) वङ्ग रतन—लोहभस्म, वङ्गभस्म, पारदभस्म, शिलाजतु समभाग में एकत्र मर्दन कर गोख्रह, वहण, श्वेत चन्दन, कुडा, कच्ची हलदी, घृत कुमारी घ्रोर वबूल की छाल के क्वाथ में भावना देकर ४ रत्ती प्रमाण गोली बनावे। कच्ची

हलदी के रस श्रोर मधु के साथ इस श्रोपध के सेवन से उत्कट गनोरिया श्रारोग्य होता है।

रसराज रस—ग्रभ्र, लोह, स्वर्ण वङ्ग, शिलाजतु, स्वर्णसिन्दूर, सोनागेरु, जवाखार प्रत्येक समभाग लेकर गोखुरू श्रीर वरुण छाल के क्वाथ मे ७ दिन्ह भावना देकर ४ रत्ती परिमाण वटी वनावे। श्रनुपान—हलदी का चूर्ण श्रीर मधु। यह सब प्रकार के दूषित प्रमेह वा सुजाक का नाशक है।

स्वर्णवङ्ग वनाने की विधि—लोहे या मिही के पात्र में कुछ वङ्ग श्रिक्ष ताप से गलाकर उसमे वङ्ग के समान पारा डाल दे, दोनो के मिल जाने पर उनके साथ नौसादर श्रीर गन्धक का चूर्ण पारद के समान परिमाण में मिलाकर मर्दन करे। किर सूचम वल्ल श्रीर कीच द्वारा लिप्त एक काच की शीशी में यह सब चूर्ण मिलाकर वालुकायंत्र में १२ वण्टे पाक करे।

वङ्गभरम—पारद १ भाग, गन्धक २ भाग और शोधित वङ्गवूर्ण ३ भाग, इनकी कज्जली कर घृतकुमारी के रस मे अति उत्तमक्ष्य से मर्दन करे। उसके वाद उसका गोला वनाकर अण्डी के पत्तों में वॉध कर ३ दिन धान्य-राशि में रख देवे। ३ दिन वाद निकालकर फिर घृतकुमारी के रस मे मर्दन कर तीन वार गजपुट में पाक करे। इससे अति सुन्दर वङ्गभस्म मिलेगी। इस भाव से भस्मी-कृत वङ्ग २ रत्ती मात्रा में हलदी के चूर्ण और मधु के साथ देने से सब प्रकार का विषाक्त प्रमेह वा गनोरिया आरोग्य होता है।

सव प्रकार के गनोरिया नाशक श्रोपिवयों में वह ही श्रेष्ठ है। उपर्युक्त प्रणाली से जस्ता श्रोर सीसामस्म तैयार कर प्रयोग करने से विषाक्तप्रमेह, वहुमूत्र श्रोर वीसों प्रकार के प्रमेह श्रारोग्य होते हैं। उनके साथ विशुद्ध लौहभस्म प्रयोग करने से श्रोर भी श्रिधिक फल पाया जायगा।

#### शुकदोष-चिकित्सा

उपदंश और व्रणरोग चिकित्सा में जो ओषधियां कही गई है शूकदोए चिकित्सा में वे ही ओषधियां रोग और दोष की अवस्था विचार कर अयोग करे। इसमें पञ्चवल्कल के काथ से क्षतस्थान धोकर शोधित आंवला सार गन्धक और गाय के घी के साथ मर्दन कर अलेप करे। त्रिफला के साथ रसौत का अलेप करने से सब अकार का शूकदोष आरोग्य होता है।

### एकत्रिंश अध्याय

### रक्तिपत्त चिकित्सा

वातप्रधान रक्तिपत्त सें-श्रकेंश्वर—मारित ताम, श्रभ्र, वङ्ग श्रीर सोना--साखी इनको गिलोय के रस में २१ वार भावना देकर पुट देवे। श्रनुपान— श्रक्सा श्रीर विदारीकन्द का रस। मात्रा-४ रत्ती। इसके द्वारा वातप्रधान रक्त-गित्त समूल विनष्ट होता है।

सुधानिधि रस-पारद, गन्धक, सोनामाखी, लौहचूर्ण समभाग में लेकर त्रिफला के क्वाथ में मर्दन कर मूषा में रख भूधरयंत्र से पाक करे। मात्रा-१रत्ती। त्रानुपान-त्रिफला का क्वाथ। रक्तिपत्त की शान्ति के लिये रात को लौह पात्र में गाय का दूध श्रीटाकर पान करावे।

पित्तप्रधान रक्तिपत्त में -रक्तिपत्तान्तकलीह -जारित श्रभ्र, लौह, सोनामाखी, हरिताल श्रोर गन्धक समभाग लेकर मुलहठी, दाख श्रोर गिलोय के रस में १ दिन मर्दन करके १ माशा परिमाण में चीनी श्रोर मधु के साथ सेवन करने से पित्तप्रधान रक्तिपत्त श्रारोग्य होता है। मात्रा-२ रत्ती।

शकराद्यलौह—चीनी, तिल, त्रिकरु, त्रिफला, त्रिमद इनके समान लौह भरम एकत्र मिलाकर एक त्राना मात्रा में ब्राह्स के रसं ब्रौर मधु के ब्रानुपान से सेवन करे।

कफप्रधान रक्तिपत्त में-कपर्हक रस — शोधित पारद कपास के फूल के रस में १ दिन मर्दन कर कौड़ी में भर दे। फिर अन्धमूषा मे पाक कर निकाल कर चूर्ण करे और दूनी मरिच का चूर्ण उसके साथ मिलावे। मात्रा-१ रत्ती। अनुपान— घृत और गूलर का रस।

रसामृतरस—पारद १ भाग, पारद का दूना गन्धक, सोनामाखी, शिला-जीत, चन्दन, गिलोय, दाख, महुये का फूल, धनियां, कुडे की छाल, इन्द्रजी, धाय के फूल, नीम के पत्ते और मुलहठी प्रत्येक १ भाग। इन्हें मधु और चीनी के नाय विधि पूर्वक मर्दन कर धारोष्ण दूध के साथ आधा तोला प्रातःकाल सेवन करे।

सर्वप्रकार के रक्तिपत्त का नाशक चन्द्रकला रस — पारद श्रीर ताम-भस्म प्रत्येक शतीला, एकत्र ३ दिन मर्दन कर वालुकायन्त्र में पाक करे। फिर दोनों द्रव्यों के समान परिमाण गन्धक उसमें मिलाकर मर्दनकर कळाली करे, फिर उसमें मोथा, दाडिम, दूर्वा, केतकी जटा, बेडेला, (बला), घृतकुमारी, चेत्र पापड़ा, राम शीतला या श्राराम शीतला श्रीर सतावर प्रत्येक के रस में पृथक पृथक १ दिन भावना देवे। फिर कुडा की मूल, गिलोय का सत्त्व, चेत्र पापड़ा, खश, पीपल श्रीर सिंघाड़े श्रीर श्रनन्तमूल इन द्रव्यों का चूर्ण १-१ भाग उसमें मिलाकर द्राक्षादि कृषाय में ७ वार भावना देकर चने के प्रमाण वटिका बनावे।

### रक्तपित्त चिकित्सा के अनुपान

श्रहसा के पत्तों का रस, श्रामले का रस, काली जामन का रस, कुकरोंदा का रस, गेंदा के पत्तों का रस, खोड़ का रस, गिलोय का रस, पटोल पत्र का रस, गूलर का रस, कूष्माण्ड का रस श्रीर दुर्वा का रस। किसमिस, हरीतकी, लाल-चन्दन, मुलहठी, प्रियड्ड, खश, लोघ, धनिये, गिलोय, खेतपापड़ा, दाख, वट का चरोह, नीलकमल, खजूर, पीपल, जामन, श्राम श्रीर श्रर्जुन की छाल का काथ।

-ocrations

# द्वात्रिंश अध्याय

#### यक्ष्मा चिकित्सा

वायु प्रधान यदमा में-राजमृगाङ्क रस—रसिंन्दूर ३ तोला, स्वर्ण १ तोला, ताम्र १२ तोला, शिलाजतु, हरिताल प्रत्येक २ तोला। ये सव एकत्र मर्दन कर वड़ी वड़ी कौड़ियों में भर दे। फिर बकरी के दूध में सुहागा पीसकर उसके द्वारा कौड़ियों का मुख वन्द कर मिट्टी के वर्तन में स्थापित और वन्दकर लिप कर दें। फिर सूखने पर गजपुट में पाक करे। मात्रा-४ रत्ती। श्रनुपान—पीपल चूर्ण और मधु श्रथवा मरिच चूर्ण और घत।

राह्वेश्वर रसः शङ्ख नामि ४ माशा, कौड़ी १६ माशा, नीला तृतिया २ माशा श्रीर गन्धक, सीसे की भस्म, पारद भस्म श्रीर सोहागा प्रत्येक २ माशा ये सब एकत्र मर्दन कर कौड़ी मे भर कर गजपुट में पाक करे। मात्रा-४ रत्ती। श्रमुपान- घृत श्रीर मधु।

मृगाङ्कपोदुली रस-१६ निष्क शङ्ख नाभि, गाय के दूध के साथ पीसकर उसके द्वारा मूषा बनाकर उसमें आधा निष्क जारित पारद और ३ निष्क गन्धक चूर्ण निक्तेप करे। एवं मुख वन्द कर कपड़िमिट्टी कर प्रलेप कर देवे। स्खने पर गजपुट में पाक करे, पाक हो जाने पर वह श्रीषध मूषा सहित चूर्ण कर १ रत्ती मात्रा में पीपल चूर्ण श्रीर मधु के श्रनुपान से सेवन करे।

पश्चामृत रस—पारद भस्म, श्रश्न भस्म, लौहमस्म, शिलाजतु, मीठाविष, जारित ताम्र एवं गिलोय श्रौर त्रिफला के क्षाश्र में शोधित गुग्गुलु प्रत्येक सम भाग, ये सव एकत्र मिलाकर २ रत्ती सात्रा में पीपल चूर्ण श्रौर मधु के श्रनुपान से सेवन करे।

लोकेश्वर रस—पारदमस्म १ भाग, स्वर्णभस्म है भाग, गन्धक २ भाग ये सब एकत्र चीतामूल के काथ में मर्दन कर कोड़ी के अन्दर भर दे, और सोहागे हारा कोड़ी का मुख बन्द करे, फिर एक भाण्ड के मध्य देश में चूर्ण लेपन कर उसमें कोड़ियां रख दे और मिट्टी द्वारा उसका मुख बन्द कर सुखा ले। फिर 'पुटपाक कर दे, शीतल होने पर औषध चूर्ण करे। मात्रा-४ रत्ती। अनुपान-धृत और मिरच चूर्ण। २१ दिन तक इस अनुपान से औषध सेवन करे और नमक छोड़कर केवल धृत और दिध के साथ अन्न भोजन करे।

पित्त प्रधान यदमा में -बैद्यनाथ रस-शङ्ख नाभि अस्म ४ माशा, कौड़ी भस्म १६ माशा, नीलाथोथा, हरिताल, गन्धक, सोहागा, रौप्य श्रौर सीसक प्रत्येक २ तोला, पारद १ तोला, ये सव एकत्र मर्दन कर गन्धक चूर्ण श्रौर मण्डूर से किल्पत श्रौर लेपित मूला में वन्द कर पुट देवे। यह चूर्ण श्रौर मिरच चूर्ण प्रत्येक ३ रत्ती एकत्र मिलाकर मधु के साथ चाटे।

राजावर्त रस—राजावर्त, रसिसन्दूर, ताम्रभस्म श्रीर मुलहठी समभाग में एकत्र कर धी के साथ पाक करे। यह श्रीषध घृत-मधु श्रीर चीनी के साथ सेवन करे। मात्रा-श्रिवल के श्रनुसार है तोला से श्राधे तोले तक।

त्यकेशरी—त्रिकटु, त्रिफला, इलायची, जायफल, लवड़ प्रत्येक १ तोला, लोह योर रससिन्दूर प्रत्येक ४ है तोला। वकरी के दूध के साथ पीसले। मात्रा-२ रत्ता। श्रनुपान—धृत श्रौर मधु श्रथवा केवल मधु।

रजतादि लौह—रौप्यभस्म और अभ्र प्रत्येक १ भाग, त्रिकटु और त्रिफला अयेक ३ भाग, लोह ८ भाग, ये सब द्रव्य एकत्र कर प्रातः सक्खन श्रीर पृत के आय चाटे। मात्रा-४ रत्ती। . वृहत् काञ्चनाभ्र रस—स्वर्ण, रससिन्दूर, मुक्ता, लौह, अभ्र, प्रवाल, वैद्यान्त, रोप्य, ताम्र, वङ्ग, कस्तूरी, लवङ्ग, जावित्री और सैन्धव प्रत्येक २ तोला एकत्र मर्दन कर धृतकुमारी और मृङ्गराज के रस एवं वकरी के दूध में ३ दिन भावना देकर ४ रत्ती प्रमाण विदेका वनावे। अनुपान—श्रक्षे का रस, पीपल चूर्ण और मधु।

कफ प्रधान यदमा में-महामृगाङ्क रस—स्वर्णभस्म १ भाग, रसिसन्दूर २ भाग, मुक्ताभस्म २ भाग, गन्धक ४ भाग, सोनामाखी ५ भाग, रौप्यभस्म ४ भाग, प्रवाल ७ भाग, सोहागे की खील २ भाग ये सब विजीरा नीवू के रस में ३ दिन मर्दन कर मूषा में रख लवणयन्त्र से १२ घण्टा पाक करे। शीतल होने पर समस्त चूर्ण का है चौसठवां भाग हीरा भस्म मिलावे। अनुपान—मरिच का चूर्ण और घृत।

कनकसुन्दर रस—पारद १ भाग, स्वर्ण है भाग, मनःशिला, गन्धक, त्तिया, सोनामाखी, हरिताल, विष श्रौर सोहागा, ये सव पारद्र के समान प्रदान करे। जयन्ती, भीमराज, पाठा, श्रङ्कसा, श्रगहित, ईशलाङ्गली श्रौर चीते के रस में पृथक् पृथक् भावना देकर सुखाकर फिर श्रादी के रस में ७ वार भावना देकर विका वनावे। मात्रा-२ रत्ती। श्रनुपान-मरिच चूर्ण श्रौर घृत श्रथवा पीपल चूर्ण श्रौर मधु।

श्रानिस्स-पारद १ भाग, गन्धक २ भाग एकत्र कज्जली करे। इन दोनों के समान विशुद्ध तीचण लोह चूर्ण उसमें मिलाकर धृतकुमारी के रस में मर्दन कर गोला सा बनाकार ताम्र पात्र में रक्खे और एरण्डपत्र द्वारा उस ताम्र पात्र को उक कर २ प्रहर धूप में सुखावे। जब गरम हो जावे तब उसे ८ दिन धान्य राशि में दवा कर रक्खे, फिर उसे निकाल चूर्ण कर छान ले। फिर त्रिकट, श्रिफला, इलायची, जायफल, लवड़ का चूर्ण प्रत्येक १ भाग उक्त चूर्ण के साथ उत्तम क्ष से मिलावे। मात्रा-१ त्राना भर। श्रानुपान-श्रक्ता के पत्तों का रस श्रीर मधु।

सर्वोङ्गसुन्द्र रस-पारा १ साग, गन्धक १ भाग, मुक्ता, प्रवाल, राङ्ग-भस्म प्रत्येक है भाग, स्वर्णभस्म १ भाग, ये सब द्रव्य कागजी नीवू के रस में मर्दनकर गोला वनाकर वद्धमूषा में तीव श्रिप्त से गजपुट में पाक करे। शीतल होने पर लौह १ भाग श्रोर लोहे का श्राधा हिद्धल मिलावे, मात्रा-२ रत्ती। श्रमुपान-पीपल चूर्ण श्रोर मधु श्रथवा श्रादी का रस श्रोर मधु। चल्रपर्धी—खर्पर स्वत्व २ तोला, जारितस्वर्ण ६ माशा, पारद २४ माशा, गन्धक ३२ माशा, प्रवाल श्रोर मुक्ताभस्म प्रत्येक ६ माशा, लौहमस्म ८ माशा, सिसे की भस्म १२ माशा एवं ताम्रभस्म १६ माशा, ये सब द्रव्य श्रामहल (चाहेरी) के रस के साथ मर्दन कर चूर्ण करे। फिर उसके साथ नील वड़ी, श्रभ्रभस्म, श्रयस्कान्तभस्म श्रोर हरिताल प्रत्येक ८ माशा, श्रांकोड़, काङ्क्वनी के वीज श्रोर नीला थोथा प्रत्येक १६ माशा, सोहागा ३२ माशा श्रोर कौड़ीभस्म ८० माशा ये सब एकत्र मिलाकर क्रमशः ८ सेर जम्हीरी के रस में मर्दन करे। फिर भूसी १२८ सेर श्रोर जंगली कण्डे १००० पल द्वारा पाक करे। सेवनार्थ श्रोषध २ माशे लेकर उसका चतुर्थाश परिमित गन्धक श्रोर मरिच उसके साथ मिलावे। इसे मधु के साथ मिलाकर पान पर लेप कर प्रयोग करे। श्रोषध सेवन के एक घड़ी वाद से प्रतिप्रहर एक १ वार पण्य भोजन करने को देवे। यह केवल १ दिन सेवन कर ४८ दिन तक सुपथ्यभोजी होकर तदुपरान्त इच्छानुसार भोजन करे।

पञ्चामृत पर्पटी—स्वर्ण १ तोला, रौप्य २ तोला, ताम्र ३ तोला, अभ्रमस्म ४ तोला, कान्तलौह ५ तोला एवं सीसक श्रौर वज्ज प्रत्येक है तोला, ये सब द्रव्य एकत्र द्रवीभूत करे। शोतल होने पर वालुका की तरह चूर्ण करे। गन्धक, मैनशिल श्रोर हरिताल प्रत्येक ८ तोला ये सव खल में डालकर श्रम्लवर्ग के साथ मर्दन करे श्रोर स्वर्णमाखी, नीलाजन, हरिताल, मैनशिल श्रोर गन्धक चूर्ण सहित प्रत्येक वार मिलाकर वीस वार पुट देवे। इन सब धातुत्रो का दूना पारद श्रौर पारद का दुना गन्थक एकत्र कज्जली करे। फिर रसपपटी पाक की तरह पाक करे। शीतल होने पर वह पर्पटी चूर्ण कर वस्त्र में छान कर चुर्ला लगे हुये लौह की कढ़ाई में पलट कर द्रावित करें। फिर उसमें समपरिमित हरिताल, मैनशिला श्रौर गन्धक श्रोर है पल मीठा विप उसके साथ मिलाकर इस तरह जारित करे कि वह राख न हो जाय। पूर्वीक्त हरितालादि पदार्थजीर्ण होने पर उन्हें कपड़े में छान ले। डहर कर्छ, पट्कोल (पह्पण=पीपर, पीपरामूल, चव्य, चीता, सोंठ, मरिच), कटेरी श्रौर सहजना की जड़ ये सब इन्य ५ पल, १६ गुने जल में सिद्ध कर सोलहवां भाग शेष रहने पर उतारकर छान ले, फिर इस क्वाथ द्वारा ७ वार भावना दे। फिर एचिटा ख्रीर निर्गुण्टी के रस में भावना देवे। फिर पात्र में रखकर वेर के काष्ठ की प्रिम से एछ देर सिदकर रख देवे । यह १ रत्ती परिमाण, त्रिकटु और घृत के साथ

मिलाकर चाटे। इसके सेवन काल में तैल, सरसों, वेल, खटाई, कैथ, मुर्गे का मांस, भंटा त्याग दे।

व्यवाय शोष में —वसन्तकुसुमाकर रस प्रयोग करे। श्रनुपान—घृत मधु श्रोर चीनी।

शोकजशोष में - मकरध्वज रस प्रयोग करे । श्रनुपान - दूध ।

मकरध्वज रस—शोधित सूद्धम स्वर्ण पत्र १ पल, पारद ८ पल, गन्धक २४ पल ये सब लाल रंग कपास के फूल श्रोर घृतकुमारी के रस में मर्दन कर घृहत् चन्द्रोदय मकरध्वज तैयार करने की प्रणाली से पाक करें। बोतल के ऊपर लगा हुश्रा रस १ तोला, लोग, मरिच, जायफल प्रत्येक ४ तोला, कस्तूरी ६ माशा ये सब एकत्र मर्दन कर २ से ४ रत्ती पर्यन्त मात्रा में प्रयोग करें।

व्यायाम शोष में रत्नगर्भणेहली रस, पीपल चूर्ण श्रीर मधु श्रथवा धृत श्रीर गोलमरिच चूर्ण के श्रनुपान से प्रयोग करे। वृहत् काञ्चनाभ्र, महा मृगाङ्क रस, सर्वोङ्गसुन्दर रस श्रादि श्रीषध भी इसमें हितकर है।

जराशोष में -कमलाविलास रस- लौह, अअ, गन्धक, पारद, स्वर्ण, हीरक, ये सब द्रव्य समभाग लेकर घृतकुमारी के रस में मर्दन कर उसे एरण्ड के पत्ते द्वारा दृढ़ रूप से बाध कर ३ दिन धान्य राशि के भीतर रखकर फिर उसका चूर्ण कर त्रिपला के चूर्ण के साथ २ रत्ती मात्रा में सेवन करे।

ग्रध्वशोष जनित शोष में — मांसरस के श्रनुपान से मृगाङ्क रस प्रयोग करे। स्वर्णभस्म इसमें विशेष उपकारी है।

व्याशोष में — हरितालभरम और पारदभरम गव्य वृत के श्रनुपान से प्रयोग करने पर सुफल पाया गया है। इसमें वसन्तकुसुमाकर – रस, मकरव्वज – रस, महासृगाद्ध, वृहत् काश्चनाभ्र श्रादि श्रीषध प्रयोग करे।

उर: तत में — रजतादि लौह, शिलाजत्वादि लौह, राजमृगाङ्क, काञ्चनाभ्र रस श्रादि श्रोषध लाक्षा चूर्ण, हुन्ध श्रोर मधु के साथ प्रयोग करे।

### यक्ष्मा रोग में उपसर्ग की चिकित्सा

(१) स्वरभङ्ग में—न्यम्बकाभ्र-करत्री, छोटी इलायची, लवङ्ग श्रीर वंश लोचन के चूर्ण के श्रनुपान से प्रयोग करे।

१७ र० चि०

- (२) श्र्ल वेदना में —श्रूलराजलोह श्रीर त्रिनेत्र-रस श्रादी के रस श्रीर मधु के साथ प्रयोग करे।
- (३) स्कन्ध श्रीर पार्श्व दोनों के सङ्कोच में मकरध्वज रसं, बृहत् काञ्चनाभ्र, दशमूल के काथ के श्रनुपान से प्रयोग करे। इसमें लघुचन्दनादि श्रीर बृहत् चन्दनादि तैल की मालिश भी श्रित हितकर है।
- (४) ज्वर में वज्र पर्पटी, हरिताल भस्म, महामृगाङ्क, राजमृगाङ्क, वसन्त कुसुमाकर रस, श्रीजयमङ्गल रस, त्रैलोक्यिचन्तामणि, विषमज्वरान्तक लौह, रत्नगर्भपोद्दली रस आदि श्रोषध, कटेरी श्रोर श्रक्सा की छाल के क्वाथ के साथ प्रयोग करे।
- (५) दाह में सर्वाङ्गसुन्दर रस, रक्तचन्दन, मुलहठी, सतावरी, खश, नीलकमल, पीपल के क्वाथ के साथ प्रयोग करे। महोदिध रस, कुमुदेश्वर रस श्रोर ताम्र भस्म, गिलोय के रस श्रोर मधु के श्रनुपान से प्रयोग करे।
  - (१) अतिसार में विजय पर्पटी मोथा के रस के साथ प्रयोग करे।

विजयपर्पटी—पारद, हीरा, स्वर्ण, रौप्य, मुक्ता, ताम्र, श्रभ्र, प्रत्येक १ भाग श्रौर गन्धक ७ भाग एकत्र मर्दन कर यथाविधान पर्पटी तैयार करे।

- (७) रक्त निकलने में —शोधित हिंगुल २ रत्ती मात्रा में पान के रस श्रीर मधु के साथ प्रयोग करे। रक्तिपत्तान्तक रस वा हरिताल भस्म, श्राह्म के पत्तों के रस के साथ, प्रयोग करने से सब प्रकार का रक्त निकलना वन्द होता है।
- (८) अरुचि में-सुलोचना अ अअभस्म १ पल, कान्तलौह १ पल श्रौर चन्य, बेर के बीज की गुठली (भीगी), खश, दाडिम, श्रांवला, श्रामहल (चाड़ेरी), छोलड़ नीबू, प्रत्येक १० पल एकत्र मर्दन कर २ रत्ती मात्रा में सेवन करे। श्रनुपान-सोंठ का चूर्ण श्रौर गुड़।
  - (९) शिरः परिपूर्णता में (माथा भारी रहने पर)—स्वर्णघटित महा-लक्ष्मीविलास रस, दशमूल के क्षाय के साथ प्रयोग करे।
  - (१) कास में -वृहच्चन्द्रोद्य रस पारद १ तोला, गन्धक १ तोला, श्रिश्र २ तोला, कपूर है तोला, स्वर्ण १ तोला, ताम्र १ तोला, लौह २ तोला, वीजताड़क के वीज, जीरा, विदारीकन्द, सतावरि, कुलेखाड़ा (तालमखाना) के वीज, वेडेला (वला) मूल, श्रालकुशी वीज, गोरक्ष शालपणीं, जावित्री,

जायफल, लवज्ञ, भज्ञ के वीज, रवेत राल, अत्येक है तोला, ये सब द्रव्य मधु के साथ मर्दन कर ४ रत्ती अमाण विटका वनाकर पीपल चूर्ण और मधु के अनुपान से सेवन करे।

- (१०) बसन्तितिलकरस—स्वर्ण १ तोला, श्रश्न २ तोला, लीह ३ तोला, वङ्ग, मुक्ता, प्रवाल प्रत्येक २ तोला, ये सब द्रव्य गोखुरू, श्ररूसा श्रीर ईख के रस में मर्दन कर वालुकायन्त्र में ७ प्रहर पाक करे, फिर श्रीषध निकालकर उसे कस्तूरी ४ तोला श्रीर कपूर ४ तोला द्वारा भावित कर मर्दन करे।
- (११) उत्कासिका में-बृहत् रसेन्द्रगुडिका—पारद, गन्धक, श्राभ्र, लौह, ताम्र, हरिताल, विष, मैनशिल, जवाखार, सज्जीखार, सोहागा, धतूरे के वीज श्रोर मरिच, ये प्रत्येक २ तोला परिमाण लेकर जयन्ती, चीता, मान, घंडुकोल (घण्टापाढल), शुलकुडि (मण्डूकपणी), भङ्ग के पत्ते, कसेक, भांगरा, श्रादी, निर्गुण्डी प्रत्येक के २० तोला परिमित रस मे पृथक् २ भावना देकर मटर प्रमाण विदेका बनावे। श्रानुपान—श्रादी का रस।

वृहत् शृङ्गाराभ्र—पारद, गन्धक, सोहागा, नागेश्वर, कपूर, जावित्री, लौग, तेजपात, धतूरे के बीज, प्रत्येक २ तोला, शोधित कृष्णाभ्र चूर्ण ८ तोला, तालीश पत्र, मोथा, जटामासी, कुडा, धाय के फूल, गुडत्वक् (दालचीनी), इलायची, त्रिफला, त्रिकटु और गजपीपल, ये प्रत्येक ४ तोला एकत्र कर पीपल के काथ में सर्वन करे। श्रनुपान-श्रष्ठसा का रस और मधु।

### यक्ष्मा चिकित्सा का अनुपान

नवनीत, घृत, मांसरस, लाक्षारस, श्रष्ट्सा का रस, पीपल चूर्ण, श्रामले का रस, लोध, शालपणीं, श्रर्जुन की छाल का रस, मुलहठी श्रोर किसमिस का क्षाय, वंशलोचन का चूर्ण, कस्तूरी का चूर्ण, इलायची का चूर्ण, श्रनार का रस, श्रालकुशी बीज चूर्ण, ताल की मिश्री, तालीशपत्र, भङ्ग का चूर्ण, लहसुन का रस, दशमूल का काय, श्रक्षगन्धा, गिलोय, बेडेला (वला), सुगन्धवाला, मुलहठी, सतावर, काकड़ाश्रद्धी, कुडा, जायफल श्रोर गोल मरिच का चूर्ण, श्रादी का रस श्रोर मधु।

हमारी लिखित 'यद्माचिकित्सा' नामक वृहत् पुस्तक में यद्मा रोग के विषय का विशदभाव से वर्णन हैं। उसे देखें।

### ज्ञयाञ्जिका अध्याय

### कासरोग चिकित्सा

वातज कास में - भूताङ्कश रस — पारद १ भाग, गन्धक १ भाग, ताम्रभस्म ३ भाग, मरिच चूर्ण ५ भाग, अश्रभस्म ४ भाग, मीठा विप १ भाग श्रीर भूताङ्कश (गो जुवान या श्रपामार्ग या सरसो श्वेत) १ भाग ये सव द्रव्य श्रम्लरस के साथ ३ घण्टा मर्दन कर सुखावे। मात्रा-१ श्राना भर। श्रनुपान वहेंडे का चूर्ण श्रीर मधु।

पित्तजकास में - रवयमिनरस — त्रिकटु, त्रिफला, वड़ी इलायची, जायफल, लवज्ञ, इन सब का चूर्ण प्रत्येक समभाग श्रीर जारित पारद १ भाग एकत्र मधु के साथ मिलाकर १ श्राना मात्रा में दिन में एक वार सेवन करे।

कफजकास में — बृहत् शृह्वाराभ्र, यदमा चिकित्सा में इसका प्रयोग श्रौर वनाने की विधि देखिये।

चतज्ञकास में - रसेन्द्रगुडिका, यदमा विकित्सा में इसका प्रयोग श्रौर बनानेकी विधि देखिये।

च्यजकास में -सार्वभौम रस-श्वाराभ्र में स्वर्ण, लोह २ माशा मिलाकर सार्वभौम रस तैयार करे। श्वज्ञाराभ्र के बनाने श्रौर प्रयोग की विधि यद्मा चिकित्सा में देखिये।

त्तवमीवितास रस—वङ्ग, ताम्र, लौह, कांसा, पारद, गन्धक श्रौर हरिताल अत्येक ८ तोला, खर्पर ४ तोला, एकत्र कर कसेक के रस में श्रौर कुलथों के काथ में ३ दिन भावना दे। फिर उसके साथ इलायची, जायफल, तेजपात, लवङ्ग, जीरा, त्रिकटु, त्रिफला, तगरपादुका, गुडत्वक् (दालचीनी) श्रौर वंशलोचन अत्येक ८ तोला परिमाण में मिलाकर कसेक के रस श्रौर कुलथी के काथ में मर्दन कर चना प्रमाण विटका वनावे।

तरुणानन्द्रस—रस, गन्धक प्रत्येक २ कर्ष मर्दन कर कज्जली करे। फिर वेल की जड़, गणियारी ( अरनी ), सोनापाठा की छाल, गाम्भारी, पटोल, वेडे़ला ( वला ), मोथा, पुनर्नेचा, आमला, बहती ( भट कटेरी ), अड्से के पत्ते, विदारीकन्द, सतावर, प्रत्येक के एक एक कर्ष रस द्वारा पृथक्-पृथक्

रूप से मर्दन कर पुनः १० तोला परिमाण श्राङ्स के रस द्वारा मर्दन कर उसके साथ ४ कर्ष श्राञ्च, १ कर्ष कपूर, जावित्री, जायफल, जटामांसी, तालीशपत्र, इला-यची श्रीर लवड़ प्रत्येक १ माशा मिलाकर विदारीकन्द के रस के साथ मर्दन कर २ रत्ती मात्रा में श्राङ्स के रस श्रीर मधु के श्रानुपान से प्रयोग करे।

जराकास में— बृहत् श्रृहाराभ्र, बृहत् चन्द्रामृत रस, बृहत् रसेन्द्रगुडिका, कमलाविलासरस आदि जरा-क्षय नाशक ओषधियां, मांसरस, दूध और घृत के अनुपान से व्यवस्था करे।

त्रिदोषज कास में-काससंहारभैर ख-पारद, गन्धक, ताम्र, श्रम्र, श्रम्र, सोहागे की खील, लौह, मिरच, कुडा, तालीशपत्र, जायफल श्रोर लवज्ञ प्रत्येक का चूर्ण २ तोला एकत्र कर थूलकुडि (मण्डूकपणी), कसेरू, निर्गुण्डी, काकमाची, घलघिसया (द्रोणपुष्पी), शालपणी, गीमा ( ग्रीष्म सुन्दरक ), भागी, हरीतकी श्रोर श्रद्धसा प्रत्येक के पत्तों के रस में भावना देकर ५ रत्ती प्रमाण विदेका बनावे। श्रनुपान—श्रद्धसा, सोठ श्रोर कटेरी का काथ।

नित्योदयरस—पारद २ तोला, गन्धक २ तोला, एकत्र कज्जली करके वित्वमूल, अरनी, सोनापाठा की छाल, पाइल, गाम्भारी, वला, मोथा, पुनर्नवा, आमला बहती, (वड़ी कटेरी), अरूसा के पत्ते, विदारीकन्द, सतावरि प्रत्येक के एक-एक कर्ष रस द्वारा, पृथक् रूप से मर्दन कर, उसके साथ रोप्य, सोनामाखी, कृष्णाभ्र प्रत्येक है तोला, कपूर ४ तोला, जावित्री, जायफल जटामांसी, तालीशपत्र, इलायची, लवड़ ये सब प्रत्येक २ तोला मिलाकर अद्दर्भ के रस द्वारा पीसकर धूप मे सुखावे फिर विदारीकन्द के रस द्वारा मर्दन करके २ रत्ती प्रमाण विदेका बनावे। अनुपान—पीपल का चूर्ण और मधु।

#### कास चिकित्या के अनुपान

वातज कास में दशमूल का क्वाथ, मांसरस, सोंठ, पीपल, गिलोय, काकड़ाश्वद्धी, भार्गी और जवासे का क्वाथ और रास्ना का रस, केकड़ा का मोल, शिद्धीमास का मोल और आलकुशी वीज का यूष, पुराना गुड़ और तिल का तैल।

पित्तज कास में — त्रिफला चूर्ण, वला, वृहती (वड़ी कटेरी), घ्रत्सा, कटेरी श्रीर दाख इनका क्वाथ, कवलगृहा का चूर्ण, पीपल चूर्ण, चीनी, पिण्टराज्र

श्रीर खीलों का चूर्ण, गाय के घी श्रीर मधु के साथ; मांसरस, मुलहठी, ईख के रस, सताविर का रस, चन्दन सफेद, कुंई, दाख श्रीर श्रर्जुन छाल का चूर्ण।

कफज कास में—ग्रह्सा, कटेरी, पीपल, कट्फल (कायफर), सोंठ, काकडाश्वज्ञी, भागी, मरिच, कालाजीरा, निर्मुंडी, श्रजवाइन, चीते की जद इनका चूर्ण वा क्वाथ श्रोर वंशलोचन चूर्ण, जवाखार चूर्ण, चव्य, चीते की जड़ श्रोर पीपलमूल चूर्ण, कुड़े का चूर्ण, वच, सूखी मूली का चूर्ण श्रोर कुलथी का यूष।

कासान्तक धूम—(१) मैनशिल, हरिताल, मुलहठी, जटामांसी, मूली, हिंगोट के फल की छाल वा मीगी ये सब द्रव्य बकरी के मूत्र में पीसकर उस कल्क के द्वारा एक कपड़ा लिप्त कर धूप में सुखाकर बत्ती बनावे। फिर सकोरे में वेर की लकड़ी के कोयले रख कर, उस पर वह बत्ती रक्खे और एक छेद वाला सकोरा ऊपर से ढक दे। उस छिद्र में एक नल प्रविष्ट कर देवे। जब नल से धुआं निकलने लगे तब उस धूम को नासिका द्वारा प्रहण करे और धूमपान के अनन्तर गुड़ मिला हुआ दुग्ध पान करे। तीन दिन ऐसा धूमपान करने से सर्वदोषोद्भव कास विनष्ट होता है।

- (२) मनःशिला जल में घिसकर कुछ बेर के पत्ती पर लेप कर धूप में सुखा ले। उन बेर के पत्ती का धुत्रां ग्रहण कर दुग्ध पान करने से सब प्रकार की खांसी दूर होती है।
- (३) त्राक की जड़ की छाल त्रौर मनःशिला समभाग, मिलित त्रिकटु-दोनों का त्राधा भाग। इनका चूर्ण त्राग्नि पर डालकर उसका धूम्र पान करे। फिर ताम्चूल भक्षण त्रौर दुग्ध वा जल पान करे, इससे पांच तरह की खासी शान्त होती है।
- (४) मरिच, मनःशिला श्रौर श्राकन्द (श्राक) का छिलका एकत्र मिलाकर उसके द्वारा वेगुन का छिलका भावित करे। फिर उसके स्खने पर श्राग्न में दग्ध करके यथाविधि उसका धूम्र प्रहण करने से सब प्रकार की खांसी दूर होती है।

### चतुस्त्रिश अध्याय

### इवास चिकित्सा

महाश्वास में-पिष्पत्याद्य सौह—पिष्पली, श्रामला, दाख, वेर की गुठली की मीगी, मुलहठी, चीनी, विडङ्ग, पुष्करमूल, प्रत्येक का चूर्ण १ तोला, लौह ८ तोला, जल से मर्दन कर ५ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे। श्रनुपान—कुडा श्रीर भागी का क्षाय।

उद्धिश्वास में स्याबित रस पारद १ भाग, गन्धक १ भाग, एकत्र धृतकुमारी के रस में १ प्रहर घोंट कर उसके द्वारा २ भाग परिमित ताम्रपत्र लिप्त कर १ दिन वालुकायन्त्र में पाक करे, फिर उस ताम्रको निकाल कर चूर्ण करे। मात्रा-२ रत्ती। अनुपान निकाल, इन्द्रायण की जड़ और देवदार का काथ और चीनी।

छिन्नश्वास में-श्वासकासचिन्तामणि—पारद, सोनामाखी श्रोर स्वर्ण प्रत्येक १ भाग, भुक्ता है भाग, गन्धक २ भाग, श्रश्च २ भाग, लोह ४ भाग, ये सब द्रव्य एकत्र मर्दन कर कटेरी का रस, वकरी का दूध, मुलहठी के रस श्रोर पान के रस द्वारा पृथक्-पृथक् ७-७ भावना देकर २ रत्ती प्रमाण विटका वनावे। श्रजुपान—पीपल चूर्ण श्रोर मधु।

तमक श्वास में-लोहपर्पटी रस-पारद २ भाग, गन्धक २ भाग श्रीर लोह भस्म १ भाग एकत्र मर्दन कर पर्पटी पाक विधान से पाक करे। फिर उसका चूर्ण कर भागी, मुण्डिरी, श्रगस्तिया के पत्ते, त्रिफला, जयन्ती, निर्गुण्डी, त्रिकटु, श्रक्तसा, घृतकुमारी, श्रादी प्रत्येक के रस द्वारा ७ भावना देकर ताम्र के वने हुए खर्पर में गन्ध दूर होने तक पुट में पाक करे। मात्रा-१ माशा। श्रमुपान-पीपल चूर्ण श्रीर तुलसी क्वाथ। इसके सेवन के समय में खटाई, तेल, वैगन, कूष्माण्ड श्रीर केला का भक्षण श्रीर स्त्रीसंसर्ग त्याग करे।

प्रतमक श्वास में-ताम्रपर्यटी—लौहपर्पटी रस में लौह के वदले ताम्र प्रदान पूर्वक पर्पटीपाक विधानानुसार पाक करे। प्रयोग विधि-लौहपर्पटी की तरह। क्षुद्र श्वास में-श्वासङ्डार रस—सोहागा, पारद, गन्धक, विप, मनःशिला, त्रिकटु ये द्रव्य सम परिमाण में लेकर जल द्वारा मर्दन कर ३ रत्ती प्रमाण वटिका बनावे। त्रानुपान—उष्ण जल वा कटेरी का क्वाय।

श्वास चिकित्सा के अनुपान — घृत और गोल मिरच का चूर्ण, कुडे का चूर्ण, वहेंडे का चूर्ण, हिगु, विडङ्ग चूर्ण, दशमूल का क्वाय, त्रिकटु चूर्ण, गिलोय, भार्गी, कटेरो और तुलसी का क्वाय, पुराना गुड़ और सरसों का तैल, कुठ्यों का काय, मयूरपुच्छ भस्म, पीपल चूर्ण और मधु, कांकडाश्टङ्गी चूर्ण और जवाखार।

### पश्रजिंचा अध्याय

### हिक्कारोग-चिकित्सा

श्रव्या हिका सें-नोलकण्ठ रस-पारद, ताम्र, लौह, गन्धक, मीठाविष, प्रत्येक १ भाग, रेणुका, मोथा, शालिश्वशाक, नागकेशर श्रीर चीतामूल, प्रत्येक १ भाग, समष्टि का दूना गुड़ मिलाकर मर्दन कर वेर की गुठली की मीगी के वरावर विटका बनावे। श्रनुपान-गरम दूध श्रीर जल।

यमला हिक्का में -हिक्कानाशक रस-ताम्र भस्म, पारद, गन्धक प्रत्येक १-१ भाग, एकत्र मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण मात्रा मे वहेड़े का चूर्ण श्रीर मधु के साथ सेवन करने से यमला हिक्का श्रारोग्य होती है।

जुद्रा हिक्का में -शिलाष्तुत रस—पाठा और इन्द्रायन का चूर्ण १ भाण्ड मे रखकर ऊपर मनःशिला चूर्ण डाल कर फिर उसके ऊपर शोधित पारद स्थापन कर पारद के ऊपर किर मनःशिला चूर्ण और उसके ऊपर मूली चूर्ण देवे। फिर भाण्ड का मुख बन्द कर ८ प्रहर मृदु अग्नि से पाक करे। पूर्वीक्त द्रव्यों का परिमाण यथा—पारद १ भाग, मनःशिला है भाग एवं पाठा और इन्द्रायन का चूर्ण मनःशिला के अर्द्धाश परिमाण देवे। मात्रा—३ रत्ती। अनुपान—राहना, बृहती (वड़ी कटेरी), चीतामूल और मूंग का क्वाथ।

मार्गी १ पल, जल १६ पल, जव १ पल क्वाथ रहे तब धतूरे के पत्तों का रस,

गिलोय का रस, श्रह्से के पत्तों का रस, काले कसौन्दी के पत्तों का रस, श्रत्येक के १ पल स्वरस में, श्रभाव में काथ में, चन्य, चीता, पीपरामूल, श्रत्येक के १ पल स्वरस में, श्रभाव में क्वाथ में एक-एक वार भावना दे। मात्रा-१ से ६ रत्ती पर्यन्त। श्रमुपान—मधु।

महा हिक्का में-प्रवाल योग-प्रवाल भस्म, शङ्ख भस्म, त्रिफला चूर्ण, पीपल चूर्ण श्रीर सोना गेरू ये सम परिमाण लेकर मिलावे। सात्रा-१ श्राना भर। श्रानुपान- घृत श्रीर मधु। यह महा हिक्का नाशक है।

हिक्का चिकित्सा का अनुपान—इलायची चूर्ण और चीनी, गोल मिरच और घत, मयूर पुच्छ भस्म और पीपल चूर्ण, केले की ज़ड़ का रस, और चीनी, चहेडे का चूर्ण और मधु। जवाखार चूर्ण, कुडे का चूर्ण, रास्ना, भट कटेरी, चीते की ज़ड़ और मृंग का क्वाय, सोठ के चूर्ण के साथ सिद्ध वृकरी का दूध, जम्हीरी नीवू का रस और सोचर नोन, रेणुक और पीपल का क्वाय एवं हींग।

हिका में धूमपान—मनःशिला, गाय का सीग, कुडा, धूना (राल), कुश, उर्द और हींग इनका धूम्रपान हिक्का रोग में हितकर है।

SCOTTO SON

### षद्त्रिंश अध्याय स्वरभेद चिकित्सा

चातज स्वरकेंद् में-खेरच रस-पारद, गन्धक, विष, सोहागा, मरिच, चन्य और चीता ये सव द्रव्य समभाग लेकर आदी के रस में मर्दन कर २ रती अमाण विका वनावे। अनुपान-गरम जल।

प्रित्तज स्वरभेद में ज्यस्वकाश्च — जारित काला अञ्च १ पल, भावनार्थ — केटेरी, वेडेला (वला), गोखुरू, घृतकुमारी, पीपरामूल, भृतराज (अरुसा), वेर के पत्ते, आमला, हलदी और गिलोय। अत्येक का १ पल रस लेना चाहिये। विदेका १ रत्ती अभाण बनावे। अनुपान — अरुसे का रस और मधु।

कफज स्वरसेंद् में-सूर्यरस-पारद, गन्धक, ताम्र, ग्रभ्न, पीपल, सोंठ, मरिच, सोथा श्रोर मीठा विष प्रत्येक समभाग एकत्र मिलावे। मात्रा-२ रत्ती। श्रनुपान-मधु। सान्निपातिक स्वरभेद में नीलकण्ठ रस पारद, ताम्र, लौह, गन्धक, मीठा विष, प्रत्येक १ भाग, रेणुका, भोथा, गण्डीर, नागकेशर, ये सव द्रव्य मर्दन कर वेर की गुठली के समान गोली वनावे। श्रनुपान नाह्मीशाक का रस श्रीर मधु।

चयजनित स्वर्भेद में -पर्पटी रस — पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, एकत्र कज्जली कर भांगरे के रस में मर्दन करे। फिर मिलित पारद छोर गन्धक का है परिमाण में जारित ताम्न छोर लौह भस्म लेकर उक्त कज्जली के साथ एकत्र लोहे के पात्र में पाक करे एवं एक लोहे के दण्ड द्वारा वार – वार चलावे, गलकर अच्छी तरह मिल जाने पर पर्पटी पाक की तरह पाक करे। फिर उस पर्पटी को खरल में चूर्ण कर निर्मुण्डी के पत्तों के रस में एक दिन भावना दे। फिर जयन्ती, त्रिफला, धृतकुमारी, अहूसा, भागी, त्रिकटु, भृहराज, चीते की जड़ और मुण्डी के रस में ७ दिन भावना देकर कोयलों की अग्नि पर सुखा ले। मात्रा—४ रत्ती। अनुपान—हरीतकी, सोंठ और गिलोय का काथ। यह नाना प्रकार के रोगों की नाशक एक महीषध है।

मेहजनित स्वरभङ्ग में—ताम्रभस्म २ रत्ती श्रादी का रस श्रीर मधु के साथ प्रयोग करे।

## स्वरभङ्ग चिकित्सा का अनुपान

ब्राह्मीशांक का रस, सोठ का चूर्ण श्रौर चीनी, वंसलोचन चूर्ण, छोटी इलायची का चूर्ण, पीपल श्रौर हर्र का चूर्ण, कटेरी का क्वाथ, दशमूल का काथ, तालीस पत्र का चूर्ण, हलदी का चूर्ण श्रौर कुड़े का चूर्ण।

### अरोचक चिकित्सा

बातज अरोचक में — सुधानिधि रस अयोग, इसकी बनाने की विधि यदमा चिकित्सा में देखिये।

पित्तज श्ररोचक में सुलोचनाभ्र श्रादि, विधि यद्मा चिकित्सा में देखिये।

श्लेष्मज श्ररोचक में—ताम भस्म १ रत्ती मात्रा में श्रादी के रस श्रौर मधु के साथ प्रयोग करे। त्रिदोषज श्ररोचक में—सर्वरोगान्तक वटी दाडिम के रस वा वातावीं नीवू के रस वा पुरानी भिगोई हुई इमली के जल के साथ सेवन करे। बनाने की विधि श्रिमान्य श्रिधकार में देखिये।

श्रागन्तुक श्राचिक में -रसेन्द्रयोग—रसिसन्दूर, पकी हुई इमली, गुड़, मरिच, किसमिस, जीरा, पीपल, जम्हीरी नीबू, श्रम्लवेतस इन सब द्रव्यो को समान भाग में लेकर एकत्र मर्दन कर सेवन करे। मात्रा—दो श्राना भर।

### अरोचक रोग चिकित्सा के अनुपान

नीवू का रस, श्रामले का रस, श्रनार का रस, पुरानी इमली का रस, श्रज-वाइन का चूर्ण, दाख का रस, श्रम्लवेतस का रस, जोरे का चूर्ण, ईख का गुड़, श्रामहल (चाड्गेरी) का रस, छाछ, गोल मरिच का चूर्ण, श्रादी का रस श्रोर सैन्धवचूर्ण, इलायची का चूर्ण, दाक्चीनी का चूर्ण, पीपल का चूर्ण, हरीतकी चूर्ण, काले जीरे का चूर्ण, श्रामलकी श्रोर धनिये का काथ, चन्दन, खस श्रोर सुगन्ध वाला का क्वाथ, गाय की दही श्रोर त्रिकटु चूर्ण।

#### -0070500-

#### सप्तत्रिंश अध्याय

#### बमनरोग-चिकित्सा

बातज वमन में — जीरा श्रीर धनिये के क्वाथ के साथ पारद भस्म श्रभाव में मकरम्बज का प्रयोग करे।

पित्तज वमन में—ताम्रभस्म २ रत्ती मात्रा में हरीतकी श्रीर कटेरी के क्वाथ के साथ अयोग करे।

कफज वमन में—पारदभरम श्रभाव में मकरध्वज, त्रिकटुचूर्ण के श्रनुपान से प्रयोग करे।

त्रिदोषज चमन में—विशुद्ध रससिन्दूर, गिलोय के क्वाथ श्रौर मधु के साथ प्रयोग करे।

क्रिमिज चमन में—ताम्रभस्म २ रत्ती मात्रा में विडङ्ग चूर्ण श्रौर मधु के साथ मर्दन कर प्रयोग करे।

### वमन चिकित्सा में अनुपान

वातज वमन में — छेना का जल (फटे दूध का जल), दूध मिला जल, पृत श्रीर सैंधव संयुक्त श्रॉवला श्रीर मूंग का यूष, गोल मिरच का चूर्ण, वेल की छाल का क्वाथ श्रीर काले जीरे का चूर्ण।

पित्तज वमन सें—गिलोय, त्रिफला, नीम की छाल श्रौर पटोल का क्वाथ, रवेतचन्दन का क्वाथ, हरीतकी चूर्ण, जामुन श्रौर श्राम के पत्तों का सिद्ध जल श्रौर धिनये का क्वाथ, धान के खीलों का चूर्ण, चीनी श्रौर मधु, श्रामले का चूर्ण वा रस, पित्तपापड़े का क्वाथ, घृतकुमारी का रस, निसोत का चूर्ण, लालचन्दन श्रौर मुलहठी का क्वाथ।

कफज वसन सें—विडङ्ग, त्रिफला श्रौर श्रतीस का चूर्ण, नागरमोथा का चूर्ण, वकायन का चूर्ण, सोठ का चूर्ण, पीपर वृक्ष की छाल की भस्म, नीम की छाल का रस, गिलोय का रस, त्रिकटु चूर्ण, हरीतकी चूर्ण।

# अष्टिनंश अध्याय

----

# तृष्णा रोग-चिकित्सा

वातज तृष्णा नें महोदधि रस, यच्मा चिकित्सा में देखिये।

पित्तज तृष्णा में — कुमुदेश्वर रस, यदमा चिकित्सा में देखिये। अनुपान — शारिवादि गण का क्वाथ यथा – शारिवा ( अनन्तमूल ), मुलहठी, सफेद चन्दन, लाल चन्दन, पदमाख, गाम्भारी फल, पद्म और खजूर।

कफ्ज तृष्णा सें—ताम्र भस्म २ रत्ती मात्रा में नीम की छाल के उष्ण काथ के साथ पान करने से कफज तृष्णा आरोग्य होती है।

त्ताज तृष्णा में —शोधित हिङ्जल २ रत्ती मात्रा में बकरी श्रौर हरिण के ताजा रक्त के श्रनुपान से प्रयोग करे। मांसरस भी इस रोग में श्रच्छा श्रनुपान है।

प्तयज तृष्णा में — स्वर्ण भस्म २ रत्ती मात्रा में मांसरस, जल मिला हुत्रा दूव वा जल मिश्रित मधु के साथ प्रयोग करे।

श्रामज तृष्णा में —वेल, सींठ श्रीर वच के चूर्ण के साथ रससिन्दूर २ रत्ती मात्रा में प्रयोग करे। सर्वतृष्णा हर योग—गन्धक, लौहभस्म, हरिताल, सोनामाखी प्रत्येक १ भाग, इनको एकत्र घृतकुमारी के रस में मर्दन कर एक ताल पकावे। उसके वाद उसको धूप में सुखाकर गजपुट में पाक करे। मात्रा-२ रत्ती। श्रमुपान— भिगोये हुये खील का जल श्रीर मधु।

# तृष्णारोग-चिकित्सा में अनुपान

वातजतुरणा में - बृहत् पायमूल का ईपदुष्ण कषाय।

पित्तजतृष्णा में - तृणपद्ममूल का काथ, षडङ्गपानीय, काकोल्यादि, टत्पलादि श्रोर शारिवादि गण के काथ के साथ सेवन करे।

कफजतृरणा में—पञ्चकोल के काय श्रौर नीम की छाल के काथ। दातजतृरणा में—छाग रक्त श्रौर हरिण के रक्त श्रथवा उनके मांसरस के साथ।

च्यजतृष्णा में—मांसरस, मधुमिश्रित जल श्रौर दुग्ध मिश्रित जल। श्रामजतृष्णा में—पद्मकोल के क्षाथ, वच के चूर्ण, चेल, सींठ चूर्ण, मोथा चूर्ण।

SCORE SON

# , ऊनचत्वारिंश अध्याय दाहरोग-चिकित्सा

मद्यपानज दाह में—ताम्र भस्म २ रत्ती मात्रा में चन्दनादि क्वाथ के साथ प्रयोग करे।

रक्तजदाह में—हरिताल भरम तृणपश्चमूल के क्वाथ के साथ प्रयोग करे।

पित्तजदाह में—दाहान्तक रस—पारद ४ भाग, ताम्रपत्र १ भाग और
गन्धक ४ भाग। प्रथम पारा और गन्धक जम्हीरी के रस में अच्छी तरह मर्दन
कर फिर पान के रस की भावना देकर उसके द्वारा ताम्रपत्र प्रलेपित करे। फिर
उसे भूधरयन्त्र में पुट देवे। भरमह्मप हो जाने पर औषध उद्धृत करे। मात्रा—
२ रत्ती। श्रनुपान—श्रादी का रस और त्रिकट चूर्ण।

रक्तपूर्ण कोष्ठजदाह में चन्द्रोदयरस—रससिन्दूर, श्रभ्र, स्वर्ण, मुक्ता, सोनामाखी, रौप्य, वङ्ग प्रत्येक १ भाग, ये सब एकत्र कर त्रिफला, गिलोय, सतावर च्रौर श्वेतचन्दन के क्वाथ में भावना देकर १ रत्ती परिमाण वटी वना कर छाया में सुखावे। त्र्रानुपान—सतावर का रस च्रौर मधु।

चत्रजदाह में —हरिताल भस्म ट्रेरती मात्रा में, लाक्षा, अर्जुन की छाल, चन्दन, मुलहठी, सतावरि और खश के काथ के साथ अयोग करे।

मर्माभिघातजदाह में — रससिन्दूर १ रती मात्रा मे चन्दनादि क्वाथ के साथ प्रयोग करे।

तृष्णानिरोध जनित दाह में—दाहान्तक रस प्रयोग करे। दाह चिकित्सा में अनुपान

चन्दन, पित्तपापड़ा, खरा, सुगन्ध वाला, मोथा, पद्म, मृणाल, सोंफ, धनिये, पदमाख, श्रामला, वट, पीपलबृक्ष, गूलर, शतावर, तृणपञ्चमूल श्रोर शालपणीं का काथ युक्तिपूर्वक व्यवहार करे।

---0;5400--

# चत्वारिंश अध्वाय हृद्रोग-चिकित्सा

वातज हद्रोग सें-करवाणसुन्दर रस-रसंसिन्द्र, श्रभ्र, रौप्य, ताम्र, स्वर्ण श्रौर हिक्कल प्रत्येक समभाग लेकर चीते के रस में एक दिन मर्दन कर एवं हाथी शुंडा के रस में ७ बार भावना देकर १ रत्ती परिमाण विटका बनावे। श्रमुपान-ईषदुष्ण जल।

विश्वेश्वर रस — स्वर्ण, श्रभ्र, लौह, वज्ञ, पारद, गन्धक श्रौर बैकान्त अत्येक १ तोला परिमाण में लेकर करूर के जल में भावना देकर १ रत्ती प्रमाण विदेका वनावे। श्रनुपान-श्रर्जुन छाल का चूर्ण श्रौर मधु।

पित्तज हद्रोग में-चिन्तामणिरस--पारद, गन्धक, श्रश्न, लौह, वङ्ग, शिलाजतु प्रत्येक १ तोला, स्वर्ण है तोला श्रौर रौप्य है तोला। सब एकत्र कर चीते के रस, मृङ्गराज के रस श्रौर श्रर्जुन छाल के काथ में ७ बार भावना देकर १ रत्ती प्रमाण विटका वनाकर छाया में सुखावे। श्रनुपान-गेहूँ का काथ।

पञ्चाननरस--पारद श्रौर गन्धक एकत्र कज्जली कर श्रामला, दाख, मुलहठी श्रौर खजूर के रस मे एक-एक दिन मर्दन करके २ रत्ती प्रमाण विदक्ता वनावे। श्रनुपान-श्रामले का चूर्ण श्रौर चीनी।

नागार्जुनाभ्र—सहस्रपुट द्वारा भस्मीकृत वज्राभ्र, श्रर्जुन छाल के क्वाथ में भावना देकर ४ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे। श्रनुपान-पीपल चूर्ण श्रीर मधु।

रलेप्मज हदोग में-प्रभाकर वटी—सोनामाखी, लौह, श्रश्न, वंशलोचन श्रोर शिलाजतु प्रत्येक सम भाग में लेकर श्रर्जुन छाल के क्वाथ में भावना देकर ४ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे। श्रनुपान-श्रह्से के पत्तों का रस श्रीर मधु।

त्रिदोपज हद्रोग में-शहरवटी—पारद ४ भाग, गन्धक ८ भाग, लौह ३ भाग, सीसा २ भाग, ये सब एकत्र कर यथाक्रम से काक्रमाची, चीता, श्रादी, जयन्ती, श्रह्सा, वेल श्रौर श्रर्जुन के स्वरस में भावना देकर २ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। श्रनुपान-गुनगुना जल।

क्रिमिज हद्रोग में हृदयार्णव रस, शङ्करवटी श्रीर कल्याणसुन्दर रस प्रयोग करे। श्रनुपान-विडङ्ग चूर्ण, सोमराजी (वाक्कची) वीज का चूर्ण श्रीर मधु।

# हृद्रोग चिकित्सा का अनुपान

वेडेला (वला), अर्जुन छाल और गोरख (ऋषभक), शालपणी का काथ, कुड़े का चूर्ण, विद्व चूर्ण, मृगश्द्वभस्म, अनार का रस, मुलहठी का चूर्ण, आधगन्धा, सतावर, आलकुशो वीज का चूर्ण, दाख और शालपणी का काथ, वच चूर्ण, रास्ना, शठी (कचूर) और कुड़े का चूर्ण।

----

# एकचत्वारिंदा अध्याय काइये चिकित्सा

निम्नलिखित दोनों श्रीषधें कार्र्यरोग मे हितकर हैं।

श्रमृतार्णव रस-जारित पारद १ भाग, स्वर्णभस्म १ भाग, गिलोय का सत ४ भाग, ये सब द्रव्य चीनी, मधु श्रौर घृत के साथ मिलाकर १ दिन मर्दन कर ४ रत्ती मात्रा में विटेका घनावे। श्रनुपान-श्रश्वगन्ध मूल का चूर्ण श्रौर गाय का दूध। यह कृशता नाशक है।

पूर्णचन्द्र रस — जारित पारद, श्रश्न, लौह, शिलाजतु, विडङ्ग, सोनामाखी, मधु श्रोर घृत प्रत्येक समभाग में लेकर मर्दन करे। मात्रा-४ रत्ती। श्रनुपान-सेमर के फूलों का चूर्ण २ तोला श्रोर मधु। यह काश्यरोग की एक उत्कृष्ट

श्रीपध है। इस श्रीषध के सेवनकाल में दिन-रात में खूब सोवे श्रीर छाग शिशु का मांस भक्षण करे।

स्थील्य चिकितसा

नीचे लिखी श्रोषियाँ स्थोल्य निवारक हैं।

वड्वाग्नि रस-पारद, गन्धक, ताम्र श्रीर हरिताल समभाग में लेकर श्रादी के रस में मर्दन कर २ रत्ती मात्रा में विटका बनावे। श्रनुपान-श्रादी का रस श्रीर मधु।

ज्यूषणाद्य लोह—त्रिकटु, भङ्ग, चव्य, चीते की जड़, विड लवण, डिंड्रज लवण, सोमराजी, (वाकुची), सैन्धव और सोंचर लवण ये समभाग में लेकर समिष्ट के समान लौहमस्म प्रहण कर घृत और मधु के साथ मर्दन कर एक माशा परिमाण विटका वनावे। अनुपान-मधु।

वडवानित लौह—रसिसन्दूर, हरिताल, लौह श्रौर ताम, एकत्र श्राक के पत्ते के रस में मर्दन कर दो रत्ती प्रमाण वटिका बनावे। श्रनुपान-मधु।

स्थीलप चिकित्सा में अनुपान—मूली का रस, गुगगुल, मघु, कुलथी का काथ गिलोय और त्रिफला का क्वाथ, चीते की जड़ का चूर्ण, हिड्ड, एरण्डमूल का चूर्ण, अरनी का रस, सोंठ का चूर्ण, जवाखार, विडङ्ग चूर्ण, निसोत का चूर्ण, अजवाइन का चूर्ण और सहजना की छाल का रस।

**--0;≈;0**---

# द्विचत्वारिंश अध्याय मुच्छी-रोग चिकित्सा

निम्नलिखित श्रोषियां मूच्छी रोग में हितकर हैं।

- (१) विशुद्ध रसिसन्दूर, पीपल चूर्ण श्रौर मधु के साथ प्रयोग करने से सब प्रकार की मूर्च्छा दूर होती है।
- (२) ताम्र भस्म २ रत्ती मात्रा में खश श्रौर नागेश्वर पीसकर बला श्रौर मधु के साथ प्रयोग करने से श्रित दारुण मूच्छी रोग श्रारोग्य होता है।
- (३) टैरती मात्रा में भैंस के घी के साथ हरिताल भर्म सेवन करने से गय प्रवार का मृच्छी रोग श्रारोग्य होता है।

#### भ्रम रोग-चिकित्सा

नीचे लिखी श्रोपियां भ्रम रोग में श्रति हितकर हैं।

- (१) २ रत्ती मात्रा में ताम्रभस्म, गाय के घी के साथ मर्दन कर सेवन करे उसके बाद पुनर्नवा का काथ सेवन करे। यह सब प्रकार के अमरोग का नाशक है।
- (२) विशुद्ध शिलानतु एक श्राना भर लेकर त्रिफला चूर्ण श्रीर मधु के साथ सेवन करने से घोर भ्रमरोग श्रारोग्य होता है।
  - (३) लघ्वानन्द रस—इस रोग की एक त्राति उत्कृष्ट श्रोषध है।

सचानन्दरस बनाने की विधि—पारद, गन्धक, लौह, श्रभ्र, विष प्रत्येक १ तोला, मरिच चूर्ण ८ तोला, सोहागे की खील ४ तोला, एकत्र मिलाकर भीमराज (भांगरा) श्रीर श्रनार के काथ में ७ वार भावना देकर २ रत्ती प्रमाण विदेका बनावे। श्रनुपान-त्रिफला का काथ, घृत संयुक्त जवासे का काथ, धारोष्ण दुग्ध, श्रादी का रस श्रीर गुड।

### त निद्रा और तन्द्रा की चिकित्सा

घोड़े की लाला (लार), सैन्धव लवण, मनःशिला, पीपल श्रीर मधु एकत्र श्रन्छी तरह पीस कर श्रज्जन देने से निद्रा श्रीर तन्द्रा निवृत्त होती है।

#### संन्यास चिकित्सा

मूच्छ्रान्तक रस—रससिन्द्र, सोनामाखी, स्वर्ण, शिलाजतु श्रौर लौह ये समभाग में लेकर सतावर श्रौर विदारीकन्द के रस मे भावना देकर २ रत्ती प्रमाण वटी बनावे। श्रनुपान—त्रिफला का जल श्रौर शतावर का रस।

### मदात्यय रोग चिकित्सा

नीचे लिखे दो योग मदात्यय मे हितकर हैं।

- (१) रसेन्द्रसार—रसिसन्द्र, श्रश्र, लौह, नुक्ता, स्वर्ण, प्रत्येक सम भाग लेकर घृतकुमारी, शतावर श्रीर श्रामले के रस में मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण विका बनावे। श्रनुपान-दुग्ध श्रीर चीनी।
- (२) रससिन्दूर, चन्य, सींचर लवण, धनिया, सींठ श्रीर श्रजवाइन, समभाग चूर्ण कर दो श्राने भर दवा मद्य के साथ में सेवन करने से मदात्यय श्राराम होता है।

### जिचत्वारिंश अध्याय

### उन्हाद-चिकित्सा

चातिक उन्माद सें-उन्माद्भञ्जनरस-त्रिकट, त्रिफला, गजपीपल, विद्युत, देवदारु, विरायता, कुटकी, कटेरी, मुलहठी, इन्द्रजी, चीतामूल, बेडेला (वला), पीपरामूल, खश, सहंजना के बोज, निसोधमूल, इन्द्रायन की जढ़, वज्ञ, रीप्य, श्रम्र, प्रवाल प्रत्येक समभाग। सबके समान लौह भस्म ले जल मे मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण वटी वनावे। श्रनुपान-तालशाखा का रस श्रीर मधु।

पैत्तिक उन्माद् सें-उन्माद्ग केशरी - पारद, गन्धक, मैनशिल, धत्रे के वीज समभाग में लेकर वच के काथ श्रीर रास्ना के काथ में ७-७ दिन भावना देकर चूर्ण करे। मात्रा - १ श्राना भर। श्रनुपान - घृत।

कफज उन्माद में — तालभस्म २ रत्ती मात्रा मिरच चूर्ग श्रौर धतूरे के वीजो के चूर्ण के साथ प्रयोग करे।

त्रिदोपज उन्माद में -चतुर्भुजरस — रसिसन्दूर २ भाग, स्वर्ण, मैनशिल, कन्तूरी, हरिताल प्रत्येक १ भाग, समस्त द्रव्य एक दिन घतकुमारी के रस में मदन कर एक गोला बनावे। फिर वह गोलक एरण्ड पत्र द्वारा लपेट कर २ दिन धान्यराशि में रक्खें। रोग की श्रवस्थानुसार एक-एक वटी त्रिफला चूर्ण श्रीर सधु के साथ भक्षण करे। मात्रा-२ रत्ती।

मानस दुःखज उन्माद सें-वृहत् चिन्तामणि—स्वर्ण ३ भाग, रौप्य, ध्रद्र प्रत्येक २ भाग, लौह ५ भाग, प्रवाल, मुक्ता प्रत्येक २ भाग, रस सिन्द्र ७ भाग, घृतकुमारी के रस में मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। ध्रनुपान-ब्रामी शाक का रस ख्रीर सधु।

चिपज उन्माद सें —हरितालभस्म, गाय के घी के अनुपान से प्रयोग करे। भृतोन्माद में भृताङ्क्ष्या रस —पारद, लौह, रौप्य, ताम्र और मुक्ता, प्रचेक १ तोला, हीरा २ माशा, हरिताल, गन्धक, मैनशिल, तृतिया, शिलाजतु, पर्मान, रमोत और पाची नमक प्रत्येक १ तोला। ये सब द्रव्य भृहराज, दन्ती कीर में हुए के दूध में मर्दन कर पिण्डाकार करे और गजपुट में पाक करे। मात्रा र रमी, अनुपान शादी का रस।

उन्माद चिकित्सा का अनुपान—ब्राह्मी शाक का रस, वच का चूर्ण, कृष्माण्ड वीज का चूर्ण, शंखपुष्पी का चूर्ण, कुडे का चूर्ण, धत्रे के बीजो का चूर्ण, चन्डम्ल चूर्ण, तालशाखा का रस, पुराना घृत, शतावरी का रस श्रीर मधु।

# अपस्मार ( खुर्गी ) चिकित्सा

चातिक श्रापस्मार में-चातकुलान्तक—कस्तूरी, हरीतकी, नागकेशर, वरेंदा, पारद, गन्धक, जायफल, इलायची, लवज्ज प्रत्येक २ तोले जल में मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण वटी तैयार करे। श्रनुपान—तालशाखा का रस श्रीर मधु।

पेत्तिक श्रपस्मार में-सूतकप्रत्यय नामक रस-स्वर्ण, रौष्य, ताम्र, स्रोतोजन (सफेद सुरमा) श्रोर गन्धक, हरिताल श्रोर मनःशिला के साथ पारद समभाग में मर्दन कर गन्धक के तैल मे पाक करे। मात्रा-२ रत्ती श्रनुपान-श्राह्मी शाक का रस।

कफ्ज श्रपस्मार सें-इन्द्रब्रह्मवटी--रसिसन्द्र, अभ्र, लौह, रौप्य, सोनामाखी, विप और पद्मकेशर प्रत्येक समभाग में लेकर, सेंहुड़, चीता, भेरेण्डा (एरण्ड), वच, सोंठ, जमीकंद और निर्गण्डी इनके रस में १-१ दिन भावना दे। फिर पुट में पाक कर उसके साथ सम परिमाण में गन्धक चूर्ण मिलाकर प्रियङ्क के तैल श्रीर सरसों के तैल के साथ पाक करे। चने प्रमाण गोली बनाकर श्रादी के रस के साथ सेवन करे।

त्रिदोषज श्रपस्मार में — पारदभस्म २ रत्ती परिमाण, वच, शङ्खपुष्पी, व्राह्मीशाक, कूड़ा श्रीर इलायची इनके काथ के साथ प्रयोग करे।

श्रापस्मार चिकित्सा में श्रनुपान—धारोष्ण दुग्ध श्रौर शतावर का का श्रक्त, ब्राह्मी का रस श्रौर मधु, तिल तैल श्रौर पिसा हुश्रा लहसुन, सहजना की छाल का चूर्ण, श्वेत सरसो का चूर्ण, वच का चूर्ण, मुलहठी श्रौर कृष्माण्ड का रस।

# चतुश्चत्वारिंदा अध्याय बातच्याधि चिकित्सा

नीचे लिखी श्रोषियां विविध प्रकार के वायु विकार जनित रोगो की नाशक हैं। श्रानिलारि रस्त—पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, एरण्डमूल श्रोर निर्मुण्डी के रस में १ दिन मर्दन कर ताम्रपात्र में बंद कर मिट्टी द्वारा प्रलेप कर देवे श्रोर वालुका यन्त्र में श्रारण्य उपलें की श्राग्न से पाक करे। शीतल होने पर उतार कर निर्मुण्डी, एरण्डमूल श्रोर चीते के रस में ७ वार यन्न पूर्वक भावना देकर २ रत्ती प्रमाण विदेका बनावे। श्रमुपान—सैन्धव मिश्रित एरण्ड तैल श्रथवा घृत श्रोर मिरच चूर्ण।

वातिबध्वंसन रस—पारद १ भाग, श्रभ्र २ भाग, कांसा ३ भाग, माक्षिक ४ भाग, गन्धक ४ भाग, हिरताल ६ भाग, पारद श्रौर गन्धक एकत्र कज्जली करे श्रौर ये सब एकत्र करके एरण्ड तेल से ७ दिन भावना दे। फिर नीबू के रस में मर्दन कर एक गोला बनावे। वह गोलक तिल के कल्क से १ श्रङ्खल मोटा प्रलेप देकर डक दे। फिर धूप में सुखाकर १२ प्रहर बालुकायन्त्र में पाक करे। मात्रा-२ रत्ती।

सर्वेश्वरस्य—पारद, लोह, हिक्कल, ताम्र श्रीर श्रम्न प्रत्येक २ तोला, गन्धक २ पल, ताम्र श्रीर त्रिकटु प्रत्येक १ पल ये सब द्रव्य एकत्र नीव् के रस के साथ मर्दन करके उसमें स्वर्णक्षीरी (सत्यानाशी), श्राक श्रीर सेहुड़ का दूध, श्रम्सा, कनेर श्रीर कुचिला के रस की ७ बार भावना देवे। फिर पिण्डाकार करके वालुकायन्त्र मे २ दिन पाक करे, पाक के श्रम्त में पीपल का चूर्ण २ तोला श्रीर मीठा विष ४ माशा उसके साथ मिलावे। मात्रा-१-१ रत्ती।

श्रकेश्वररस--पारद १ भाग, गन्धक २ भाग एकत्र मर्दन करके तपे हुए चकाकार ताम्रपत्र द्वारा उन्हें ढक दे श्रौर उसे भस्म से ढक देवे। श्रौर पुटपाक करके उस ताम्रपत्र पर लगा हुश्रा पारद संग्रह करे। फिर वह पारद चूर्ण कर श्राक के रस श्रौर चीते की जड़ श्रौर त्रिफला के काथ में १० बार भावना देकर पुटपाक करे। मात्रा-२ रत्ती। श्रानुपान-त्रिफला का काथ।

गन्धाशमगर्भरस-पारद १ भाग श्रीर गन्धक ८ भाग, एकत्र मर्दन कर चीते की जढ़ के क्वाथ के साथ लौहपात्र में मृदु श्राग्न की ज्वाला से पाक करे। फिर उसके साथ १ भाग मीठा विष मिलावे। मात्रा−२ रत्ती। श्रनुपान-एत श्रोर मरिच का चूर्ण।

सर्ववातारि—गन्धक १ भाग, हरिताल २ भाग, मैनशिल ४ भाग, मोनासाखी ८ भाग एवं पारद १६ भाग । ये सब एकत्र ७ दिन तक मर्दन कर उसके साथ समिष्ट का आठवा भाग रक्त दारमुज (शंखिया) मिलावे। और किचला के काथ के साथ मर्दन कर गोला बनावे। सूखने पर २ दिन उसे वालुका यन्त्र में पाक करे शीतल होने पर चूर्ण कर सम परिमित हिंग्बष्टक चूर्ण उसके साथ मिलावे। फिर विजौरा नीवू का रस, सोठ का काथ और चीते की जड़ के काथ के साथ ७ वार भावना देवे। मात्रा—२ रत्ती। अनुपान-धृत और मरिच चूर्ण।

निन्तामणि रस—रससिन्दूर और शोधित अभ प्रत्येक २ तोला, लौह १ तोला, स्वर्ण है तोला, घृतकुमारी के रस में मर्दन कर १ रत्ती प्रमाण विका वनावे। यह श्रति उत्कृष्ट श्रीषध है। श्रतुपान-त्रिफला।

चतुर्मुख रस—पारद, गन्धक, लौह, श्रश्न, प्रत्येक एक भाग, स्वर्ण है भाग, यह सब घतकुमारी के रस में मर्दन कर एरण्ड पत्र द्वारा वांधकर ३ दिन धान्यराशि में रक्खे। फिर निकाल कर १ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। श्रमुपान- त्रिफला का जल श्रीर मधु।

लदमीविलास रस—कृष्णाभ्र १ पल, पारद और गन्धक दोनों है पल, एवं वेडेला (वला), शालपणीं, शतावर, विदारीकंद, काले धत्रे के बीज, हिज्जल वीज, गोख़रू के बीज, विधारे के बोज, भङ्ग के बीज, जायफल, जावित्री, कपूर, प्रत्येक चूर्ण २ तोला, एवं स्वर्णभस्म २ माशा पान के रस में मर्दन कर चने के वरावर वटी बनावे। अनुपान-श्रादी का रस, वेल के पत्तों का रस और मधु।

कुट्जिवनोद रस—पारद, गन्धक, हरीतकी, हरिताल, विष, कुटकी, त्रिकटु, गन्धवील श्रीर जयपाल, अत्येक समभाग। भांगरे के रस, सेंहुड़ के रस श्रीर श्राक के पत्तों के रस में मर्दन कर २ रत्ती अमाण वटी वनावे। श्रानुपान—रास्ना सप्तक का काथ।

तालकेश्वर रस—रसिन्दूर, शोधित हरिताल १-१ भाग, भङ्ग ८ भाग, इन सवों के चूर्ण का दृना गुड़, एकत्र मिलाकर है तोला परिमित चिटका बनावे। श्रातः श्रोषध-सेवनोपरान्त छाया में बैठे। श्रानुपान-गर्म दुग्ध।

सर्वाङ्गसुन्दर रस—पारद, श्रभ, ताम, लौह, हिङ्जल श्रोर गन्धक प्रत्येक २ तोला, ये सब एकत्र सप्तपर्ण की छाल के क्राय, पाठा के रस, सेंहुड़ के श्रम्क, श्रह्से के क्राय, एरण्डमूल के क्राय में मर्दन कर इसके साथ कुचिला का चूर्ण २ तोला मिलाकर एक गोला बनाकर। उसे दो प्रहर वालुका यन्त्र में पाक करे। मात्रा-२ रत्ती।

त्रेलोक्यचिन्तामणि रस—हीरा, स्वर्ण, भौक्तिक श्रौर लौह प्रत्येक १ भाग, श्रश्र श्रौर रसिसन्दूर प्रत्येक ४ भाग ये सव एकत्र कर लोह वा पत्थर के खल में घृतकुसारी के रस में मईन कर १ रत्ती प्रमाण विटका वनावे। श्रमुपान-त्रिफला का काथ श्रौर मधु।

चातगजाङ्करा—पारद, जारित लौह, सोनामाखी, गन्धक, हरिताल, हरीतकी, कांकडाश्ट्रही, विष, त्रिकर्ड, ऋरणी, सोहागे की खील, प्रत्येक द्रव्य समभाग में लेकर मुण्डी और निर्गुण्डी के रस में एक एक दिन मर्दन करके २ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। पीपल चूर्ण और मज्जीठ के काथ में १-१ वटी मर्दन कर सेवन करे।

वृहत् वातगजाङ्कुश — पारद, अअ, तीव्ण लौह, ताम्र, गन्धक, स्वर्ण, सोंठ, वला, धनिया, कट्फल (कायफल), हरीतकी, विष, कांकडाश्ट्रज्ञी, पीपल, मिर्च, सोहागा की खील प्रत्येक समभाग, ये सब द्रव्य मुण्डी श्रीर निर्गुण्डी के रस में एकत्र १ दिन मर्दन कर २ रत्ती प्रमाण विटका वनावे।

महावातगजाङ्कुश रस—शोधित अभ, लौह, ताम, पारद, हरिताल, गन्धक, भागी, सोठ, श्वेत वला, धनिया, कट्फल (कायफल), हरीतकी श्रोर विप ये सव द्रव्य समभाग में एकत्र कर पीपल के क्वाथ में मर्दन कर है तोला परिमित वटी वनावे। श्रनुपान-पीपल श्रोर मजीठ का क्वाथ।

# वातव्याधि चिकित्सा का अनुपान

दशमूल पाचन, रास्ना, वला, सोठ श्रीर एरप्डमूल का क्वाथ, लहसुन का रस, कुड़े का चूर्ण, श्रालकुशी के वीजो का चूर्ण, श्रक्षगंधा चूर्ण, श्ररनी का रस, श्राक का रस, वरुण की छाल का रस, उड़द का क्वाथ, जीरे का चूर्ण, हीग, तिल तेल इत्यादि युक्तिपूर्वक प्रयोग करे।

### पञ्चचत्वारिंश अध्याय

### पित्तरोग चिकित्सा

नीचे लिखो श्रोषधियां पित्तरोगनाराक हैं--

- (१) पित्तान्तक रस—जावित्री, जटामांसी, जायफल, कुड्रा, तालीशपत्र, सोनामाखी, लोह, श्रभ, मनःशिला प्रत्येक समभाग । सवके समान जारित रौप्य जल में मर्दन कर २ रत्ती अमाण वटिका वनावे। अनुपान-गिलोय का रस और ईस्त्र की चीनी।
- (२) महापित्तान्तक रस-पित्तान्तक रस में सोनामाखी के वदले स्वर्ण देने से महापित्तान्तक रस कहा जाता है। अनुपान-शतावर श्रौर विदारी-कन्द का रस।
- (३) गुडू च्यादि लौह गिलोय का सत, त्रिफला, त्रिकटु, त्रिमद प्रत्येक १ तोला, लोह १० तोला, ये सब द्रव्य एकत्र जल में मर्दन कर ६ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे । श्रनुपान-धनिया श्रौर पटोल का काथ ।
- (४) ताम्र भस्म २ रत्ती मात्रा में भेंस के घी के साथ प्रयोग करने से सव तरह का पित्त रोग विनष्ट होता है।
- ( ५ ) हरिताल भरम है रत्ती मात्रा में महिपी घृत के साथ प्रयोग करने से सव तरह का पित्त रोग विनष्ट होता है।
- (६) रौप्य भस्म २ रत्ती मात्रा में गिलोय के रस के साथ प्रयोग करने से सव प्रकार की पित्तज व्याधि त्रारोग्य होती है।

# पित्तर्जानत रोग चिकित्सा में अनुपान

रवेत और ठाठ चन्दन घिसा हुआ, खश का चूर्ण, शतावर का रस, विदारी-कृन्द का रस, नागरमोथा का रस, दूव का रस, सव प्रकार के कमल के वीज, पत्र, पुष्प श्रौर मूल का रस, श्रक्से का रस, गिलोय का रस, चीनी श्रादि श्रनुपान युक्तिपूर्वक प्रयोग करे।

कफरोग चिकित्सा

(१) कफकेतु रस—सोहागे की खील, पीपल, शख भस्म श्रोर चत्सनाभ विष, ये सव द्रव्य समभाग में चूर्ण कर आदी के रस में ३ दिन भावना देकर १ रत्ती प्रमाण वटिका वनावे । श्रनुपान-श्रादी का रस ।

- (२) कफचिन्तामणि रस—हिङ्जल, इन्द्रजौ, सोहागे की खील, भन के वीज, मरिच प्रत्येक १ भाग, रसिसन्दूर ३ भाग। श्रादी के रस में १ प्रहर मर्दन कर चना प्रमाण गोली वनावे।
- (३) भहालदमी विलास रस— अश्र ८ तोला, गन्धक ४ तोला, वज्ञ २ तोला, पारद १ तोला, हरिताल १ तोला, ताम्र भस्म है तोला, कपूर, जावित्री, जायफल प्रत्येक १ तोला, बीजताड़क (विधारा) के बीज, धतूरे के बीज प्रत्येक २ तोला, स्वर्ण है तोला, ये सब एकत्र पान के रस में मर्दन करके २ रत्ती प्रमाण विटका बनावे। अनुपान-आदी का रस और मधु।
- (४) महाश्लेष्मकालानस रस—हिङ्कल से निकाला हुआ पारद, गन्धक, मैनशिल, सोहागे की खील, ताम्र, वङ्ग, श्रभ्र, सोनामाखी, हरिताल, धत्रे के बीज, सेंधानमक, कुडा, हींग, पीपल, कायफल, दन्तीवीज, सोमराजी (वाकुची), सोनालुफल, निसोत प्रत्येक समभाग, सेहुड़ के रस में मर्दन कर मटर प्रमाण विदेका बनावे। अनुपान-आदी, तुलसी का रस और मधु।
- (५) रसतालक १ जौ मात्रा में श्रादी के रस श्रीर मधु के साथ प्रयोग करने से सब प्रकार का रलेष्मा रोग श्रारोग्य होता है।

# कफरोग चिकित्सा में अनुपान

मधु, हरिद्राचूर्ण, श्रादी का रस, पीपलचूर्ण, तुलसी पत्तों का रस, वच चूर्ण, कुडे का चूर्ण, हरीतकी चूर्ण, दाख, कायफलादि, वड़ी कटेरी श्रोर चीते की जड़ का क्वाथ।

# षद्चत्वारिंश अध्याय जरुस्तम्भ चिकित्सा

नीचे लिखी श्रोषधियां ऊरुस्तम्म रोग में हितकर हैं।

(१) गुआभद्र रस—पारद १॥ तोला, गन्धक ६ तोला, श्वेत कींच के वीज ३ तोला, जयन्ती बीज, नीम के बीज श्रौर जमालगोटा के बीज प्रत्येक श्राधा तोला ये सब जयन्ती, जम्हीरी नीबू, धत्रा श्रौर काकमाची के रस में १ दिन भावना देकर ४ रत्तो प्रमाण वटिका बतावे। हीग श्रौर सैन्धव लवण के श्रानुपान से सेवन करे।

- (२) हरिताल भरम है रत्ती मात्रा में रास्नादि क्वाय के साथ प्रयोग करे।
- (३) रसतालक १ जौ भर मात्रा में पीपल चूर्ण श्रौर सोंठ चूर्ण एवं मधु के साथ प्रयोग करे।

# जरुस्तम्भ चिकित्सा का श्रनुपान

चीतामूल चूर्ण, हरीतकी चूर्ण, पीपलचूर्ण, रास्नादि क्वाय, कुटकी चूर्ण, गोमूत्र, सोठ चूर्ण, दशमूल का काथ, त्रिफला चूर्ण, पीपरामूल चूर्ण, रास्ना का रस, एरण्डमूल का काथ, पुनर्नवा का रस, गिलोय का रस आदि अनुपान- युक्तिपूर्वक प्रयोग करे।

#### आमवात चिकित्सा

वातज श्रामवात में-वातारि रस-गरम दूध वा गरम जल श्रीर श्रण्डी के तैल के साथ प्रयोग करने से श्रतीव सुफल होता है।

पित्तज श्रामवात में श्रामवातारिवटी — पारद, गन्धक, लौह, श्रश्र, तूतिया, सोहागा, सैन्धव प्रत्येक समभाग, सब का दूना गुग्गुलु, गुग्गुल की चौथाई निसोत की जड़ की छाल का चूर्ण श्रौर निसोत की छाल के चूर्ण के समान चीते की जड़ का चूर्ण घत में मर्दन करके र माशा प्रमाण विटका वनावे।

कफज आमवात में-आमवातेश्वर—शोधित गन्धक और ताम्र प्रत्येक ४ तोला, शुद्ध पारद २ तोला, लौह २ तोला, इन सब द्रव्यों को एरण्डमूल के रस में भावना दे। फिर चूर्ण करके पश्चकोल के काय में २० वार भावना देकर गिलोय के रस में १० वार भावना दे, फिर इसके साथ सब के समान सोहागे की खील का चूर्ण, उसका आधा (प्रत्येक ६ तोला) विडलवण और मिरच का चूर्ण मिलाकर तिन्ति झार और दन्ती, पारद के तुल्य (२ तोला) एवं त्रिकट, त्रिफला, लवज्ञ प्रत्येक १ तोला मिलाकर बटी बनावे। अनुपान—आदी का रस और मधु। मात्रा—१ आना भर। यह कफज आमवात की श्रेष्ठ औषध है।

सान्निपातिक श्रामवात में-वृकोद्र विदका—पारद, गन्धक, तीच्ण लौह, श्रश्र, सोनामाखी, एवं षट्कोल (षडूषण), जीरा, कालाजीरा, सौवर्चल नमक, संधानमक, विडङ्ग, हरीतकी, श्रम्लवेतस, प्रत्येक समभाग एकत्र जम्हीरी रस के साथ मर्दन कर वेर की गुठली के समान दिका वनावे। श्रनुपान-श्रादी का रस श्रीर पोपल चूर्ण। मात्रा-२ रत्ती।

# आमवात चिकित्सा के अनुपान

पञ्चकोल चूर्ण, दशमूल का क्वाथ, निसोत का चूर्ण, लहसुन का रस, निर्गुण्डी का रस, सोठ का चूर्ण, हरीतको चूर्ण, एरण्डतैल, पुनर्नवा का रस, सेंघानमक का चूर्ण, अजवाइन का चूर्ण, गुरगुल का चूर्ण, असारिणी का रस, राम्ना का रस श्रादि का अनुपान अयोग करे।

### वातरक्त चिकित्सा

वायु प्रधान वातरक्त ने—पर्पटी रस श्रोर रसतालक घृत श्रोर गोल मरिच चूर्ण के साथ प्रयोग करे।

पित्त प्रधान वातरक्त में — त्रिनेत्र रस, वृत और मधु के श्रनुपान से प्रयोग करे।

कफ प्रधान वातरक्त में — उदयभास्कररस और शूलगजकेशरी प्रयोग करे।

रक्त प्रधान वातरक्त में — हरिताल भस्म सर्वश्रेष्ठ औषध है। मात्रा— है

रक्ती से है रक्ती तक। श्रमुपान-गाय का घी।

हरिताल सरम सेवन विधि—हरिताल भरम खाने के बाद रोगी प्रथम थोड़ा-थोड़ा कर प्रतिदिन त्राधा पाव से एक पाव तक गाय का घृत खावे। अन्न व्यक्षनादि, लुचई रोटी, परोठा, हलुआ आदि के साथ उक्त घृत खावे, जितना सहा हो उतना दूध पी सकते है। हरिताल भरम सेवन के समय मास, मछली निषिद्ध है। कोष्टवद्धता होने पर कभी-कभी आवश्यकतानुसार जुलाब लेना चाहिये।

त्रिदोषज वातरक्त सें-महातालेश्वर रस-हरितालभस्म और उसके समान गन्धक एकत्र कर दोनों के समान ताम्रभस्म मिलाकर बालुका यन्त्र में पाक करें। मात्रा—२ रत्ती। अनुपान-गिलोय का रस। यह त्रिदोषज बातरक्त की परीक्षित औपथ है। हरितालभस्म वनाने की विधि रसचिकित्सा प्रथम खण्ड में देखिये।

# वातरक्त चिकित्सा के अनुपान

गिलोय का रस, घड्से का रस, शतावर का रस, एरण्डमूल का रस, पान का रस, त्रिफला चूर्ग, कुटको चूर्ग, निसीत का चूर्ण, कोकिलाक्षी का रस, हरीतकी चूर्ण, गोमूब्र, गोक्षर, नीम की छाल का रस, मुलहठी का काथ, खश का चूर्ण, श्वेत चन्दन विमा हुआ, हलदी, दारहलदी, मोथा और आमले का काथ, गुग्गुलु और घृत।

इति रसचिकित्सा का द्वितीय खण्ड समाप्त।

# वृतीय ज्ञाण्ड

#### -ocumero-

# शीतिपत्त, उदर्द और कोठ

शीतिपत्त में-श्लेष्मिपत्तान्तकरस—रससिन्द्र, ताम्र, लोह, गन्धक, सोहागा, चिरायता, चीता, इन्द्रयव, रास्ना, गुरुच श्रीर पद्मकाष्ठ समभाग एक साथ मिलाकर एक दिन खेतपापड़ा के रस में मर्दन कर २ रत्ती की गोली वना ले। श्रजुपान—हर्रा, पीपल, सोठ का चूर्ण एवं गन्ने के रस का गुड़।

गुड्च्यादिलौह—गुरुच का शक्कर, त्रिफला, त्रिकटु, त्रिमद प्रत्येक १ तोला, लोहा १० तोला, जल में मर्दन कर ६ रत्ती की गोली वनावे। अनुपान-धनिया और परवल के पत्तों का क्वाथ।

पित्तान्तकरस—जावित्री, जटामासी, जायफल, कुड़ा, तालिशपत्र, ह्यौह, सोनामाखी, श्रश्रक श्रोर मनःशिला वरावर भाग, सबके वरावर चांदी, इनको जल मे घोंटकर २ रत्ती गोली वनावे।

वीरेश्वररस—रससिन्द्र, ताम्र, लौह, हरिताल, गन्धक, कैथ फल, मेढ़ा-सिंगी, वच, सोठ, भारंगी, हर्रा, सुगन्धवाला श्रौर धनिया एकत्र परवल के पत्ते के रस में घोंट कर ४ रत्ती परिमाण की गोली वनावे । श्रनुपान—धनिया श्रौर परवल के पत्तो का काथ ।

वृहत् हरिद्राखण्ड—हल्दी चूर्ण आधा सेर, निसीय चूर्ण ४ पल, हरें का चूर्ण ४ पल, चीनी ५ सेर । दारुहल्दी, मोया, जवाइन, वन जवाइन, चीता, कुटकी, कालाजीरा, पीपल, सींठ, गुडत्वक् (टालचीनी), इलायची, तेजपत्ता, विडङ्ग, गुरुच, अडूसा के मूल की छाल, कुडा, हर्रा, वहेड़ा, आवला, चन्य, धनिया, लीह और अभ्रक प्रत्येक १ तोला लेकर मृदु अगिन में पाक करे। इसे आधा तोला मात्रा में जल के साथ सेवन करना चाहिये।

स्पर्शवात में-रसादिगुडिका—पारद ८ भाग, कुचिला १० भाग, गन्धक १२ भाग, सोंठ, पीपल, गोलमिर्च, हर्रा, बहेबा, श्रावला, भेलुए की मुटि, -चीता, मोथा, वच, श्रश्वगन्धा, रेणुक, विष, कुडा, पीपल की जड़ श्रौर नागेश्वर अत्येक १ भाग एवं गुड़ २० भाग । इन्हें एक साथ मदन कर वेर के समान -गोली बनावे।

वातिपत्तान्तकरस—निर्माण विधि श्रम्लिपत्तिधिकार में द्रष्टव्य है।
उद्दं श्रीर कोठरोग में—पूर्वोक्त बृहत हरिद्राखण्ड, कुष्ठकालानल रस
श्रीवि श्रीविध प्रयोज्य हैं।

कुप्रकालानलरस—पारद, गन्धक, सोहागा, ताम्र श्रीर लोह समभाग एवं -नीम की पत्ती, फूल, फल, मूल श्रीर छाल का चूर्ण बराबर भाग एक साथ मिलाकर -त्रिफला श्रीर सोन्दाल के क्वाथ में पृथक् २ भावना देकर ४ रत्ती की गोली वनावें।

यवक्षार और सेंधानमक कड़ए तेल में मिलाकर शरीर में मर्दन करने से शीतिपत्त त्रारोग्य होता है।

श्रांवला श्रोरं नीमपत्ती बराबर भाग में पीस कर घी के साथ सेवन करने से शीतिपत्त, उदर्ह श्रोर कोठ श्रादि रोग प्रशमित होते है।

दूव श्रीर हलदी एक साथ पीस कर प्रलेप करने से भी शीतिपत्तादि रोग दूर होते हैं।

त्रिफला २ भाग, गुग्गुल ५ भाग श्रौर पीपल १ भाग इन सब द्रव्यों को एक साथ पीस कर १ माशा परिमाण की गोली बनावे। इसके सेवन से शीतिपत्त श्रौर उदहींदि रोग विनष्ट होते हैं।

शीतिपत्त रोग का श्रनुपान—कच्ची हलदी का रस, गुरुच का रस, नीमछाल का चूर्ण एवं श्रम्लिपत्ताधिकार में वर्णित श्रनुपानों को श्रवस्थानुसार समम कर व्यवहार करना चाहिए।

### गलगण्ड और गण्डमाला

गलदेश में क्षुद्र या वड़े त्राकार का लम्बमान जो शोथ उत्पन्न होता है उसे 'गलगण्ड' कहते हैं। कक्ष, स्कन्ध, शीवा, गल श्रीर वक्ष देश मे बेर या श्रांवले के समान श्रमेक संख्या में जो गण्ड उत्पन्न होते हैं उन्हें 'गण्डमाला' कहते हैं।

चिकित्सा - इन दोनों रोगो की चिकित्सा विधि एक ही तरह है।

वातजगलगण्ड में-वातारि रस-पारद १ भाग गन्धक २ भाग एक साथ कज्जली करे। पहले शोधित गुग्गुलु ५ भाग, एरण्ड तेल के साथ मदन कर उसके साथ उन्निखित कज्जली एवं त्रिफला चूर्ण ३ भाग श्रौर चीतामूल चूर्ण ४ भागः निश्रित कर फिर एरण्ड तेल के साथ मर्दन करे। मात्रा-१ माशा। श्रनुपान---सोंठ श्रौर एरण्डमूल का क्वाथ श्रथवा दशमूल क्वाथ।

कफजगलगण्ड में—पारद श्रीर गन्धक के सहयोग से भस्मीकृत एवं श्रमृतीकृत ताम्रभस्म २ रत्ती मात्रा में प्रयोग करें। श्रमुपान—सोंठ, वरुण छाल, हर्रा श्रीर कांचनार छाल का काथ।

मेदोजगलगण्ड में-(१) त्रिनेत्ररस—हरिन के सीग का चूर्ण, स्वर्ण भरम, ताम्रभरम श्रोर पारदभस्म समभाग एक साथ मिलाकर एक दिवस श्रदरकः के रस में मर्दन कर मूषारुद्ध करके गजपुट में पाक करे। मात्रा-१ रत्ती। श्रनुपान-दशमूल का काथ।

- (२) चाडचानि रस—शोधित पारद, ताम्रभस्म, हरिताल श्रौर गन्धा वोल समभाग एकत्र कर श्राकन्द (श्राक) की लेई के साथ एक दिन मर्दन कर मधु में मर्दन करे श्रौर १ रत्ती की गोली बनावे। श्रमुपान—श्रदरक का रस या दशमूल का क्वाथ।
- (३) कांचनार गुग्गुलु—कांचनार छाल ५ पल, सोंठ, पीपल श्रीर गोल मिर्च प्रत्येक १ पल, हर्रा, श्रॉवला श्रीर बहेड़ा प्रत्येक श्राधा पल, वरुणछाल २ तोला, तेजपत्ता, इलायची श्रीर दारुचीनी प्रत्येक श्राधा तोला एक साथ चूर्ण कर उसमे सर्वचूर्ण समान गुग्गुल श्रच्छी तरह मिलावे। मात्रा-है तोला से श्राधा तोला। श्रनुपान—त्रिफला, वरुणछाल, सोंठ श्रीर एरण्डमूल का छाल।
- (४) पूर्वलिखित प्रक्रिया से भरमीकृत ताम २ रत्ती मात्रा में, श्रपामार्ग क्षार, मूली का क्षार, श्वेतपुनर्नवा क्षार, वर्षण छाल का रस एवं राखालशसा (इन्द्रायण) मूल का रस श्रीर तिक्त कद्दू के रस के साथ सेवन करने से गलगण्डादि श्रारोग्य होते हैं।

(५) स्वर्णभस्म २ रत्ती मात्रा में विषम भाग मिलित घी श्रीर मधु के साथ

सेवन करके दूध के साथ पश्चतिक्त काथ का अनुपान करे।

(६) २ तीला कजाली, गुरगुल श्रीर एरण्ड तेल के साथ सेन्य है।

(७) मन्थानभैरवरस—पारदभस्म (श्रमाव में रससिन्दूर), ताम्रभस्म, हींग, पुष्करमूल (श्रमाव में कुड़ी), सेंधानमक, गन्धक, हरिताल श्रीर कुटकी

इनके चूर्ण समभाग एकत्र कर क्रमानुसार एक-एक दिन पुनर्नवा, देवदार, निसिन्दा (निर्मुण्डी), कांटानट श्रीर कड़वी कहू के रस में मर्दन कर ४ रत्ती की गोली तैयार करे। श्रनुपान-गुरुच का रस या काथ। इसके सेवन से गण्डमाला दूर हो जाती है।

### अपची चिकित्सा

जव गण्डमाला के कुछ गण्ड पकने लगते हैं, कुछ श्रदृश्य हो जाते हैं एवं कुछ नये की उत्पत्ति होने लगती है, तब ऐसी श्रवस्था से उन्हें 'श्रपची' कहते हैं।

- (१) चिकित्सा—सम्पूर्णरूप से निरामिषाशी श्रौर घृताशी होकर उपयुक्त समय तक हरितालभरम सेवन करने से श्रपची श्रारोग्य होती है। मात्रा—
  - (२) ताम्रभस्म--मात्रा-२ रत्ती । श्रनुपान-श्रदरक रस श्रीर मधु ।
  - (३) कांचनार गुग्गुलु—अनुपान-दशमूल का क्वाथ।
  - (४) स्वर्णभस्म—मात्रा-२ रत्ती । त्रानुपान-गुरगुल त्रौर एरण्ड तेल ।

मुक्ताभस्म उल्लिखित नियमानुसार सेवन करने पर भी श्रच्छा फल मिलता है।

- (५) साणिक्यरस—हरिताल १ पल, गन्धक १ पल, मनःशिल आधा पल, पारद, सीसक, ताम्र, अश्रक, लौह, प्रत्येक १ तोला लेकर एक साथ बड़ गृक्ष की दूध में सर्दन कर तीन दिन नीम के क्वाथ में भावना देकर धूप में सुखाने किर उसके साथ गुरुच, सुगन्धवाला, हिन्ताल, आलकुशी, नीलिक्किन्टी, सहिजन, सुरामांसी, जीरा, निसिन्दा (निर्गुण्डी), करवी, प्रत्येक का चूर्ण आधा तोला मिलाकर एक हट सकोरे में वन्द कर गीली मिट्टी लगाये हुए कपड़े के दुकड़े हारा वाथ दे। सूख जाने पर दो प्रहर तक निर्धूम अग्नि में पाक करे। मात्रा— २ रनी। अनुपान-धी और मधु।
  - (६) महामृगाद्ध, राजमृगाद्ध, रत्नगर्भपोद्दली रस श्रीर प्रवाल योग श्रादि श्रीपर्वे भी श्रपची रोग में श्रतिराय फलप्रद होती हैं। श्रनुपान-दूध श्रीर मधु।

महामृगाद्ध — स्वर्ण १ भाग, रसिसन्दूर २, मुक्ता २, गन्धक ४, सीना-मानां ५, रीप्य ४, प्रवाल ७ श्रीर सोहागा की खई २ भाग एक साथ लेकर श्रीन दिन नीचू के रस में मर्दन कर गीला बनावे, फिर तेज धूप में सुखावे। श्रिन उम गीले को मूपास्द करके लवण यंत्र में ४ प्रहर तक पकावे। ठण्डा होने पर उसके माप मिलित चूर्ण का है भाग हीरा ( श्रभाव में नेह भाग वैकान्त ) भिलाकर मर्दन कर ले। मात्रा-२ रत्ती।

राज्ञमृगाद्ध — रसिनदूर ३ तोला, स्वर्ण १ तोला, ताम्र १ तोला, शिला-जीत, हरिताल, रान्धक प्रत्येक २ तोला एकत्र घोट कर वड़े श्राकार की कुछ कोटियों के भीतर भर दें। वकरी के दूध में सोहागा को पीसकर उससे कौड़ी का सुन्व चन्द कर मिट्टी के हांडी में रखकर उसके ऊपर सकोरा रखकर मिट्टी का लेप कर दे। सून्व जाने पर गजपुट में पाक करके चूर्ण कर ले।

रत्नगर्भपोद्दली रस—रसिन्दूर, हीरक, स्वर्ण, रौप्य, सीसक, लौह, ताम्र, मुक्ता, सोनामाखी, प्रवाल, शंखभस्म श्रौर तूतिया समान भाग में एकत्र कर ७ दिन तक चीतां के रस में मर्दन कर चूर्ण करके कौड़ी के भीतर रख दें। श्राकन्द (श्राक) के रस (लासा) से सोहागा पीसकर उससे कौड़ी का मुख बन्द कर, मिट्टी की हाडी में रखकर यथाविधि मिट्टी लगा कर गजपुट में पाक करे। रण्डा होने पर कौड़ी के साथ श्रौपध चूर्ण करके यथाकम से ७ वार निसिन्दा (निर्मुण्डी) के रस में, ७ वार श्रदरक के रस में श्रौर २१ वार चीतामूल के रस में भावना देकर ४ रत्ती परिमाण की गोली वनावे।

प्रवाल योग—निर्माण विधि मेरी लिखी हुई 'यद्मा चिकित्सा' नामक पुस्तक में दी गयी है।

### ग्रन्थि चिकित्सा

सन्धिस्थल में गोलाकार शोथ उत्पन्न होने पर उसे 'ग्रन्थि' कहते हैं। चिकित्सा—

चातारिरंस — निर्माणनिधि गलगण्ड श्रीर गण्डमाला के श्रध्याय में द्रष्टव्य है। श्रनुपान-सींठ श्रीर एरण्डमूल का काथ श्रथवा दशमूल का काथ।

योगराजगुग्गुलु — चीतामूल, पीपलीमूल, अजवाइन, कालाजीरा, विडङ्ग, वनअजवाइन, जीरा, देवदार, चव्य, इलायची, सेंघानमक, रास्ना, गोलुरू, धिनया, त्रिफला, मोथा, त्रिकडु, गुडत्वक्, (दालचीनी), खसखस, यवक्षार, तालिशपत्र और तेजपत्ता प्रत्येक समभाग, सर्व चूर्ण सम गुग्गुल। प्रथम घी के साथ गुग्गुल मर्दन करे वाद में चूर्ण मिलाकर फिर घी के साथ मर्दन करे। मात्रा-आधा तोला, अनुपान—रास्नापञ्चक का क्वाथ।

रसाचाकत्सा

रमम

(३) श्रमृतभक्षातक—यथाविधि शोधित भक्षातक वीज ४ सेर श्रीर गुरुच ४ सेर कूट कर ६४ सेर जल में पकांचे, जब १६ सेर रह जाय तव उतार लें। उक्त क्वाथ में घृत २ सेर, दृध १६ सेर श्रीर चीनी २ सेर घोल कर धीमी श्रिप्त में पाक करे। लेहचत् गाढ़ा होने पर चृल्हे से उतार कर उसमें बेल कच्चे की मज्जा शुष्क, श्रातीस, गुरुच, सोमराजी (वाकुची), चाकुन्दे बीज, नीम, हर्रा, वहेड़ा, श्रांवला, मंजिष्ठा, गोलिमर्च, सोठ, पीपल, श्रजवाइन, सेंधानमक, मोथा, दारचीनी, इलायची, नागकेशर, खेतपापड़ा, तेजपत्ता, सुगन्धवाला, खसखस, सफेद चन्दन, गोक्षरबीज, शटी (कचूर) श्रीर लाल चन्दन प्रत्येक का चूर्ण ४ तोला प्रचेप कर उसे चलांचे। ठण्ढा होने पर २ सेर मधु मिलांचे। मात्रा-२ तोला। श्रनुपान—चीनीका जल।

(३) राजमृगाङ्क-निर्माण विधि 'ग्रपची' श्रध्याय में देखिये। श्रतुपान-श्रश्वगन्धा चूर्ण २ श्राना भर श्रीर गरम दूध।

(४) स्वर्णभरम २ रत्ती मात्रा में घी और मधु के साथ सेवन करे, इसके वाद दशमूल का क्वाय पीवे। यह वातज प्रन्थि की उत्कृष्ट श्रीषध है।

#### पैत्तिकग्रन्थि—

- (१) प्रवालयोग-पञ्चमूल के क्वाथ के साथ सेव्य है।
- (२) कांचनारगुग्गुलु—निर्माणविधि गलगण्ड श्रध्याय में द्रष्टव्य है। श्रनुपान—वरुण छाल का क्वाथ।
  - (३) माणिक्य रस—अनुपान-रक्तचन्दन श्रोर मुलहठी का क्वाथ।
- (४) राजसृगाङ्क रस—निर्माण विधि 'श्रपची' श्रध्याय में द्रष्टव्य है। श्रनुपान—घी श्रीर मधु के बाद सेमर मूळ का चूर्ण भक्षण करे।
- (४) स्वर्णभस्म, मुक्ताभस्म श्रयवा चूनाभस्म पश्चतिक्त घी के साथ सेवन करने पर भी श्रच्छा फल मिलता है।

#### श्लैष्मिक ग्रन्थि—

- (१) ताम्रभस्म-मात्रा-१-२ रत्ती, श्रनुपान--श्रदरक रस श्रीर मधु
- (२) स्वर्णभस्म-- अनुपान-निसिन्दा (निर्गुण्डी) पत्ते का रस और मधु।
- (३) महालदमीविलास—ग्रश्नक ८ तोला, गन्धक, पारद, बङ्ग प्रत्येक २ तोला, रोप्य १ तोला, ताम्र है तोला, कपूर, जावित्री, जायफल, विद्वहक वीज,

धतूरे का वीज और स्वर्ण प्रत्येक है तोला एक साथ पान के रस में मर्दन कर २ रत्ती की गोली वनावे । श्रनुपान-लहसुन का रस और मधु।

- (४) चृहत् सिंहनाद्गुग्गुलु—हर्रा, श्रावला, बहेबा प्रत्येक ४ सेर, पोष्टलीवद्ध गुग्गुल १ सेर, जल ९६ सेर, शेष २४ सेर। गुग्गुलु वाहर निकाल कर ८ पल परिमित कटु तेल में पीस कर उक्त क्वाथ के साथ पाक करे। पाक के समय त्रिकटु, त्रिफला, मोथा, विडङ्ग, देवदारु, गुरुच, चीताभूल, तेडब्री (निसीथ), दन्तीमूल, चन्य, कोचर्ड, मान, पारद श्रीर गन्धक प्रत्येक ४ तोला, जयपाल वीज १०००, इनको श्रच्छी तरह से चूर्ण कर उसमें डालकर श्रच्छी तरह मिलावे। मात्रा—१ श्राना से २ श्राना भर। श्रानुपान-दूध।
  - ( ५ ) प्रवालयोग-- श्रनुपान-एरण्डमूल का रस या क्वाथ।
  - (६) कांचनार गुग्गुलु—अनुपान-दशमूल का क्वाथ।
- (७) रीद्ररस—पारद, गन्धक १-१ भाग एकत्र पान के रस, कांटानट के रस, पुनर्नवा के रस, गोमूत्र श्रोर पीपल के क्वाथ में श्रलग्-श्रलग मर्दन कर मूषा में बन्द कर लघुपुट में पाक करे। मात्रा-१ रत्ती। श्रनुपान-श्वेतपुनर्नवा का रस।

अर्बुद चिकित्सा

- (१) हरितालभस्म--मात्रा-१ रती । श्रनुपान-गन्य घृत श्रयवा गुह्च्यादि (गुरुच, धनिया, मोथा, लालचन्दन, खसखस श्रोर सोंठ) क्वाथ ।
  - (२) ता सभस्म-मात्रा-२ रत्ती । अनुपान-श्रदरक रस श्रीर मधु ।
  - (३) स्वर्ण श्रीर मुक्ताभरम—श्रनुपान-वृत श्रीर मधु।
    - (४) प्रचालयोग--- अनुपान-अनन्तमूल का क्वाथ।
- (५) पारद्भस्म—२ रत्ती मात्रा में गव्य घृत के साथ सेवन कर महा-राह्नादि क्वाथ का श्रजुपान करे।
- (६) विजयपर्टी—मृङ्गराज रस में शोधित गन्धक (मृङ्गराज रस में ७ वार या ३ वार भावना देकर धूप में सुखाकर चूर्ण करे। इस प्रकार शोधित गन्धक ) ८ तोला, पारद ४ तोला, चांदी २ तोला, रवर्ण १ तोला, वैक्रान्त आधा तोला एकत्र मर्दन कर कज्जली करे। वाद में नियमानुसार पर्पटी तैयार करे। पर्पटी सेवनविधि के अनुसार मधु और दूध के साथ सेवन करे।

१६ र० चि०

- (७) स्वर्णपर्धे पारद ८ तोला, स्वर्ण १ तोला एकत्र श्रच्छी तरह मईन कर उसके साथ गन्धक ८ तोला मिलाकर लोहे के वर्त्तन में कज्जली तैयार करे। बाद में यथाविधि पर्पटी बना कर पर्पटी विधि के श्रनुसार सेवन करे। २ रत्ती से श्रारम्भ कर मात्रा बढ़ानी चाहिये।
  - (८) वातारिरस--- अनुपान-सोंठ और एरण्डमूल का काथ।'
- (९) राजमृगाङ्क रस, प्रवाल योग श्रौर हिरण्यगर्भपोद्दलीरस, पंचितक्त घृत गुग्गुलु के श्रनुपान से सेवन करने पर श्रच्छा फल मिलता है।

हिरण्यगर्भपोद्धलोरस — पारद १ भाग, स्वर्ण २ भाग, मुक्ता ४ भाग, कांसा ६ भाग, गन्धक ३ भाग, कोड़ीभस्म श्रीर सोहागा पारद का चतुर्थीश। एक साथ नीबू के रस में मर्दन कर पुटपाक करे। मात्रा-२ रक्ती।

- (१०) रोद्ररस समभाग में गृहीत पारद श्रीर गन्धक की कज्जली वनाकर पान, कांटानट शाक, श्वेत पुनर्ववा रस, गोमूत्र श्रीर पीपल चूर्ण के साथ मर्दन कर लघुपुट में पाक कर ले। मात्रा-२ रत्ती। श्रनुपान-श्वेतपुनर्नवा का रस श्रीर मधु।
  - (१) ताम्रभस्म —मात्रा-२ रत्ती । श्रनुपान-श्रदरक रस श्रीर मधु ।
- (२) वाडवाग्निरस—मात्रा—२ रती । त्रानुपान-त्रादरक रस या दश-मूल का काथ । निर्माण विधि गलगण्ड ऋध्याय में द्र ष्टन्य है ।
- (३) लोहारिष्ट—सोलहगुना जल में सालसारादिगण का क्वाथ प्रस्तुत कर चतुर्थाश शेष रहने पर उतार कर छान ले एवं मधु मिश्रित कर रख दें। कुछ दिनों के वाद क्वाथ में जब बुलबुले उठने लगें तव उसमें पिप्पल्यादिगण का चूर्ण मिश्रित करे। बाद में एक घृताम्यक्त माण्ड के भीतरी भाग को मधु संयुक्त पीपल चूर्ण द्वारा प्रलिप्त कर उसके अन्दर उसे रखे। बाद में कान्तलोह के पतले पत्रों को खदिर लकड़ी की अप्ति में तपा कर बार बार उसमें बुम्तावे। तत्पश्चात उक्त पत्रों को भाण्ड के भीतर रखकर—भाण्ड के मुख को सकोरे से बन्द कर जी की राशि के वीच में गाड़कर रखे। लोह के पत्रों के नष्ट हो जाने पर अरिष्ट को छान ले। यह उत्कृष्ट रसायन है।
  - (४) शिलाजीत—शिलाजीत १ तोला, बङ्ग १ तोला, कजाली १ तोला एकत्र कर पान, सेमर का मूल, शतमूली (शतावरी), श्राँवला, कच्ची हल्दी श्रीर

भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द) के रस में यथाक्रम से भावना देकर ४ रत्ती परिमाण की गोली वनावे। अनुपान—सालसारादिगण (साल, असन, खदिर, श्वेतखदिर, तमाल, सुपारी, भूर्जपत्र, मेढासिङ्गी, तिनिस, चन्दन, लालचन्दन, शिशपा (सीसम), शिरीप, पियासाल, धव, अर्जुन, ताल, सागोन, करोंदा, डहर करोदा, लतासाल, अगुरु, कालीय काष्ठ का काथ)।

कुछ मुप्रियोग—साईवीज, मूलीवीज, शणवीज, जौ श्रीर सरसी इन सब द्रव्यों को खटी दही के साथ पीस कर प्रलेप लगाने से श्रन्थि श्रीर गलगण्ड विलीन हो जाते हैं।

मूली श्रोर हल्दी का क्षार शङ्खचूर्ण के साथ मिलाकर प्रलेप देने से श्रर्बुद विनष्ट होता है।

सज्जीक्षार, मूली का क्षार श्रौर शंखचूर्ण एक साथ मिलाकर प्रलेप देने से श्रन्थि श्रौर श्रर्वुद विलीन हो जाते हैं।

गन्धक, मैनशिल, सीसकभस्म श्रीर सोठ चूर्ण समभाग एक साथ लेकर कुकलास (गिर्गिट) का रक्त मिलाकर प्रलेप देने से श्रर्बुद विनष्ट होता है।

केले के फूल का भस्म, भूसी और शंखचूर्ण, इनके सम्परिमित चूर्ण के साथ कुकलास (गिर्गिट) का रक्त मिलाकर प्रलेप देने से अर्बुद नष्ट होता है।

हलदी, लोध, लालचन्दन, भूल (गृह धूम) श्रौर मनःशिला समभाग में लेकर मधु के साथ मर्दन कर प्रलेप करने से मेदोज श्रर्शुद विनष्ट होता है।

### इलीपइ चिकित्सा

चक्रेश्वर रस—ताम्र, गन्धक १-१ भाग और पारद २ भाग एक साथ नटे शाग, पान, श्राकनादि (पाठा) लता और पुनर्नवा के रस एवं गोमूत्र के साथ ३ दिन मर्दन कर १ दिन चक्रयन्त्र में पाक कर ले। खदिर और पद्मकाष्ठ का चूर्ण, गोमूत्र एवं मधु के श्रनुपान से यह चक्रेश्वर रस सेवन करने से दुःसाध्य श्लीपद श्रारोग्य होता है।

नीचे भाग में श्रिप्ति, मध्य भाग में रस श्रीर वाहर की श्रीर वृहत् पुट वाले गड्ढे की चक्रयन्त्र कहते हैं।

नित्यानन्द रस—पारद, गन्धक, ताम्र, कांसा, वङ्ग, हरिताल, तूतिया, शङ्खभस्म, कोड़ीभस्म, त्रिकटु, त्रिफला, लोहा, विडङ्ग, पञ्चलवण, चव्य, पीपलामूल, हबुषा (हाऊवेर), वच, शटी (कचुर), त्राकनादि (पाठा), देवदार, इलायची, विद्धड़क, तेउड़ी (निसोध) मूल, चीतामूल, दन्तीमूल, समभाग में एकत्र कर हरीतकी के क्वाय में घोट कर ५ रत्ती की गोली बनावे त्र्योर उसे शीतल जल के साथ सेवन करे।

कामदेव रस—पारद, गन्धक, ताम्र, कांचमणि श्रौर सीसक प्रत्येक १ भाग, पीपल, तेउडी (निसोथ), सोंठ, धनिया श्रौर हर्रा प्रत्येक ३ भाग, हींग, कोंचई, जवाइन प्रत्येक है भाग, एकत्र चूर्णकर श्राधे माशे की गोली बनावे। श्रुतुपान—श्लैष्मिक श्लीपद में सोंठ श्रौर सेधानमक, वातिक श्लीपद में दही के साथ सेवन करे।

श्लीपदारिलोह—हर्रा, श्रांवला श्रीर बहेबा चूर्ण प्रत्येक ६ तोला, कान्त-लोह चूर्ण २ तोला, शिलाजीत २ तोला एकत्र लेकर त्रिफला के काथ में भावना देकर ४ रत्ती की गोली तैयार करे। श्रानुपान-उष्ण जल।

बातरक्तान्तकरस—पारद, गन्धक, लौह, श्रभ्रक, हरिताल, मैनशिल, शिलाजीत, गुग्गुल, विडङ्ग, त्रिकटु, त्रिफला, पुनर्नवा, समुद्रफेन, चीता, देवदार, दारुहल्दी, श्वेत श्रपराजिता सम परिमाण में एकत्र खरल कर ६ रत्ती मात्रा में सेवन करे। श्रनुपान—धृत।

चातारिरस—निर्माण विधि गलगण्ड श्रध्याय में देखिये। श्रनुपान-सोठ श्रीर एरण्डमूल का काथ।

पर्णटीरस—१ भाग पारद श्रीर २ भाग गन्धक की कज्जली भीमराज के रस में मर्दन कर उसके साथ पारद वा चौथाई भाग तांबा श्रीर लौहभस्म मिला कर लोहे के वर्त्तन में पकावे; पाककाल में लोहे की छड़ी से उसे बार बार हिलावे। वाद में पर्णटीनिर्माण बिधि के श्रनुसार पर्णटी प्रस्तुत करे। एवं चूर्ण कर निसिन्दा (निर्गुण्डी) के पत्ते के रस में भावना देवे। तत्पश्चात् जयन्ती, त्रिफला, धृतकुमारी (धीकुवार), श्रहसा, वामनहाटी (भारंगी), त्रिकद्ध, भृद्धराज, चीता मूल श्रीर मुण्डिरी के रस में ७ दिन भावना देकर श्रद्धारागिन में सुखा ले। मात्रा—४ रत्ती। एरण्ड तेल के साथ सेवन करे।

पारद्भस्म—दो रत्तो मात्रा मे एरण्डमूल के रस के साथ सेवन करने से रलीपद त्रारोग्य होता है। कणादिचूर्ण—पीपल, वच, देवदार, पुनर्नवा, वेल की छाल, प्रत्येक सम भाग, सर्वसम विद्धइक बीज, एकत्र चूर्ण कर ३ रत्ती मात्रा में रससिन्दूर के साथ प्रयोग करने पर श्लीपद श्रारोग्य होता है।

चीतामूल, सफेद सरसों श्रौर सिहजन की छाल समभाग लेकर गोमूत्र के साथ पीसकर लेप देने पर श्लीपद दूर होता है।

वेंची वृक्ष की परगाछा का मूल घी के साथ पीसकर सेवन करने से एवं जंघे पर धारण करने से भी श्लीपद रोग श्रारोग्य होता है।

शाखोट (सास्) छाल का काथ गोमूत्र के साथ पान करने से मेदोरोग और श्लीपद दूर होता है।

रलीपदरोग में एरण्ड तेल से हरें को तल कर गोमूत्र के साथ सेवन करे। गुरुच का स्वरस या काथ सरसों तेल के साथ सेवन करने से श्रच्छा फल मिलता है।

स्फुटित श्रीर दाहयुक्त रलीपद में मैनफल, मोम, सामुद्रलवण समभाग, भैंस के मक्खन के साथ पीसकर श्रलेप लगाने।

नीवू वृक्ष की छाल श्रौर खदिर एक साथ पीसकर मधु श्रौर गोमूत्र के साथ सेवन करने पर भी विशेष उपकार होता है। मात्रा-१ तोला।

### विद्रिधि चिकित्सा

वातज विद्रधि—

कज़लीयोग—२-१० रत्ती की मात्रा में कज्जली वरणादिगण के काथ या दशमूल के काथ के साथ सेवन करे।

वातारिरस—निर्माण विधि गलगण्ड के श्रध्याय में देखिये। श्रनुपान— दशमूल का काथ।

माणिक्यरस--- अनुपान--गुरुच का रस और मधु।

पित्तज विद्धिः—

शोधित हिङ्गुल-२ रत्ती की मात्रा में परवर के पत्ते का रस श्रीर मधु के माथ सेवन करे।

ताम्रभस्म- २ रत्ती की मात्रा में त्रिफला के काथ के साथ सेवन करे।

कज्जलीयोग—२ से १० रत्ती की मात्रा में हर्रा, त्रांवला, वहेड़ा, परवल का पत्ता, गुरुच, मुलहठी, कुटकी त्रौर त्रानन्तमूल के क्वाथ के साथ सेवन करे।

कफज विद्धि—ताम्रभस्म-मात्रा-२ रत्ती । श्रनुपान-श्रद्रक श्रोर तुलसी पत्ते का रस श्रोर मधु ।

मकरध्वज-१ रत्ती की मात्रा में नीम के पत्ते के रस श्रीर मधु के साथ मदन कर सेवन करे।

महालद्मीविलास— दशमूल पाचन के साध सेवन करे । निर्माणविधि— अभ्रक ८ तोला, पारद, गन्धक, कपूर, जावित्री, जायफल, प्रत्येक ४ तोला, विद्धक् वीज, धतूरा वीज, भंग का वीज, भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द) मूल, शतमूली (शतावर), गोरक्षचाकले मूल, बला मूल, गोक्षुरबीज, हिज्जल बीज प्रत्येक २ तोला-पान के रस में मर्दन कर २ रत्ती की गोली तैयार करे।

शोधित द्ग्ध हरिताल-१ जौ की मात्रा में त्रिफला के क्वाथ त्रौर गुग्गुलु के साथ सेवन करे।

सान्निपातिक विद्धि—

हरिताल अस्म-मात्रा १ रती। गव्यवृत के साथ सेवन कर मजिष्ठादि पाचन का अनुपान करे।

महालदमीविलास-दशमूल पाचन के साथ सेवन करे।

माणिक्यरस— घृत श्रौर मधु के साथ सेवन करके श्रमृतादि पाचन का श्रनुपान करे।

ताम्रभसम—मात्रा-२ रत्ती । श्रनुपान—श्रदरक रस श्रौर मधु के साथ चाटकर वाद में कैंथ श्रादि का क्वाथ श्रनुपान करे ।

रक्तप्रकोपज विद्वधि—

शोधित दग्ध हरिताल-अनन्तमूल के क्वाथ के साथ सेवन करे।

माणिक्यरस—त्रिफला, त्रानन्तमूल, गुरुच, दारुहरिद्रा, परवल का पत्ता, हर्रा, कुटकी त्रौर चिरायता के क्वाथ के साथ सेवन करे।

ताम्रभस्म—श्रद्रक रस श्रीर मधु के साथ सेवन दरे, बाद में त्रिफला का क्वाथ श्रनुपान करे।

शोधित हिङ्कुल-२ रत्ती की मात्रा में परबल के पत्ते का रस श्रीर मधु के माय सेवन कर वाद में श्रमृतादि पाचन श्रनुपान करे।

### श्रार्त्तव विद्धि—

(१) वातारिरस—निर्माण विधि गलगण्ड श्रधिकार में द्रष्टव्य है। श्रज्ञपान-देवदावीदि (देवदारु, वच, कुड़ा, पीपल, सोंठ, विरायता, मोथा, कैथ, कुटकी, धनिया, हर्रा, गजपीपल, कण्टकारी, गोक्षर, दुरालभा (जवासा), वृहती (वड़ी कटेरी), गुरुच, श्रातइच (श्रतीस), काकड़ाश्रज्ञी, कालाजीरा) क्वाथ में हींग श्रीर सेंधानमक मिलाकर सेवन करे।

#### रसपर्पटी-

रोग की वृद्धि श्रवस्था में — रसपर्पटी पीसा हुश्रा जीरा श्रीर मधु के श्रवुपान से सेवन करे।

रोग श्रिधिक पुराना होने पर ही ताम्रपर्पटी पर्पटी सेवन विधि के श्रनुसार हिंडु श्रीर पिसे हुए जीरे के श्रनुपान से सेवन करे।

माणिक्यरस— घृत श्रीर मधु के श्रनुपान से सेवन करे। बाद में स्तिका दशमूल पाचन का श्रनुपान करे।

स्तनविद्रधि-

कज्जली - दशम्ल क्वाथ के साथ सेवन करे।

शोधित हिगुल-हत्दी त्रादि के क्वाथ के साथ सेवन करे। मात्रा-२ रत्ती।

माणिक्यरस- वचादि के क्वाथ के साथ सेवन करे। मात्रा-२ रत्ती।

मकरध्वज—१ रत्ती । गुरुच, परवल का पत्ता, नीम की छाल, श्रनन्तमूल श्रीर लालचन्दन के क्वाथ के साथ सेवन करें।

### अन्तर्विद्रधि-चिकित्सा

शरीर के विभिन्न श्रङ्गों में होने वाली श्रन्तविद्रिध रोग की चिकित्सा प्रणालीगुह्य श्रन्तविद्रिध—

श्रादित्यरस — मात्रा १ से २ रत्ती तक। श्रनुपान - श्रदरक रस श्रीर मधु। निर्माण विधि रसचिकित्सा के द्वितीय खण्ड में देखिये।

रसपपटी — हींग श्रौर पिसे हुए जीरे के साथ सेवन करे।
माणिक्यरस—एरण्डमूल के रस श्रौर मधु के साथ सेवन करे।

वातारिरस—सोंठ और एरण्डमूल के क्वाथ के साथ सेवन करे। निर्माण विधि गलगण्ड अधिकार में देखिये।

ताम्रभस्म—२ रत्ती की मात्रा में लेकर पुनर्नवा, देवदारु, सींठ श्रीर दश-मूल के पाचन में गुरगुलु का प्रदोप देकर उसके साथ सेवन करे। एरण्डतेल के श्रनुपान से भी सेवन किया जा सकता है।

#### वस्तिदेश में अन्तर्विद्धध--

रसतालक — एक उत्कृष्ट और परीक्षित श्रोषध है। श्रनुपान — तृणपश्चमूल का क्वाथ। निर्माण विधि-शोधित पारद, गन्धक, हरिताल श्रोर लाल दारमूज (लाल संखिया) एक साथ श्रच्छी तरह से मर्दन कर एक काच की कूपी के भीतर रख कर रसिनदूर के पकाने की विधि के श्रनुसार बालुकायन्त्र में ४ प्रहर पाक करे। बोतल के तलदेश मे जमे हुए रसतालक को निकाल कर व्यवहार करना चाहिये। मात्रा-१ रत्ती।

कजालीयोग-शतावयादि के क्वाथ के साथ सेवन करे।

रोद्ररस-निर्माणविधि ऋर्बुद ऋष्याय में देखिये। हरीतक्यादि के कषाय के साथ सेवन करे।

### नाभि में अन्तर्विद्धि—

- (१) ताम्रभस्म २ रत्ती, हीग १ रत्ती, श्रदरक रस श्रीर मधु के साथ सेवन करे।
- (२) रसपर्पटी उपयुक्त मात्रा में पर्पटी सेवन की विधि के अनुसार पिसा हुआ जीरा और मधु के साथ मर्दन कर सेवन करे।

#### कुचि में श्रन्तविंद्रधि—

वातारिरस—एरण्ड मूल के रस के साथ सेवन करे। निर्माणविधि गल-गण्ड श्रिधकार में देखिये।

ताम्रभस्म मात्रा-२ रत्ती । श्रनुपान सहिजन की छाल का रस श्रोर हींग।

वृहत् चातिचन्तामिण—स्वर्ण ३ भाग, रौप्य २ भाग, श्रभ्रक २ भाग, लोह ५ भाग, प्रवाल ३ भाग, मुक्ता ३ भाग, रसिसन्दूर ७ भाग एकत्र घृतकुमारी के रस में मर्दन कर २ रत्ती की गोली वनावे। श्रमुपान—दशमूल का क्वाथ।

### वंत्रण ( कुचकी ) में अन्तविंद्रधि—

चातारिरस—सींठ श्रौर एरण्डमूल के क्वाथ के साथ सेवन करे। निर्माण-विधि गलगण्ड श्रिधकार में देखिये।

चातगजेन्द्रसिंह—दशमूल के क्वाथ के साथ सेवन करे। निर्माणविधि— श्रिश्रक, लोह, रस, गन्धक, ताम्र, सीसा, सोहागा, विष, सेंधानमक, लोंग, हिंगु श्रीर जायफल प्रत्येक १ तोला, गुडत्वक् (दालचीनी), तेजपत्ता, इलायची, त्रिफला श्रीर जीरा प्रत्येक श्राधा तोला एकत्र घृतकुमारी के रस में मर्दनकर ३ रत्ती की गोली वनावे।

माणिक्यरस—लघु पद्यमूल, चृहत् पंचमूल, सोंठ, पुनर्नवा और देवदार के काथ के साथ सेवन करे।

#### वृक्क में अन्तर्विद्रधि—

पापाणभेदीरस—पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, एकत्र वकफूल के पत्ते, सफेद पुनर्नवा, श्रक्ता श्रीर सफेद श्रपराजिता प्रत्येक के रसों में ३ दिन तक मर्दनकर सुखा ले। फिर मूपारुद्ध कर इसे पकावे। मात्रा—२ रत्ती। कुड़ा, गोक्षर, वरुणछाल श्रीर एरण्डमूल के क्वाथ के साथ सेवन करे।

रसतालक—१ जो मोत्रा में दशमूल के क्वाथ के साथ सेवन करे।

ताम्रभस्म—२ रत्ती मात्रा में सिहजन छाल के रस के साथ सेवन करे।

रोद्ररस—निर्माणविधि अर्वुद अधिकार में देखिये। पुनर्नवा के रस के
साथ सेवन करे।

#### ब्लीहा में अन्तर्विद्रधि—

रसपर्पटी—िपसा हुआ जीरा, हींग के साथ यथाविधि सेवन करे। ताम्रपर्पटी—िनर्माण विधि रस चिकित्सा के द्वितीय खण्ड में देखिये। हींग और पिसे हुए जीरे के साथ सेवन करे।

हरितालभस्म—निर्माण विधि रस चिकित्सा के प्रथम खण्ड में देखिये। अदरक रस श्रौर गरम गव्य घृत के श्रनुपान से निह रत्ती मात्रा में प्रयोग करे। रौद्ररस—सफेद पुनर्नवा के रस श्रौर मधु के साथ प्रयोग करे।

# हृद्य में श्रन्तिर्विद्धि—

नागार्जुनाभ्र-श्रनुपान-वेदाना का रस श्रौर मधु।

सहस्रपृटित वजाभ्र क्रमशः ७ दिन श्रर्जुन की छाल के काथ के साथ मर्दनकर छाया में सुखाकर २ रत्ती की गोली वनावे।

हरिताल भरम- १ रत्ती। अनुपान-गन्य घृत।

प्रभाकर विटका—सोनामाखी, लौह, श्रश्रक, वंशलोचन, शिलालीत प्रत्येक समभाग, श्रर्जुन छाल के क्वाथ में भावना देकर ४ रत्ती की गोली वनावे श्रीर छाया में सुखावे। श्रनुपान-श्रांवले का रस।

वातारिरस—निर्माण विधि गलगण्ड श्रध्याय में देखिये। श्रनुपान-दशमूल का क्वाथ।

महाकालेश्वर—लोह, वङ्ग, ताम्र, श्रभ्रक, पारद, गन्धक, सोनामाखी, हिगुल, विष, जायफल, लोंग, गुडत्वक् (दालचीनी), इलायची, नागेश्वर, धतूरे का बीज श्रीर जयपाल बीज प्रत्येक १ तोला, गोलिमर्च ३ तोला, भंग की पत्ती के रस में २१ वार लोह दण्ड द्वारा मर्दन कर १ रत्ती की गोली वनावे। श्रनुपान—श्रर्जन छाल का रस।

रोद्ररस—श्रनुपान-सहिजन छाल का रस । निर्माण विधि श्रगले प्रकरण में देखिये।

### यकृत में अन्तर्विद्रधि—

सोमनाथ ताम्र—निर्माण विधि रस चिकित्सा के प्रथम खण्ड में देखिये। मात्रा—र रत्ती। त्रमुपान-त्र्रदरक रस त्रीर मधु।

हरिताल भस्म- १ रत्ती, श्रनुपान-गव्य घृत।

रसतालक—मात्रा—१ जौ । श्रनुपान—सफेद पुनर्नवा का रस

कृष्णचतुर्मुख—पारद, गन्धक, लोह, अअक प्रत्येक १ तोला, सोना २ माशा, घृतकुमारी के रस में मर्दन कर एरण्ड के पत्ते में लपेट कर ३ दिन धान्यराशि के भीतर गाड़ कर रखे। बाद में बाहर निकाल कर २ रत्ती की गोली वनावे। अनुपान-वहेड़ा चूर्ण और मधु।

हिंगुलयोग—२ रत्ती मात्रा में शोधित हिंगुल कूलेखाड़ा (तालमखाना) के रस और मधु के साथ सेवन करे।

# कुष्टरोग (कोढ) चिकित्सा

अथम दोप के प्रकोप के अनुसार वातोत्वण कुष्ठ में घतपान, रलेक्मोलवण कुष्ठ में वसन, पित्तोत्वण कुष्ठ में प्रलेप, परिषेक और रक्तमोक्षण आदि कियाओं की ज्यवस्था कर लगातार चिकित्सा का अवलम्बन करना चाहिए।

#### कुष्ठरोग में रस प्रयोग—

- (१) सर्चेश्वर—ग्रश्नक, ताम्र श्रीर गन्धक प्रत्येक ८ तीला, लोह श्रीर पारद प्रत्येक २ तीला, सीज की लेई, श्राकन्द (श्राक) की लेई, एरण्डमूल, जमीरी नीवृ श्रीर खसखस के रस या क्वाय में मर्दन कर वालुकायन्त्र में ३ दिन पाक कर उसके साथ पीपल चूर्ण २ तीला श्रीर मीठा विष ८ माशा मिश्रित करे। मात्रा- १ रती। यह स्पर्श ज्ञानरहित कुष्ठ में उपकारी है।
- (२) सुप्तान्तकरस—समपरिमित पारद और गन्धक की कज्जली २ भाग, सरसों तेल में सिद्ध और जारित ताम्र १ भाग एकत्र कर उसमें सोंठ, गोलिमर्च, पीपल, भेलवा, विडङ्ग, वच, हर्रा और मीठाविष प्रत्येक १ भाग मिश्रित कर भेलवा के रस के साथ मर्दन करे और मधु मिलाकर २ रत्ती मात्रा में व्यवहार करे। इससे दीर्घकालीत्पन्न सुप्त कुष्ठ श्रारोग्य होता है।
- (३) प्रतापलंकेश्वर—समपरिमाण में पारद, गन्धक सोहागा, ताम्र, कुडा, लोह श्रौर पीपलचूर्ण एकत्र कांचन (धतूरा) के पत्ते के साथ मर्दन कर रत्ती परिमाण की गोली वनावे। इससे विपादिका नामक कुछ श्रारोग्य होता है।
- (४) तालेश्वर—हरिताल २ पल, पारद 'और गन्धक प्रत्येक आधा पल, ताम्रभरम और लौहमस्म प्रत्येक आधा पल, एकत्र कर सुधुनिशाक के रस के साथ पीस कर फिर ऑवले के रस, सुधुनिरस, पुनर्नवारस और चीता के पत्ते के रस के साथ ५ वार मर्दन कर मूषाहद्ध कर भूधरयन्त्र में पाक करे।

एक रत्ती की मात्रा में यह श्रीषध घी के साथ सेवन करने पर सब प्रकार के कुछरोग दूर हो जाते हैं।

(५) महातालेश्वर—लोह ४ भाग, रसिसन्दूर ६ भाग, गन्धक जारित ताम्र ८ भाग, एकत्र जासुन के रस में मर्दन कर गजपुट में पकाकर है भाग मीठा विष मिलाकर १ मारो की मात्रा में व्यवहार करे। वमन-विरेचनादि द्वारा देह न्संशोधन कर इस श्रोषध को त्रिकटुचूर्ण या घी श्रोर मधु के साथ सेवन करना -चाहिए।

- (६) कनकसुन्द्रंस स्वर्णभस्म १ भाग, ताम्रभस्म १ भाग श्रोर गन्धक २ भाग एकत्र मर्दन कर गोली वनावे, फिर गजपुट में पाक करे। तत्प-श्वात उसके साथ सोंठ, पीपल, गोलमिर्च, भेलवा, विडङ्ग, पारद, कुकरोंघा, देव-दाह प्रत्येक १ भाग एवं मीठा विष श्राधा भाग मिलाकर वकरी के मूत्र में मर्दन वर १ रत्ती मात्रा की गोली निर्माण करे। घी श्रोर गोलमिर्च के चूर्ण के साथ इसे व्यवहार करना चाहिए। वातश्लेष्म प्रधान कुष्ठ श्रोर चर्मरोग में यह विशेष कार्यकारी होता है।
- (७) विश्वहितरस रस श्रीर गन्धक के संयोग से जारित ताम्र, लाख, हिरिताल प्रत्येक १ पल तीन दिवस मर्दन करके रोगी के बलानुसार ३ से ६ रत्ती -मात्रा में घी श्रीर गोलिमर्च के चूर्ण के साथ प्रयोग करे।
- (८) कुछकुठारस—सम परिमाण पारद श्रीर गन्धक की कजाली ४ तीला, रक्तचन्दन श्रीर कूंचमूल के रस में भावना दे। तत्पश्चात् उसके साथ वचन, श्रांवला, पीपल, सरसों, विडङ्ग प्रत्येक २ तीला, मीठाविष श्राधा तीला, सफेद जीरा १ तीला, ताम्र ४ तीला, सोंठ ४ तीला मिलाकर भृङ्गराज रस के साथ स्निग्ध हण्डी में पाक करे। पाक समाप्त हो जाने पर उसमें कुडा, सोठ, भेलवा, हर्रा, श्रांवला, वहेडा श्रीर सेंधा नमक का प्रदेप देकर चने के श्राकार की गोली चनावे। इसके प्रयोग से सब प्रकार के कुछ विनष्ट होते हैं।
  - (१) वज्रशेखर रसं—१ भाग पारद, २ भाग गन्धक की कज्जली, ज्ञपराजिता, मूर्वा, गन्धनाकुली, शंखपुष्पी, गोजिया, स्वर्णक्षीरी, नीलवृक्ष, पलास, रदन्ती, श्रम्लवेतस श्रीर काकमाची के रस में मर्दन कर भूसी श्रीर गोवर के कण्डे की श्राग्न में पर्पटी की तरह पाक करे। तत्पश्चात् उसके साथ २ भाग अश्रमस्म श्रीर है भाग स्वर्णमाक्षिक मिश्रित कर शतमूली (शतावर), मुण्डिरी, हस्तिकर्णपलाश, गिलोय, विछुटो, मूर्वा श्रीर भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द) के रस के साथ मर्दन कर उसमें घी मिला दे। उसके बाद उसे दशमूल के क्षाथ के साथ श्रवलेह की भांति पाक करे। पाक समाप्त होने पर उसमें पारद के बरावर इलायची, तेजपत्ता, दारुचीनी, भेलवा, सोंठ, पीपर, गोलिमर्च श्रीर मुलेठी का

चूर्ण प्रदोप देकर हिनग्ध भाण्ड में रख दें। वमन-विरेचनादि द्वारा शुद्ध होकर मंजिष्ठादि काथ के साथ इसे १ माशे की मात्रा में सेवन करना चाहिए।

- (१०) नागार्जुनगुडिका—पारद, गन्धक, स्वर्णमाक्षिक, हरिताल, कान्त-लौह, कृष्णाभ्र, हिंगुल, सुलेठी, कुढ़ा समभाग में एकत्र कर श्रम्लवेतस रस के साथ ३ दिन मर्दन कर उसे सुखा कर फिर घी श्रौर मधु के साथ ३ दिन मर्दन करे। वाद में समपरिमित पुराने गुड़ के साथ मर्दन कर वेर की गुठली की तरह गोली बनावे श्रौर छाया में सुखा दे। दहु, विचर्चिका श्रौर श्रन्यान्य सब प्रकार के कुछ इसके द्वारा दूर होते हैं।
- (११) माणिक्यतिलक रस—पारद, गन्धक, स्वर्णमाक्षिक, हरिताल, कान्तलोह, तीच्णलोह, अश्रक, हिंगुल, मुलेठी और कुड़ा समभाग एकत्र कर शतमूली (शतावर) के रस और मिलिष्ठादि गण के क्षाय में ३ दिन मर्दन कर सुखा ले। उसके बाद उसे मूषा में रख कर २ दिन वालुका यन्त्र में पाक करे। यह कुछ रोग की उत्कृष्ट औषध है।
- (१२) परहित रस—रवेत श्राकनादि (पाठा), रवेत श्रपराजिता श्रीर रवेत पुनर्नवा इनके मूल एक साथ पीस कर उसके द्वारा मूणा प्रस्तुत करे। एक हांडी के भीतर यह मूणा स्थापित कर उसमें शोधित पारद रख दे। फिर उसके ऊपर दो श्रंजिल परिमाण नमक चूर्ण वैठा कर हाण्डी को श्रच्छी तरह से वन्द कर ढकना लगा दे। ढक्कन के ऊपर पानी रख कर ३ प्रहर तक उसे गरम करे। मूणा के बीच में रखा हुश्रा पारद भरम न होने पर फिर उपयुक्त विधान से पुटपाकः करे। इसके बाद पारदभरम के साथ श्रतीस, मीठाविप, सोंठ, पीपल, विडा, गीलिमर्च, मैनसिल श्रीर गन्धक १२ तोला, पुराना गुढ़ ३२ तोला मिला कर १२ रत्ती (वर्तमान समय में विहित मात्रा ६ रत्ती) मात्रा में प्रयोग करे।
- (१३) तालकेश्वर रस—पारद, सीसक १-१ भाग, हरिताल २ भाग, पहले सीसक श्रीर पारद एक साथ मर्दन कर उनके साथ हरिताल मर्दन करे। १६ भाग गोमूत्र के साथ हरिताल भाण्ड में रुद्ध कर दीपारिन की ज्वाला में रखे। इस प्रकार के शोधित हरिताल को ग्रहण करें। उसके वाद इन ३ द्रव्यों को क्रमानुसार ३ दिन नीवू के रस, दो वार घृतकुमारी के रस, भूजराज के रस श्रीर जिमीकन्द के रस के साथ मर्दन कर सुखा लें।

साधारणतः ९ रत्ती ( श्राजकल ४ रत्ती व्यवहार की जाती है ) मात्रा में श्रदरक रस के साथ इसे सेवन करें। त्वक् का स्पर्शज्ञानाभाव, मण्डलाकृति चिह्न श्रादि इसके द्वारा दूर होते हैं। श्रधिक शुद्धता के लिये गाय के दूध श्रीर चीनी के साथ प्रयोग करें। इसके सिवाय निम्नलिखित श्रनुपानों के साथ इस तालकेश्वर रस का सब प्रकार के कुछरोगों में प्रयोग किया जा सकता है।

उदुरूवर कुष्ठ में — चीनी श्रौर मधु के साथ। पथ्य-मूंग का यूष श्रौर घी के साथ श्रन।

काले रंग के कुछ में — त्रिफला काय के साथ श्रीषध सेवन के वाद नीम श्रथवा श्रदहुर के पंचाग का काथ सेवन करना चाहिए। पथ्य-घी के साथ श्रन ।

गजचर्मकुष्ठ में सिध्म श्रीर विचर्चिका, विसर्प, दहु श्रीर स्फोटक में गुड़

साधारणतः इस श्रोषध के सेवन के बाद ३ भाग चीनी श्रोर १ भाग श्रांवले चूर्ण का सेवन एवं मूंग का यूत्र श्रोर घृत मिश्रित श्रन्न भोजन प्रशस्त है। इसके सेवन के समय दही श्रोर मांस नहीं खाना चाहिए।

- (१४) खगेश्वर रस—पारद, गन्धक, श्रभ्रक प्रत्येक एक पल एकत्र श्रजुंनछाल के रस के साथ मर्दन कर गोला बनाकर सूख जाने पर मूषारुद्ध करे। उसके वाद उसे एक दृढ़ भाण्ड में रुद्ध कर डेढ़ दिन तक पकावे। इस श्रोपथ की मात्रा-३ रत्ती। इसे कुटजरस के साथ सेवन करने पर सफेद कुछ, वी के साथ सेवन करने पर पित्तज कुछ विनष्ट होते हैं। दोष का विचार कर पथ्य ठीक करे।
  - (१५) कुष्टनाशकरस—पारदभस्म ८ माशा, गन्धक ४ पल, चीतामूल ४ पे पल, सोमराजी (वाकुची) वीज चूर्ण २४ पल, गोलिमिर्च चूर्ण १२ पल एक साथ मिलाकर ८ माशा की मात्रा में मधु के साथ प्रातःकाल सेवन करे।
  - (१६) श्रारोग्यवर्द्धनी घटिका—पारद, गन्धक, लौह, श्रभ्रक श्रौर तावा प्रत्येक समभाग, हर्रा, श्रॉवला श्रौर वहेड़ा प्रत्येक ३ भाग, शिलाजीत ३ भाग, शोधित गुग्गुल ४ भाग, चीतामूल ४ भाग एवं इन सबो के बराबर उटकी, इन सब द्रव्यों को चूर्ण कर एक साथ नीम पत्ते के रस में दो दिन तक नर्टन कर बढ़े वेर की तरह गोली तैयार करे। मण्डल कुष्ठ मे यह सबसे श्रिधक उपयोगी है।

- (१७) नारायण रस—पारदभस्म, गन्धक, गुग्गुलु, श्रांवला, हर्रा श्रौर वहें इं अत्येक सम भाग एकत्र कर एरण्डतेल के साथ मिलाकर एक तोले की मात्रा में सेवन करे। रलेष्मज कुछ नाश करने में यह श्रधिक उपयोगी है।
- (१८) मेदिनीसार रस—लोह और ताम्र प्रत्येक तीन पल, एकत्र कर स्वाराज के रस, गोमूत्र और त्रिफला के क्षाय के साथ पृथक् भाव से मर्दन कर तीन वार पुटपाक करे। उसके वाद कांजी के साथ ४ प्रहर (१२ घण्टा) तक पाक कर समपरिमित गन्धक के साथ मर्दन कर वीस वार पुटपाक के नियम से पाक करे। पाक समाप्त होने पर उसके साथ पारदमस्म १ पल, मीठाविष ११ पल (१ पल उचित है) और इनके बरावर त्रिकट चूर्ण मिश्रित करे। घत और त्रिकट चूर्ण के अनुपान के साथ इसका सव प्रकार के कुछ रोग मे प्रयोग किया जा सकता है।
- (१९) धन्वन्तिर रस—पारद, गन्धक, ताम्र, सोहागा, कंकुष्ठमृत्तिका, रक्तचन्दन और पीपल समभाग, एकत्र कर नीवृ के रस के साथ एक दिन मर्दन कर सुखावे। यथायोग्य अनुपान के साथ प्रयोग करे। मात्रा-४ रत्ती।
- (२०) वज्रधार रस—पारदभस्म, हीरकभस्म, अश्रकभस्म और स्वर्ण भस्म प्रत्येक समभाग, हिरताल सर्व समान। इन सव द्रव्यो को सिहजन और धत्रे के रस एवं सिज (सेहुड़) के दूध या आकन्द (आक) के दूध के साथ एक दिन भावित करके सोमराजी (वाकुची) बीज के तेल द्वारा एक सप्ताह तक भावित करे। १ माशे की मात्रा में (व्यवहार्य ४ रत्ती) तालमूली, वाकुची बीज और निसिन्दा (निर्गुण्डी) मूल के चूर्ण, घी और सधु के अनुपान के साथ सेवन करे।
  - (२१) माणिक्य रस-निर्माण विधि-अपची अध्याय में द्रष्टव्य है।
- (२२) महातालेश्वर रस—दूसरी विधि-हरिताल, स्वर्णमाक्षिक, मैन-शिल, पारद, सेंधानमक, सोहागा समभाग, गन्धक, ताम्र प्रत्येक दो भाग, एकत्र कर नीवू रस में ४ दिन मर्दन कर ६ वार भृधरयन्त्र में पुटपाक करे। प्रत्येक पुट में ही ४ दिन तक नीवू रस के साथ मर्दन करना चाहिए। पाक समाप्त होने पर यह पुटपक श्रोषधं ६ पल, ताम्र २ पल, लोह ४ पल, एकत्र कर नीवू के रस में एक दिन मर्दन कर लघुपुट में पाक करे। वाकुची वीज चूर्ण, मधु श्रोर घी के साथ इसे एक मारो की मात्रा में सेवन करे।

- (२३) कुष्ठान्तपर्पटी—पारद १ पल, गन्धक २ तोला, ताम्बा २ तोला, मीठाविष २ तोला एवं सर्वसमान गन्धक एकत्र खरल कर थोड़ा सुखाकर घृताभ्यक्त लोहपात्र में उसे द्रवीभूत करे। फिर उसे केले के पत्ते पर ढाल कर केले के पत्ते में सानी हुई मिट्टी के दबाव से पर्पटी प्रस्तुत करे। गजचम कुछ में इसे ४ रत्ती मात्रा में सोमराजी (वाकुची) चूर्ण के साथ सेवन करना चाहिए।
- (२४) कासीसवद्धरस—पारद ४ पल, हीराकस ४ पल, एकत्र कर श्रर्जन छाल के रस में एक प्रहर मर्दन कर सकोरे के पुट में पाक करे। दह श्रीर किलास रोग में ३ रत्ती मात्रा में सोमराजी (वाकुची) चूर्ण श्रीर मधु के साथ मर्दन कर सेवन करे।
- (२५) सर्चेश्वरस्त—पारद १ भाग, गन्धक ४ भाग, एक प्रहर तक खरल में मर्दन कर उसके साथ अश्रक, लोहा, ताम्र, हिंगुल प्रत्येक १ पल, सोना श्रोर चांदी प्रत्येक ४ माशा, हीरक १ माशा, हिरताल सत्त्व २ पल एकत्र कर मिश्रित करे। वाद में नीवू का रस, श्राङ्क्सा का रस, सीज (सेहुड़) का दूध, श्राकन्द (श्राक) का दूध, विषमुष्टि (कुचला) का रस, करवी का रस, इनके साथ पृथक्-पृथक् १-१ दिन मर्दन करे। बाद में गोलक तैयार कर कपड़े द्वारा लपेट कर बालुकायन्त्र में धीमी श्राग्न से ३ दिन तक पकावे। श्रोषध बाहर निकाल कर श्रोर वारीक चूर्ण कर उसके साथ मीठाविष १ पल श्रोर पीपल चूर्ण २ पल मिश्रित करे। २ रत्ती मात्रा में सोमराजी (वाकुची) बीज चूर्ण, देवदारु श्रीर एरण्ड तेल के साथ व्यवहार्य है। इससे स्पर्शज्ञानराहित्य श्रोर मण्डल कुष्ठ निवृत्त होते है।
- (२६) शिवत्रारि—हीराकस, पारद और गन्धक समभाग लेकर एक साथ तुल्सी के पत्तों के रस के साथ मर्दन करें। नीचे और ऊपर आमरुल (चाड़ेरी) शाक देकर सकोरे में वन्द कर पुटपाक कर चूर्ण करें। शिवत्रकुष्ठ रोग में यह औपध ८ चावल के परिमाण से सेवन करना आरम्भ कर क्रमशः १-१ चावल कर मात्रा-चढ़ा कर अवस्था भेद से ६५ चावल तक वढ़ाना चाहिए। अनुपान— घी और मधु।
  - (२७) चन्द्रप्रभावटी—पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, ताम्र २ भाग, एकत्र मर्दन कर सोमराजी (वाकुची) श्रीर नीम छाल के क्वाथ में भावना दे।

वाद उसे पुटपक्क कर २ रत्ती मात्रा में सोमराजी (वाकुची) के अनुपान के साथ सेवन करने से किलास, अरुण और श्वित्र रोग नष्ट होते हैं।

(२८) उद्याद्त्य रस-पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, एकत्र कर घृतकुमारी के रस में मर्दन कर पिण्ड बनावे। इसके बाद उसे हारही के भीतर रख कर पारद के दुगुने लम्बाई वाले ताम्रपत्र द्वारा ढक दे। श्राच्छादन पत्र के मिलने वाले जगह को बन्द कर उसके चारो श्रोर भरम लगा दे। इसके वाद उसके ऊपर गोवर का जल थोड़ा-थोड़ा कर डालकर तीव श्रिवि में दो प्रहर तक पाक करे। शीतल होने पर समस्त श्रौषध को श्रच्छी तरह से चूर्ण कर उसके साथ काकडुमर, चीतामूल, श्रांवला, हर्रा, बहेड़ा, सोदाल, विडङ्ग श्रोर सोमराजी ( वाकुची ) वीज के काथ द्वारा एक-एक दिन भावना दे। इसकी मात्रा-२ रत्ती । इसके सेवन के बाद निम्नलिखित श्रनुपान करे । यथा-खदिर का काथ श्रोर सोमराजी बीज चूर्ण सम भाग एकत्र कर मृदु श्रानि से पाक कर पिण्ड बनावे। यह पिण्ड १२ माशा मात्रा में त्रिफला के काथ के साथ मिश्रित कर अनुपान करे। इस विधि के अनुसार उदयादित्यरस सेवन करने से तीन दिन या एक सप्ताह बाद ही वदन में स्फोटक उत्पन्न होगा। स्फोटक की शान्ति के लिये नील वृक्ष, गुजा, हीराक्स, धतूरा, गीयले लता, हुड्हुड़ श्रीर मंजिष्ठाको समभाग में पीस कर प्रलेप दे। उपर्युक्त प्रलेप को ७ या इससे कुछ श्रधिक दिन व्यवहार करने पर स्फोटक नष्ट हो जायेंगे। साध्य-श्रसाध्य सव प्रकार के श्वित्र इसके द्वारा विनष्ट होते हैं।

(२९) श्वेतारिस—पारद एक पल श्रीर गन्धक एक पल एकत्र कज्जली करके भूधरयन्त्र में पाक करे। गन्धक जीर्ण होने पर वह पारद १ पल एवं गन्धक ३ पल एक साथ मिश्रित कर नीवू के रस, सोमराजी के क्वाय, चीता मूल के क्वाय, मंगराज के रस, बेर की छाल का क्वाय श्रीर इमली के जल प्रत्येक इन सब द्रवों के साथ एक-एक दिन मर्दन करे। इसके बाद उसे कांच की चिमनी के भीतर रख कर रेती भरे हुए भाण्ड में स्थापन करे एवं दो प्रहर तक पाक करे।

इसकी मात्रा—र रत्ती, काले पान के साथ प्रयोग करे। अनुपानार्थ दहीं के साथ पलाशमूल की व्यवस्था करे। श्रीषध सेवन के फल से रोगी गरम

२० र० चि०

अनुभव करने पर शरीर में तेल मालिश करे। इससे स्फोटक उत्पन्न होने पर त्रिफला, गन्धक, मृहराज, कृष्णितल तेल, कडवो कद्द, भल्लातक तेल श्रीर नीम वीज, समभाग में लेकर २१ बार मृहराज के रस में भावना देकर ४ तोले की मात्रा में घी श्रीर चीनी के साथ प्रातः सेवन करे।

इस श्रोषध के सेवनकाल में जमीकन्द, उड़द, मांस, बैगन, मूंग श्रोर कषाय द्रव्य का परित्याग करें।

कुष्टरोग में प्रयोज्य श्रमुपान—गिलोय का स्वरस, कची हलदी का रस, निसीय चूर्ण संयुक्त त्रिफला का क्वाय। श्रह्मसा मूल, वच, परवल मूल, नीम छाल श्रीर प्रियङ्क की छाल का क्वाय। मिलिशिदि गण का क्वाथ। कालकासुन्दर का रस, नीमछाल का क्वाथ या पञ्चनिम्ब का क्वाथ। गोमूत्र श्रीर हल्दीचूर्ण, विडङ्ग चूर्ण, सोमराजीबीजचूर्ण, नीम पत्ते का चूर्ण, खिदरसार, दारुहरिद्रा, गुरुच, कुटकी, सोंदाल, श्राकनादि (पाठा), सोमराजी (वाकुची) बीज इनके क्वाथ। चीतामूल, कृष्णवेत, शोधित मल्लातक, सप्तपर्ण (छितवन) छाल का क्वाथ। चिरायता श्रीर श्रनन्तमल का क्वाथ श्रादि।

#### कुष्ठ रोग की चिकित्सा के लिये विभिन्न योगावली—

वातजकुष्ठ में —काले अभ्रक अथवा तांबे का पिण्ड गन्धक के साथ पाक कर रोग के प्रकोप और रोगों के बल के अनुसार यथाविधि प्रयोग करने पर वातज कुष्ठ का उपशम होता है। साधारणतः अभ्रक की मात्रा—१ रत्ती और तांबे की मात्रा—२ रत्ती।

पितजकुष्ठ में — काले श्रभ्रक का गोलक घी श्रीर गन्धक के साथ पाक कर उसके साथ सोंठ, पीपल, गोलिमर्च, भेलवा, विडङ्ग, दारुचीनी, मोथा, सोन्दाल श्रीर मीठाविप प्रत्येक एक भाग, जीरा का चूर्ण ३ भाग, जारित स्वर्ण ५ भाग मिश्रित कर वकरी के मूत्र से मर्दन करे। किर वेर की गुठली की तरह गोली वनाकर एकादिकम से २१ दिन तक सेवन करने पर पित्तज कुष्ठ मे-विशेष उपकार होता है।

श्लेष्मजकुष्ट में स्वर्ण और अश्रक का पिण्ड तेल और गन्धक के साथ पिक कर उसके साथ मीठा विप, सोठ, पीपल, गोलिमर्च, सोथा, विडङ्ग और गर्चानी प्रत्येक १ भाग और चीतामूल ३ भाग मिश्रित कर वकरी के मूत्र के साथ गेंटरर १ रत्ती मात्रा में सेवन करे।

तिदोषज कुष्ठ में —तीचण लोह, अश्रक और स्वर्ण का पिण्ड तेल और गन्धक के साथ मर्दन कर उसके साथ हरिताल, सोनामाखी, राखालशशा (इन्द्रा-यण) का मूल, मेलवा, गन्धवोल, आकनादि (पाठा) मूल, मीठा विष, शृङ्गी विप, सोहागा, मुलहठी और निसिन्दा (निर्गुण्डी) प्रत्येक १ भाग मिश्रित कर अदरक के रस में मर्दन करे। फिर वेर के समान गोली बनाकर छाया में सुखा कर प्रयोग करे।

### विभिन्न प्रकार के जुद्र कुष्ठ में—

- (१) नीवू के रस के साथ कौड़ी पीसकर धूप में पका ले। बाद में उसके साथ श्रापामार्ग का क्षार, घण्टापारुल का क्षार, मेषश्वा का रस, पारद एवं जवाखार, सजीखार, सोहागा, हलदी, दारुहलदी, सोंठ, पीपल, गोलिमर्च श्रीर ताम्वा मिश्रित करे। यह श्रानेक प्रकार के क्षद्र कुछों का नाशक है।
- (२) सत्तू के साथ चतुर्थाश परिमित ताम्रभस्म मिश्रित कर एवं उसमें पर्पटीरस मिला कर लेपन करने से चर्मकुष्ठ का उपशम होता है।
- (३) काटानट, गिलोय, नीलगृक्ष, कुडा, कृष्णतिल, मधु, करवी, मीठा विप, गन्धक और कज्जली सम परिमाण में एक साथ मर्दन कर लेपन करने से गजचर्म नामक कुछ विनष्ट होता है।
- (४) पारद, गन्धक, सोनामाखी, ताम्र, शिलाजीत श्रीर श्रम्लवेतस तुल्य परिमाण में लेकर उसे श्रष्टमांश गुड़, घृत एवं मधु के साथ प्रयोग करने पर शतारु नामक कुछ का प्रशमन होता है।
- (१) सोनामाखी, गन्धक, कान्तलीह, तीव्ललीह, श्रश्रक समभाग, पारद दो भाग, सत्तू दशमाश एकत्र कर मिल्लिष्ठादि काथ के साथ मर्दन कर वालुकायन्त्र मे पाक करने से कृष्णमाणिक्य सदश जो भस्म प्रस्तुत होता है, उसे उपयुक्त मात्रा में प्रयोग करने से सब प्रकार के कुछ विनष्ट होते हैं।
- (६) मिजिष्ठा, मोथा, देवदार, कुड़ा, खिदर, हर्रा, श्रांवला, वहेबा, सोमराजी (वाकुची), श्राकनादि (पाठा), वच, सोंदाल, खेतपापड़ा, कुटकी, मुलहठी, मूर्वा, हल्दी, वेलाडुमर, धत्रा, वासक (श्ररुसा), नोम, विडङ्ग, गुरुच, कुड़ची, ककोली श्रीर दुरालभा (जवासा) ये सब द्रव्य कुष्ठनाशक हैं।
- (७) सीज की लेई श्राधा सेर, दूध ४ सेर, नारियल दूध ४ सेर, गन्धक, हल्दी, पारद प्रत्येक २ तोला एकत्र मिश्रित कर तेज धूप की गर्मी में पाक करे।

स्तुह्यादि नामक इस तेल को लगाने से किटिम श्रोर श्रन्यान्य श्रानेक प्रकार के कुछ प्रशमित होते हैं।

(८) मूली का क्षार जल श्रीर श्रदरक रस के साथ समुद्रफेन या संधानमक श्रीर गन्धक पीसकर लेपन करने से सिध्स कुछ श्रारोग्य होता है।

### व्रणशोध-चिकित्सा

व्रणगजांकुश — हिंगुल, गेरूमिट्टी, रसाजन, मनःशिला, गुग्गुलु, पारट, ताम्र, गन्धक, लोहा, सेधानमक, श्रातइच ( श्रतीस ), चव्य, शरपुंखा (सरफोका), जवाइन, गजिपपली, विडङ्ग, वरुण, श्राकन्द ( श्राक ), गोलिमर्च, हर्री श्रीर धूप एकत्र मधु के साथ मर्दन कर ६ रत्ती की गोली बनावे। श्रनुपान-घी-मधु।

कर्कीटाद्यतेल—कडुश्रा तेल ४ सेर, जल १६ सेर, कल्कार्थ-वनकुकरोधा, श्राकनादि (पाटा), कण्टकारी, कुडा, िमड़े, मोरटालता, हरिताल, गन्धक, सेंधा नमक, मिड़ा, करवीमूल, हल्दी, हिगु, तुलसी, वच श्रीर सिन्दूर समभाग मिला कर १ सेर पानी के साथ पीसकर तेल में डाल कर यथाविधि तेल पकाले। इसका प्रलेप देने से दुष्ट व्रण श्रारोग्य होता है।

अणरा चस तेला— कडुआ तेल आधा सेर, कलकार्थ-कज्जली, हरिताल, सिन्दूर, मैनशिल, लहसुन, विष और ताम्र प्रत्येक २ तोला सूर्य के ताप से पाक कर ले। नाना प्रकार के जण रोगों में इसके प्रयोग से चमत्कारजनक फरू मिलता है।

रक्तदुष्टि प्रमृति कारणों से उत्पन्न व्रण में या रक्तज व्रण में श्रवस्थानुसार विचार कर माणिक्य रस, शोधित गन्धक श्रादि वातरक्त, कुष्ठ एवं विसर्प श्रादि रोग की विधि के श्रनुसार श्रोषध प्रयोग करे।

- (१) खट्टे नीबू का मूल, केलेकड़ा, सोठ, देवदार, रास्ना श्रोर गनियारी इन सब द्रव्यों का प्रलेप देने से शोथ विनष्ट होता है।
- (२) चातजशोध में—लालचन्दन श्रौर मुलेठी कांजी के साथ पीस कर किंचित् घी मिला कर प्रलेप दे।
- (३) पित्तज्ञरोथ में दूर्ना, नलमूल, पद्मकाष्ठ, नागेश्वर, खसखस, सुगन्धवाला श्रोर पद्म इनका प्रलेप दे।

(४) श्रागन्तुज श्रोर रक्तज ज्ञणशोध नें—बरगद, यज्ञडुमर, श्रश्वत्थ, पाकर, श्रम्लवेतस, इनका छाल पीस कर उसे घृताभ्यक्त कर प्रलेप दे।

श्लेप्मजशोथ सें—वनजवाइन, सजिष्ठा, सरलकाष्ठ, अश्वगन्धा, आकनादि (पाठा), गाड्लश्ट्रही इनका प्रलेप व्यवहार्य है।

सभी प्रकार के व्रणशोध में — पुनर्नवा, देवदार, सोंठ, सिहजन वीज और सफेद सरसो एक साथ कांजी में पीसकर थोड़ा गर्म कर प्रलेप दे। कठिन शोध की पकाने के लिये निम्नोक्त प्रक्रिया द्वारा पुलिटश वांधे। यथा: -शणवीज, मूली का वीज, सिहजन वीज, तिल, सरसो, मिसना, उत्तम रूप से चूर्ण कर एक साथ मिलाकर जल में पीसकर और आग पर गरम कर शोध के ऊपर प्रलेप दे।

पके हुए शोथ को फोड़ने के लिये—निम्नलिखित योगों में से किसी एक का प्रयोग करे। यथाः—करोदी, भेलवा, दन्ती, चिरायता, करवी, कपोत, फाक या शकुनी का बीट।

त्रणपीडित स्थान की सवर्णता लाने के लिये—शोधित हरिताल, मनःशिला, मिलाला, लाख, हल्दी, दारुहल्दी एकत्र पीसकर घी के साथ प्रलेप लगाने।

वण त्रौर नाडीवण में अनुपान का प्रयोग विसर्प और विस्फोट रोग के समान है।

### नाडोच्चण चिकित्सा

इसकी चिकित्सा विधि पूर्वीक्त व्रणराोय के समान है।

व्रणगजांकुश, माणिक्य रस श्रथवा शोधित गन्धक २ रत्तो की मात्रा में घी त्रीर मधु के साथ सेवन करने से उत्तम फल प्राप्त होता है।

वृहत् व्रणराचसतेल कडुआ तेल ४ पल, गाय का घी २ पल, कलकार्य-चीता का पत्र १ पल एवं आकन्द (आक) के पत्ते का रस ३ सेर एकत्र पाक कर तेल को छान कर गरम अवस्था में ही उसमें आधा तोला पारद और १ तोला गन्धक की कज्जली एवं सिन्दूर, हरिताल, मैनशिल, हल्दी, गेक् मिट्टी और सफेद सरसों प्रत्येक १ तोला इनका प्रचेप देकर पाक सम्पन्न कर ले। प्रयोग करने के पहले गरम कर लेना चाहिये।

गावभेरेण्डा की लेई श्रौर खदिर एक साथ मिलाकर लगाने से नाडीवण श्रारोग्य होता है। हापरमाली की लेई प्रयोग करने पर भी नाडीवण सूख जाता है। गुग्गुल त्रिफला श्रौर त्रिकटु समभाग एक साथ घी के साथ मर्दन कर प्रलेप लगाने से नाडीव्रण नष्ट होता है।

## विसर्प चिकित्सा

#### वातज विसर्प में—

कालाग्निरुद्रस्य—पारद, श्रभ्रक, कान्तलोह भस्म, गन्धक श्रीर सोना माखी ये सब द्रव्य एक साथ वनकाकरोल (बांभ्रककोड़ा) के रस में १ दिन मर्दन कर वनकांकरोल के कन्द के भीतर रख दे। वाद में मृत्तिकालिप्त कर भूधरयंत्र मे पुटपाक करे। शीतल होने पर उक्त श्रीषध के साथ दशमांश विष् मिश्रित कर ले। मात्रा-४ रक्ती। श्रनुपान—पीपल का चूर्ण श्रीर मधु।

#### कफज विसर्प में—

सर्वेश्वररस—जारित ताम्र, अश्रक श्रोर गन्धक प्रत्येक एक पल, लोह भस्म श्रोर पारद प्रत्येक २ तोला। इन सब द्रव्यों को सीज की लेई, श्राकन्द (श्राक) को लेई, एरण्डमूल, नीबू श्रोर खसखस के रस या क्वाथ के साथ मर्दन कर २ दिन वालुकायंत्र में पाक करे। बाद में पीपरामूल २ तोला श्रोर मीठा विष ४ माशा मिश्रित करे। मात्रा—१ रत्ती। श्रमुपान-नीम छाल श्रोर खदिरकाष्ट्र का क्वाथ।

#### पित्तज विसर्प सें—

खनेश्वर—पारद, गन्धक श्रौर श्रश्नक प्रत्येक १ पल एकत्र श्रर्जुन छाल के रस के साथ मर्दन कर गोली तैयार करे एवं सूख जाने पर मूषारुद्ध कर उक्त सूषे को दूसरे एक मजबूत भाण्ड मे रुद्ध कर डेढ़ दिन तक पाक करे। मात्रा— २ रत्ती। श्रनुपान—गुरुच श्रौर नीम को छाल का काथ श्रौर मधु।

#### त्रिदोषज विसर्प में—

माणिक्यतिलक रस — पारद, गन्धक, सोनामाखी, हरिताल, कान्तलोह, तीच्ण लोह, हिं कुल, मुलहठी श्रीर कुड़ा सममांग एक साथ सतावर के रस श्रीर मिं श्रीदि गण के काथ के साथ ३ दिन मर्दन कर सुखाकर मूषारुद्ध करे। दो दिन वालुकायंत्र में पाक कर श्रीषध को निकाल ले। इसकी मात्रा-२ रत्ती। श्रानुपान-श्रामृतादि कषाय।

विसर्पनाशक योगावली—कान्तलोह, तीक्णलोह, गन्धक, अन्नक, मीठाविप और सोनासाखी प्रत्येक १ भाग, इन सब द्रव्यों के साथ पारद १ भाग एकत्र मर्टन करके कडुवा कुकरोंधा की जड़ के भीतर रख कर पुटपाक कर ले। मात्रा-२ रत्ती।

मोथा, नीमछाल श्रोर परवल के पत्तों का काथ घी के साथ सेवन करने से श्रयचा चिरायता, श्ररूसा की छाल, कुटकी, परवल का पत्ता, त्रिफला, लालचन्दन श्रोर नीमछाल का काथ सेवन करने से विसर्प प्रशमित होता है।

शिरीपछाल, मुलेठी, तगरपादुका, लालचन्दन, इलायची, जटामांसी, हल्दी, दारुहल्दी, कुड़ा श्रोर सुगन्धवाला ये सब द्रव्य पीस कर घृताभ्यक्त कर प्रलेप देने से विसर्प निवृत्त होता है।

### विस्फोट-चिकित्सा

सारिष्य रस-निर्माण विधि अपची अध्याय में देखिये।

वणारिगुग्गुलु—रससिन्दूर १ पल, पीपल १ पल, गुग्गुल ४ पल, त्रिफला ३ पल एकत्र मिश्रित कर श्राधा तोला से १ तोला की मात्रा में प्रयोग करे।

परवल का पत्ता, त्रिफला, नीम छाल, गुरुच, मोथा, लालचन्दन, मूर्वी, कुटकी, श्राकनादि (पाठा), हल्दी श्रीर दुरालमा (जवासा) इनका क्वाथ सब प्रकार का विस्फोट नाशक है।

गुरुच और नीम छाल का काथ अथवा इन्द्रयव और खिदर लक्ड़ी का काथ सेवन करने पर भी विस्फोट आरोग्य होता है।

नीलोत्पल, चन्दन, लोध, खसखस और श्यामालता इन सव द्रव्यों को जल में पीस कर उसके द्वारा प्रलेप देने से दाह और स्फोटक नष्ट होता है।

व्रण, नाडीव्रण, विसर्प और विस्फोट रोग में प्रयोज्य अनुपान

कफज विसर्प में नीमछाल का काथ। खदिरकाष्ठ, मोथा, अहसा की छाल, देवदारु और सादाल का काथ। गुरुव, अहसा, परवल का पत्ता, नीमछाल, त्रिफला, खदिरसार और सोदाल का काथ।

पित्तजिसप में — परवल का पत्ता, कुटकी और त्रिफला का काय। विरायता और धनिया या धनिया और परवल के पत्ते का काय। परवल का पत्ता, त्रिफला, नीमछाल, गुरुच, मोथा, लालचन्दन, मुर्चा, कुटकी, आकनादि (पाठा),

हल्दी श्रीर दुरालभा (जवासा) का काथ । नीम की पत्ती, हल्दी, दारुहल्दी, श्रह्सा, मोथा श्रीर परवल के पत्ते का क्वाथ ।

वातजिसपं श्रोर विस्फोट में —स्वल्प पंचमूल का क्वाय। दशमूल का क्वाय। दशमूल का क्वाय। द्राक्षा, गाम्भारीफल, त्रिफला, सोदालमजा, एरण्डवीज श्रोर निसोय मूल इनका क्वाय। गुरुच, सुगन्धयाला, रास्ना, दारुहल्दी, खसखस, इन्द्रयव श्रोर खदिर लकड़ी इनका क्वाय।

त्रिद्रोषज्ञिक्सर्प सें —िचरायता, नीमछाल, मुलेठी, मोथा, ग्रहसे की छाल, परवल का पत्ता, त्रेत्रपापड़ा, खसखस, त्रिफला श्रोर इन्द्रयव का क्वाथ। गुरुच, मोथा, लालचन्दन, मुर्वा, कुटकी, श्राकनादि (पाठा), हरिद्रा श्रोर दुरालभा (जवासा), इनका क्वाथ। त्रिफला, गुरुच श्रोर नीमछाल का क्वाथ। गुरुच, श्रहसा परवल का पत्ता, मोथा, छतिवन की छाल, खदिर लकड़ी, काले वेंत का मूल, नीमपत्ता, हल्दी श्रोर दारुहल्दी इनका काथ।

### क्रिधिरोग-चिकित्सा

कफजिकिमि —

किसिकालानल रस—विडंड २ पल, मीठा विष १ पल, लोह श्राधा पल, लोहे का श्राधा पारद एवं पारद का समपरिमाण गन्धक एकत्र वकरी के दूव में पीसकर ६ रत्ती की गोली वनावे। श्रानुपान-धनिया श्रीर जीरे का चूर्ण।

क्रिसिमुद्धर रस-पारद १ तोला, गन्धक २ तोला, वन जवाइन ३ तोला, विडङ्ग ४ तोला, कुचिला ५ तोला, पलाश बीज ६ तोला, एकत्र मर्दन कर ६ रत्तो को गोली तैयार करे । अनुपान-पालिधा मदार का रस, आनारस के नरम पत्तों का रस और मधु। श्रोषध सेवन के बाद मोथा का क्वाथ सेवन करे।

किमिरोगारित्स—रस, गन्धक, लोह, गोलमिर्च, विष, धाईफूल, हरी, वहेड़ा, श्रावला, सोठ, मोथा, रसाज्ञन, पीपल, गोलमिर्च, मोथा, श्राकनादि (पाठा), सुगन्धवाला श्रोर बेलसींठ (सूखा बेल मज्जा) समभाग में लेकर भृज्ञराज के रस में मर्दन कर ७ वार भावना देकर ६ रत्ती की गोली बनावे। श्रनुपान-मोथा का क्वाथ।

कीटमर्दन रस—पारद १, गन्धक २, जवाइन ४, विडङ्ग ८, कुचिला १६ ग्रीर वामन हाटी (भागी) का वीज ३२ भाग चूर्ण कर एकत्र कर ले।

मात्रा-२ त्राना से ४ त्राना भर तक। त्रनुपान-मधु। वाद में मोथा का क्वाथ सेवन करे।

किसिहर्स्न-पारद, गन्धक, मैनशिल, जवाइन, इन्द्रयव और पलाश वीज समभाग में एकत्र कर घोषालता के रस के साथ मर्दन कर १ रत्ती की गोली वनावे। अनुपान-शालपणीं का रस या क्वाथ और चीनी।

क्रिसिउवर सें-विडङ्ग लोह—पारद, गन्धक, गोलिमर्च, जायफल, लौंग, पीपल, हरिताल, सोंठ और वङ्ग प्रत्येक समभाग, इन सवी के बरावर लोह एकत्र मर्दन कर फिर सवी के वरावर विडङ्ग चूर्ण मिश्रित कर पालिधा के रस में मर्दन कर ४ रत्ती की गोली वनावे। अनुपान—चूने का पानी और मिगोये हुये सौंफ का जल।

#### चहिर्मलोत्पन्न क्रिमि-

साद्वादि वटी—लक्षा, भेंलवा, नवनीत खोटि, श्वेत श्रपराजितामूल, श्रर्जुनफल, श्रर्जुनफूल, विडङ्ग, सोनामाखी श्रोर गुरगुल समभाग मे मधु के साथ मर्दन कर गुड़िका तैयार करे। मात्रा-एक श्राना-दो श्राना भर।

क्रिमिविनाशरस—पारद, गन्धक, अभ्रक, लोह, मनःशिला, धाईफूल, श्रीफला, लोध, विडङ्ग, हल्दी और दारुहलदी समभाग में एक साथ लेकर अदरक रस में ७ वार भावना देकर चने के वरावर गोली बनावे। अनुपान—वाकुची वीज चूर्ण।

#### रक्तज क्रिमि-

क्रिमिकोछानलरस—पारद, गन्धक, वङ्ग, हरिताल, कोड़ीभस्म, मनःशिला, काले रंग का कांच (शीशा), सोमराजी (वाकुची), विडङ्ग, दन्तीवीज, जयपालबीज, सोहागा, चीतामूल प्रत्येक २ तोला, सिज (सेंहुड़) के क्षार के साथ मर्दन कर उड़द के आकार की गोली बनावे। अनुपान—वाकुची चूर्ण और मधु।

पारिभद्रस—मूर्टिछत पारद, श्रावला श्रौर नीवू समभाग में लेकर खदिर

के क्वाथ में १ दिन मदन कर ४ रत्ती परिमाण में सेवन करे।

कनकसुन्द्रस्य—स्वर्णभस्म १ भाग, अअक १ भाग और गन्धक २ भाग एकत्र मर्दन कर पिण्ड वनावे और गजपुट में पाक करे। वाद में औपध निकाल कर उसके साथ सींठ, पीपल, गोलमिर्च, भेलवा, विडङ्ग, पारद, कांकड़ाश्ट्रहों श्रीरे देवदार प्रत्येक एक भाग एवं मीठाविप है भाग मिलाकर वकरी के गृत्र के साथ मर्दन कर १ रत्ती की गोली वनावे।

श्रामितुण्डीरस्य—पाग्द १ भाग, गन्धक २ भाग, वनजवादन २ भाग, विडङ्ग ४ भाग, ब्रह्मवीज (पलाशवीज) ५ भाग, कुचिला १ भाग एकत्र मधु के साथ मर्दन कर एक श्राने की मात्रा में मोथा के क्षाय के साथ सेवन करे।

कीटमर्द रख-पारद ४ माशा, गन्धक ४ माशा, ताम २ माशा एकत सागोन के मूल, वल्कल, पत्ता, फूल छोर फल के रस के साथ निरन्तर एक दिन मर्दन कर स्वर्णक्षीरी के काथ के साथ फिर एक दिन मर्दन करे। उसके बाव लखुपुट में पाककर ५ जयपाल बीज का चूर्ण उसके साथ मिला ले। मात्रा-२ रत्ती। अनुपान—गाय का घीं।

क्रिमिनाशक योगावली—विडङ्ग चूर्ण मधु के साथ लेहन करने सं त्रामाशय और पाकाशयस्थित क्रिमि विनष्ट होता है।

पालिधामदार का रस अथवा आनारस के नरम पत्ते का रस अथवा घेंद्रपते का रस मधु के साथ सेवन करने पर किमि नष्ट हो जाता है।

पलाश बीज, इन्द्रयव, विडङ्ग, नीम छाल श्रीर चिरायता का चूर्ण समभाग में गुड़ के साथ सेवन करने पर किमि विनष्ट होता है।

शोधित पारद, इन्द्रयव, वनजवाइन, मनःशिला श्रौर पलाशवीज समभाग एक साथ घोषालता के रस में मर्दन कर सेवन करे, िकर मूषाकर्णी (इन्दुरकानी) का रस चीनी के साथ श्रनुपान करे। इससे रक्तजिक्किम विनष्ट होता है।

बहिर्मलजात क्रिमि या जुआं—धतूरे का पत्ता या पान का रस कपूर के साथ मर्दन कर प्रलेप देने से सिर का जुआं विनष्ट होता है।

क्रिमिरोग में प्रयोज्य अनुपान—पुरीषज और कफज क्रिमि रोग में विडङ्ग चूर्ण, श्रानारस के नरम पत्ते का रस, बाकुचोबीज चूर्ण, पालिधामदार का रस, श्रांसशेडड्ग पत्ते का रस, जवाइन चूर्ण, शालिश्च रस, पलाशयीज, कमलागुंडि, मूषाकर्णी, घेंद्रपत्ते का रस, खजूर पत्ते का काथ, चिरायता श्रोर नीमछाल का काथ।

वहिर्मलोत्पन्न क्रिमि में कच्ची हिन्दी का रस, नीमछाल का काथ, नालिता भिगोया हुत्र्या जल, नीबू का बीज, बेल के पत्ते का रस, गोमूत्र एवं रक्तज किमि में कुष्ठरोगोक्त श्रनुपान प्रयोग करे।

# शिरोरोग-चिकित्सा

#### वातज सिर के रोग में—

चृहत्वातिचिन्तामणि—स्वर्ण ३ भाग, रौष्य २ भाग, ग्रभ्र २ भाग, लौह ५ भाग, प्रवाल ३ भाग, सुक्ता २ भाग, रससिन्दूर ७ भाग एकत्र घृतकुमारी के रस में मर्दन कर २ रत्ती गोली वनावे। श्रनुपान—सतावर का रस।

चतुर्मुख रस—पारद, गन्धक, लोह और अभक प्रत्येक १ तोला, सोना २ माशा एकत्र घतकुसारों के रस में मर्दन कर एरण्ड के पत्ते में लपेट कर २ दिन तक धान के ढेर के भीतर रख दें। बाद में वाहर निकाल कर २ रत्ती की गोली बनावे। अनुपान—त्रिफला थिगोया हुआ पानी, सतावर का रस या बाह्यी का रस।

सूर्योदयरस—रससिन्दूर, अधक, लोह, ताम श्रीर गन्धक समभाग एकत्र सीज की लोई में मर्दन कर ६ रत्ती की गोली वनावे। श्रनुपान-सतावर का काथ।

पित्तज सिर के रोग में—योगेन्द्ररस, वृहत्वातिचन्तामणि श्रौर चिन्ता-मणिचतुर्भुख का प्रयोग करना चाहिये।

योगेन्द्रस्य—रससिन्द्र १ तोला, स्वर्ण, लोह, श्रभ्रक, मुक्ता श्रीर वङ्ग प्रत्येक है तोला, इन सवकी घृतकुमारी के रस मे भावना देकर ३ दिन धान के देर के भीतर रख कर २ रत्ती की गोली तैयार करे। श्रमुपान—त्रिफला का जल श्रीर मधु श्रथवा सतावर का रस।

चिन्तामणि चतुर्मुख रसिसन्दर २ तोला, लोह १ तोला, अश्रक १ तोला, सोना आधा तोला एकत्र घृतकुमारी के रस में मर्दन कर एरण्ड के पत्ते में लपेट कर धान के ढेर के भीतर रख दे। ३ दिन वाद उसे वाहर निकाल कर २ रत्ती की गोली बनावे। श्रनुपान जिफला का जल।

### त्रिदोषज सिर के रोग में—

त्रेलोक्यिक्तामणि—हीरक, स्वर्ण, मुक्ता, लोह समभाग, श्रश्न भरम सर्व समान श्रीर श्रश्न भस्म के वरावर रसिसन्दूर एकत्र घृतङ्गारी के रस में मर्दन कर १ रत्ती की गोली वनावे। श्रनुपान-नाह्मी या सतावर का रस श्रीर मधु। श्चिर:शृलादिबज्ररस—पारद, गन्धक, लौह, तेउड़ी (निशोध) मूल प्रत्येक १ पल, गुग्गुल ४ पल, त्रिफला चूर्ण २ पल, कुड़ा, मुलहठी, पीपल, सोठ, गोक्षर, विडङ्ग ग्रौर दशमूल प्रत्येक १ तोला। दशमूल के क्वाध में भावना देकर वी से मर्दन कर ६ रत्ती की गोली तैयार करे। श्रनुपान—बकरी का दूध।

रक्तज सिर के रोग में—वृहत् वातिवन्तासिण, योगेन्द्ररस श्रीर त्रैलोक्य-विन्तासिण प्रयोग करना चाहिये।

स्यज्ञ स्तिर के रोग में — चिन्तामणि चतुर्मुख, योगेन्द्ररस, वृहत् चन्द्रोदय मकरध्वज, त्रैलोक्यचिन्तामणि त्रौर श्रीमहाल स्मीविलास रस त्रादि त्रौषध प्रयोग करना उचित है।

दृहत् चन्द्रोह्यमकरध्यज —शोधित पतला स्वर्णपत्र १ पल, पारद ८ पल अच्छी तरह से मर्दन कर उसके साथ गन्धक १६ पल मिलाकर कज्जली बनावे एवं लाल कपास के फूल और घृतकुमारी के रस में मर्दन कर सुखा ले। बाद में समतल वोतल में रखकर वोतल के मुख को ढक्कन से बन्दकर बालुकायन्त्र में पाक करे। वाद में क्रमशः बढ़ती हुई अप्ति में लगातार ३ दिन ज्वाला देकर गलदेश में संलग्न मकरध्वज को निकाल ले। यह औषध १ पल लेकर, करूर जायफल, पीपल, लौग प्रत्येक ४ पल और मृगनाभि आधा तोला एक साथ मर्दन कर ले। मात्रा-२ रत्ती। अनुपान—सतावर का रस।

श्रीमहालदमीविलास रस— श्रश्नक ८ तोला, पारद, गन्धक प्रत्येक १ तोला, वङ्ग, २ तोला, रौप्य, स्वर्ण प्रत्येक १ तोला, ताम्र श्राधा तोला, कपूर, जावित्री, जायफल प्रत्येक ४ तोला, विद्धड़क वीज, धतूरे का बीज प्रत्येक २ तोला, स्वर्ण १ तोला एकत्र पान के रस में मर्दन कर २ रत्ती की गोली बनावे।

किमिज सिर के रोग में —शिरोरोगान्तक रस श्रीर शिरःश्रूलादिबज़ रस प्रयोग् करना चाहिये।

शिरोगान्तकरस—जारित पारद, अध्रक, तीद्दगलोह और कान्तलोह, ताम प्रत्येक समभाग एकत्र सीज की लेई में एक दिन मर्दन कर ४ रत्ती नात्रा में गोली वनावे।

सूर्यावर्त्त में —सूर्योदय रस श्रौर शिरोरोगान्तक रस प्रयोग करे। श्रमन्तवात में — यहत् वातिचन्तामणि, रसचिन्द्रका, महालक्मीविलास रस, पर्यिन्दु तेल, महानारायण तेल का प्रयोग करे। श्रद्धीवनेदक में —रसचिन्द्रका श्रीर महालक्ष्मीविलास रस प्रयोग करे। विडङ्ग श्रीर काली तिल्ली को पीस कर क्पाल में प्रतेप दे। षड्विन्दुतैल का नस्य ले। मध्यम नारायण मालिश के लिए दे।

रांखक में — त्रैलोक्यचिन्तामणि, बृहत् वातचिन्तामणि त्रौर महालद्मी— विलास रस एवं महानारायण, हिमसागर, महादशमूल आदि तेल का प्रयोग करे ।

## जिरोरोग नाजक योगावली चिकित्सा

चातप्रधान सिर के रोग में—कुडा श्रीर एरण्डमूल को कांजी से पीस कर प्रलेप दे।

पित्त प्रधान सिर के रोग में—पद्ममूल, मृणाल, शालूक, लालचन्दन श्रोर पद्मकेशर एक साथ घी के साथ पीस कर प्रलेप दे।

कफ प्रधान सिर के रोग में—पीपल, मोथा, सोठ, मुलेठी, शुलफा, नीलोत्पल श्रौर कुडा जल में पीस कर प्रलेप दें।

त्रिकटु, कुडा, हल्दी, जीरक श्रीर श्रश्वगन्धा इनके क्वाथ द्वारा नस्य लेने से सव प्रकार के शिरोरोग विनष्ट होते हैं।

हुडहुड़ का वीज हुड़हुड़ के रस में पीस कर प्रलेप करने से सूर्यावर्त्त श्रीर श्रद्धावभेदक शान्त होता है।

छिल्का रहित काली तिल्ली और खसखसं पीस कर मधु और सेंधानमक के साथ प्रलेप करने पर भी अर्द्धावभेदक शान्त होता है।

शंखक रोग में—दारुहल्दी, हल्दी, मंजिष्ठा, नीवृ का पत्ता, खसखस श्रीर पद्मकाष्ठ एकत्र जल में पीस कर शंख देश में प्रलेप करे। शतावर, विना छिल्का के काला तिल, मुलेठी, नीलोत्पल, दूर्वा श्रीर पुनर्नवा ये सव द्रव्य वकरी के दूध या जल के साथ पीस कर प्रलेप करे।

वरगद श्रीर श्रश्वत्थ श्रादि क्षीरी वृक्षों की छाल को पीस कर मस्तक में प्रलेप लगाने से शंखक रोग नष्ट होता है।

क्रिमिज सिर के रोग में — त्रिकटु, करोंदा वीज श्रोर सहजन का वीज वकरी के मूत्र में पीस कर उसका नस्य ले। श्रपामार्ग वीज, त्रिकटु, हल्दी श्रोर विडङ्ग चूर्ण एकत्र मिलाकर वकरी के मूत्र में पीस कर उसका नस्य लेने से ही िकमिज सिर के रोग का उपशम हो जाता है।

सिर के रोग में प्रयोज्य अनुपान-

वातज सिर के रोग में - शतमूल (शतावर) का रस, ब्राह्मी का स्वरस, त्रिफला भिगोया हुय्रा जल, थोड़ी मात्रा में पंचमूल का क्वाय।

पित्त प्रधान सिर के रोग में — त्रिफला भिगोया हुआ जल, आंवला भिगोया हुत्रा जल, मुलेठी श्रोर लालचन्दन का काथ, लालचन्दन, खसखस, पग्नकेशर, सुलेठी, वला श्रोर द्राक्षा इनका काथ।

कफ प्रधान सिर के रोग में - त्रिकटुचूर्ण, गरम जल, श्रदरक का रस, वीपलचूर्ण, भङ्ग के वीज का चूर्ण श्रादि।

रक्तज सिर के रोग में — पित्तज सिर के रोग का श्रनुपान प्रयोग करे। च्यज सिर के रोग में - शतमूल ( शतावर ) का रस, बला का रस, भीमराज का रस, त्रांवले का स्वरस, मुलेठीचूर्ण, त्राश्वगन्धा चूर्ण, गोरक्षचाकुले के - नूल का चूर्ण, दशमूल का काथ और गव्य घृत।

# आँख के रोग की चिंकित्सा

सर्वचूर्णसमलौह—हर्रा, त्रावला, बहेड़ा, दालचीनी, मुलेठी १ भाग, इन सबके वरावर लोहे का चूर्ण एकत्र अच्छी तरह से मिला ले । मात्रा-३ रत्ती । श्रमुपान-घी श्रोर मधु, सायंकाल में सेवन करे । इसके सेवन से तिमिर, काच, ऋर्धुद, पटल श्रीर शुक्ल श्रादि चक्षुरोग विनष्ट होते है ।

पडङ्ग रस-पारद, गन्धक, हल्दी, सौराष्ट्रमृत्तिका, हरी, आवला, बहेबा, छुटकी, प्रियज्ञ, गुरगुल, दन्ती, घोषा, गुरुच, सुगन्धवाला, समभाग श्रच्छी तरह से नूर्ण कर एरण्डतेल के साथ मदन कर ४ रत्ती की मात्रा में सेवन करे। वाताधिक चक्षुरोग शान्त होता है।

नयनामृतलौह—त्रिकटु, त्रिफला, कुकरोंधा, शटी (कचूर), रास्ना, सोंठ ितमिस, नीलोत्पल, काकोली, मुलेठो, वला, केशुते, कण्टकारी, बहती (बड़ी कटेरी) लीह थीर श्रम्रक प्रत्येक एक पल, एकत्र त्रिफला के काथ श्रीर मृद्धराज के रस यपालम ने ७ वार भावना देकर ४ रत्ती की गोली वनावे। श्रनुपान-घी श्रौ नानु या गरम जल।

तिमिरहरलोह—त्रिफला, पद्मकाष्ठ, मुलेठी चूर्ण समभाग, लोहचूर्ण पांच आग मिश्रित कर ६ रत्ती की गोली बनाकर सेवन करे। तिमिर, राज्यन्थता श्रीर पटल रोग में सुफलप्रद है।

चतशुक्तहरगुगुलु लोह, मुलेठी, त्रिफला श्रौर पीपलचूर्ण प्रत्येक १ भाग, गुग्गुल ६ भाग एकत्र खरल कर ६ रत्ती की मात्रा में घी श्रौर मधु के साथ सेवन करे। इससे शुक्ल श्रौर काचरोग विनष्ट होते हैं।

नेत्राद्यानिर्स— अस्र, ताम्र, लोह, सोनामाखी, रसाझन, गन्धक, प्रत्येक १ पल एकत्र लेकर त्रिफला के काथ और मृंगराज के रस द्वारा ७ वार भावना दे। वाद में उसके साथ पीपरामूल, सुलेठी, इलायची, पुनर्नवा, देवदार, आकनादि (पाठा), मृङ्गराज, शटी (कचूर), पीपरामूल, वच, नीलोत्पल और लालचन्दन चूर्ण प्रत्येक १ माशा मिश्रित कर लोहे के खरल में लोहदण्ड द्वारा घी और मधु के साथ मर्दन कर २ रत्ती की गोली वनावे। अनुपान-गरम जल।

### श्रञ्जन प्रयोगः—

गरुडाञ्चन—निर्मलीपल, सेंघानमक, त्तिया, रसाज्ञन, त्रिकटु, स्पिटिक, मोथा, कौड़ीमस्म, त्रिफला, ताम्रमस्म, लोहमस्म, कपूर, कुटकी, समुद्र का फेन, वच, मनुष्य के मस्तक की हड्डी, सीसक, पारद, सोहागा और रसाज्ञन, एकत्र करोंदा की छाल के रस के साथ मर्दन कर वर्त्ति तैयार करे। मधु और त्रिफला चूर्ण के साथ मर्दन कर श्रंजन प्रयोग करने पर गरुड की तरह दृष्टि शक्ति होती है। साथ मर्दन कर श्रंजन प्रयोग करने पर गरुड की तरह दृष्टि शक्ति होती है।

चन्द्रोद्यावर्ति—हर्रा, वच, कुड़ा, पीपल, गोलिमर्च, वहेड़े की मज्जा, शिक्ष नामि श्रीर मैनशिल एकत्र वकरी के दूध में पीस कर वर्ति तैयार कर ले। मधु के साथ मर्दन कर इसका श्रंजन लगाने से नाना प्रकार के श्रांख के रोग दूर ही जाते हैं।

चन्द्रप्रभावित्तं — रसाज्ञन, सिहजन का बीज, पीपल, मुलेठी, वहेड़े की सज्जा, शह्वनाभि श्रीर मैनशिल समभाग में एकत्र कर वकरी के दूध में पीस कर वित्त बनाकर छाया में सुखा ले। मधु के साथ मर्दन कर इसका श्रंजन प्रयोग किने पर श्रमी, काच, तिमिर श्रीर पटल श्रादि रोग नष्ट होते हैं।

तारकाद्यावर्ति—रौप्य, ताम्र, पारद, सीसा, खर्पर, कपूर, रसाजन, कासा म्त्रीर शङ्ख एक साथ गोयालिया लता के रस में मर्दन कर वर्ति वनावे। इस म्रांजन द्वारा सब प्रकार के नेत्ररोग दूर होते हैं।

नागार्जुन वर्त्ति — त्रिफला, त्रिकटु, संघानमक, मुलेठी, त्तिया, रसाझन, पुण्डिरया, विडङ्ग, लोह, ताम्रभस्म समभाग, तगरपादुका के काथ या शीतल जल में पीस कर वित्त बनावे।

ताम्रहाति—ताम्र, श्रभ्रक श्रीर त्तिया प्रत्येक ४० माशा एकत्र कड़ाही में रख कर हक कर मृदु श्राग्न में पाक करे। पकाते समय गन्धक चूर्ण ६० तोला थोड़ा थोड़ा कर प्रक्षेप दे। कड़ाही में धुर्श्रॉ न जमने पाने इस श्रीर ख्याल रखे। वाद में उसके साथ ४ सेर पानी मिला कर श्रच्छी तरह से घोंट कर साफ हुए भाग को ग्रहण कर ले एवं उसमें त्तिया का जल श्रीर शिलाजीत प्रत्येक २ तोला मिला कर सुखा ले। घी, सधु श्रीर स्तन दुग्ध के साथ पेषण कर इसको श्रज्जनरूप में व्यवहार करने से काच, श्रमं, व्रणशुक्ल, श्राभिष्यन्द श्रीर पिल्ल श्रादि श्रांख के रोग निश्चित रूप से नष्ट होते हैं।

- (१) पर्दा और तिमिर रोग में स्त्री के दूध के साथ, तिमिर रोग में लोहे के क्षाय एवं छानि रोग से बकरी के सूत्र के साथ घोट कर श्रंजन लगाने।
- (२) ताम्र, सीसक, रोप्य, पारद, पीला चन्दन, कुटकी, कपूर, पीपल, रसाजन, होतोजन श्रोर जारित कांसा प्रत्येक १ भाग इन सबके वरावर खुलकुड़ि (मण्ड्कपणी) का मूल। ये सब द्रव्य एक साथ जल में मर्दन कर वर्त्ति बनावे। इसका श्रजन लगाने पर नाना प्रकार के श्रांख के रोग दूर हो जाते हैं।
- (३) पारद, सीसक, रसाजन, समुद्र का फेन, नवनीत ( मक्खन ) समभाग इमली की पत्ती के रस के साथ ताम्रपात्र में ७ दिन मर्दन कर वित्त बनाकर छाया में सुखा ले। इस श्रंजन के प्रयोग से श्रम्, तिमिर श्रीर शुक्ल रोग नष्ट होते है।
- (४) पारद श्रीर सीसक सममाग, इन दोनों का दुगुना रसाजन श्रीर इनके साथ थोड़ा सा कपूर मिलाकर वर्त्ति बनावे। इसके द्वारा तिमिर रोग नष्ट होता है।
- (५) घोघी या मेढक को दग्ध करके बारीक चूर्ण करे। मक्खन के साथ मिश्रित कर उस भस्म का अंजन अयोग करने पर पुष्परोग दूर होता है।
- (६) सहिजन का मूल और वच मधु के साथ घिसकर अथवा कची हल्दी के रस द्वारा नेत्र पूरण करने पर आंख का शूल निवृत्त होता है।
- (७) श्वेत पुनर्नवा का मूल जल के साथ पीसकर अंजन लगाने से अथवा श्वेत पुनर्नवा का मूल घी के साथ घोंटकर अंजन लगाने से नेत्र का जलसाव निवृत्त होता है।

- (८) लालचन्दन चूर्ण एक पल, भृज्ञराज के रस के साथ तांवे के वर्तन में पिस कर भृजराज रस में एक सौ वार भावना दे एवं वार वार मर्दन करे। मधु के साथ मिलाकर श्रंजन प्रयोग करने पर इसके द्वारा सव प्रकार के तिमिर रोग नष्ट होते हैं।
- (९) मोटा विष श्रौर शिलाजीत प्रत्येक समभाग एक साथ नीवू के रस के साथ घर्षण कर रात में श्रंजन प्रयोग करने पर काच श्रौर रात में न देखना दूर होता है।
- (१०) घोंघी का भरम, पारद, सीसक भरम, कांसे का भरम और रसाजन समभाग एक साथ इमली पत्ते के रस के साथ तांवे के वर्तन में मईन कर वर्ति वनावे और छाया में सुखा दे। मधु के साथ घर्षण कर इस वर्ति द्वारा अंजन लगाने पर शुक्ल, ध्रमी, तिमिर और पिल्ल रोग नष्ट होते है।
- (११) खटमल के रक्त के साथ गोलिमिर्च पीसकर उसका श्रंजन लगाने से राज्यान्ध्य रोग नष्ट होता है।
- (१२) पीपल श्रीर गीलिमर्च, घी, मधु श्रीर स्तन के दूध के साथ पीसकर उसके द्वारा श्रंजन प्रयोग करने पर राज्यान्ध्य दूर होता है।
- (१३) पीपल श्राधा तोला, सेंधानमक १ तोला, वच २ तीला, कुडा ४ तीला, मुलहठी ८ तीला, ताम्रमस्म १६ तोला, ये सब द्रव्य वकरी के दूध के साथ पीस कर वित्तं बनावे। इस वित्तं के द्वारा श्रज्जन प्रयोग करने पर सब प्रकार के नेत्ररोग दूर होते हैं।
- (१४) नेत्ररोग से रात के समय घी श्रौर मधु के साथ त्रिफला चूर्ण सेवन करे एवं त्रिफला के क्वाथ से श्रांख को घोवे।

### कर्णरोग-चिकित्सा

कफकेतुरस—सोंठ, पीपल, गोलिमर्च, हिज्जलवीज, विप श्रोर शंखभस्म इन सव वस्तुश्रों को समपरिमाण में जल के साथ मर्दन कर गोलिमर्च के समान गोली वनावे। श्रनुपान-गरम जल।

भेरवरस—रस, गन्धक, विष, सोहागा, कौड़ीभस्म, गोलमिर्च, ससभाग एकत्र श्रदरक रस में ७ वार भावना देकर २ रत्ती मात्रा की गोली वनावे। श्रनुपान-गरम जल। इन्दुचरी—शिलाजीत, अभक और लोहा प्रत्येक एक भाग, स्वर्ण चौथाई भाग एक साथ लेकर कमानुसार काकमाची, शतमूल (शतावर), आवला और पद्म के रस में भावना देकर २ रत्ती की गोली बनावे। अनुपान-आंवले का स्वरस या क्वाथ।

सारिवादि वटी—अनन्तमूल, मुलेठी, कुडा, गुडत्वक् (दालचीनी), तेजपत्ता, इलायची, नागेश्वर, प्रियङ्क, नीलोत्पलमूल, गुरुच, लोंग, हर्रा, श्रांवला, वहेड़ा प्रत्येक समभाग, इन सबके बरावर अभ्रक एवं अभ्रक के समान लोहा एकत्र कसेड रस, अर्जुन छाल के क्वाथ, जो के क्वाथ, काकमाची के रस और कूचमूल के क्वाथ में भावना देकर २ रत्ती की गोली बनावे। अनुपान—रातावर का रस।

#### वहरेपन में-

लशुनाद्यतेल—तिल्ली तेल १ सेर, वकरी का दूध ४ सेर, कल्क के लिए लहुसुन, श्रांवला श्रोर हरिताल मिलित २ पल ।

#### कर्णनाडी में

निशातेल—कडुवा तेल १ सेर, धतूरे पत्ते का रस ४ सेर, कल्क के लिए हल्दी ४ तोला और गन्धक ४ तोला।

जाती पत्ते के रस के साथ कड़वा तेल को पकाकर कान के भीतर डालने से पूर्तिकर्ण श्रोर कर्णसाव श्रारोग्य होता है।

क्रिमिकर्ण में—ईशलांगला के मूल श्रोर हुड़हुड़ के रस में त्रिकरु मिलाकर उससे कान को भर दे।

#### नासिका रोग चिकित्सा

पञ्चामृत रस—पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, सोहागा ३ भाग, विष ४ भाग, गोलिमर्च ५ भाग एक साथ श्रदरक के रस में मर्दन कर ३ रत्ती की गोली तैयार करे। श्रनुपान—पान का रस और मधु।

नारदोय महालदमीविलास—अभ्रक १ पल, गन्धक, पारद, कपूर, जायफल, जावित्री, विद्धडक वीज, धुस्तूर बीज, भांग का बीज, भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द), शतावर, वला मूल, गोरक्षचाकुले, गोक्षुर बीज, हिज्जलबीज प्रत्येक २ तोला एक साथ पान के रस में मर्दन कर २ रत्ती गोली बनावे। श्रतुपान-पान का रस श्रो मधु। प्रतिश्यायज नाक के रोग में श्रह सुफलप्रद है।

सणिपर्पटी-होरक, मरकत, पुष्पराग और इन्द्रनील चूर्ण एक भाग, पारद १ भाग श्रोर गन्धक २ भाग एकत्र मर्दन कर लोहे के वर्त्तन में गला कर पर्पटी तैयार करे। वाद में उसके साथ निसिन्दा (निर्गुण्डी), तुलसी, सहिजन, धत्रा, श्राक, चीतामूल, त्रिकटु, त्रिफला, केले का मूल श्रीर श्रादी इनके स्वरस या क्वाथ द्वारा सो वार भावना दे। मात्रा-१ रत्ती। त्रानुपान-त्रिकदु चूर्ण श्रोर मञ्ज।

### नासिका रोग नाशक विभिन्न योगावली—

- (१) विडङ्ग, सेंथानमक, हींग, गुग्गुल, मनःशिला श्रोरं वच इनको चूर्णकर एकत्र लेकर उसका धुत्रां लेने पर प्रतिश्याय नष्ट होता है।
- (२) हर्रा, त्र्यांवला, वहेबा, पीपल, सेंधानमक का चूर्ण वरावर मात्रा में लेकर मधु के साथ चाटने से पीनस श्रीर कफ नष्ट होता है।

पीनसरोग में - गोलिमर्च चूर्ण, गुड़ श्रौर दही के साथ सेवन करने से विरोप उपकार होता है। कैथ, पुष्करमूल (न मिलने पर कुड़ा), कुकरोधा, सोठ, पीपल, गोलमिर्च, दुरालभा ( जवासा ), काला जीरा इनका चूर्ण या क्वाथ श्रदरक रस के साथ सेवन करने से पीनसादि पीड़ाओं की शान्ति होती है।

पृतिनस्य — इन्द्यव, हिंगुल, गोलमिर्च, लाख, तुलसी, कैथ, कुड़ा, वच, सहिजन का वीज श्रोर विडङ्ग इनका कल्क (जल में पिसा हुश्रा) गोमूत्र में पेषण कर उसका नस्य लेने से पूतिनस्य त्रासेग्य होता है।

नाक से रक्त साव होने पर घी में तला हुआ श्रावला कांजी के साथ अथवा -वकरी के दूध के साथ पीस कर मस्तक में प्रलेप लगावे।

मुख, गले श्रीर दांत के रोग में

कालक चूर्ण मूल, यवक्षार, पाठा, सोठ, पीपल, गोलमिर्च, रसाञ्चन, चई, हर्री, श्रावला, वहें श्रोर चीतामूल एवं लोह इन सवका चूर्ण समभाग, मधु के साथ मिलाकर मुखं में धारण करने से इन्तरीग और गले के रोग निवृत्त 'होते हैं।

ु . पीतकचूर्ण—मनःशिला, यवशार, हरिताल, सेंघानमक, दाह्हल्दी की छाल ये सब द्रव्य समभाग में लेकर मधु के साथ मिलाकर घृत द्वारा मूर्चिछत करके मुख में धारण करने से कण्ठरोग त्रौर मुखरोग निवृत्त होते हैं।

पारद, त्रश्रक, लोह, शिलाजीत, गुग्गुल, मनःशिला श्रौर सोनामाखी समभाग में प्रहण कर २ रत्ती मात्रा में मधु के साथ चाटने से सब प्रकार के गते के रोग श्रौर मुखरोग निवृत्त होते हैं।

चलद्नत—पारा ३ भाग, रौप्य १ भाग एक साथ मर्दन कर नीवू के रस में मिलाकर नीवू फल के भीतर भर कर कपड़े से बांध दे। फिर ३ दिन तक पाक करे। बाद में सूच्म चूर्णीकृत हरिताल को श्राक की लेई द्वारा भावना देकर यवक्षार मिलाकर उक्त पारद के साथ श्रच्छी तरह से घोटकर गोला बनावे। बाद में उसे नीबू फल के भीतर सुरक्षित रूप से भर कर कपड़े से लपेट कर मधु पूर्ण भाण्ड मे ३ दिन तक पकावे। इस श्रोषध को मुख में धारण करने से दन्त श्रवश्य ही स्थिर होगा।

गलग्रिन्थ श्रीर कण्डशालूक रोग में—पारद, विमल, सोनामाखी, सोठ, पीपल, गोलिमर्च, ताम्रभस्म श्रीर सेंधानमक समभाग, गोमूत्र के साथ एकत्र पेषण कर थोड़ा गर्म कर के प्रलेप लगावे।

चतुर्भुखरस — रसिसन्दूर श्रीर स्वर्ण समभाग, मनःशिला दो भाग, एकत्र तीसी के तेल में मर्दन कर पिण्डाकार बनावे। बाद मे उक्त पिण्ड को कपड़े से लपेट कर तिल कल्क द्वारा प्रलिप्त कर २ दिन दोलायन्त्र में पाक कर ले। यह चतुर्भुख रस मुख मे धारण करने से जिह्वा, कण्ठ श्रीर मुखगत सब रोग नष्ट होते हैं।

पार्वतीरस—गन्धक, पारद, हिङ्कल, महुआ का फूल, गुङ्कची, सेमर की छाल, किसमिस, धिनया, चिरायता, मृङ्गराज, तिल, मूंग, परवल, कुष्माण्ड, सौवर्चल लवण, सेंधानमक, मुलहठी समभाग एक भाण्ड में भर कर अन्तर धूम से भस्म करे। मुखरोग में यह सुफलप्रद औषध है। अनुपान-पीपल चूर्ण श्रीर मध्।

सुखरोगहरी चटीं—पारद १ भाग, गन्धक १ भाग, शिलाजीत ४ भाग एकत्र गोमूत्र में मर्दन कर कमानुसार सौ वार श्रदरक रस, मालती पत्ते के रस, नीमदाल के रस एवं जलपीपल के रस में भावना देकर ४ रत्ती की गोली वनावे। श्रनुपान-पीपल चूर्ण श्रीर मधु। इसके सेवन से तालु, गला, श्रीठ श्रीर दात के विविध रोग नष्ट होते हैं। विभिन्न योगावली—ववूल की छाल के काथ द्वारा गण्हूष धारंणं करने पर हिलते हुए दॉतं मजवूत होते हैं श्रौर दंति की पीड़ा प्रशिमित होती है।

वृहती (वड़ी कटेरी), कुकसिमा, एरण्डमूल और कण्टकारी इनके काथ में कड़िया तेल मिलाकर गण्ह्य धारण करने से किमिशूल नष्ट होता है।

सीज ( सेंहुड़ ) बृक्ष की जंड़ चेवाकर दांत में दबा कर रखने से दांत के की डे गिर जाते हैं।

कुड़ा, दारुहल्दी, लोह, मोथा, वराक्रान्ता, श्राकनादि (पाठा), चन्य श्रीर हल्दी इन सव द्रन्यों के चूर्ण को समभाग में एकत्र कर उससे दांत को चिसने से रक्तसाव, कण्ड श्रीर वेदना निवृत्त होती है।

लोह, खिदर, मंजिष्ठा श्रौर मुलेठी इनके साथ तेल को पकाकर उस तेल को लगाने से दन्तनाडी दूर होती है।

## मस्तिष्क और स्नायुरोग चिकित्सा

इसमें चतुर्भुखरंस, बृहत् वातचिन्तामणि, योगेन्द्ररस, महालच्मीविलास रस, चतुर्भुजरस, चिन्तामणिरस, पंचामृतलोह, रसराज रस, मकरण्वज रसायन श्रादि श्रीष्य प्रयोग करे।

#### वाताधिक्य में—

चतुर्मुखरस—पारद, गन्धक, लौह, श्रश्रक प्रत्येक १ तोला, स्वर्ण २ माशा इन सवको घतकुमारी के रस में घोटकर एरण्ड के पत्ते से लपेट कर ३ दिन तक धान के ढेर में गाड़ कर रख दे। बाद में २ रत्ती की गोली बनावे। श्रनुपान— त्रिफला भिगोया हुआ जल, सतावर या ब्राह्मी का रस।

बृहत् वाति चिन्तामिशि—स्वर्ण ३ भाग, चांदी २ भाग, श्रश्रक २ भाग, लोह ५ भाग, प्रवाल ३ भाग, रसंसिन्दूरं ७ भाग एकत्र घतकुमारी के रस में सर्दन कर २ रत्ती की गोली बनावे। श्रमुपान-शतावर का रस, ब्राह्मी का रस या श्रश्यगन्या चूर्ण और मधु।

वित्ताधिकय में-

योगेन्द्रस-रसिन्द्र १ तोला, स्वर्ण, लोह, श्रंश्रक, मुक्ता श्रोर वङ्ग अत्येक श्राधा तोला, एकर्ज घृतकुमारी के रस में भावना देकर तीन दिन धान के भीतर रख दें। वाद में निकालकर २ रत्ती की गोली वनावे। श्रनुपान—त्रिफला का जल, सतावर की रसं या श्वेत बला के मूल का रस।

#### कफाधिक्य सें-

महालद्मीविलास रस—ग्रथ्यक ८ तोला, गन्धक ४ तोला, पारा ४ तोला, वङ्ग २ तोला, चादी १ तोला, सोनामाखी १ तोला, ताम है तोला, कपूर, जावित्री श्रीर जायफल प्रत्येक ४ तोला, विद्धइकवीज, धतूरे का बीज प्रत्येक २ तोला श्रीर स्वर्ण १ तोला, पान के रस में मर्दन कर २ रत्ती की गोली वनावे। श्रनुपान— दूध श्रीर चीनी।

#### त्रिदोषोत्पन्न रोग सें--

चतुर्भुज रस—रसिन्दूर २ भाग, स्वर्ण १ भाग, मनःशिला, कस्तूरी, हिरताल प्रत्येक १ भाग ये सब द्रव्य घतकुमारी के रस में एक दिन मर्दन कर एक पिण्ड तैयार करे। फिर उसे एरण्ड के पत्ते से लपेट कर धान की राशि में गाड़ कर ३ दिन तक रख दे। मात्रा-१ रत्ती। श्रनुपान—त्रिफला चूर्ण श्रीर मधु।

#### पित्ताधिक्य सें या पित्तइलेष्माधिक्य सें--

चिन्तामणि रस— रसिनदूर और श्रभ्रक अत्येक २ तोला, लोहा, स्वर्ण अत्येक श्राधा तोला एकत्र घृतकुमारी के रस मे मर्दन कर १ रत्ती की गोली बनावे। श्रजुपान—श्रवस्था भेद से सतावर का रस, ब्राह्मी का रस या त्रिफला चूर्ण श्रौर मधु।

#### त्रिदोषजरोग एवं स्नायु-दुर्वसता में--

पश्चामृत लोह—पारद, गन्धक, चादी, श्रश्रक, सोनामाखी प्रत्येक १ पल, लोह २ पल, गुग्गुल १ पल एकत्र लोहे के खरल में लोहदण्ड द्वारा कड़वा तेल के साथ उत्तमरूप से दो प्रहर तक मर्दन कर ६ रत्ती की गोली तैयार करे। श्रानुपान—त्रिफला का जल। बृहत वात चिन्तामणि रस, योगेन्द्ररस, पूर्णचन्द्ररस, शिलाजीत के साथ प्रयोग करे।

रसराज रस—रसितन्दूर ८ तोला, अअक २ तोला, स्वर्ण १ तोला, एक अ पृतकुमारों के रस में मर्दन कर उसके साथ लोह, चांदी, वङ्ग, अश्वगन्धा, लाग, जावित्री, क्षीरकाकोली प्रत्येक आधा तोला मिलाकर काकमाची के रस में मर्दन कर ३ रत्ती की गोली वनावे। अनुपान-दूध और चीनी।

मकर्ध्वज रसायन—सोनामाखी २ भाग, बङ्ग, मुक्ता, कान्तलोह, जाय-पल, जावित्री, चादी, कांसा, रससिन्दूर, प्रवाल, कस्तूरी, कपूर श्रीर श्रम्रक प्रत्येक १ भाग, स्वर्णसिन्द्र ४ भाग एकत्र श्रच्छी तरह से मर्दन करे । मात्रा— २ रती । श्रनुपान—सतावर का रस ।

मस्तिष्क श्रीर स्नायु रोग में प्रयोज्य श्रनुपान—सतावर का रस, श्राची का रस, भीमराज का रस, त्रिफला चूर्ण, शंखपुष्पी, पुनर्नवा कल्क, श्रश्व-गन्धा चूर्ण, भांग का बीज, गोरक्षचाकुले चूर्ण, गाय का दूध, गाय का घी श्रीर चीनी, मिश्री का रस श्रादि सेवन करे।

## प्रदर रोग-चिकित्सा

कफज प्रदर में-प्रदरान्तक लीह—लोह, ताम्र, हरिताल, वङ्ग, अभक, विकट्ठ, त्रिफला, चीतामूल, विडङ्ग, चव्य, पीपल, शंखभरम, वच, हतुषा (हाऊवेर), कुड़ा, शटी (कचूर), आकनादि (पाठा), इलायची, कौड़ी, देवदारु और विद्धडक चीज, इन सवका चूर्ण समभाग मधु के साथ मर्दन कर ६ रत्ती की गोली वनावे।

पित्तज प्रदर में-शिलाजत्वादिघटी—पारद, गन्धक १-१ तोला, रक्तो-रपलपत्र श्रोर कुटज छाल के रस में दो दिन मर्दन कर उसके साथ शिलाजीत, चीनी ८-८ पल, वंशलोचन, पीपल, श्रांवला, कुकरोंधा, कण्टकारी की जड़ श्रोर फल, गुडत्वक् (दालचीनी), तेजपत्ता, इलायची श्रोर मधु प्रत्येक १ पल एकत्र मर्दन कर ले। मात्रा—१ तोला। श्रनुपान-श्रनार का रस।

लच्मणालोह—लद्मणामूल साढ़े बारह सेर, जल ६४ सेर, शेप १६ सेर। काथ को छानकर फिर पाक करे। जब यह गाढ़ा हो जाय तब इसमें अशोक मूल की छाल, कुशमूल, महुआ का फूल, मुलहठी, आकनादि (पाठा) और वेलसीठ (शुष्क कृच्चे वेल की गज्जा) प्रत्येक १ पल, लोह ७ पल, ये सब द्रव्य छोड़ दे। इसके वाद पकाना बन्द कर दे। मात्रा-चौथाई तोला से आधा तोला। अनुपान—गरम दूध।

चातिक प्रदर में -चन्द्रांशुरस-पारद, गन्धक, श्रभ्रक, लोह श्रौर वह समभाग- घृतकुमारी के रस में मर्दन कर २ रत्ती की गोली वनावे।

प्रद्रान्तकरस्र — पारद, गन्धक, वङ्ग, चांदी, खर्पर, कौड़ीभरम, प्रत्येक श्राधा, तोला, लोहा ३ तोला एकत्र १ दिन घृतकुमारी के रस में मर्दन कर २ रत्ती की गोली बनावे। चावल घोये हुए जल के साथ सेवन करे। त्रिदोषज प्रद्र में — पूर्वीक्त शिलाजत्वादि वटी श्रौर रत्नप्रभा वटी प्रयोग करे।

रत्नप्रभा—सोना, मुका, श्रिप्रक, सीसा, बङ्ग, पीतल, सोनामाखी, होरा, लोहा, हरिताल श्रोर खर्पर प्रत्येक समभाग, एकत्र लेकर केले की जड़, काकमाची, श्रक्ते की छाल, स्दिमूल श्रोर जयन्ती के रस में एवं कपूर जल में भावना देकर लगातार एक दिनरात मर्दन करके १ रत्ती की गोली बनावे। श्रनुपान—कसेल का रस।

### प्रदर रोग में व्यवहार्य विभिन्न योगावली—

वातज प्रदर में —चीनी, मुलहठी, सींठ, तिल्ली तेल और दही एकत्र अच्छी तरह से मर्दन कर सेवन करने से वातज प्रदर रोग का उपशम होता है।

सौवर्चल, जीरा, मुलहठी, नीलोत्पल प्रत्येक दो माशा, दही ८ तोला एकत्र अच्छी तरह से मर्दन कर फिर उसके साथ ८ माशा मधु मिश्रित कर चावल के पानी के साथ सेवन करने से वातज प्रदर निवृत्त होता है।

पित्तज प्रदर सें—अहसा के काथ के साथ रससिन्द्र सेवन करने से पित्तज प्रदर रोग का उपशम होता है।

कुशमूल चावल के जल के साथ पीसकर सेवन करने से पित्तज प्रदरस्राव निवृत्त होता है।

त्रांवले का वीज पानी में पीसकर मधु श्रौर चीनी के साथ सेवन करने से पदर रोग नष्ट होता है।

कफज प्रदर सं-१ तोला परिमित धाईफूल श्रौर १ तोला श्रांवला, जल में पीसकर मधु के साथ सेवन करे।

भूमि श्रांवले का चूर्ण चावल के जल में पीसकर सेवन करने से भी प्रदर की शान्ति होती है।

श्वेतप्रदर में—दारुहल्दी, रसांजन, श्ररूसा, मोथा, चिरायता, बेलसोठ (शुष्क कच्चे वेल की मज्जा) श्रोर रक्तोत्पल इनके काथ में मधु मिलाकर सेवन वरने से सब प्रकार के प्रदर रोग श्रारोग्य होते हैं।

रक्तप्रदर में —गोरक्षचाकुले के मूल का चूर्ण, मधु श्रौर चीनी के साथ

शरपुंखा (शरफोका) के मूल की चावल के जल के साथ पीसकर २ तोले की मात्रा में सेवन करने से श्रधिक रक्तसाव निवृत्त होता है।

लाल नटे शाक का मूल श्रौर रसांजन चावल के जल के साथ पीस कर मधु के साथ सेवन करने से रक्तप्रदर दूर होता है।

## भदरादिरोग में प्रयोज्य श्रनुपानं—

चातज प्रदर में पुलहठी का चूर्ण, नीलोत्पल चूर्ण, सेमर की छाल का रस, सेमर के फूल का चूर्ण, चावल का जल, कुशमूल, बला का मूल।

पित्तज प्रदर सें—गुरुच का स्वरस, श्ररूसा का रस, कच्ची हल्दी का रस, दूव का रस, श्रांवले का रस, मुलहठी श्रीर लालचन्दन का काथ, लाल नटे मूल का रस, खसखस का स्वरस या काथ।

कफज प्रदर में — ग्रह्सा रस, मोथा चूर्ण, वेलसोंठ (शुष्क कच्चे वेल की मज्जा) का काथ, दारुहल्दी का काथ, मुलेठी चूर्ण, मोचरस, धाईफूल, जामुन की गुठली, श्रातीस श्रोर कसेह का रस श्रादि।

त्रिदोषज प्रदर में — अशोक छाल का स्वरस या क्वाथ, कुटज छाल का रस, रक्तोत्पल मूल, अनन्तमूल का काथ, अर्जुन छाल का काथ, लच्मणामूल, वलामूल, मुलेठी, लालचन्दन, अनन्तमूल, खसखस, लोध, द्राक्षा और त्रिफला का काथ एवं लाल जवा फूल की कली आदि।

### बन्ध्या रोग-चिकित्सा

जयसुन्दर—सोना, चांदी, ताम्र, सोनामाखी, पुखराज भस्म प्रत्येक ४ माशा, पारद १६ माशा, गन्धक ३२ माशा, ये सव द्रव्य एकत्र लेकर लद्दमणा मूल के क्वाय श्रीर बन्धुजीव के रस के साथ मर्दन कर सुखा ले। फिर काच की चिमनी के भीतर भर कर ताम्र पत्र द्वारा चिमनी के मुख को वन्द कर दे। बाद मे एक श्रद्धल मोटी मिट्टी लेप कर सुखा ले। सूख जाने पर ख्य हत्के वनकण्डों की श्राम्न से भूगर्भ में रख गजपुट में पकावे। पाक समाप्त होने पर ठण्डा हो जाने के वाद श्रीषध चूर्णकर फिर लद्दमणामूल के क्वाय द्वारा भावना दे। इसकी मात्रा-१ रत्ती। ताम्रपात्र में सिद्ध गव्य दुग्ध, श्रश्वगनधा चूर्ण श्रीर चीनी के साथ सेवन करे। लगातार ३ महीने तक यह श्रीषध सेवन करने से वन्ध्या नारी को गर्भ स्थित होती है।

त्तदमणासौह—लद्मणामूल, हस्तिकर्णपलाशमूल, त्रिकट, त्रिफला, त्रिमद श्रीर श्रश्वगन्धा मूल, प्रत्येक १ तोला, लोहा १२ तोला एकत्र श्रच्छी तरह से मर्दन कर १ तोला मात्रा मे घी श्रीर मधु के साथ सेवन करे। श्रीपध सेवन के बाद शक्कर के साथ दूध का श्रनुपान करे। यह पुत्रजनक है।

हुतिसार—श्रभ्रक, स्वर्ण, पारद, प्रत्येक समभाग एकत्र मर्दन कर पिण्ड वनाकर ४ मारो की मात्रा में गन्धक के साथ मूषारुद्ध करे एवं इस तरह गन्धक मिलाकर सौ बार पुटपाक करे। इसकी मात्रा-१ रत्ती। बन्ध्या रोग में लद्दमणा मूल चूर्ण के साथ प्रयोग करे। उपयुक्त श्रनुपान के साथ प्रयोग करने पर इससे सृतिका एवं गर्भिणी श्रोर प्रसृति के श्रन्यान्य रोग नष्ट होते हैं।

कुमारक हपहुस श्वत — गन्य घृत ८ सेर, क्वाथ के लिये वकरे का मांस सवा छः सेर और दशमूल सवा छः सेर, पकाने के लिये पानी १०० सेर, शेष १५ सेर । द्ध ८ सेर, शतावर का रस ८ सेर । कल्कार्थ — कुडा, शटी (कचूर), मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक, प्रियङ्क, त्रिफला, देवदाक, तेजपत्ता, इलायची, शतावर, गाम्भारी फल, क्षीरकाकोली, मोथा, नीलसुंदि, जीवन्ती, लालचन्दन, काकोली, श्यामालता, अनन्तमूल, श्वेत बलामूल, शरपुंखामूल, भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द), मंजिष्ठा, चाकुले, शालपणीं, नागेश्वर, दाकहल्दी, रेणुका, लता-फटकीमूल, शरपुंखा, नीलबुक्ष, वच, अगुक, णुडत्वक् (दालचीनी), लोग अगेर कुंकुम प्रत्येक २ तोला। तांवे अथवा मिट्टी के पात्र मे पका कर ठण्डा होने पर उसके साथ पारद, अश्वक और गन्धक प्रत्येक २ तोला एवं मधु २ सेर मिला दे। मात्रा-२ तोला। अनुपान-गो दुग्ध। यह घृत बन्ध्या, रजोदोष और जरायु की सव पीडाओं को नाश करता है।

चन्ध्यात्वनाश्चक योगावली—रिववार के दिन एक गन्धनाकुली बृक्ष को जड़ श्रीर पत्तों के साथ उखाड़ कर एक रंग वालो गाय के दूध में किसी कुमारी लड़की द्वारा पेषण करा ले। ऋतु के ३ दिन तक यह कल्क ४ तोले की मात्रा में सेवन कर दूध श्रीर मूंग के यूप के साथ शालिधान का श्रन्न श्रन्थ परिमाण में भोजन करे। शोक, उद्देग, दिन में सोना, परिश्रम एवं सर्दी श्रीर श्रातप (धूप) वचाकर ७ दिन इस प्रकार का पथ्य पालन करे। इसके द्वारा बन्ध्या रोग दूर होता है।

पीपल, सोंठ, गोलिमर्च श्रोर नागेश्वर एकत्र पेषण कर घी के साथ ऋतुकालः में सेवन करने से वन्ध्या पुत्रवती होती है।

पीतिमिन्टी का मूल, धाईफूल, वटाङ्कर श्रौर नीलोत्पल एकत्र दृध के साथ पीसकर दूध के साथ सेवन करने से बन्ध्यात्व दोष दूर होता है।

स्वर्ण, रौप्य और ताम्रभस्म समभाग मिलकर ६ रत्ती, गाय के घी के साथ सेवन करने से गर्भाशय का दोष नष्ट होकर गर्भ स्थिति होती है।

रवेत श्रपराजिता का मूळ भेंस के दूध में पीसकर भैंस के मक्खन के साथ श्रुतकाल में सेवन करे एवं पूर्वोक्त पथ्यादि का पालन करे। इससे काकवनध्या होष निवृत्त होता है।

वन्ध्या चिकित्सा में व्यवहार्य अनुपान—नीलोत्पल, केशर, नागेश्वर-रेग्र्, वटांकुर, शतावर का रस, भूम्यामलको का मूल चूर्ण, गाम्भारी फल, भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द), शंखपुष्पी, श्वेतवला का मूल, मुलहठी, अशोक मूला की छाल का क्वाय, लक्षणामूल, गाय का घी आदि।

## गर्भिणी रोग-चिकित्सा

## गर्भिणी को अजीर्ण या शूल होने पर—

गर्भविलास रस-पारद, गन्धक श्रौर तूतिया भस्म समभाग, एकक खट्टे नीवू के रस में ३ दिन मर्दन कर त्रिकटु के क्वाथ में ३ भार भावना दे। मात्रा-४ रत्ती।

श्रतिसार श्रीर प्रदरादिसाव में—

गर्भचिन्तामणि रस—रसिन्दूर, रौप्य, लौह प्रत्येक २ तोला, कपूर, वङ्ग, ताम्र, जायफल, जावित्री, गोक्षुरबीज, शतावर, वला श्रौर स्वेत वला के मूल का चूर्ण प्रत्येक १ तोला, जल मे मर्दन कर २ रत्ती की गोली वनावे। श्रनुपान—का चूर्ण प्रत्येक १ तोला, जल मे मर्दन कर २ रत्ती की गोली वनावे। श्रनुपान—श्रातिसार में श्राम श्रौर जासुन के छाल का काथ या गन्धप्रसारणी का रस। साव श्रीतसार में श्राम श्रौर जासुन के छाल का काथ या गन्धप्रसारणी का रस। साव

ज्वर में— गर्भपीयूषवल्लीरस—पारा, गन्धक, स्वर्ण, लोहा, रौप्य, सोनामाखी, हरिताल, वङ्ग श्रौर श्रभ्रक समभाग एकत्र कर ब्राह्मी, श्ररसा, मृंगराज, वेत पापड़ा श्रोर दशमूल इनके रस में ७ बार पृथक् २ भावना देकर १ रत्ती की गोली वनावे। श्रनुपान—भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द), श्रनन्तमूल, सुलेठी, वला श्रोर लोध का काथ।

ज्वर, श्वासं, खांसी, शिरःपोडा, हत्पिण्ड की दुर्वलता श्रीरं साधारण दुर्वलता में—

इन्दुशेखर रस्न—शिलाजीत, श्रभ्रक, रसिसन्दूर, प्रवाल, लोह, सोनामाखी श्रोर हरिताल प्रत्येक समभाग एकत्र मर्दन कर मृद्गराज, श्रार्जुन छाल, निसिन्दा (निर्गुण्डी), श्रक्सा, स्थलपद्म श्रोर कृटज की छाल के रस में भावना देकर २ रत्ती की गोली बनावे। यथायोग्य श्रानुपान के साथ प्रयोग करे।

## ज्वर, शूल, दाह श्रीर शोथ श्रादि पीडाश्रों सें—

वृहत् गर्भविन्तामणि रसः—पारद, गन्धक, स्वर्ण, लोह, रौष्य; सोना-माखी, हरिताल, बङ्ग श्रोर श्रश्रक समभाग एकत्र लेकर ब्राह्मीशाक, श्रक्सा, भङ्गराज, खेतपापडा श्रोर दशमूल के रस या काथ द्वारा पृथक् पृथक् ७ वार भावना देकर १ रत्ती की गोली बनावे।

## गर्भिणी रोग सें प्रयोज्य विभिन्न योगावली—

जरायु के शूल में — आकनादि (पाठा), मोथा, हर्रा, सुगन्धवाला, अनन्तमूल और पद्मकाष्ठ इनका श्वतकषाय, नीलोत्पल, मृणाल और गाय के दूध के साथ सेवन करे।

ज्वर में —गुरुच श्रौर गाम्भारी का काथ चीनी श्रौर सधु के साथ श्रथवां भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द), श्रनन्तमूल, मुलेठी, बला, लोध श्रौर महुश्रा, इनकी क्वाथ दूध के साथ पीने को दें।

श्रितिसार में — कुटजछाल, मोथा, देवदार श्रीर दारुहल्दी का काथ पीने को दे श्रयवा गम्भारी छाल, मुलेठी, श्रनन्तमूल, मोथा श्रीर दारुहल्दी का क्राथ श्रथोग करे।

गुलम, उदोवर्त और शोध आदि उपसगीं में — पुनर्नवी और अदरक का काथ रात में पीने को दे।

श्वास-कासं में कुटकी, हर्रा, वामनहाटी ( भागी ), वच श्रीर सोंठ का

चमन में — वड़ी इलायची श्रौर बेर की गुठलो की सांस (गूदा) को जल में चिस कर उस जल को पीने के लिये दे। हिंचे शाक का रस पान करने पर गर्भिणी का वमन निवृत्त होता है।

अगिनमान्द्य में —वनजवाइन, अश्वगन्धा, पीपल, गजपीपल, जीरा इनका चूर्ण समभाग एक साथ मिलाकर =) से।) भर की मात्रा में गुड़ और मधु के साथ चाटने की दे।

मूत्र की कृच्छुता में - गोक्षुर श्रौर बला का काथ प्रयोग करे।

वायुवृद्धि में — खसखस श्रीर मुलेठी श्रथवा द्राक्षा श्रीर मुलेठी से साधित दूध पीने के लिये दे।

पित्तप्रकाप में — बला, ग्रहसा की छाल श्रीर चाकुले का काथ पीने के लिये दे।

गर्भसाव निवारणार्थ—पहले महीने में-देवदार, क्षीरकाकोली, शाकवीज और मुलेठी। दूसरे महीने में-वला, काली तिल्ली, मंजिष्ठा और आमरल (चागेरी)। तीसरे महीने मे-नीलीत्पल, क्षीरकाकोली, गुरुच और अनन्तमूल। चौथे महीने में-मुलेठी, वामनहाटी (भागीं), रास्ना और अनन्तमूल। पांचवे महीने में-गाम्भारी फल, बृहती (बड़ी कटेरी), क्षीरीवृक्ष का शुङ्ग, वल्कल और घृत। छठे महीने में-गाम्भारी, वला, सहिजन, गोक्षर और चाकुले। सातवे महीने मे-चीनी, मुलेठी, पानीफल, द्राक्षा, मृणाल और केशर इन सब द्रव्यों का कल्क गाय के दूध में पीस कर सेवन करने के लिये दें।

मृहगर्भ में —गर्भिणी के मस्तक में सीज की लेई लगाने से अथवा योनि द्वार में सांप की केंचुल का धुआं देने से अथवा मुलेटी और नीवू की जड़ पीस कर पान करने से मूहगर्भ का सत्वर प्रसव होता है।

अपरा (फूल) निकलने में देरी होने पर—नीवू की जह या केले की ज़ कमर में वांधने से अथवा अड्डलीके अगले भाग में केश लपेट कर गले वें भीतर घर्षण करने से शीघ्र ही अपरा निकल जाती है।

# सृतिका रोग चिकित्सा

सूतिकारि रस—पारद, गन्धक, स्वर्ण, चांदी, जायफल, जाविजी, लोग, इलायची, धाईफूल, कुटज की छाल, इन्द्रयच, श्राकनादि (पाठा), कुकरोंधा, सोंठ, वनजवाइन और सोहागा के खील का चूर्ण समभाग एकत्र कर गन्धप्रसारणी के रस में मईन कर ४ रत्ती की गोली बनावे। श्रनुपान—गन्धप्रसारणी का रस।

वृहत् स्तिकावल्लभ रस—पारद, गन्धक, सोनामाखी, श्रश्नक, कपूर, स्वर्ण, हरिताल, चांदी, श्रफीम, जावित्री श्रोर जायफल समभाग, एकत्र कर वला श्रीर सेमरमूल के रस में भावना देकर २ रत्ती की गोली वनावे । श्रनुपान—मोथा का रस या गन्धप्रसारणी का रस ।

स्तिकान्तक रस—गरद, गन्धक, श्रभक, लोह, ताम, सीसक, लोंग श्रीर यवक्षार, प्रत्येक ८ तोला, जायकल, केशुते, त्रिकला, भीमराज, इलायची, सोधा, धाईफूल, इन्द्रयव, श्राकनादि (पाठा), कुकरोंधा, ठेल, सुगन्धवाला, प्रत्येक २ तोला एकत्र चूर्ण कर ४ रत्ती की गोली वनावे । श्रनुपान—गन्ध प्रसारणी का रस।

सहारसशादृत्त — अश्रक, ताम्र, स्वर्ण, गन्धक, पारद, मन'शिला, सोहागा, यवक्षार, त्रिफला प्रत्येक १ पल, विष है तोला, दारचीनी, इलायची, तेजपत्ता, जावित्री, लोग, जटामांसी, तालिशपत्र, सोनामाखी और रसांजन प्रत्येक ४ तोला, एकत्र गिमे शाक और पान के रस मे भावना दे। कुछ द्रव रहते ८ तोला काली भिर्च का चूर्ण मिश्रित कर २ रत्ती की गोली वनावे। अनुपान — मोथा और नान्ध्र सारणी का रस।

वृहत् गर्भिचिन्तामणि रस-पारद, गन्धक, स्वर्ण, लोहा, चांदी, सोना-माखी, हरिताल, वंग, अश्रक, समभाग एकत्र कर बाह्मी शाक, संगराज, खेतपापड़ा और दशमूल के रस या क्वाथ में ७ वार भावना देकर १ रत्ती की गोली तैयार करें। इससे स्तिका और गर्भिणी के सब प्रकार के रोग नष्ट होते हैं। इसका उपयुक्त अनुपान के साथ प्रयोग करे।

सहाभ्र चटी—श्रिश्रक, ताम्र, लोह, गन्धक, पारद, मनःशिला, सोहागा, यवक्षार, त्रिफला, प्रत्येक १ पल, विष ४ माशा एकत्र कर गिमे शाक, श्रह्सा का पत्ता और पान के रस में क्रमानुसार ७ वार भावना देकर कुछ गीली रहते उसमें १ पल परिमित कालो मिर्च का चूर्ण डाल कर श्रद्यी तरह से घोट ले। तव ४ रत्ती मात्रा की गोली तैयार करे। श्रनुपान—मोथा, गन्धप्रसारणी या बेल पत्ते का रस।

वृहत् रस्तशार्द्रल-पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, एकत्र कज्जली वना कर उसके साथ सोना, चांदी, ताम्बा, कासा, पीतल, सीसा, बंग और लोह 'इन आठों धातुओं का एक-एक भाग अच्छी तरह से मिश्रित कर बाह्मी शाक, जयन्ती पत्ता, निसिन्दा (निर्गण्डी) पत्ता, मुलेठी, पुनर्नवा, नालुका, अपराजितामूल, आकन्द (आक) मूल, कृष्णचूड़ा का पत्ता, दुरालभा (जवासा), आहसा और काकमाची इनके रस या काथ द्वारा भावना देकर २ रत्ती मात्रा की गोली तैयार करे। अनुपान-मधु। इन औषधों के सेवन के समय गरम जल पीने।

सूतिका रोग की प्रवृद्ध श्रवस्था में शोथ दिखाई देने पर रसपर्पटी या स्वर्ण-पर्पटी का नियमानुसार प्रयोग करने से उष्कृष्ट फल मिलता है।

स्तिका दशमूल कपाय इस रोग में श्रितशय हितकर है। यथा—शालपणी, चाकुले, बृहती कण्टकारी, गोक्षर, नीलिंकण्टी, गन्धप्रसारणी, सोंठ, गुरुव श्रीर मोथा।

स्तिका रोग का श्रमुपान जीराचूर्ण, गन्धप्रसारणी का रस, श्वेतपुन-र्नवा का रस, िक्कण्टी का रस, मोथा का रस या चूर्ण, वेल पत्ते का रस, गुरूच का रस, निसिन्दा (निर्गुण्डी) पत्ते का रस, कालाजीरा, धनिया, गुरुच, मोथा श्रीर श्रातइच (श्रतीस) का काथ, स्तिकादशमूल कपाय, हीवरादि कषाय श्रादि।

## चिच्छारोग−चिकित्सा

वालकत्याण रस-पारद, गन्धक, स्वर्ण, चांदी, लोहा, अअक, सोहागा, केंय फल और रसिसन्दर, अत्येक समभाग, अदरक के रस में भावना देकर २ रत्ती की गोली वनावे। इसके द्वारा शिशु का ज्वर और कास नष्ट होता है। इसे यथायोग्य अंजुपान के साथ अयोग करे।

बालरस—पारद, गन्धक १-१ भाग और सोनामाखी श्राधा भाग एकत्र कज्जली वना कर लोहे के खरल में लोहदण्ड द्वारा क्रमानुसार केशराज, भृतराज श्रीर निसिन्दा (निर्मुण्डी) के रस में भावना देकर सरसों के समान गोली तैयार करे। इससे ज्वर श्रीर कास श्रादि उपद्रव दूर होते हैं।

कुमारकरुयाण रख—रसिसन्दर, मुक्ता, स्वर्ण, श्रभ्रक, लोह श्रीर सोना-भाखी एकत्र कर घृतकुमारी के रस में मर्टन कर मृंग की दाल बरावर गोली बनावे। ज्वर, श्रितसार, काश्ये, नजर लगना, रतन का दूध न पीना श्रादि पीडाश्रों में इसका श्रयोग करे। श्रनुपान-दूध श्रीर चीनी। द्नतोद्भेद्गद्गन्तकः —पीपल, पीपल वृक्ष की जड़, चव्य, चीतामूल, सोंट, वन जवाइन, जवाइन, हल्दी, मुलेठी, देवदार, विडङ्ग, इलायची, नागेश्वर, मोथा, शटी (कचूर), कुकरोधा, विडलवण, श्रश्रक, लोह श्रीर सोनामाखी, इन सव द्रव्यों को एकत्र कर ३ रत्ती की गोली वनावे। इसके सेवन से वचों के दांत निकलने के समय होनेवाले ज्वर श्रीर श्रातिसार श्रादि उपद्रव प्रशमित होते हैं।

विभिन्त उपद्रवों सें व्यवहार्य योगावली—

जवर में—नागरमोथा, हर्रा, नीमछाल, परवल के पत्ते और मुलेठी का काथ प्रयोग करे।

श्रतिसार में — मोथा, पीपल, श्रातइच ( श्रतीस ) श्रीर कुकरोधा का चूर्ण समभाग मधु के साथ चाटे।

प्रवाहिका नें — लाई श्रौर मुलेठी का चूर्ण एवं चीनी श्रौर मधु धोये हुए चावल जल के साथ सेवन करे।

श्वास श्रोर कास सें — कुडा, श्रातइच (श्रतीस), कुकरोधा, पीपल श्रोर दुरालभा (जवासा) चूर्ण समभाग एकत्र कर मधु के साथ वालक को चटावे श्रथवा द्राक्षा, श्रड्सा, पीपल, कुकरोधा श्रोर श्रतीस इनका क्वाथ सेवन करावे।

हिचकी श्रौर चमन में - कुटकी का चूर्ण मधु के साथ चटावे।

दूध के वसन में — श्राम की गुठली का गृदा, लाई श्रीर सेंधानमक मधु के साथ सेवन करने को दे।

सूत्राधात में — पीपल, कालीमिर्च, चीनी, छोटी इलायची श्रीर सेंधानमक का चूर्ण मधु के साथ चटावे।

नाभिपाक सें - छागविष्ठा भस्म (वकरे की लेड़ी की भस्म), नाभि में लगाने से श्रारोग्य होता है।

नाभिशोध में — मृत्पिण्ड श्राग में गरम कर श्रौर दूध में उबाल कर गरम रहते ही उससे नाभि में स्वेद (सेक) दे।

## क्लैव्य (नपुंसक रोग)-चिकित्सा

चृहत् चन्द्रोदयरस—स्वर्णपत्र १ पल, पारद ८ पल, एकत्र ग्रन्छी तरह से मर्टन कर उसके साथ १६ पल गन्धक मिलाकर कज्जली बनावे एवं लाल कपास के फूल श्रीर घृतकुमारी के रस में भावना देकर मर्दन कर सुखा ले। वाद में टक्त कज्जली को समतल बोतल के भीतर रख कर बोतल के मुख को काग से चन्द कर रेती से भरे हुए हाण्डी के अन्दर बैठाकर बोतल के गले तक रेती भर दे। वाद में कमवर्द्धमान अप्ति में लगातार ३ दिन तक गरम कर बोतल के गले में संलग्न मकरध्वज को निकाल ले। इस तरह से अस्तुत मकरध्वज १ पल, कपूर १ पल, जायफल, पीपल, लोंग अत्येक ४ पल, कस्तूरी आधा तोला, एकत्र मर्दन कर ले। मात्रा-१ रत्ती से २ रत्ती। अनुपान—पान का रस।

का मिनीद्र्यदन—पारद १ तोला, गन्धक १ तोला एकत्र कज्जली कर धतूरे के बीज का चूर्ण २ तोला मिलाकर धतूरे के तेल के साथ मर्दन कर २ रत्ती मात्रा की गोली बनावे। श्रनुपान—दूध।

श्रनन्त कु सुमाकर — स्वर्ण, मोती, कस्तूरी श्रौर हरिताल प्रत्येक १ तोला, घृतकुमारी के रस के साथ मर्दन कर २ रत्ती की गोली वनावे। श्रनुपान — घी श्रौर मधु।

सिद्धसूत—मोती, पारा, सोना, चांदी, यवक्षार, प्रत्येक १ तोला एकत्र कर लालउत्पल (कमल) के पत्ते के रस में मर्दन कर उसके साथ १ तोला गन्धक मिला कर मर्दन करे। बाद में वालुकायंत्र में पाक करे। यात्रा-३ रत्ती। श्रजुपान—सतावर का रस श्रोर चीनी।

कामान्निसन्दीपन—पारद, गन्धक, हिंगुल, मनःशिला प्रत्येक १ पल एकत्र मर्दन कर क्रमानुसार श्रदरक, धत्रे के बीज, सफेद जयन्ती श्रीर . भंगराज के रस में क्रमशः ७-७ बार भावना देकर बीतल में भर कर बालुकायंत्र में पकावे। बाद में उसके साथ समभाग मिलित इलायची, जायफल, कपूर, कस्तूरी, पीपल श्रीर श्रक्षगन्धा मिश्रित कर मर्दन करे। मात्रा-२ रत्ती।

श्रीमद्नानन्द् मोद्क-पारद, गन्धक, लोह, प्रत्येक १ तोला, श्रश्रक १ तोला, कपूर, सेंधानमक, जटामांसी, श्रांवला, इलायची, सोठ, पीपल, काली मिर्च, जावित्री, जायपल, तेजपत्ता, लोंग, जीरा, मुलेठी, वच, कुड़ा, हलदी, देवदार, हिज्जलबीज, सोहागा, वामनहाटी (भारंगी), सोंठ, नागेश्वर, कुकरोंधा, तालीशपत्र, हाक्षा, चीतामूल, दन्ती बीज, बला, नागवला, गुडत्वक् (दालचीनी), धनिया, दाक्षा, चीतामूल, दन्ती बीज, बला, नागवला, गुडत्वक् (दालचीनी), धनिया, गजिपटपली, शटी (कचूर), सुगन्धवाला, मोथा, गन्धप्रसारणी, भूमिङ्ग्धाण्ट गजिपटपली, शटी (कचूर), सुतावर) मूल, श्रालकुशी (कोच) वीज, गोक्षर वीज, (विदारीकन्द), शतमूल (शतावर) मूल, श्रालकुशी (कोच) वीज, गोक्षर वीज,

२२ र० चि०

विद्वहक बोज, भांग का बोज, प्रत्येक का चूर्ण १ तोला। इन सवों को एकत्र कर शतावर के रस में मर्इन कर सुखा ले, फिर चूर्ण करे। बाद में उसके साथ सर्व चूर्ण का है भाग सेमर के मूल का चूर्ण एवं उसके साथ सारे चूर्ण का है भाग भाग का चूर्ण एकत्र मिला कर बकरी के दृध में पेषण करे। बाद में चूर्ण का दुगुना शक्कर और ८ गुना दूध मिलाकर मृदु अग्नि में पकावे। कुछ देर बाद गुडत्वक् (दालचीनी), तेजपत्ता, इलायची, नागेश्वर, कपूर, सेंधानमक, त्रिकटु, इनका कुछ चूर्ण एवं घी और मधु मिलाकर रखे। मात्रा-श्राधा तोला। श्रनुपान-गरम दूध। यह श्रीषध सेवन के बाद बलकर और पृष्टिकर भोजन खाने से उत्तम फल मिलता है। धतूरा बीज, तिल्ली, घी, गाय का घी और शक्कर के साथ खीर बना कर श्रनुपान करने से बलवीर्य और रितशिक्त श्रत्यन्त वहती है।

क्लैब्यनाशक योगावली—भूसी रहित काली तिल्ली श्रीर गोक्षरबीज का चूर्ण समपरिमाण में लेकर बकरी के दूध में उबाल कर ठण्डा होने पर श्रद्ध तीला की मात्रा में मधु के साथ सेवन करे। इसके सेवन से खराव खराब श्रीषध प्रयोग के फल से उत्पन्न क्लैब्य (नपुंसकता) नष्ट होता है।

शूकर की चर्वी को मधु के साथ मिलाकर िंग में मलने से ध्वजभङ्ग निवृत्त होता है।

#### वाजीकरणाधिकार

वाजीकरण चिकित्सा का पूर्वक्रम—देह को वमन श्रीर विरेचनादि द्वारा शुद्ध कर वाजीकरण श्रीषध सेवन करना चाहिये। सोलह से सत्तर वर्ष की उम्र तक श्रवस्थानुसार वाजीकरण श्रीषध सेवन करना श्रावश्यक है। वाजीकरण श्रोषधियां ठीक नियम से सेवन न कर श्रात्यधिक श्रीसहवास करने से नपुंसकता, क्षय श्रादि विविध रोग उत्पन्न होते हैं।

खाद्य द्रव्यों से दूध, मांसरस और मधुर रसयुक्त भोजन अतिशय पुष्टिकर है, इसलिए वाजीकरणार्थी व्यक्तियों को उपयुक्त मात्रा में इन्हें ब्रहण करना चाहिए।

वाजीकरणार्थी व्यक्ति उपवास, चिन्ता, शोक, श्राति श्रम्ल, लवण, क्षार द्रव्य, शाक, तिक्त श्रीर कटु द्रव्य परित्याग करे।

## वाजीकरणार्थं रसप्रयोग चिकित्सा

सन्मथाभ्र रस—पारद, गन्धक, अभ्रक प्रत्येक ४ तोला, कप्र आधा तोला, वंग १ तोला, तांवा आधा तोला, लोहा २ तोला, विद्धकृ वीला, जीरा, भूमिकृष्माण्ड (विदारीकन्द), शतावर, कुलेखाडा (तालमखाना) का वीला, वला, आलकुशी (कोंच) वोला, नागवला, जावित्री, जायफल, लोंग, भांग का वीला, सफेद धूप और जवाइन प्रत्येक आधा तोला। इन्हें जल में मर्दन कर २ रत्ती की गोली वनावे। अनुपान-गुनगुना दूध।

महेश्वरस्न—रसिनदूर १ तोला, गन्धक १ तोला, लोह ४ तोला, तांवा आधा तोला, सोना २ माशा, कपूर २ माशा, अअक ४ तोला, विद्वदंक वीला, शतावर, वला, नागवला, इलायची और शंखपुष्पी प्रत्येक ४ माशा, जल में मईन कर १ रत्ती को गोली वनावे। अनुपान-गाय का दूध।

कामदेवरस—पारद १ भाग, सोना है भाग एकत्र सेमर के मूल के रस, केले की जड़ का रस, दूध, गन्ने का रस, गन्य घृत, मधु, केले के फूल का रस और गोक्षर के काथ के साथ वार-वार मर्दन कर धूप में सुखा दे। वाद में उसके साथ चीनी, आंवला, द्राक्षा, तालमूली, उड़द, मधु और पका केला मिलाकर आधा तोला की मात्रा में गोली वनावे। अनुपान-गाय का दूध।

पुष्पधन्वारस—सोना, चादी और तावा प्रत्येक १ भाग, केले की जड़ के साथ पीस कर गोला बनाकर भूधरयन्त्र में पाक करे। पाक समाप्त होने पर इसमें तिगुना गंधक और तिगुना कान्तलोह मिलाकर सेमर के मूल के रस और मुलेठी के काथ के साथ एक पक्ष (१४ दिन) तक मर्दन करे। वाद में पान के रम के साथ १ प्रहर तक मर्दन करे। मात्रा—तीन रत्ती। अनुपान—भूमिकुष्माण्ड (विदारी-कन्द) चूर्ण और मधु।

म्प्रतंग सुन्दरस् —समपरिमित पारद और गन्धक की कजली कर मुंदि फूल के रस में तीन दिन पीसकर गोला तैयार करे। फिर गोले को मूपारुट कर वालुकायन्त्र में एक प्रहर तक पकावे। वाद में औपन को वाहर निकाल कर वालुकायन्त्र के रस और सफेद कमलफूल के रस में एक-एक िन मर्टन कर लालवक्ष्रूल के रस और सफेद कमलफूल के रस में एक-एक िन मर्टन कर रती मात्रा में सेवन करे।

मदनसुन्द्र—समपरिमित पारद श्रीर गन्धक हेला फूल के रस में मदन कर वालुकायन्त्र मे पाक कर ले। मात्रा-१ रत्ती। श्रनुपान-सेमर के मूल का चूर्ण श्रीर मधु।

पूर्णचन्द्रस्य—पारद श्रीर गन्धक समभाग, एकत्र श्रश्वगन्धा, गुरुच श्रीर मुलेठी के क्वाथ के साथ एक दिन मर्दन कर उसके साथ, शंख, मोती श्रीर मंह्रभस्म प्रत्येक पारद के वरावर मिलाकर पुनः भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द) के रस में एक दिन मर्दन कर गोला तैयार कर ले। उसके बाद भूधरयन्त्र में पृष्टपाक कर पान के रस से एक दिन मर्दन कर चूर्ण बना ले। मात्रा—१-२ रत्ती। श्रमुपान-घी श्रीर मधु।

कामदीपक रस-श्वेत पुनर्नवा मूल चूर्ण कर सेमर के रस मे भावना देकर उसके साथ सेमल की लोई और गन्धक समभाग मिलाकर ६ रत्ती की गोली वनावे। अनुपान—गाय का दूध।

कामदूत रस—पारद, गन्धक, कान्तलोह भस्म समभाग मे एकत्र कर सेमर के रस मे एक प्रहर तक घोट कर गोला बनावे। वाद मे उसे घी के साथ काच की चिमनी के भीतर रख कर पकावे। शीतल हो जाने पर भूमिकुष्माण्ड (विदारी कन्द) श्रीर पान के स्वरस के साथ मर्दन करे। मात्रा-४ रत्ती। घी श्रीर मधु के साथ सेवन कर दूध श्रीर शक्कर का श्रनुपान करे।

कामेश्वरमादक—ग्रभक, कैथ, कुड़ा, श्रक्षगन्धा, वच, मेथी, मोचरस, भूमिकुमाण्ड (विदारीकन्द), तालमूली, गोक्षर, कोकिलाक्ष बीज, केले की जह, शतावर, वनजवाइन, रड़द, तिल्ली, धनिया, मुलेठी, नागवला, कसेरू, मगन फल, जायफल, सेंधानमक, भृद्धराज, कुकरोधा, त्रिकट, जीरा, काला जीरा, नीतामृल, दारचीनी, इलायची, तेजपत्ता, नागकेशर, पुनर्नवा, गजपिप्पली, द्राक्षा, गटा (कन्म्), नुगन्धवाला, सेमरमूल, त्रिफला श्रीर श्रालकुशी (कौंच) बीज प्रत्येक सम्भाग, इन सबके वरावर भांग समष्टि की दुगुनी चीनी एकन्न घी श्रीर महा के गाय मिलाकर रखले। माना-है तोला। गरम दूध के साथ सेवन करे।

मकरध्वजरस—स्वर्णपत्र १ पल, पारद ८ पल, गन्धक २४ पल, एकत्र रात्र व्यान वा फुल श्रोर घृतकुमारी के रस में घोंट कर कज्जली वनावे। वाद में स्थानन वोतल में भर कर वोतल के मुख को ढक्कन से बन्द कर रेती से भरे हुए हाण्डी में बोतल के गले तक रखकर क्रमवर्द्धमान श्रिप्त मे ३ दिन गरम करे। गलदेश मे संलग्न लाल मकरध्वज श्रहण कर उसे १ पल श्रौर कपूर, लोंग, कालीमिर्च, जायफल प्रत्येक ४ तोला श्रौर स्गनाभि (कस्तूरी) ६ साशा एकत्र कर मर्दन करे। मात्रा-२ रत्तो। श्रानुपान—पान का रस।

रसेन्द्रचूडामणि—पारद १ भाग, स्वर्ण २ भाग, सीसक ३ भाग, श्रम्रक ४ भाग, कान्तलोह ६ भाग, सोनामाखी ७ भाग, विमलभस्म ८ भाग श्रीर रीप्यमाक्षिक ९ भाग। ये सब द्रव्य एकत्र मिश्रित कर क्रयानुसार ७ वार धत्रा पत्ता, भांग, पीपल, गुरुच, वामनहाटी (भागीं), लताफठकी, लज्जालु लता, भोथा, मुलेठी, सतावर, श्रालकुशी (कौंच) श्रौर सर्पाक्षी के रस या काथ में भावना दे। वाद में उसके साथ श्राधा भाग श्रफीम मिलाकर फिर तुलसीमज्ञरी, चन्दन, श्राकमूल, श्रकरकरा, पीपल श्रौर मुण्डिरी के रस या क्वाथ एवं कुंकुम (केशर) श्रौर मृगनाभि (कस्तूरी) के जल में भावना दे। इसकी मात्रा-१ माशा। दूध श्रौर चीनी के साथ सेवन करे। श्रौषध सेवन के वाद दूध का पान करे। यह श्रितराय कामोद्दीपक श्रौर वीर्यस्तम्भक है।

# बाजीकरणार्थ विभिन्न योगावली—

- (१) वकरे का अण्डकोष कुछ पीपल और सेंधानमक के साथ गाय के घी में तल कर सेवन करने से रितशक्ति अत्यन्त बढ़ती है।
- (२) बकरे के अण्डकोष के साथ दूध पाककर उस दूध में तिल तण्डल (छिलका निकाला हुआ तिल) का ७ बार भावना दे। मात्रा-आधा तोला से १ तोला। घी और मधु के साथ सेवन करे। यह अत्यन्त रतिशक्तिवर्धक है।
- (३) नरम सेमल मूल श्रोर तालमूली चूर्ण समपरिमाण में घी श्रोर मधु के साथ चाट कर ऊपर से दृघ पीने से वीर्य वढता है।
- (४) भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द) का चूर्ण, भूमिकुष्माण्ड के रस में ७ वार भावना देकर छाया में सुखा ले। मात्रा-१ तोला। श्रतुपान—घी श्रौर मधु।
- (५) ब्रालकुरा (कोंच) वीज श्रोर कोकिलाक्ष वीज के चूर्ण को सम परिमाण में मधु श्रोर चीनी के साथ मिलाकर गुनगुने दृध के साथ सेवन करने से श्रह्ट रित शक्ति उत्पन्न होती है।

- (६) २ तोला मुलेठो का चूर्ण घी श्रौर मधु के साथ सेवन कर दूध पीने से कामवेग वढता है।
- (७) हरी, शिलाजीत त्रौर विडङ्ग चूर्ण समभाग मिलाकर १ तोला, इसे लेकर घो के साथ लेहन करने से बूढ़ा भी जवान हो जाता है त्रार्थीत् उसकी मैथुन करने की शक्ति उत्पन्न होती है।
- (८) त्रावले का चूर्ण श्रांवले के स्वरस में ७ दिन तक भावना देकर एक तोले की मात्रा में घी श्रोर मधु के साथ लेहन कर दूध का श्रनुपान करे। यह श्रतिशय वलकारक है।
- (९) हस्तिकर्णपलाश मूल के चूर्ण को सबेरे मधु के साथ उपयुक्त समय तक सेवन करने से रितशिक्त अत्यन्त वढती है।
- (१०) रससिन्दूर त्रीर मधु एकत्र मिलाकर लिंग में लेप करने से मैधुन शक्ति वढती है।
- (११) कपूर, पारद, सोहागा, पीपल, घृत श्रीर कोचई ये सब द्रव्य एकत्र मधु, धतूरे के पत्ते के रस श्रीर बक पत्ते के रस के साथ मिश्रित कर लिग में लेप करने से कामिनीगण द्रवित हो जाती है।

कामधेनु—स्वर्ण, श्रभ्रसत्त्व, ताम्र प्रत्येक १ पल, सीसक सत्त्व २ तोला. एकत्र ये सव द्रवीभूत कर उसके साथ २० पल पारद मिश्रित कर पिष्टि प्रस्तुत करे। उसे पातनयंत्र में पातित कर पुनः पुनः इन सब द्रव्यों के साथ मिलाकर क्रमानुसार सौ वार पातित करे। इस तरह से २ पल पारद श्रवशिष्ट रहने पर उसे यथाविधि भस्म कर १ पल परिमित भस्म के साथ हीरक भस्म ४ माशा, श्रभ्रकभस्म ६ पल श्रीर गन्धक २ पल एकत्र मिश्रित कर दो दिन मर्दन करे। वाद में लोहे के पात्र में रखकर सेमल का क्षाथ चालीस पल थोड़ा २ करके प्रचेप देकर मृदु श्रिग्न में जारित कर ले। इसकी मात्रा—१ रत्ती। वाजी-करण श्रीपथ समूह में यह श्रेष्ठ है। एवं इसके सेवन से श्रनेक उत्कट श्रीर दुःसाध्य रोग निवृत्त होते हैं।

कामाङ्गनातायकरस—पारद श्रीर गन्धक समभाग एकत्र रक्तीत्पल नम के नाय १ प्रहर तक मर्दन कर श्राधा भाग गन्वक मिलाकर ३ रत्ती की गोलां बनावे। चोनी के साथ सेवन कर भांग की जढ़, तालमूली श्रीर चीनी-दूध, के नाय श्रनुपान करे। एवं चितर पक्षी का मांस भोजन करे।

कामकलाख्यरस-पारद, श्रभ्रक श्रीर सीना समभाग एकत्र लेकर श्ररवगन्धा, गुरुच, तालमूली श्रौर केले की जड़ के रस में एक दिन मर्दन कर मृदु अप्रि मे पुटपाक करे। इस तरह से ८ वार पुटपाक कर १ माशे की मात्रा में सेमर के रस के साथ सेवन कर आलकुशी (कौंच) बीज चूर्ण और दूध के साथ श्रनुपान करे।

कुसुमायुध-पारद २ पल, गन्धक ४ पल, सोना ६ तोला, रौप्यमाक्षिक, स्वर्णमाक्षिक श्रीर लोहा प्रत्येक २ पल, मण्हर श्रीर श्रश्रक प्रत्येक २ तोला एकत्र हिंगुल के साथ मर्दन कर श्रनावृत मूषा में रख दे श्रौर बालुकायंत्र में व्राह्मीरस के साथ एक दिन पाक कर ले। बाद में श्ररूसा, गजपिप्पली, त्रिकटु, लोह, श्रद्रक, निसिन्दा (निर्गुण्डी), तालमूली, हाथीशुंडा श्रौर चीतामूल प्रत्येक के रस या क्वाथ में कमानुसार ३ दिन पाक करे। बाद में पुनः इन सव रसो के साथ मर्दन कर १-१ वार पुटपाक कर ले। मात्रा-६ रत्ती। अनुपान-सेमर मूल का रस । यह परम वाजीकरण श्रोषध है ।

वाजीकरण श्रोषध के साथ प्रयोज्य श्रनुपान—श्रश्वगन्धामूल चूर्ण, भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द), शतावर चूर्ण, सेमर मूल चूर्ण, सेमर फूल चूर्ण, श्रांवले का चूर्ण, मुलेठी चूर्ण, कुलेखाड़ा (तालमखाना) के चीज का चूर्ण, भांग बीज का चूर्ण, त्र्यालकुशी (कौंच) बीज का चूर्ण, उड़द का चूर्ण, रवेत पुनर्नवा के मूल का चूर्ण, तालमूली, जायफल, मृगनाभि (कस्त्री), पान का रस, गोक्षर रस, गोक्षर बीज, कपूर, घी श्रीर मधु एवं दूध, मक्खन श्रादि।

#### रसायन

जो श्रोषध जरानिवारक श्रोर वयःस्तम्भक है एवं जिसके सेवन से श्रायु, स्मृति, मेधा, बल श्रीर वर्ण की वृद्धि होती है श्रीर इन्द्रियशक्ति की दुर्वलता नष्ट होती है उसे रसायन कहते हैं।

रसायन त्रौषध सेवन करने के प्रथम वमन-विरेचनादि द्वारा शरीर शोधन

कर लेना ऋत्यावस्यक है।

न्नेलोक्यचिन्तामणि—पारद्, हीरक, सोना, चांदी, तांवा, लोहा, मोती, गन्धक, शंख, प्रवाल, हरिताल श्रीर मैनशिल समभाग एकत्र चीतामूल के रस में ७ दिन एवं त्रांक की लेई, निसिन्दा (निर्गुण्डी) के रस, कीचर्ड के रस श्रीर तिन की लेई में ३ दिन भावना देकर पोले रंग की कौडियों के भीतर रख दे। श्राक की लेई में सोहागा मर्दन कर उसके द्वारा कौडियों का मुख बन्द कर दे। याद में कौडियों को भाण्ड के भीतर रखकर मुख को डक कर बालुकायन्त्र में पाक करे। ठण्डा होने पर चूर्ण कर उसके साथ समपरिमाण रसिसन्दूर श्रीर सिन्दूर की चौथाई भाग पुखराज मिलाकर सिहजन के रस में ७ बार श्रीर चीतामूल के रस में २१ वार भावना देवे। मात्रा-३ रत्ती। उपयुक्त श्रनुपान के साथ सेवन करने से साध्य-श्रसाध्य श्रीर विविध प्रकार के रोग नष्ट होते है।

उद्याद्त्यरस—पारद १ पल, गन्धक २ पल, २० प्रसृति परिमित श्रदरक के रस के साथ मर्दन कर तांबे की मूला में रुद्ध करे फिर मिट्टी से लिप्त कर पुटपाक कर १ रत्ती की मात्रा में घी श्रौर सोठ चूर्ण के साथ सेवन करे। एवं १ प्रसृति गरम पानी पीवे। यह जराप्रतिरोधक है।

लद्दमीविलास—सीसक ४ भाग, पारद १ भाग, गन्धक ३ भाग, त्रिकटु चूर्ण ८ भाग, तिन्दुक (गाव) ६ भाग, सोहागा ८ भाग ये सब द्रव्य भंगराज, घ्रदरक, गुंजा घ्रौर जवाइन के रस या काथ के साथ ३ बार भावना देकर घ्राक के पत्ते से लपेट कर, उसे सुखाकर ६ रत्ती मात्रा में भंगराज के रस के साथ सेवन करें।

कान्ताश्चरसायन—जारित अश्रक श्चीर कान्तलोह भस्म समभाग एकत्र श्चरक के रस के साथ मर्दन कर सोलहवां भाग स्वर्ण अस्म मिलाकर नीवू के रस में ७ दिन मर्दन करे। वाद में श्चरूसा के रस, मुण्डिरी के रस, तालमूली के रन श्चीर दशमूल के काथ द्वारा सौ बार भावना देवे। यात्रा-२ रत्ती। श्चनुपान-त्रिकट श्चीर त्रिफला चूर्ण एवं घी श्चीर मधु। इसके सेवन से पाण्ड, शोय, उदररोग, प्रहणी, क्षय, कास, जीर्ण ज्वर श्चीर विषम ज्वर एवं प्रमेह शादि श्चनेक रोग नष्ट होते हैं।

कमलाविलास रस — लोहा, श्रश्रक, गन्धक, पारद, सोना श्रोर हीरा, रन सब द्रव्यों को घृतकुमारी के रस में मर्दन कर पके एरण्ड के पत्ते से श्रव्छी तरह बांध कर २ दिन धान के ढेर के भीतर गाड़ कर रख दे। इसकी मात्रा— राता । श्रमुपान—त्रिफला चूर्ण श्रोर मधु। यह जरा, कास, पाण्डु श्रोर प्रमेह कार्यहर लोह—श्वेत पुनर्नवा, दन्तीमूल, श्रश्वगन्या, हर्रा, वहेड़ा, श्रावला, सोंठ, पीपल, कालीमिर्च, दालचीनी, इलायची, तेजपत्ता, शतावर, वला इनका चूर्ण समभाग एवं समुदित चूर्ण का समपरिमाण लोहा मिलाकर ६ रत्ती की गोली बनावे। श्रनुपान—भीमराज का रस। यह वल, वर्ण, श्राप्त श्रीर नीर्यवर्षक है।

नृहन् पृर्णचन्द्रस्य—पारद, गन्धक प्रत्येक ४ भाग, लोहा, श्रभ्रक प्रत्येक ८ भाग, चांदो २ भाग, वंग ४ भाग, सोना, तांवा श्रोर कांसा प्रत्येक १ भाग, जातीफल, लोंग, इलायची, दालचीनी, जीरा, कपूर, प्रियहु, मोथा प्रत्येक २ भाग एकत्र घृतकुमारी के रस में मर्दन कर त्रिफला के क्वाथ श्रीर एरण्डमूल के रस में भावना देकर एरण्ड के पत्ते से लपेट कर ३ दिन धान की राशि के भीतर गाड़ कर रख दे। चने के समान गोली वनाकर पान के रस के साथ सेवन करे। यह उत्कृष्ट वाजीकरण श्रीर रसायन है।

श्रीमहालद्मीविलास रस—श्रम्भ ८ तोला, गन्धक, पारद ४-४ तोला, वंग २ तोला, चांदी, सोनामाखी १-१ तोला श्रौर तांवा श्राधा तोला, कपूर, जावित्री श्रौर जायफल प्रत्येक ४ तोला, विद्धडक वीज, धतूरे का वीज प्रत्येक २ तोला, सोना १ तोला एकत्र पान के रस में मर्दन कर २ रत्ती की गोली वनावे। श्रमुपान—दूध। यह पुष्टिवर्द्धक है।

# रसायनार्थ लोहसेवन की विधि—

मृत्युहारी रख—तिल के समान मोटे लोहे के पत्र का टुकड़ा—टुकड़ा कर उसे २१ वार तिल की लकड़ी की श्राप्त में गरम करे एवं श्रावले के रस में निर्वापित करे। वाद में इस लोहे के पत्र को एक सौ पल परिमित श्रांवले के रस में डुवा कर एक हाण्डी में रख दे एवं हाण्डी को डक कर भस्म राशि के भीतर रख दे। प्रत्येक महीने में लोहदण्ड द्वारा इस लोहे के पत्र को एक वार हिलावे एवं श्रावले का रस सूख जाने पर फिर उसमें रस निर्चेप करे। एक साल के भीतर उक्त लोह द्वीभूत हो जायगा। वाद में उसे वाहर निकाल कर चौथाई तीले की मात्रा में लोहे के वर्त्तन में घी श्रोर मधु के साथ मिलाकर सेवन करे। श्रोपध जीण होने पर घी, दूध, मांसरस, मूंग का यूष श्रादि पथ्य करे। इस प्रकार से १ वर्ष श्रोपध सेवन कर, फिर एक वर्ष हितकर पथ्य भोजन कर संयमी प्रकार से १ वर्ष श्रोपध सेवन कर, फिर एक वर्ष हितकर पथ्य भोजन कर संयमी

होकर कुटीगृह में रहने से मनुष्य जरा के हाथ से छुटकारा पाता है श्रीर सुदीर्घ जीवन का श्रिवकारी होता है।

लौहगुग्गुलु—लोहा ८ तोला, गुग्गुलु २४ तोला, त्रिकटु ४० तोला एर्व त्रिफला १ सेर, इन सब द्रव्यों का चूर्ण बनाकर मिलित २ तोले की मात्रा में घी श्रीर मधु के साथ सेवन करने से दीर्घ जीवन लाभ होता है।

पारद भस्म १ भाग, स्वर्ण भस्म है भाग, इन सब द्रव्यों को क्रमानुसार व्राह्मी, भीमराज, शंखपुष्पी, मुलेठी, हस्तिकर्णपलाश श्रौर श्रावले के स्वरस या क्षाय में भावना देकर १ रत्ती की मात्रा में घी श्रौर मधु के साथ प्रतिदिन सेवन करने से जरा नष्ट होती है।

वज्रपंजर रस—समपरिमित पारद श्रौर हीरक भस्म एकत्र खुलकुड़ि (मंह्कपणीं) के रस में मर्दन कर पुटपाक करे। उसके बाद समपरिमित पारद के साथ मर्दन कर फिर पुटपाक करे। फिर चतुर्थाश परिमित यह भस्म कांजी के साथ मर्दन कर उससे स्वर्णपत्र को लेप कर उसका भस्म बना ले। श्राधा सरसों की मात्रा में चीतामूल, श्रदरक, सेधानमक, बच श्रौर सौवर्चल लवण के साथ इसे सेवन करे एवं क्मशः मात्रा बढ़ाकर १ तोले तक सेवन करे। इसे यथाविध सेवन करने पर मानव जरा श्रौर वार्द्धक्य द्वारा पीडित नहीं होता है।

वसन्तकुसुमाकररस—प्रवाल, रसिसन्दूर, मोती, श्रश्रक प्रत्येक ४ भाग, चांदी, सोना प्रत्येक २ भाग, लोहा, सीसा, वंग प्रत्येक २ भाग, इन सब को एकत्र कर श्रह्सा, हल्दी, गन्ना, पद्म, मालतीफूल श्रीर केले मूल के रस, दूध श्रीर चन्दन के क्वाथ में एवं मृगनाभि (कस्तूरी) के साथ ७ वार भावना देकर २ रत्ती की गोली वनावे। यथायोग्य श्रनुपान के साथ प्रयोग करे।

श्रप्टावकरस—पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, सोना, चांदी १-१ भाग, सीना, तावा, खर्पर श्रोर वङ्ग प्रत्येक है भाग, इन सवको एकत्र मिलाकर वटाङ्कर के रम श्रोर घृतकुमारी के रस में तीन २ घण्टे तक मर्दन कर मकरध्वज विधि के अनुमार पाक कर ले। मात्रा-२ रत्ती। पान के रस के साथ सेवन करे।

श्रमृतार्णवरस—रसिन्दूर ४ भाग, लौह ८ भाग, श्रभ्रक ६ भाग, गन्धक ४ भाग, इन सब द्रव्यों को एकत्र कर त्रिफला, भीमराज, सिहजन, चीता पीन एटर्श के काथ में पृथक्-पृथक् ७ वार भावना देकर इन सर्वों के वरावर

पीपल चूर्ण घौर पुराना गुड़ मिला ले। मात्रा—१ तोला, िमन्टी के रस श्रीर गुढ़ के साथ सेवन करने से जरा निवृत्त होती है।

मकरध्वज रसायन—स्वर्ण २ भाग, वज्ञ, मोती, कान्तलोह, जायफल, जावित्री, चांदी, कांसा, रसिसन्दर, प्रवाल, कस्तूरी, कपूर श्रीर श्रभ्रक प्रत्येक १ भाग, रसिसन्दूर ४ भाग एकत्र श्रच्छी तरह से मर्दन करे। मात्रा-२ रत्ती। श्रचुपान—पान का रस। यह श्रेष्ठ रसायन है।

चन्द्रोदयरस—मृदु स्वर्णपत्र १ पल, पारद ८ पल, गन्धक १६ पल, इन ३ वस्तुत्रों को एकत्र मर्दन कर लाल कपास के फूल एवं घृतकुमारी के रस के साथ श्रव्छी तरह से पेपण कर सुखा ले। वाद में मिट्टी लेप किये हुए कपड़े के दुकड़े से लपेट कर सूर्यिकरण से उत्तप्त वोतल के भीतर उक्त कव्यली को रख कर लकड़ी के उद्धन से मुख वन्द कर दें। एवं वालुकायन्त्र में तीन दिन पाक कर ठएडा होने पर निकाल ले। इस प्रकार तैयार किया हुआ रस सिन्दूर, कपूर, जातीफल, पीपल, लोंग प्रत्येक ८ तोला, कस्तूरी श्राधा तोला एकत्र मर्दन कर दो रत्ती की गोली वनावे। श्रनुपान-पान का रस श्रीर मधु।

महाकनकानुन्दर—कान्तलोह, स्वर्ण और गन्धक के सहयोग से जारित पारद १६ माशा, स्वर्ण ४ माशा, एकत्र कान्तलोह के पात्र में रख कर उसमें ४० निष्क (२०० माशा) गन्धक चूर्ण निक्षेप कर वेर की लकड़ी की श्रिप्त में जारित कर ले। वाद में उक्त पारदचूर्ण ४ माशा लेकर घत भावित और मधु से भरे हुए भाण्ड में रख दे। वाद में ३६० हरें को नियमानुसार पकाकर उद्धिखित भाण्ड में रख दे। पहले इन हरीं में हर एक हरें को तीन भागों में विभक्त कर १ भाग २ दिन में, दूसरा १ भाग तीन दिन में और शेष १ भाग को ४ दिन में खावे फिर प्रतिदिन एक हरें खावे। यह श्रात उत्कृष्ट रसायन और जरानाशक है।

## रसायनार्थं विभिन्न योगावली—

ऋतु हरीतकी—ग्रीष्म में गुड़, वर्षा में सेंधानमक, शरद् में चीनी, हेमन्त में सोंठ, शीत में पिप्पली श्रीर वसन्त काल में मधु के साथ हर्रा सेवन करने से जरा दूर होकर वल-वीर्यादि बढ़ता है।

मृंगराज चूर्ण १ भाग, तिल श्राधा भाग, श्रांवला श्राधा भाग एक साथ मिश्रित कर शक्कर के साथ सेवन करने से रसायन क्रिया होती है।

सफेद पुनर्नवा श्राधा पल, गाय के दूध में पीस कर तीन महीने तक नियम-पूर्वक सेवन करने से यौवन स्थिर रहता है।

हुग्धाशी होकर एक यहीने तक भृंगराज का रस ख्राधा पल की मात्रा में पान

करने से उत्तम रसायन क्रिया होती है।

शतावर, सुण्डिरी, गुरुच, हस्तिकर्ण पलाश श्रोर तालमूली इन सव द्रव्यों को -समभाग में एकत्र मिलाकर घी श्रीर मधु के साथ सेवन करने से जरा, व्याधि श्रीर अकाल मृत्यु के पंजे से छुटकारा मिल सकता है।

गुरुच का स्वरस, ब्राह्मी का स्वरस, सुलेठी का चूर्ण, मूल-पुष्प समन्वित

-राह्वपुष्पी का कल्क, ये सव द्रव्य रसायन हैं।

# विष चिकित्सा

भीमरुद्ध रस—पारद १ तोला, गन्धक १ तोला, अभ्रक २ तोला, कान्त-लोह १ तोला एकत्र कर राखालशशा ( इन्द्रायण ) के मूल, बृहती ( बड़ी कटेरी ), त्राह्मी शाक, नोलोत्पल, त्रानार, शूकशिम्बी एवं शतावर के रस से पृथक्-पृथक् भावना देकर १ रत्ती की गोली वनावे। श्रनुपान—शीतल जल। इसके सेवन से कुत्ते त्रौर सियार द्वारा काटे हुए विष एवं श्रन्यान्य विषक्रिया भी विनष्ट होती है।

विषवज्रपात रस-हलदी, सोहागा, जावित्री, तूतिया समभाग में लेकर घोपाफल के रस द्वारा यद्न कर चौथाई तोला से है तोला की सात्रा में नरमूत्र या गोमूत्र के साथ सेवन करने से सर्पदंश जनित विष एवं स्थावर विष नष्ट होते हैं।

मृतसंजीवन रस—पिडिंशाक, कैवर्तमुस्ता (केवटी मोथा), गेटेला, सौराष्ट्रमृत्तिका, शैलज, गोरोचना, तगरपादुका, गन्धतृण, कुंकुम, जटामांसी, निसिन्दा (निर्गण्डी) मंजरी, इलायची, हरिताल, चायुले बीज, बृहती (बड़ी कटेरी ), शिरीपपुष्प, धुना ( राल ), कुमड़िया लता, राखालशसा ( इन्द्रायण ), देवदारु, पद्मकेशर, लोध, मनःशिला, रेणुक, जातीपुष्प, श्राकपुष्प, सरसों, हलदी, दारुहलदी, हीग, पिप्पली, लाख, सुगन्धवाला, मुगानी, मुलेठी, मैनफल, निसिन्दा ( निर्गुण्डी ), सोन्दाल, लोध, श्रपामार्ग, प्रियङ्क, रास्ना श्रौर विडङ्ग इन सव द्रव्यों को पुष्यनक्षत्र में प्रहण कर समभाग में एक साथ मिलाकर गोली वनावे। विपात्तं व्यक्ति पर श्राघ्राण, नस्य, लेपन, धारण श्रौर धूमप्रहण, ऐसे विभिन्न टपाय प्रयोग करे।

तादर्यस्त—पारद, गन्धक, सोहागा श्रोर सोना समभाग एकत्र कांटानटे के रस में ३ वण्टं तक मर्दन कर गोली वनावे। वाद में उसे चुम्वक लोहे से वनी हुई मूणा में रुद्ध कर भूधरयंत्र में पुटपाक करे। श्रोषध निकाल कर फिर कांटानटे के रस के साथ मर्दन कर ले। मात्रा-२ रत्ती। श्रनुपान-राखालससा (इन्द्रायण) के मूल का रस।

#### विपिकयानाराक योगावली-

- (१) कपूर और राई सरसों के साथ समपरिमित पारद मिश्रित कर गोवर जल में भावना दे। १ रत्ती मात्रा में यह औषध सेवन करने पर स्थावर श्रौर जन्म दोनों प्रकार के विप नष्ट हो जाते हैं।
- (२) समपरिमित पारद श्रीर कांटानटे की जड़ चावल घोये हुए जल के साय सेवन करने से विषक्रिया नष्ट होती है।
- (३) नागदमन के मूल को जल मे पीस कर उसका नस्य लेने से सर्पविए नष्ट होता है।
- (४) शिरीप का मूल, पत्ता, फल, फूल श्रौर छाल समभाग जल से पीस कर सेवन करने से सर्पविप नष्ट होता है।
- (५) जयपाल बीज के पत्ते रहित मज्जा की नीवू के रस में २१ वार भावना देकर वर्त्ति तैयार करे। मुख के लार के साथ विस कर इस वर्ति द्वारा श्राञ्जन लगाने से सर्पदष्ट व्यक्ति का विष नष्ट होता है।
- ( ६ ) डहरकरंज पत्र, त्रिकटु, विल्वमूल, हल्दी श्रीर तुलसीमझरी इन सव व्यों को वक्तरी के सूत्र में पीसकर उससे साप के काटे हुए व्यक्ति को श्रजन लगाने से संज्ञा पुनः लौट श्राती है।
- (७) धतूरे का रस, सोंठ, दूध, घी श्रोर गुड़ समपरिमाण एकत्र कर सेवन करने से कुत्ते का विष नष्ट होता है।
- (८) कालकासुन्दर के मूल को चवाकर रोगों के कान में फुतकार देने से वृश्चिक दंशविप नष्ट होता है।

(९) मूल, मंजिष्ठा, हल्दी श्रीर सेंधानमक इनका अलेप देने से चूहे का विष नष्ट होता है।

(१०) वड़, वहेड़ा, रीठाफल, लहसुन, त्रिकटु, वच, राई सरसों, श्राकनादि (पाठा) मूल श्रीर वकुल का बीज, इन सव द्रव्यों की मन्दार के रस में पीस कर छाया में सुखा दे। वाद में नरमूत्र के साथ विसकर उसके साथ पारदभस्म भिला दे। इसके द्वारा आंख में अज्ञन लगाने से सांप का विष नष्ट होता है।

- (११) गोवर के जल में कपूर भावित कर उसके साथ पारदभस्म मिश्रित कर १ रत्ती मात्रा में दही के साथ सेवन करने से स्थावर, जङ्गम श्रौर कृत्रिम विप दूर होते हैं।
- (१२) कालीमिर्च, सोठ, सुगन्धवाला श्रौर नागकेशर इनका प्रलेप देने से मक्षिकाविष नष्ट होता है।
- (१३) हल्दी, दारुहल्दी, बकमलकड़ी, मंजिष्ठा श्रीर नागेश्वर एकत्र शीतल जल में पीस कर प्रलेप देने से मकड़ी का विष नष्ट होता है।
- (१४) पुष्यनक्षत्र में सफेद पुनर्नवा का मूल उखाड़ कर चावल धोये हुए जल के साथ पीसकर खाने से एक वर्ष तक सांप के विष का कोई भय नहीं रहता है।

## सम्म चिकित्सा

- (१) वराटिकायोग वराटिकाभर्म, राङ्क्षभर्म, प्रबालभर्म, समुद्र के सीप की भर्म, मोती भर्म प्रत्येक १ भाग एकत्र कर ५ दिन तक खद्दी दही में भावना टेकर ५ रत्ती की गोली बनावे। इसे मधु और बल का दूध के साथ सेवन करने से मय प्रकार के श्रस्थिभंग, श्रस्थि की यद्दमा, जीर्णज्वर और दृषित रक्त जनित श्रमेक प्रकार के रोग श्रारोग्य होते हैं।
- (२) रससिन्दूर—२ रती मात्रा में ववुल छाल का चूर्ण एक त्राना नात्रा में दूध त्रोर मधु के साथ सेवन करने से सब प्रकार के त्रास्थि भग्न गंबोजित होते हैं।
  - (३) सप्तामृतरस—पारट, गन्धक, लाक्षाचूर्ण, श्रर्जुनछाल का चूर्ण, विन्या छाल चूर्ण, हाड्जोड़ा, मुलेठी चूर्ण प्रत्येक १ भाग; इन सबको एकत्र घी हो। नधु के साथ मर्दन कर १ माशा की मात्रा में एक वारकी प्रसूता गाय के द्य के अनुपान से प्रयोग करने पर सब प्रकार के भग्न संयोजित होते हैं।
  - ( / ) वच्तृलादि लेप—ववुल छाल का चूर्ण, श्रांवला, हरी, वहेड़ा, सोंठ, रियला, कर्लामिचे प्रत्येक १ शाग एवं गुउगुल ७ भाग एकत्र जल में सर्दन कर स्मान में प्रतेष ६ने से भन्नमन्धि संयोजित होती है।

(५) वज़लेप—हाड़जोड़ा, ग्रर्जुनछाल, लाख, श्रश्वगन्धा, गोरक्षचाकुले प्रत्येक १ भाग, गुरगुल ५ भाग एकत्र जल में मर्दन कर प्रलेप लगाने से भरन ध्रोर स्थानच्युत श्रस्थि फिर संयोजित हो जाती है।

# ससुरिका (चेचक) चिकित्सा

वातज मस्रिका में—

कज्ञालीयोग—ग्रामलासार गन्धक श्रौर हिङ्जलोत्थ पारद की कज्जली २ रत्तो मात्रा में रास्ना, दशमूल, दारुहल्दी, खसखस, दुरालमा (जवासा), गुरुच, धनिया श्रौर मोथा के काथ के साथ सेवन करे।

वातज मस्रिका में प्रलेप—मंजिष्ठा, वरगद की छाल, पाकर, शिरीव श्रोर गूलर की छाल का प्रलेप लगाने से वातज मस्रिका श्रारोग्य हीती है। वातज मस्रिका न पकने पर निम्निलिखित पाचन प्रयोग करे—

- (१) गुरुच, मुलेठी, रास्ना, शालपणी, चाकुले, बृहती (बड़ी कटेरी), कण्टकारी, गोक्षर, लालचन्दन, गाम्भारी फल, वलामूल, बेंचिमूल।
  - (२) गुरुच, मुलेठी, सुनक्का, गन्ने का मूल श्रौर श्रनार । प्रक्षेप-पुराना गुड़ । चित्तज मस्रिका में—

शोधित हिंगुल — एक त्रित उत्कृष्ट त्रोषध है। उसे परवल पत्ते के रस, मधु त्रयवा करेला पत्ते के रस त्रीर मधु त्रयवा हिंचे शांक के रस त्रीर मधु के साथ प्रयोग करे।

होधित हिङ्गुल के अनुपान स्वरूप निम्नलिखित पाचन प्रयोग करने पर अतिशय खुफल मिलता है—

(१) नीमछाल, श्राकनादि (पाठा), चेत्र पापड़ा, परवल का पत्ता, लाल चन्दन, सफेद चन्दन, खसखस, कुटकी, श्रांवला, श्रहसा श्रोर दुरालमा (जवासा)।

(२) मुनक्का, गाम्मीरी, पिण्ड खज्र, परवल पता, नीमछाल, अहसा, लाई, आंवला और दुरालमा ( जनासा )।

पित्तज मसूरिका में प्रलेप—शिरीप, गूलर अश्वत्य श्रीर वरगद, इनका छाल जल में पांसकर गाय के घी के साथ प्रलेप लगाने से पित्तज मसूरिका रोग श्रारोग्य होता है।

# कफज मस्रिका में प्रलेप—

रससिन्दूर-२ रत्ती मात्रा में निम्नलिखित पाचन के साथ प्रयोग करे।

- (१) अरुसा, मोथा, चिरायता, आंवला, हरी, वहेड़ा, इन्द्रयव, दुरालभा (जवासा), परवल का पत्ता और नीमछाल मिलाकर २ तोला, जल है सेर शेष है पाव सेवन करे।
- (२) जवासा, चोत्रपापड़ा, कुरकी और चिरायता मिलित र तोला, जल श्राधा सेर, शेष श्राधा पाव सेवन करे।

कफ्रज मसूरिका में प्रलेप—शिरीष छाल, गूलर की छाल, खदिर की लक्ष्मी त्रीम पत्ती पीस कर प्रलेप देने से कफ्रज मसूरिका निवृत्त होती है।

मस्रिका वाहर न निकलने पर एवं कुछ निकल कर श्रीर कुछ भीतर में रहने से निम्नलिखित योगावली प्रयोग करे—

(१) निरुवादि कषाय—नीम की छाल, चेत्रपापड़ा, श्राकनादि (पाठा), परवल पत्ता, कुटकी, श्ररूसा, दुरालमा (जवासा), श्रांवला, खसखस, सफेंद चन्दन श्रीर लालचन्दन, इनके क्वाथ में चीनी मिलाकर पान करे।

शोधित हिङ्कल २ रत्ती मात्रा में निम्बादि कषाय के अनुपान स्वरूप व्यवहार किया जा सकता है।

(२) स्वर्णमाक्षिक सस्म २ रत्ती मात्रा में रक्तकांचन (लाल कचनार) छाल के काथ के साथ प्रयोग करे।

# मस्रिका रोग की उपसर्ग चिकित्सा

#### ज्वर में--

- (१) पटोलादिकषाय—परवल पत्ता, गुरुच, मोथा, श्रह्सा छाल, जवाखार, चिरायता, नीमछाल, कुटकी, चेत्रपापड़ा मिलित दो तोला, जल श्राधा सेर, शेष श्राधा पाव।
- दाह में—(१) चन्दनादि काथ सेवन करे यथा:-चन्दन, चेत्रपापड़ा, खसखस, श्रहसा, मोथा, पद्ममूल, मृणाल, मौरी (सौफ), धनिया, पद्मकाष्ठ श्रौर श्रांवला मिलित २ तोला, जल श्राधा सेर, शेप श्राधा पाव।
- (२) पर्पटाद् काथ—चेत्रपापड़ा, सोथा श्रीर खसखस मिलित २ तोला, जल श्राधा सेर, शेप श्राधा पाव।

मस्रिका न पकने पर-सूखे वेर का चूर्ण गन्ने के गुड़ के साथ सेवन करे।

चमन में-गुरुच का रस या क्वाथ अथवा शीतकषाय सेवन करे। श्ल करपन श्रीर पेट फूलने पर-जांगल पक्षी के मांस के रस में सँधा नमक मिलाकर सेवन करे।

श्चरुचि में - वहे श्रनार का रस मांस के रस में मिलाकर सेवन करे।

- (१) कण्टरोध में —हरें श्रीर पिप्पली का चूर्ण मधु के साथ मिलाकर श्रवलेहन करने को दे।
- (२) जातीपत्र, मंजिष्टा, दारुहल्दी, सुपारी, शमीछाल, आंवला और मुलेठी सिद्ध किये हुए जल में इन्हें मिलाकर गण्ह्य धारण करे।

चनुःस्थ मसूरिका में - त्रांवला, हर्रा, वहेडा, मोथा, दारुहल्दी, चीनी, नीलोत्पल, खसखस, लोध, मंजिष्ठा इन सवको जल में पीसकर कपाल पर प्रलेप देने से एवं उन्हें उवाल कर उस जल द्वारा आंख को घोने से चक्षःस्थ मसूरिका दूर होती है।

- (१) मसृरिका के पीच निचारण में—गोबर कण्डे के भरम को वस्त्र से छानकर मसूरिका के ऊपर फैला दे। श्रथवा एक कपड़े की पोटली मे गोवरकण्डे की भस्म की बांध कर मस्रिका के ऊपर चाल दे। इससे मस्रिका सत्वर सूख जाती है एवं इसके वीजाणु श्रीर बढ़ नहीं सकते हैं।
- (२) वरगद, गूलर, श्रश्वत्य (पीपर), पाकर श्रीर बेंत; इनकी छाल का चूर्ण कर मस्रिका के छपर श्रवचूर्णन करने से भी मस्रिका निवृत्त होती है।

क्रिमि निवारण में—

(१) सरल लकड़ी, धूप, देवदार, चन्दन, श्रगुरु, गुग्गुलु का धुंश्रा प्रदान करे।

वेदना में - खदिर लकड़ी के काथ में गुग्गुल मिलाकर पीने के लिये दे। (१) खदिर लक्डी, श्रांदला, हर्रा, बहेडा, नीमछाल, परदल पत्ता, गुरुच

श्रीर श्रह्सा मिलित २ तोला, जल श्राधा सेर, शेष श्राधा पाव सेवन करे।

(२) पंचितिक्त गुरगुल पीने के लिये दे।

२३ र० चि०

मसूरिका पक जाने के बाद ज्वर की तीव्रता श्रीर दाह में पंचितक्तिष्ठत सारे शरीर में मल दें।

श्चन्तद्वि में — लालचन्दन श्रोर मुलेठी का क्वाथ, पंचितक्त घृत, चन्दनादि क्याय प्रयोग करे। मकरष्वज १ रत्ती, घिसे हुए सफेद चन्दन श्रोर मधु के साथ प्रयोग करे।

<uास लगने पर — षडङ्गपानीय की व्यवस्था करे।</td>

विकार में — बृहत् कस्तूरी भैरव प्रयोग करे।

## रसप्रयोग

सर्वतोभद्रस्य—रसिन्दूर, श्रभ्रक, चांदी, सोना, मैनसिल प्रत्येक सम भाग, वंशलोचन र भाग एकत्र सब के बराबर गुग्गुल; इन सबको जल के साथ पीस कर १ मारो की गोली बनावे। श्रनुपान—परवल पत्ते का रस श्रीर मधु या ब्राह्मी का रस श्रीर मधु या करेला के पत्ते का रस श्रीर मधु या घी श्रीर मधु। यह श्रीषध सब प्रकार की मस्रिका की महौषध है। इसका सब चेत्रों में प्रयोग किया जा सकता है। इस श्रीषध का फल उत्तम देखा गया है।

शिलाजतुवटी—शिलाजीत, लोहा श्रीर सोना प्रत्येक समभाग लेकर तुलसी पत्ते के रस में सर्दन कर ३ रत्ती की गोली बनावे। श्रनुपान—ब्राह्मी शाक का रस, करेला पत्ते का रस, घिसा हुआ रहाक्ष, परवल पत्ते का रस श्रीर मधुं।

मस्रिका में ज्वर बढ़ जाने पर वृहत् कस्तूरी भैरव का प्रयोग करे।

ज्वर में प्रलाप, संज्ञाहीनता श्रादि विकार का लक्षण दिखाई देने पर चतुर्भुजरस, वृहत् वातिचन्तामणि का व्यवहार करे।

चर्मदल नामक मस्रिका की चिकित्सा में हरितालभस्म, ताम्रभस्म, रसभस्म, महातालेश्वर रस का प्रयोग करे।

मस्रिका की चिकित्सा में अनुपान—ब्राह्मीशाक का रस, हिंचे का रस, करेला पत्ते का रस, मेथी भिगोया हुआ जल, हलदी का रस, अदरक का रस, तुलसी का रस, अहसा के पत्ते का रस, परवल पत्ते का रस, विसा हुआ स्ट्राझ, गुरुच का रस, नीमछाल का रस, परवल का रस, चेत्रपापड़ा का रस, िक्सला चूर्ण, अनन्तमूल का काथ आदि।

# रसादि शोधन-मारण की सहज प्रक्रिया

## रस, उपरस, धातु, उपधातु, रतन, उपरतन, विष श्रीर उपविष के शोधन श्रीर मारण की सहज प्रक्रिया

पारद-

शोधनप्रक्रिया—रसौत के रस को पान के रस श्रीर त्रिफला के काथ द्वारा यथाक्रम से मर्दनकर श्रच्छी तरह से घो लेने से ही पारद शोधित होता है। उसके बाद नीवू के रस में मर्दन कर एवं सब के श्रन्त में मधु में मर्दन कर लेने से पारद का बीर्य बढ़ता है। प्रत्येक द्रव्य के द्वारा २ धण्टे तक मर्दन कर प्रत्येक बार ही घो लेना चाहिये।

मारणप्रक्रिया — क्रमानुसार शोधन, स्वेदन, मर्दन आदि १४ संस्कार कर पलाशवीज, चन्दन और नींबू के रस में मर्दन कर भूधरयंत्र या वालुकायंत्र में पाक करने से पारद मारित होता है। (पारद संस्कार की विधि का वर्णन पूर्व में किया गया है)

भरमीकरण—श्रपामार्ग बीज श्रीर पद्म के कल्क के साथ पारंद की मूषारुद्ध कर पुटपाक करने से भस्मीभूत होता है।

हिगुल—

द्योधनविधि—नीबू के रस में ८ प्रहर मर्दन कर लेने से ही हिङ्कल शोधित होता है।

हिंगुल से रस निकालने की विधि—शोधित हिंगुल चूर्ण कर उसके साथ सम परिमित पत्थर वाला चूना अच्छी तरह से मिला दे। वाद में ऊर्ध्व-पातनयन्त्र में निहित कर तेज आंच वाले चूल्हे पर रख दे। इस प्रकार ऊर्ध्व भाण्ड के तलदेश में पारद संचित होगा। ठण्डा होने पर उसे निकाल कर भाण्ड के तलदेश में पारद संचित होगा। ठण्डा होने पर उसे निकाल कर भी डाले।

गत्यक— ग्रोधनविधि—गन्धक चूर्ण कर गाय के घी के साथ लोहे के वर्तन में गलाकर घृतात्त कपड़े से छान कर दूध के भाण्ड में रख दे एवं एक दण्ड ( २४ मिनिट ) के बाद उसे जल से धोकर सुखा ले।

#### अभक--

शोधनिविधि—क्रमशः ७ वार श्रभ्रक को उत्तप्त कर निसिन्दा (निर्गुण्डी) पत्ते के रस में सिद्ध करने से शोधित होता है।

श्रथवा श्रथ्रक को उत्तप्त कर कमशः ७ बार काड़ी, गोमूत्र श्रोर त्रिफला के
 काथ में निचेप करने से श्रथ्रक शोधित होता है।

भस्मीकरण विधि—शोधित श्रश्रक को धान्याश्र में परिणत कर लेने के वाद भस्म करना चाहिए।

धान्याभ्रविधि—चतुर्थाश परिमित शालिधान के साथ अभ्रक को कम्बल से रुद्ध कर तोन दिन तक जल में भिगो कर रखे। बाद में हाथ द्वारा मर्दन कर लेने से कम्बल में से अभ्रक के बारीक कण निकलने लगते हैं। उसे ही धान्याभ्र कहते हैं। इस प्रकार से तैयार किये हुए धान्याभ्र को आक को लेई, बरगद की लेई अरूसा के स्वरस, पान के रस या कांचनछाल के स्वरस या काथ इनमें से किसी एक के साथ मर्दन कर जब तक चमकाहट चली न जाय तब तक बार-बार पुटपाक करे।

श्रथवा श्रभ्रक को उत्तप्त कर बेर के काथ में उबाल कर हाथ से घोट कर चूर्ण वना ले एवं उल्लिखित मारक द्रव्यों में से किसी एक के साथ मर्दन कर पुटपाक करे।

दो भाग सोहागा के साथ मर्दनकर श्रन्धमूषा में रख गजपुट में पाक कर लेके से ही श्रश्रक भस्मीभूत हो जाता है।

#### माचिक-

शोधनिविधि—श्राग्निताप में उत्तप्त कर त्रिफला के काथ में उबाल लेने से माक्षिक शोधित होता है।

मारणविधि—सम परिमित शोधित माक्षिक श्रौर गन्धक एकत्र नींबू के रस में मर्दन कर क्रमानुसार भ वार पुटद्ग्ध कर लेने से माक्षिक मारित होता है। विम्लः—

शोधनिविधि—जम्बीर नीवू के रस श्रथवा श्ररूसा के काथ मे उबाल लेने से विमल शोधित होता है।

भस्मीकरणविधि—गन्धक श्रीर मन्दार के रस के साथ मर्दन कर मूबा-रुद्ध कर मिही लिप्त कर सूख जाने पर क्रमानुसार १० बार पुटपाक करे। इस श्रक्तिया द्वारा विमल भस्मीभूत होता है।

शिलाजीत-

शोधनविधि—त्रिफला के क्वाथ, मृङ्गराज के स्वरस या गाय दूध के साथ ८ प्रहर मर्दन कर धूप में सुखा लेने से ही शिलाजीत शोधित होता है। दो प्रहर प्रत्येक द्रव्यों के या सबके क्वाथ के साथ ७ दिन भावना देने से शिलाजीत का वीर्य वर्दित होता है।

भस्मीकरणविधि—समपरिमित मनःशिला, गन्धक श्रौर हरिताल के साथ शिलाजीत को मिलाकर एकत्र नींबू के रस में मर्दन कर ८ गोवरकण्डो की श्रानि में पुटपाक कर लेने से शिलाजीत की भस्म होती है।

तूतिया-

शोधन-मारणविधि—गोमूत्र के साथ एक दिन दोलायन्त्र में पाक कर लोने से तूतिया शोधित होता है। बाद में आधा भाग के बरावर गन्धक के साथ मर्दन कर गजपुट में पाक कर ले।

सस्यक-

शोधनविधि—गाय, भेंस श्रीर वकरे के मूत्र में ६ प्रहर तक दोलायंत्र में पाक करने से सस्यक शोधित होता है।

भस्मविधि—मन्दार के रस, गन्धक और सोहागा के साथ मर्दन कर मूबाहद कर कुक्कुटपुट में दग्ध करने से सस्यक मारित होता है।

चपल-

शोधनविधि—जाम्बीर नीवू, कुकरोधा श्रौर श्रदरक के रस में भावित कर लेने से चपल शोधित होता है।

खर्पर—

शोधनविधि—श्राग में गरम कर क्रमानुसार ७ बार नीवू के रस में बुम्ता देने से खर्पर शोधित होता है।

भस्मविधि लोहे के वर्त्तन में अग्निताप से खर्पर को गला कर एवं गल जाने पर थोड़ा-थोड़ा कर सेंधानमक उसमें डालें एवं पलाश लकड़ी के दुकड़े से हिलावे। इस तरह से खर्पर मारित होता है।

## गेह—

शोधनविधि—गाय के दृध में भावित करने से गेरु शोधित होता है। हीराकसीस—मृद्गराज रस में भावित करने से हीराकसीस शोधित होता है।

सौराष्ट्रमृत्तिका—३ दिन कांजी में भिगो कर रखने से शोधित होती है। कुंकुम—शुण्ठी काथ द्वारा ३ दिन भावना देने से शोधित होता है। स्फटिका (फिटिकरी)—श्राग में गला लेने से स्फटिक शोधित होती है।

## कौडी-

शोधनविधि-कांजी में उवाल लेने से कौड़ी शोधित होती है।

भस्मविधि—श्रंगारे के श्राग में जला कर लाई के समान हो जाने पर कौड़ी भस्म होती है श्रथवा श्रन्धमूषा में रख गजपुट में दग्ध करे।

श्रंजन— यज्ञराज के स्वरस में भावना देने से श्रंजन शोधित होता है।

#### हरिताल-

शोधनविधि—कुष्माण्ड का जल, चूने का पानी श्रथवा तिल्ली का क्षार पानी के साथ मिलाकर दोलायंत्र मे ८ प्रहर पाक करने से हरिताल शोधित होता है।

भस्मविधि—शोधित हरिताल को घृतकुमारी के रस में १ दिन मर्दन कर पिण्ड बनावे। बाद मे श्रन्धमूषा में रुद्ध कर १२ प्रहर तक तेज श्राग मे गजपुट में पाक करे। इस तरह से ६ बार पुटपाक करने से हरिताल भस्मीभूत होता है।

मनःशिला—चूने के पानी में ७ दिन भावना देने से मनःशिला शोधित होतीं है।

#### सोना-

द्योधनविधि—समपरिमित सोने का पत्र और नमक एक साथ सकोरे में वन्द कर आधा प्रहर अंगारे की अग्नि में आध्मापित करने से स्वर्ण शोधित होता है।

भस्मविधि—पारद १ भाग, गन्धक दो भाग एकत्र कज्जली कर उसे ३ भाग शोधित सूच्म सोने का पत्र के साथ मर्दन कर घृतकुमारी के रस में ६ घण्टे तक मर्दन करे। वाद में इसका पिण्ड वनाकर एरण्ड पत्ते के साथ लपेट कर तांबे के वर्तन में रखकर एक घण्टा धूप में सूखने के लिये रख दे। धूप में पिण्ड गरम होने पर उसे सकोरे में वन्द कर ३ दिन घान के ढेर में रख दे। चौथे दिन उसे निकाल कर चूर्ण बनाकर महीन कपड़े से छान डाले। इस तरह से स्वर्ण की निरुत्य भस्म होती है।

### चांदी-

शोधनविधि-पूर्वीक्त सोने की शोधनविधि के अनुरूप है।

भस्मविधि—रवर्ण भस्म की उल्लिखित प्रक्रिया के अनुसार चांदी भस्म करें। श्रीर भी चांदी भस्म की एक सहज विधि लिखी जा रही है।

हिड्डल से पारद निकालते समय शोधित चादी के पत्र में नीबू के रस से मर्दित किया हुआ हिंगुल प्रलिप्त कर ऊर्ध्वपातन करे। इससे हिड्डल से पारद भी निकलेगा एवं हाण्डी में रखा हुआ चांदी पत्र भी भरमीभूत होगा।

शोधनिविधि—सूद्रम तांवे के पत्र में नीवू का रस श्रीर सेधानमक लेप कर उत्तप्त कर निसिन्दा (निर्गुण्डी) के रस में निमग्न करने से ताम्र शोधित होता है। इस तरह से ८ वार उत्तप्त कर निर्वापित करना चाहिए।

#### तांवा-

भरमविधि—पारद श्रीर गन्धक की कजाली बनाकर जम्बीरी नीवू के रसं के साथ मदनकर उससे तांवे को पत्र प्रलिप्त करे एवं सकोरे में बन्द कर कमानुसार ३ वार पुटपाक करे।

श्रमृतीकरण—मारित तावे को नीवू के रस में मर्दन कर गोली वनावे एवं एक कोचई के भीतर बन्द कर ऊपर मिट्टी लेप कर सुखा दे। बाद में उसे गजपुट में दग्ध कर कोचई के भीतर से तांबा निकाल कर चूर्ण बना डाले। शोधित गन्धक को नीवू के रस में मर्दन कर शोधित तांबे के पत्र में प्रलिप्त कर गजपुट में पाक करने से एक दिन में तांवे की उत्कृष्ट भस्म होती है।

#### सोहा-

शोधनिधि—लोहा गरम कर गोमूत्र श्रौर त्रिफला के क्वाथ में कमानुसार ७ बार निचेप करने से शोधित होता है।

भस्मविधि—लोहे के चूर्ण को त्रिफला के क्षाथ के साथ पीसकर उसके साथ चौथाई परिमाण पिष्ट तण्डुल मिलाकर टिकिया प्रस्तुत करे। सूख जाने पर प्रुटपाक कर ले।

श्रयवा लोहे का चूर्ण श्रौर समपरिमाण गन्धक एकत्र धृतकुमारी के रस में मईन कर पुटपाक करे। इस तरह से कई वार पुटपाक करने से भी लोहा भस्म रूप मे परिणत होता है।

#### मण्डूर—

शोधनविधि—गरम कर क्रमानुसार गोमूत्र श्रौर त्रिफला के काथ में ७ वार निचेप करने से मण्हर शोधित होता है।

सरमविधि—त्रिफला के काथ के साथ मण्हर चूर्ण मर्दन कर पुटपाक करने से वह भस्मीभूत होता है।

यशद् (दस्ता)—

शोधनविधि — अग्नि में गला कर चूने के पानी में निचेप करने से यशद

भस्मविधि—सोने की प्रक्रियानुसार यशद मारित होता है। वंग ( टीन )—

शोधनविधि — द्रवीभूत कर कमानुसार ३ वार हल्दीचूर्ण मिश्रित निसिन्दा ( निर्मुण्डी ) के रस में निर्दोप करने से बंग शोधित होता है।

अस्मविधि—वंग को लोहे की कड़ाही में रखकर श्राग की गरमी से गला कर उसमें वंग के बराबर हल्दीचूर्ण, जवाइनचूर्ण, जीराचूर्ण, इमली की छाल की मन्म श्रोर श्रश्वत्यछाल की मन्म कमशः मिला ले एवं करछुल द्वारा धीरे-धीरे हिलाते जावे। इस तरह से वंग भरम हो जाने के बाद धोकर साफ कर ले।

सीसक—

शोधनविधि—सीसक को श्रिमिताप से द्रवीभूत कर क्रमानुसार तीन बार केला फूल के रस में भिगोने से शोधित होता है।

भस्मविधि—पतले सीसक पत्र पर मनःशिला श्रीर श्राक की लेई लेप कर पुटपाक करने से सीसक की निरुत्थ भस्म होती है।

पीतल —गरम कर हल्दीचूर्ण मिश्रित निसिन्दा (निर्गुण्डी) के रस में पांच वार निर्नेप करने से पीतल शोधित होती है। इसकी भस्मविधि तांबे की तरह है।

कांसा—गरम कर गोमूत्र में निर्वापित करने से कांसा शोधित होता है। गन्धक श्रीर हरिताल के साथ मर्दन कर ५ बार पुटपाक करने से कांसा भस्मरूप में परिणत होता है।

मोती—मोती, प्रवाल, मणि श्रादि रत्न जयन्ती पत्ते के रस में एक प्रहर तक दोलायन्त्र में पाक करने से शोधित होती है।

लगातार श्राग में भून कर गरम श्रवस्था में घृतकुमारी रस, नटेशक का रस श्रीर स्तन के दूध में ७ वार निक्षिप्त करने से रत्नादि जारित होते हैं।

हीरक—कुलत्य के काय में एक प्रहर उवाल लेने से हीरक शोधित होता है। श्रामिन में दग्ध कर क्रमशः २१ बार हिंगुल श्रीर सेंधानमक भिश्रित कुलथी के काथ में निचेप करने से हीरक जारित होता हैं।

शंख-अम्लवर्ग के रस या काय के साथ दोलायन्त्र में उवालने से शंख शोथित होता है।

शोधित शंख पुटपाक में दग्ध करने से वह भरमहप में परिणत होता है।

सोहागा—श्रिम में सोहागा को गरम करने के वाद वह फूट कर लाई की तरह होने से शोधित होता है।

विप शोधनविधि—सव प्रकार के कन्दविष को ३ दिन गोमूत्र में भिगो कर रखने से शोधित होता है।

#### उपविष-

जयपाल—भूसीरहित जयपाल वीज को दो भागों मे विभक्त कर उसके भीतर से पत्ता वाहर निकाल ले एवं वीज को दोलायन्त्र में गाय के दूध में पाक कर ले।

**लांगली**—एक दिन तक गोमूत्र में भिगो कर रखने से लांगली शोधित होती है।

कुचिला—गाय के घी में तल लेने से शोधित होती है। श्रथवा गोवर के जल में दो प्रहर तक पाक करके घी में तल लेने से शोधित होती है।

धतूरे का वीज-धत्रे के वीज को तुषरहित श्रौर दिखिण्डित कर ४ प्रहर तक गोमूत्र में भिगो कर रखने से शुद्ध हो जायगा।

श्रफोम—श्रदरक के रस में ७ दिन भावना देकर धूप में शुष्क करने से श्रफीम शोधित होती है।

मातुलानी( भांग )—गाय के घी में तल लेने से श्रयवा गाय के दूध में भावना देकर सुखा लेने से मातुलानी शोधित होती है। भहलातक—भल्लातक को कुचल कर ईट चूर्ण के साथ घिस लेने से शोधित होता है।

गुगुल — गुगुल के केश श्रौर मलादि को साफ कर गरम दशमूल के काथ में निचेप कर घोट कर कपड़े से छान ले एवं बाद में सूर्य के ताप से सुखाकर घृताभ्यक्त कर पिण्डाकार बना ले।

गुंजा- ३ घण्टा कांजी में उबाल लेने से गुंजा शोधित होती है।

मनसा (सेंहुड) चीर श्रोर श्राकचीर—१ तोला परिमित इमली पत्ते के रस में ८ तोला परिमित श्राक या मनसा का क्षीर मर्दन कर सुखा लेने से वह शोधित होता है।

हिंगुल-लोहे की करछुल में घी के साथ हिंगुल को तल लेने से शोधित होता है।

कन्दिविष—सब प्रकार के कन्दिविष की छाल को छुड़ा कर दुकड़े-दुकड़े कर २४ घण्टे तक गोमूत्र में भिगोकर धूप में सुखा लेने से शोधित होता है।

जंगम विष—सव प्रकार के जंगम विष को ३ दिन गोमूत्र में भिगो कर धूप में सुखा लेने से ही शोधित होता है।

उपविष—सव प्रकार के उपविष पश्च गव्य द्वारा भावना देने से शोधित होते हैं।

# पारदप्रयोग की विशेष अनुपान विधि—

भस्मीकृत पारद ठीक तरह से अनुपान विशेष के साथ प्रयुक्त होने पर सब प्रकार की व्याधि विनष्ट होती है।

#### श्रनुपान विधि—

ज्वर रोग में—मोथा श्रौर चेत्रपापड़ा का क्वाथ। त्रिदोषज ज्वर में—पिप्पली चूर्ण श्रौर दशमूल का क्वाथ। कफ श्रौर कास में—कण्टकारी का क्वाथ श्रौर पिप्पली चूर्ण। रक्तिपत्त रोग में—श्रह्सा का रस, दूव का रस।

यदमा रोग में—त्रिफला, गन्धक, त्रिकटु श्रौर पुराना गुड़ं, श्रारूसा का रस श्रौर श्रर्जुन छाल का रस।

हिचकी रोग में—खट्टे नीवू का रस, सोंचर लवण श्रौर मधु। सर्दा रोग में—मूंग श्रौर चीनी का शर्वत। दाह रोग में —चीनी, लाई का लड्ड् और मधु, चेत्रपापड़ा और खसखस का काथ।

अर्रारोग में — पुटपाक में दग्ध को चई के साथ तेल श्रौर संधानमक मिश्रित कर उसके साथ।

विस्चिका रोग भें —हिंगुल और पिप्पली चूर्ण। अजीर्ण रोग में —एरण्डमूल का काथ और हरें का चूर्ण।

मूत्रकृच्छ रोग में —गोक्षर का क्वाथ, दशमूल का क्वाथ श्रौर वरुणछाल का क्वाथ।

वीस प्रकार के प्रमेह रोग में—शिलाजीत, पिप्पली, मण्ड्र, त्रिफला, घ्रालकुशी (कौच) बीज, सोनामाखी, हलदी चूर्ण, गन्धक, कान्तलोह, त्रिकटु चूर्ण, गुरुच का रस, केशुरिया (कशेरू) का रस, शतावर का रस, कच्ची हल्दी का रस, ववूल पत्ते का रस आदि।

सोमरोग में — गूलर, श्रांवला, केले का फूल, तेलाकूचा, नोनाछाल, केशुरिया (कशेरू) श्रादि का रस, जामुन के बीज श्रीर गूलर के बीज का चूर्ण, वांस का पत्ता श्रीर श्राकनादि (पाठा) का क्वाथ, पश्चवत्कल का काथ।

श्रश्मरीरोग में—हलदी चूर्ण, कांकुड़बीज चूर्ण, पाथर कुचि (पत्थर चूर) श्रीर वर्रणछाल का रस, कुड़ा चूर्ण, सिहजनमूल का काथ, गोक्षर श्रीर वर्रणछाल का काथ, तृणपञ्चमूल या बृहत् वरुणादि कषाय, यवक्षार श्रीर हींग श्रादि।

मूत्राघात रोग में — वरुणादिगण या तृणपंचमूल का काथ, कंटकारी का रस या काथ, शतावर का रस, घिसा हुआ सफेदचन्दन और चीनी, बकरी का मूत्र, भैंस का मूत्र, यवक्षार और चीनी मिश्रित कृष्माण्ड का रस आदि।

हृद्रोग में — श्रर्जुनछाल, बलामूल, श्रश्वगन्धामूल, शतावर, बेदाना श्रादि का रस, हरिणश्वद्ग का भस्म, कुड़ाचूर्ण, गोरक्षचाकुते मूल का चूर्ण या काथ, मुलेठी का चूर्ण श्रादि।

पाण्डुरोग में —गुरुच का रस, श्रांवले का चूर्ण, त्रिफला काथ, विडङ्ग चूर्ण श्रादि।

ज्ञामवात में लहशुन, निसिन्दा (निर्गुण्डी) मूल, रास्ना, गन्धप्रसारणी आदि का रस, जवाइन श्रोर गुगगुल चूर्ण, दशमूल का काथ, रास्नादि पाचन।

### शोधरोग में-

वातजशोध में — पुनर्नवा, एरण्डमूल, बेलपत्ता श्रादि का रस, कालीमिर्च चूर्ण, मानक चूर्ण, दशमूल का क्वाथ श्रादि ।

किलासरोग में —केवल दही और भात के भोजन पर रह कर चीतामूल, आलकुशी (कोंच) वीज, केउया छुडी (कौआठोठी) और सोमराजी (वाकुची) वीज का चूर्ण समभाग एकत्र कर मिश्रित चूर्ण र भाग और पारदमस्म १ भाग, गोमूत्र के साथ सेवन करे।

कुप्ररोग में —लहसुन, राई सरसों, चीतामूल, नीलमूल श्रीर मृझराज का रस, भेलवा श्रीर दूध समभाग, इन सब द्रव्यों के साथ तिल्ली को पका कर वह तिल्ली एवं भूशिरीष श्रीर नागकेशर का त्वक, मूल, पत्ता, फूल श्रीर फल के साथ पृत पाक कर मधु मिलाकर पूर्वोक्त तेल श्रीर घी मिलाकर उसके साथ पारद भस्म सेवन एवं शरीर में त्रिकटु का कल्क लेपन करने से कुष्ठ रोग की शान्ति होती है।

विपरोग में — गोवर जल के साथ कपूर भावित कर उसके साथ पारद भहम एक रत्ती मात्रा में सेवन करने से स्थावर, जंगम श्रीर कृत्रिम विष नष्ट होते हैं।

सांप काटे हुए रोगी पर निम्नलिखित प्रक्रिया से पारद भस्म प्रयोग करने से विप किया नष्ट होती है।

चरगद का फल, वहेड़ा और रीठा फल, लहसुन, त्रिकटु, वच, राई सरसो, व्याकनादि (पाठा) मूल और ववूल बीज एकत्र मन्दार के रस के साथ पेपण कर छाया में सुखा दें। वाद में नरमूत्र के साथ घिस कर उसके साथ पारद भस्म मिश्रित करें एवं उससे आंख में श्रज्जन लगावे। यह अंजन केवल दे वार प्रयोग करने से सर्पविष नष्ट होता है।

केंय गृक्ष की जड़, छाल, पत्ता, फूल श्रीर फल के काथ के साथ पारदभस्म नेयन करने ने चूहे का विप नप्ट होता है।

चक्र १ द्ध के साथ पिष्पली चूर्ण मिश्रित कर उसके साथ पारदभस्म सेवन इसने ने युधिक विप नष्ट होता है।

# रसायनार्थ पारदभस्म सेवन की विशेष विधि

### जरानाद्यक योगावली—

- (१) सीसक भरम, स्वर्णभरम श्रीर सतावर के रस के साथ १ रत्ती मात्राः में पारदभरम ६ महीने तक सेवन करे।
- (२) पारदभस्म, गन्धक के संयोग से सारित पारद, त्र्यांवले के रस के. साथ मारित कान्तलोह एकत्र त्रिफला चूर्ण के साथ सेवन करे।
- (३) पारदभस्म १ भांग, सोनाभस्म चौथाई भाग एकत्र मंगराज के स्वरस, आंवले के स्वरस, शतावर के रस, शंखपुष्पी के रस के साथ क्रमानुसार ७ दिन भावना देकर दूध, चीनी अथवा घी कौर मधु के साथ १ रत्ती मात्रा में सेवन करने से एवं कान्तलोह की कड़ाही में पकाया हुआ दूध अनुपान करने से जरा नष्ट होती है।

वज्रपंतर रस—समपरिमित पारदभस्म और हीरकभस्म एकत्र मिला कर खुलकुि (मण्ह्कपणी) रस के साथ मर्दनकर पुटपाक करे। बाद में फिर समपरिमित पारद के साथ मर्दन कर पुटपाक करे। इसके बाद चतुर्थाश परिमित यह भस्म कांजी के साथ मर्दन कर उससे सोने का पत्र लेपन कर उसे मारित करे। इस तरह से प्रस्तुत स्वर्णभस्म आधे सरसो की मात्रा से आरम्भ कर क्रमशः मात्रा बढ़ा कर एक माशा तक सेवन करे। अनुपान-चीतामूल, अदरक, सेंधानमक, वच और सोचर लवण।

पंचामृतरस—सोनामाखी भरम, कान्तलोह भरम, श्रश्रकभरम, मोतीभरम, हीरकभरम, पारदभरम श्रीर सोना ये सब द्रव्य एक साथ लेकर एक सप्ताह भर मूली के रस में मर्दन कर गोलाकार बनावे एवं मूबारुद्ध कर पुटपाक कर ले। इसकी मात्रा-२ रत्ती तक। श्रनुपान—धी श्रीर मधु। यह उत्तम रसायन है।

वाजीकरणार्थं पारद्प्रयोग—समपरिमित सोनामाखी भरम के साथ पारद भरम सेवन करने से मैधुन शक्ति श्रात्यन्त बढ़ जाती है।

इस तरह से घी, मधु, शतावर के रस श्रीर दूध के साथ पारदभस्म सेवन करने से कामवेग श्रत्यन्त बढ़ता है।

वकफूल के रस श्रीर कृष्णरम्भाफल के रस के साथ पारदभस्म श्रीर श्रश्रकः भस्म समपरिमाण में सेवन करने से रितशिक्त श्रत्यन्त वढ़ती है। पारदसेवी ककारादि वर्णयुक्त सब प्रकार के द्रव्य एवं कुप्माण्ड, कांकुड़, कदली, कांकरोल, करेला, काकमाची, कांजी, तेल, सुरा, दही, तरमूज, फूट, लहसुन, सरसो, मूली, बेंगन, बेल, दाल, श्रिधक खट्टा द्रव्य, तिक्त द्रव्य, तेल, नमक, मधु श्रीर गरम द्रव्य श्रादि भोजन श्रीर सरसो तेल की मालिश बन्द कर दे। इसके श्रीतिरक्त रात्रि जागरण, दिन में सोना, शरीर की मालिश, प्रवलवायु श्रीर श्रातप सेवन, उपवास, क्रोध, चिन्ता, शोक श्रादि का त्याग करे।

पारदसेवी के लिये करूर, गुडत्वक् (दालचीनी), बड़ी इलायची, तेजपत्ता, नागेश्वर, त्रिकद्ध, जातीफल, ताम्बूल आदि द्रव्य भी वर्जनीय है। शालिधान, गेंहू, जौ, जांगल मास, मूग का यूष, गाय का दूध, निर्मल जल से स्नान आदि पारद-सेवी के लिये हितकर है।

कजाली विधि—समभाग में पारद श्रीर गन्धक लेकर खरल में रगड़-रगड़ कर जब देखे कि वह घोर काले रंग का हो गया है, तभी समम लें कि कज्जली तैयार हो गई है।

कड़ कर जल के साथ मर्दन करें। कुछ देर मर्दन करने के वाद यदि उसमें पारद के सूद्धम विन्दु न दिखाई दे तो समम ले कि असली कड़ जली तेयार हो गई है।

मकरध्वज सेवन की विधि और श्रनुपान—मकरध्वज सेवन करने के अथम उसे शुष्क खरल में करीब १० मिनिट तक श्रच्छी तरह से खरल कर फिर मधु मिलाकर ५ मिनिट मर्दन कर ले। उसके बाद उसे चाट ले। तत्पश्चात् श्रनुपान द्रव्य तथा मधु मिश्रित कर सेवन करे।

#### শ্ব**নুपान**—

चातज्ञर में — वेल पत्ता का रस । गुरुच, सोठ श्रीर गोक्षुर का क्वाथ । स्वल्प पञ्चमूल का क्वाथ । सोंठ, गुरुच, गोक्षुर श्रीर एरण्डमूल का क्वाथ ।

पित्तज्वर में—शिउली पत्ते का रस, च्रेत्रपापड़ा का रस, गुरुच का रयस, परवल पत्ते का रस श्रथवा धनिया श्रीर परवल पत्ते का क्वाथ।

कफड़वर में — श्रहसा स्वरस, श्रदरक का रस। श्रहसा, कण्टकारी श्रीर गुरुव का क्वाथ। कालीमिर्च का चूर्ण या पिप्पली चूर्ण। वातिपत्तज्वर में —िवरायता का क्वाथ। गुरुव श्रौर नीमछाल का रस या क्वाथ। चेत्रपापड़ा श्रौर परवल पत्ते का रस। गुरुव, चेत्रपापड़ा, मोथा, विरायता श्रौर सींठ इनका क्वाथ।

पित्तश्लेष्मजञ्बर में — अहसा और चेत्रपापड़ा का रस। परवल पत्ता और नीमछाल का रस। धनिया, परवल पत्ता, सोंठ और गुरुच का क्वाथ।

चातश्लेष्मज्ञवर में —गुरुच और मोथा का रस। सोंठ, गुरुच, परवल पत्ता, जो और पिप्पली का क्वाथ। पिप्पली चूर्ण और दशमूल क्षाय।

सान्निपातिक ज्वर में--

वातोत्वण सान्निपातिक में -- दशमूल, का क्वाथ।

पित्तोत्वण सन्तिपात में—विरायता, मोथा, गुरुच, सोठ श्रौर दशमूल का क्वाथ।

कफोत्वण सिनिपात में — वृहती (बड़ी कटेरी), कण्टकारी, कुड़ा, वामुनहाटी (भारंगी), शटी (कचूर), कांकड़ाश्रुङ्गी, जवाखार, इन्द्रयव, परवल पत्ता श्रीर कुटकी का काथ।

वाति पत्तो हवण सिन्तिपात में —दशमूल का काथ। गुरुव, चेत्रपापड़ा, मोथा, विरायता श्रीर सींठ का काथ। विरायता, श्रांवला, कवूर, द्राक्षा, पिप्पली, सींठ श्रीर गुरुव का काथ।

पित्तश्लेष्मोत्वण सदिपात में — विरायता, मोथा, सोठ, गुरुव, त्राक-नादि (पाठा), सुगन्धवाला श्रोर खसखस इन सव द्रव्यों का काथ। कण्टकारी, गुरुव, वामुनहाटी (भारंगी), सोठ, इन्द्रयवः विरायता, जवासा, मोथा, लाल चन्दन, परवल पत्ता श्रोर कुटकी का काथ।

वातश्लेष्मोत्वण सिश्चिपात में — चिरायता, मोथा, गुरुच और सींठ का कवाथ। पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चीतामूल, सोठ, गुरुच, कण्टकारी और कुड़ा का कवाथ। चेत्रपापड़ा, वामुनहाटी (भागीं), मोथा, चच, धनिया, केंथ, हर्रा, सींठ और गुरुच का काथ। दशमूल का कवाथ, कुड़ा और पिप्पली चूर्ण के साथ।

विषमज्वर में —दोष के प्रकोप की विवेचना कर पूर्विलिखित अनुपान
युक्तिर्द्वक प्रयोग करे। साधारणतः गुरुच, परवल पत्ता, खसखस, आवला,
लालवन्दन, मोथा और मुलेठो का क्वाथ अथवा भाग्योदि क्वाथ।

जीर्णज्वर में - शेफालिका-पत्ते का रस, सोंठ, गुरुच श्रीर कण्टकारी का क्वाथ श्रथवा गुरुच का स्वरस।

मलेरिया नामक विषमज्वर में—गुरुच, च्लेत्रपापड़ा श्रीर शिउली पत्ते का रस श्रथवा नाटाकरंज पत्ते का रस।

ज्वरातिसार रोग में धिनया श्रीर सोंठ का क्वाथ । गुरुच श्रीर कुटजछाल का रस । सोंठ, श्रतीस, मोथा, चिरायता, गुरुच श्रीर इन्द्रयव का क्वाथ । लघुपंचमूल, गुरुच, मोथा, सोंठ, श्रतीस श्रीर श्राकनादि (पाठा) का क्वाथ श्रादि ।

श्रितसार रोग में—मोथा का रस। धनिया, मोथा, सोंठ, सुगन्धवाला श्रोर श्रातीस का क्वाथ। श्रानार फल का त्वक् चूर्ण, वेलशुंठ (कच्चे वेल की शुष्क मजा), कुटजछाल का रस। इन्द्रयव, श्रातीस, सोठ, वेलशुंठ, मोथा श्रोर श्राकनादि (पाठा), इनका क्वाथ।

शोषातिसार में—सफेद पुनर्नवा या मोथा का रस। पुनर्नवा, इन्द्रयव, आकनादि (पाठा), बेलशुंठ (शुष्क कच्चे बेल की मज्जा), श्रातीस श्रीर मोथा का क्वाथ श्रीर कालीमिर्च का चूर्ण।

रक्तातिसार में — बेलशुंठ (कच्चे वेल की शुष्कमजा) का काथ। श्रमार-त्वक् श्रोर कुटजछाल का काथ। कुटजछाल का रस या काथ।

प्रवाहिकारोग में — बेलशुण्ठ का काय, कुटजछाल का रस या काय। मोथा, थानकुनी (मण्डकपणीं) का रस, बेलशुण्ठ का चूर्ण श्रोर वकरी का दूध।

### ग्रहणीरोग में—

वातजग्रहणी में — सोंठ चूर्ण, धनिया और सोंठ का काथ।

पित्तजग्रहणी में — मोथा श्रौर गुरुच का रस। मोथा, इन्द्रयव, श्रतीस, सोंठ इनका काथ।

कफजग्रहणी में—मोथा का रस। गुरुच, श्रतीस, सोठ श्रौर मोथा, इनका

त्रिदोषजग्रहणी में—सोठ, मोथा और श्रतीसचूर्ण श्रथना सोठ, मोथा, श्रतीस, इन्द्रयन, श्राकनादि (पाठा), श्रनार की छाल, केलाफूल का रस श्रीर गुरुच का काथ।

संप्रहमहणी में —गन्धप्रसारणी और मोथा का रस। सोंठ चूर्ण मिला हुआ दही अथवा केलाफूल का रस। बेलसोंठ (कच्चे वेलकी शुष्कमज्जा), पाठा, अतीस, अनार की छाल, इन्द्रयव, सोंठ और मोथा का काथ।

श्रशीरोग सें--जला हुआ कोचई, त्रिफलाचूर्ण, हरें का चूर्ण और गन्ने का गुड़, काली तिल्ली और सेलवा की मीगीचूर्ण।

रक्तार्श में — कुटजछाल का चूर्ण, बेलसोंठ का चूर्ण, काली तिल्ली श्रीर पद्म-केशर, श्रनार का रस श्रादि ।

अिनमान्य में —हरी श्रीर सेंधानमक का चूर्ण, सोंठ चूर्ण, जवाइन चूर्ण, श्रादरक का रस, हर्री, सोंठ, पिप्पली श्रीर कालीमिर्च का चूर्ण एवं मधु।

श्रजीर्ण में—सोंठ श्रौर सेंधानमक का चूर्ण, हर्रा श्रौर पिप्पली चूर्ण, हर्रे का चूर्ण श्रौर हिगुल, जवाइन चूर्ण श्रौर मेधु।

विस्चिका में — श्रापामार्ग मूल का रस श्रीर मधु, कपूर का जल श्रीर मधु, मोथा का रस श्रीर कपूर का जल एवं मधु।

पाण्डु, कामला श्रीर हलीमक रोग में कोष्ठबद्धता रहने पर-तेउड़ी (निसीय) चूर्ण, कुटकी चूर्ण या करेला पत्ते का रस, कच्ची हल्दी की रस। दस्त साफ न होने पर-त्रिफलाचूर्ण, हल्दीचूर्ण, गुरुच का रस, कुलेखाड़ा (तालमखाना) का रस या चिरायता भिगोया हुआ जल और मधु।

रक्तपित्त में —

उध्वंगरक्तिपत्त में — बासक ( श्रह्सा ) पत्ते का रस, गेंदापत्ते का रस, परवल पत्ते का रस, विशल्यकरणी का ( श्रायापान ) रस, दूब का रस, कुकसिमा का रस या श्रालता भिगोया हुआ जल श्रोर मधु।

अधोगरक्तिपत्त में—दूब का रस, गुरुच का रस, कुटजछाल का रस, गूलर का रस, कुटमाण्ड का रस, आंवले का रस या केलाफूल का रस, अशोक छाल का काथ।

रक्तारों में या श्रधोग रक्तिपत्त में — काली तिल्ली का चूर्ण श्रीर गशे का शक्तर या कुटजछाल का रस या बबुल की लेई विशेष उपयोगी है।

यदमारींग में—वासक पत्ते का रस, बासकछाल का रस, लाख का रस, लाख का रस, लाख का न्यूर्ण, श्रर्जुन छाल का रस। लोध, श्रर्जुन छाल, गोरक्षचाकुले, मुलेठी श्रीर किसिमस का क्षाथ। दशमूल का क्वाथ श्रादि।

२४ र० चि॰

रक्त निकलते रहने पर रक्तिपत्ताधिकार में लिखित श्रनुपान प्रयोग करे। स्वांसी में—पिप्पलीचूर्ण, मुलेठी चूर्ण। बासकछाल, मुलेठी, पिप्पली श्रीर किसमिस, इनका क्वाथ।

शुक्रत्य में -- अश्वगन्धाचूर्ण और दूध।

छातो श्रोर बगल की वेदना में -दशमूल का क्वाथ श्रोर छड़ा का चूर्ण। श्वास में चामुनहाटी (भारंगी) के मूल का क्वाथ या छड़ा चूर्ण श्रोर मधु।

स्वरभङ्ग में — ब्राह्मीशाक का रस या कण्टकारी का रस और मधु । पिप्पली चूर्ण और मधु या वच चूर्ण और मधु ।

श्राचिरोग में श्राचरक का रस श्रीर मधु। नीवू का रस श्राम्लवेतस चूर्ण, पुरानी इमली, श्राम्बरक का रस श्रीर संधानमक, श्रामकल (चांगेरी) का रस, दही का शर्वत, श्राम का रस, त्रिकटुचूर्ण, जवाइन चूर्ण, काला जीरा का चूर्ण।

क्रिसिरोग में —विडङ्ग चूर्ण, पलाशबीज चूर्ण, श्रनारस के कच्चे पत्तों का रस, श्रांशशेउड़ा पत्ते का रस, खजूर पत्ते का रस, श्रनार पत्ते का रस, घेट्ट पत्ते का रस, पालिधा का रस।

## कासरोग में—

चातजकास में — सोंठ श्रौर पिप्पलीचूर्ण, वामुनहाटी (भारंगी), कुकरोंधा का काथ। रास्ना का रस, पुराना गुड़ श्रौर सोंठ, बृहत् पश्चमूल या दशमूल का काथ।

पित्तजकास में — बासक ( श्रष्टसा ) का रस, मुलेठी चूर्ण, त्रिफला चूर्ण, द्राक्षा श्रोर कण्टकारी का क्वाथ। पिण्डखजूर श्रोर लाई का चूर्ण, मांसरक्त श्रादि।

कफजकास में वासक का रस। वंशलोवन चूर्ण, बच चूर्ण, बासक, कण्टकारी और पिप्पली का क्वाथ। कुड़ा, कुकरोंधा और वामुनहाटी (भागीं), प्यकोल (पिप्पली, पिप्पलीमूल चन्य, चीतामूल और सोंठ) का क्वाथ। कुड़ा चूर्ण और मध।

श्वासरोग में — वी श्रौर कालीमिर्च का चूर्ण, कुड़ा चूर्ण, बहेडा की गूदी, नामुनहाटी (भारंगी) श्रौर कण्टकारों का क्वाथ। कण्टकारी श्रौर तुलसी का काथ। तुलसीमंजरी, मयूरपुच्छ भस्म, त्रिकड़ चूर्ण, कुकरों घा चूर्ण।

हिचकीरोग में —इलायची चूर्ण और चीनी, मयूरपुच्छ भस्म और पीपल चूर्ण। घी और कालीमिर्च। कुड़ाचूर्ण, यवक्षारचूर्ण, नीबू का रस और नमक, बेहेडा चूर्ण और मधु।

स्वरभेदरोग में — ब्राह्मी का रस, सींठ चूर्ण, वंशलोचन चूर्ण, कुड़ा चूर्ण, दशमूल का क्वाथ। वच चूर्ण, कण्टकारी का क्वाथ। लौंग चूर्ण, छोटी इलायची का चूर्ण, तालिश पत्र का चूर्ण और मधु। सींठ चूर्ण और चीनी।

### वमनरोग में-

चातज चमन में — छेने का जल। दूध मिश्रित जल, श्रांवले का रस। वेलछाल का क्वाय श्रोर काला जीरा का चूर्ण।

पित्तज्ञवमन में परवल पत्ते का रस, नीमछाल श्रौर परवल पत्ते का क्वाथ। सफेद चन्दन का क्वाथ। धिनया का क्वाथ या धिनया श्रौर परवल पत्ते का भीगा हुत्रा जल। चेत्रपापडा का क्वाथ। लालचन्दन श्रौर मुलेठी का क्वाथ।

कफजवमन में—विडङ्ग, त्रिफला श्रौर श्रतीस चूर्ण, मोथाचूर्ण, सोठचूर्ण, ध्राश्वत्यछाल भस्म, गुरुच का रस, त्रिकढुचूर्ण।

## तृष्णारोग में—

वातजत्रणा में —गुरुच का रंस, मौरी (सौंफ) भीगा हुआ जल, बेदाना का रस।

पित्तज तृष्णा में धिनया भीगा हुत्रा जल । श्रांवले का रस, तृणपंचमूल का क्वाथ । सारिवादिगण का शीत कषाय । धिनया श्रीर परवल पत्ते का क्वाथ । खसखस श्रीर लालचन्दन का क्वाथ ।

कफज तृष्णा में—नीम छाल का क्वाथ या रस, पंचमूल का क्वाथ, खसखस का क्वाथ।

क्तज तृष्णा में वकरे या हरिन का रक्त अथवा उनका मांसरस । त्यज तृष्णा में मधु मिला हुआ जल, दूध मिला हुआ जल, मांसरस । आमज तृष्णा में पंचकील (पिप्पली, पिप्पलीमूल, चन्य, चीतामूल, सीठ) का क्वाथ, बेलसीठ (कच्चे वेलकी सूखी मजा) का चूर्ण, मोथा चूर्ण, वचचूर्ण। दाहरोग में—

मद्यजदाह में चन्दनादि (चन्दन, चेत्रपापड़ा, खसखस, सुगन्धवाला, मोथा, पद्ममूल, मृणाल, मौरी (सौफ), धनिया, श्रावला पद्मकाष्ठ ) काथ।

रक्तजदाह में - तृणपंचमूल श्रीर शालपणी का काथ, लालचन्दन का काथ। पित्तजदाह में - चेतपापड़ा का रस परवल पत्ते का रस, चन्दन, धनिया श्रीर परवल वत्ते का क्वाथ, सुगन्धबाला, पद्ममूल, खसखस, धनिया श्रीर लाल-चन्दन का क्वाथ।

धातुत्तयजदाह में शतावर का रस, गुरुच का रस श्रीर गूलर का रस। ज्वतजदाह में श्रीत छाल का चूर्ण, लाख का चूर्ण, शतावर का रस, चन्दन, मुलेठी, शतावर श्रीर खसखस का क्वाथ।

श्रभिघातजदाह में—लाख का चूर्ण श्रौर श्रर्जुन छाल का चूर्ण।
तृष्णानिरोधज दाह में—श्रांवले का रस। धनिया श्रौर मौरी (सौंफ)।
भीगा जल, केले की जद का रस।

हृद्रोग में — त्रर्जुनछाल का रस या क्वाथ, कुड़ा चूर्ण, गेहूँ का क्वाथ, हिरन सींग का भस्म, त्रश्वगन्धामूल, बला, गोरक्षचाकुले और ऋर्जुनछाल का क्वाथ। रास्ना, शटी और कुड़ा चूर्ण, त्रनार का रस।

क्रिमिज हद्रोग में - विडङ्ग चूर्ण।

मूच्छी रोग सें — खसखस का क्वाथ, नागेश्वररेणु, कुडा चूर्ण श्रौर बचचूर्ण।

भ्रमरोग में — शतावर का रस, बलामूल का क्वाथ श्रौर दुरालभा (जवासा) का क्वाथ।

मदात्ययरोग सें—दुरालभा श्रौर मोथा का क्वाथः मोथा या चेत्रपापड़ा सिद्ध ( उवाला हुत्रा ) जल ।

उन्मादरोग में — ब्राह्मी शांक का रसं, वचचूर्ण, कुष्माण्ड चूर्ण, शंखपुष्पी का रसं, कुडाचूर्ण, शतावर का रसं, धत्राबीज का चूर्ण, त्रिफला भीगा जल, पुराना रितरेय का रसं, तालशाखा का रसं, पुराना ची श्रीर वचचूर्ण।

अपनमाररोग में — शतावर का रस, पुराना रखिये का रस, चावल भिगोया जल, श्रनार का रस, बाह्यी का रस, धारोष्ण दूध, गन्ने का शकर।

चातव्याधि में —एरण्डमूल का रस या क्वाथ, लहसुन का रस, रास्ना का रस, गनियारी का रस, उड़ददाल का क्वाथ, अधगन्धाचूर्ण, दशमूल क्वाथ, आलकुसी (कौंच) बीजचूर्ण, हिङ्कुल।

स्नायुगत वात में - श्रंश्वगन्धां चूर्ण।

श्रन्थिगतवात में —सिंहजनछाल का रस, श्रदरक का रस श्रौर सेंघानमक। ऊरुस्तम्भ में —श्रदरक का रस श्रौर पीपलचूर्ण, सिंहजनछाल का रस श्रौर पीपल चूर्ण, चीतामूल चूर्ण, हरें का चूर्ण, पीपल चूर्ण, छटकी चूर्ण, त्रिफलां चूर्ण, रास्ना का रस, एरण्डमूल का रसं, गुरुच का रस, पुनर्नवा का रस, दशमूल का काथ।

श्रामवातरोग में—एरण्डमूल का रस, श्रदरक का रस श्रोर सेंधानमक, लहसुन का रस, पञ्चकोल का काथ, सोंठचूर्ण, पीपल चूर्ण के साथ दशमूल का काथ। निसिन्दा (निर्गुण्डी) का रस या निसिन्दामूल का काथ। सोंठ श्रोर एरण्डमूल का काथ, एरण्ड तेल।

शृलरोग में —कोष्ठकाठिन्य में तेउडी (निसोथ) का चूर्ण, धनिया, मौरी (सौंफ) भीगा जल, वडा हर्रा भीगा जल। हींग मिला हुआ एरण्डमूल का काथ, दूसरी विधि — त्रिफला भीगा जल। डाब का जल, आंवले का रस्। धनिया और परवल पत्ता भीगा हुआ जल या काथ।

उदावर्त श्रीर श्रीनाह में —तेउडी (निसोथ), चूर्ण, हिङ्जल, धनिया श्रीर मौरो भीगा जल, कुड़ाचूर्ण।

गुलमरोग में—

वातजगुरम में—नींबू का रस, हींग, श्रनार का रस, सेंधानमक, कांजी, धुराना शराब, लहुंसुन का रस, दशमूल कार्य, एरण्डतेल ।

पित्तजगुरम में — घी और मंधु, आंवले का चूर्ण, धनिया और परवल पत्ते का क्वांथ, कुटकी चूर्ण, दन्तीचूर्ण, नीमछाल का क्वांथ, त्रिफला का भोगा हुआ जल, द्राक्षा और हरें क्वाथ और मुलेठी का क्वाथं।

कफज गुलम में — सींठ श्रीर एरण्डमूल का काथ। श्रजवाइन चूर्ण, गोमूत्र, हरें का चूर्ण, त्रिकढ चूर्ण, चीतामूल का क्वाथ या चूर्ण श्रीर यवक्षार।

रक्तजगुरम में — त्रांवले का रस, कालीमिर्च का चूर्ण, ऊट का दूध, घण्टा-पाठल क्षार, यवक्षार, हींग, त्रिकटु श्रौर मनसा ( सेंहुड़ ) क्षीर। मूत्रकुच्छू में--

चातज मूत्रकृच्छु में — पुनर्नवा का रस, कुलथी का क्वाय, पापाणभेदी का रस, शताविर का रस, गोक्षर का भीगा हुआ जल या गोक्षर का काय, सींठ, पुरुव, श्रावला, श्रश्वगन्धा और गोक्षर का काथ, वच और लालचन्दन का काथ।

पित्तजमूत्रकृष्ट्य में नगने का रस, भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द) का रस, श्रांवले का रस श्रोर दारुहल्दी का न्यूर्ण, पाथरकुचि (पत्थरचूर) का रस, पिसा हुश्रा कांकुर (ककड़ी) बीज, गोक्षर श्रोर वरुण छाल का क्वाथ, तृणपञ्चमूल का क्वाथ, हर्रा, गोक्षर, दुरालभा श्रीर पाषाणभेदी का क्वाथ।

कफ्ज सूत्रकृष्ट्य में — इलायची चूर्ण श्रौर गोसूत्र । इलायचीचूर्ण श्रौर केले की जड़ का रस । गोक्षर का क्षाथ, कुड़ा, गोक्षर, वरुणछाल श्रौर पत्थरकुचि (पत्थर चूर) का काथ।

त्रिदोषज मूत्रकुच्छु में—गुद श्रोर गुनगुने दूधके साथ इन्द्रयन का काथ।
पुरीषज मूत्रकुच्छु में—गोक्षर का काथ श्रोर यनक्षार चूर्ण।
शुक्रज मूत्रकुच्छु में—वी श्रोर दूध, इलायची चूर्ण श्रोर हीग।

सव प्रकार के मूत्रकृच्छु में - श्वेत वलामूल का काथ, यवक्षार श्रीर चीनी, गोरक्षचाकुले का काथ।

मूत्राद्यात रोग में —धनिया श्रोर गोक्षर का काथ, घिसा हुत्रा सफेद चन्दन श्रोर चीनी, शतावरि का रस, त्रिफला का भीगा हुत्रा जल श्रोर सेंधानमक, विवसार श्रोर चीनी मिश्रित कुम्हडे का रस, कन्टकारी का रस, कुमकुम भीगा हुत्रा जल। तृणपञ्चमूल का काथ, गोदालियालता के मूल का काथ।

अश्मरीरोग में—हल्दो चूर्ण, गुड़, कांजी, तित्कांकुड़ का मूल, गोक्षर और वरणछाल का काथ, यवक्षार, हींग, कुलथी का काथ, पाथरकुचि (पत्थर चूर)। का रस, कांकुड़ वीज का चूर्ण, ककड़ी बीज का चूर्ण, कुड़ा चूर्ण, वृहत् वरुणादि काय, सहिजनमूल का क्वाथ।

# प्रमेहरोग में—

मधुमेह में — सुपारी श्रौर गुयेवावला का क्वाथ। रजुमेह में — जयन्ती का काथ। सरामेह में — कीम का काथ। सिकतामेह में—चीता का काथ।
रानेमेंह में—खदिर का क्वाथ।
पिष्टमेह में—हल्दी श्रौर दाक्हल्दी का क्वाथ।
सान्द्रमेह में—छातिम (छतिवन) छाल का काथ।
सालामेह में—त्रिफला श्रौर सोंदाल का कषाय।
श्रक्रमेह में—द्व, शैवाल, कैवर्तमुता (केवटी मोथा), करोंदा श्रौर केशुरे

(क्सेरू) का कपाय, अर्जुन और चन्दन का कषाय। नीलमेह में — अश्वत्थ का कषाय।

हरिद्रामेह में — सोदाल का काथ।

शुक्रमेह में — न्यप्रोधादिगण का काथ। जारमेह में — त्रिफला का काथ।

मंजिष्टामेह में - लालचन्दन का काय।

सव प्रकार के मेहरोग में —गुरुव का रस, कच्ची हल्दी का रस, गेंदा पत्ते का रस, हिंचे शाक का रस, पलाश फूल छौर शिमूल (सेमर) का रस।

श्रश्मरीरोग में—हल्दी चूर्ण, तित्काकुड़ का मूल, मधु श्रौर चीनी। सोंठ, गोक्षर श्रौर चरणछाल का काथ, यवक्षार श्रौर हींग, कुलथी का क्वाथ, पाथरकुचि (पत्थर चूर) का रस, तृण्पंचमूल का कषाय, कांकुड़बीज चूर्ण, ककड़ी बीज का चूर्ण, कुंड़ा चूर्ण।

सामरोग में — श्रांवले का रस, गूलर का रस, जामुन बीज का चूर्ण, केलें के पूल का रस, भूमिकु का व्हा का रस, मोथा का रस, नोनाछाल का रस, केशुरिया का रस, खजूर के मूल का चूर्ण, श्राकनादि (पाठा) का क्वाथ, बांस पत्ते का क्वाथ, तेलाकूचा मूल का रस, पश्चवल्कल का क्वाथ।

'उद्ररोग में-तेडड़ी ( निशोथ ) चूर्ण ।

श्रम्लिपत्तरोग में—कोष्ठकाठिन्य रहने पर तेउड़ी (निशोध) चूर्ण, धनिया, मौरी (सौंफ) श्रौर हरें का क्वाथ, त्रिफला का भीगा हुश्रा जल श्रथवा परवल पत्ते का रस, हिंचे शाक का रस, परवल का रस, गुरुच का रस, श्रांवले का रस या श्रांवला भीगे हुए का जल, शताविर का रस, धनिया श्रौर परवल पत्ता भीगा हुश्रा जल, विरायता भीगा हुश्रा जल।

तरत या श्रधिक दस्त होने पर—चूने का पानी श्रोर मोथा का रस। वातप्रधान श्रमतिपत्त में—पीपल चूर्ण श्रोर मधु, जोरा चूर्ण, त्रिफला चूर्ण श्रोर सेधानमक।

पित्तप्रधान श्रम्लिपत्त में—परवल पत्ते का रस, श्रहसा का रस, चेत्र-पापडा का रस, गुरुच का रस।

श्लेष्मप्रधान श्रम्लिपत्त में —नीमछाल का काथ, मुलेठी चूर्ण, सींठ श्रीर परवल पत्ते का काथ।

शीतिपत्त, उदर्द श्रीर कोठरोग में —कच्ची हल्दी का रस, परवल पत्ते का रस, हल्दी का चूर्ण, गुरुच का रस, नीमछाल काथ, करेला पत्ते का रस। विस्विका में —श्रपामार्ग के मूल का रस श्रीर मधु।

## शोधरोग में-

चातज्ञशोथ में — सोंठ चूर्ण, पुनर्नवा का रस, एरण्ड मूल का रस, दशमूल का काथ, बेलपत्ते का रस श्रौर गोमूत्र।

पित्तजशोध में —कुलेखाडा (तालमखाना) का रस, परवल पत्ते का रस, कुटकी चूर्ण, तेउडी (निशोध) चूर्ण, त्रिफला का क्वाध, चाकुले, मोथा, सुगन्धवाला श्रोर सोठ का क्वाध।

कामलारोग में — मुलेठी का काथ, हल्दीचूर्ण श्रयवा त्रिफला चूर्ण।
पाण्डु श्रीर शोध में — त्रिफला चूर्ण, गिलोय का स्वरस श्रयवा पुनर्नवा का रस।

शोधरोग में — चिरायता श्रीर सोठ का क्वाय, गोमूत्र श्रथवा पुनर्नवा का रस।

क्रिमिरोग में --नीम पत्ते का रस श्रयवा विडङ्ग चूर्ण।

उन्माद् श्रोर श्रपस्माररोग में —हींग, सोचर लगण, त्रिकटु श्रीर गोमूत्र के साथ घृत पाक कर उसके साथ पारद भस्म प्रयोग करे।

चातरक्त में नित्रकटु, त्रिफला और विडङ्ग चूर्ण प्रत्येक १ भाग एवं सबके वरावर गुग्गुल एकत्र एरण्ड तेल के साथ मर्दन कर उसके साथ पारदभस्म प्रयोग करने से वातरक्त विनष्ट होता है।

काश्य में -- पारदभस्म, श्रश्वगन्धा मूळचूर्ण श्रौर चीनी के साथ सेवन करे।

स्थोल्यहासकरणार्थ-एरण्डमूल चूर्ण या एरण्डमूल का क्वाय श्रयवा विडन्न चूर्ण के साथ प्रयोग करे।

श्लेप्मजशोध में — पुनर्नवा का रस, पीपल चूर्ण, हरीचूर्ण, सोदाल की लेर्ड, गोमूत्र, देवदारु श्रौर सींठ का क्वाथ।

वृद्धिरोग में —

वातज वृद्धि में —एरण्ड तेल, श्रदरक का रस, गोमूत्र, रास्नादि पाचन। पित्तज वृद्धि में - परवल पत्ते का रस, गुरुच का रस, नीम छाल का क्वाय, पुनर्नवा का रस, लालचन्द्न श्रौर मुलेठी का क्वाथ, वरगद की छाल, ग्ररवत्य, गूलर, पाकर, ववूल इनका क्वाथ।

कफज चृद्धि में — त्रिकटु चूर्ण, यवक्षार चूर्ण, त्रिफला का क्वाथ, गोमूत्र में उवाला हुआ हरें का चूर्ण, निसिन्दा (निर्गुण्डी) का रस, तुलसी पत्ते का रस। व्रणशोध त्रौर व्रणरोग में - करेला पत्ते का रस, कुटकी चूर्ण।

भगन्दर रोग में — खदिर लकड़ी का क्वाथ।

उपद्श श्रीर फिरंग रोग में — श्रनन्तमूल का काथ, चोपचीनी का काथ। कुछरोग में — पिसा हुआ चालमुगरा का वीज, नीम श्रौर छातिम (छतिवन) द्याल का क्षाय, नीम की पत्ती, फूल, फल, छाल श्रीर मूल चूर्ण।

वाधकरोग सें- उलटकमल का मूल श्रौर पिसा हुआ कालोमिर्च का चूर्ण। स्त्रीरोग में — सकेद्प्रद्र में — पिसा हुआ कांटानट का मूल, चावल धोया जल, गेंदा पत्ते का रस, धाई फूल, आंवले का गूदा, सफेद चन्दन घिसा और मधु, कुशमूल श्रीर तण्डुलोदक।

रक्तप्रद्र में — प्रशोक का क्वाथ, घिसा हुआ रक्तोत्पल का मूल, नरम गूलर का रस, लाक्षाचूर्ण श्रीर मधु, कुटजछाल का रस, श्रह्सा का काथ।

वसन्तरोग में - करेला पत्ते का रस, श्रमृतादि कषाय।

नाक के रोग में — तुलसीपत्ते का रस श्रौर मधु।

श्रांख के रोग में — त्रिफला का क्वाय या भीमराज का रस।

रसायन में — ग्रश्वगन्धा चूर्ण श्रौर दृध, दूध की मलाई श्रौर मिश्री, शतावर का रस और मधु, भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द) का रस और मधु, वेला मूल चूर्ण श्रीर मधु।

वाजीकरण में—शोधित आलकुशी (कौंच) बीज चूर्ण और मधु, सेमर मूल का चूर्ण, भूमिकुष्माण्ड (विदारीकन्द) चूर्ण, शतावर चूर्ण, कुलेखाड़ा (ताल मखाना) वीज चूर्ण।

वालरोग में-

नवज्वर में — तुलसीपत्ते का रस श्रीर मधु।

पुरानाज्वर में —शेफालिका पत्ते का रस श्रौर मधु, कालमेघ का रस श्रौर मधु, गुरुच का रस श्रौर मधु।

प्लीहाल्वर में — पीपल चूर्ण श्रौर मधु।

श्रितसार श्रीर ज्वरातिसार में — मोथा का रस, बेलसींठ (कच्चे बेल की शुष्कमना) का क्वाथ, श्रितीस चूर्ण श्रीर मधु।

रक्तातिसार शौर रक्तामाशय में —कुड़ची (कुटज) छाल का रस, श्रायापान का रस। पिसा हुआ लालनटे का मूल और मधु।

श्रामाद्राय (पेविदा) में — मोथा का रस, थानकुनि (मण्डूकपणी) का रस, गन्धप्रसारणी का रस।

कास में — पीपल चूर्ण, तुलसी पत्ते का रस, वासक ( अर्रुसा ) का रस, इकरोंधा का चूर्ण।

ग्रहणीरोग सें—तला हुन्ना जीरा चूर्ण, मोथा का रस श्रीर मधु। पुष्टि वढाने के लिये—श्रश्वगन्धा मूल चूर्ण श्रीर दृध।

## कुछ आधुनिक रोगों की रसचिकित्सा

मेरी लिखी हुई 'श्राधुनिक रोग की श्रायुर्वेदीय चिकित्सा' नामक प्रन्थ में इन सब रोगों की चिकित्साप्रणाली विस्तृत भाव से लिपिबद्ध कर दो गई है।

टेरीटेरी चिकित्सा—श्रायुर्वेद के मत से यह एक प्रकार का श्रजीर्ण जिनत शोध है। इसमें जबर, खांसी, रवास कष्ट, श्रांख से धुंधला देखना, रात में प्रमाश के चारों श्रोर गोलाकार मण्डल देखना, हृत्पिण्ड में व्यथा, सारे शरीर में शोध श्राटि उपसर्ग दिखाई देते हैं। बहुत दिनों तक मिलावटी श्रीर सारहीन मार प्रच्यों को छाने से इस रोग की उत्पत्ति होती है। श्रव्छी चिकित्सा न होने पर बहु हंगेशा के लिये श्रांख श्रीर हित्पण्ड को नष्ट कर देता है। रोगाकमण की,

स्चना होते ही सुचिकित्सा का श्राश्रय लेने पर इसमें कोई भय का कारण नहीं रहता है।

पूर्व वर्णित रस और गन्धक के योग से मारित श्रमृतीकृत ताम्र, रसतालक, नवायसलोह, मकरघ्वजरस, महाशंखवटी, वृहत् कस्तूरीभैरव, श्वासकुठार श्राद्दि श्रीपध प्रथम श्रवस्था में सोच विचार कर प्रयोग करना चाहिये। रोग को बढ़ने की श्रवस्था में सारे शरीर में शोध दिखाई देने पर रसपर्पटी, लोहपर्पटी, पंचा-मृतपर्पटी या श्रवस्था श्रिधक खराव होने पर स्वर्णपर्पटी या विजयपर्पटी श्रादि श्रीपध प्रयोग करना चाहिये।

हृतिपण्ड की दुर्वलता में नागार्जुनरस, प्रभाकरवटी, श्रादित्य रस, शिलाजीत वटी, हरितालभस्म श्रादि श्रीषध की व्यवस्था करनी चाहिये।

श्रांख श्राकान्त होने पर नयनामृतलोह, क्षतशुक्लहर गुग्गुलु, रसतालक, ताम्रभस्म श्रादि श्रोषध प्रयोग करना चाहिये।

बेरी हो चिकित्सा का श्रमुपान हेदाना का रस, बला का रस, श्रमूल का काथ, श्वेतपुनर्नवा का रस,

मेनिनजाइटिस चिकित्सा—श्रायुर्वेद के मत से यह सान्निपातिक ज्वर है। रोगों के लक्षणसमूह के साथ सिन्नपात ज्वर का कारण-लक्षणादि का विचार कर चिकित्सा करने से श्रच्छा फल मिलता है।

चिकित्सा विधि— श्रनुक्षण रोगी के मस्तक में बरफ जल डालना या श्राधिनक श्राइसबैग रखना चाहिये। बरफ या श्राइसबैग न मिलने पर शीतल जल की धारा गिराना चाहिये। रोगी की संज्ञाहीनता दूर करने के लिये बहुत वातिचिन्तामणि या चतुर्भुज रस का प्रयोग करे। तालभैरवी, बहुत कस्तूरीभैरव वातिचन्तामणि या चतुर्भुज रस का प्रयोग करे। तालभैरवी, बहुत कस्तूरीभैरव रस, सिन्निपातसूर्यरस श्रादि सान्निपातिक ज्वर की श्रोषधियों को सोच विचार कर रस, सिन्निपातसूर्यरस श्रादि सान्निपातिक ज्वर की श्रोषधियों को सोच विचार कर प्रयोग करने से श्रारोग्य होना निश्चित है।

श्रनुपान—तालशाखा का रस, ब्राह्मी शाक का रस, डाव (कचे नारियल) का जल, दशमूल काय, कट्फलादि काथ ग्रादि।

गैष्ट्रिक श्रलसर चिकित्सा—श्रायुर्वेद के मत से यह वायु श्रीर पित-

जिनत परिणाम शूल के अन्दर आता है। शूलरोग की ओषधियों का विवेचना-पूर्वक प्रयोग करने से ही यह यन्त्रणाप्रद न्याधि आरोग्य होती है।

चिकित्सा विधि—रस श्रौर गन्धक के सहयोग से मारित श्रमृतीकृत ताम्रभस्म, श्रदरक रस श्रौर मधु श्रथवा सहिजन छाल का रस श्रौर मधु के साथ प्रयोग करे।

दर्द को कम करने के लिये शंखभस्म श्रौर कुछ हीग श्रथवा शंखादिचूर्ण, नीवू का रस श्रौर गरम जल के साथ प्रयोग करने से श्रच्छा फल मिलता है।

रसतालक पान का रस श्रथवा घी श्रौर मधु के साथ प्रयोग करने से भी श्रिच्छा फल मिलता है। इससे घाव जल्दी सूख जाता है।

शूलवज़ और शूलराजलोह सहिजन छाल के रस के साथ प्रयोग करने से वैदना की शान्ति होती है और क्रमशः रोग श्रारोग्य हो जाता है।

घी श्रौर मधु के सहयोग से 'धात्रीलोह' गैष्ट्रिक श्रलसर की एक उत्कृष्ट श्रोषध है।

सबेरे दूध के साथ शूलहरणयोग प्रयोग करने पर भी श्रच्छा फल मिलता है।

रोग के श्रितशय जिटल श्रवस्था में पहुचने पर—स्वर्णपर्पटी, विजयपर्पटी या चेत्र विशेष में ताम्रपर्पटी या लोहपर्पटी का प्रयोग करने से श्रव्छा फल मिलता है।

उत्कृष्ट मण्ड्रसम्म इस रोग की उत्कृष्ट श्रोषध है। इससे ज्वाला श्रोर शुल की यन्त्रणा का सत्वर उपशम होता है।

तारामण्हर, गुडमण्हर, मण्हरयोग आदि औषध घी और मधु, गरमपानी, लस्सी, श्रदरक रस, सहिजन छाल का रस, त्रिफला का क्वाथ, सोठ और वरुण-छाल का क्वाथ श्रादि श्रनुपान के साथ प्रयोज्य हैं।

ताम्रहृति, त्रियोनि, त्रिनेत्ररस ब्रादि ब्रौषध भी सुफलप्रद हैं। ब्रानुपान-श्रदरक का रस ब्रौर मधु, सींठचूर्ण ब्रौर गरमपानी, त्रिफलादि क्वाथ, यथा-त्रिफला, तेउड़ी (निशोथ), दन्ती, कुटकी, सोठ, सोदाल, एरण्डमूल, सोनपत्ती, किसमिस।

शूलरोग या गैष्ट्रिक अलसर रोग में कोष्ठबद्धता रहने पर इस अनुपान द्वारा अच्छा फल मिलता है। (मेरी लिखी हुई 'दृष्टफल चिकित्सा' नामक प्रन्थ में यह विपय विशेषरूप से वर्णित है)। अनुपान—सहिजनछाल का रस, श्रदरक का रस, घी श्रौर मधु, त्रिफलादि क्याब, नीवू का रस, गरमपानी, गरमदूध श्रादि।

गल छोन चिकित्सा—श्रायुर्वेद के मत से यह व्याधि पित्ताशमरी श्रोर पित्तजशूल के श्रन्तर्गत है। विवेचनापूर्वक शूलरोग की श्रोर श्रश्मरीरोग की श्रोपधियों का प्रयोग करने पर यह श्राति कष्टप्रदं व्याधि दूर होती है।

**46**ण छाल का क्वाथ, श्रदरक का रस श्रीर मधु श्रथवा सहिजन छाल के रस के साथ त्रिविकमरस का प्रयोग करने से श्रच्छा फल मिलता है।

श्रादित्यरस, ताम्रभस्म, सोमनाय ताम्र, चारितरलोह, धात्रीलोह, त्रिनेत्ररस, श्रादि उल्लिखित श्रनुपान श्रयवा घी श्रीर मधु के साथ प्रयोग करने पर भी गलप्टोन श्रारोग्य होता है।

वरणाद्यलोह, पाषाणभिन्नरस, पाषाणभेदीरस या पाषाणजीर्णरस, कुदा, गोक्षर और वरणद्याल का क्वाथ एवं पाथरकुचि (पत्थर चूर) पत्ते के रस के साथ प्रयोग करने से श्रवश्य ही उपकार होता है।

यन्त्रणा की निवृत्ति के लिये—शंखमस्म, हींग श्रौर सींठचूर्ण श्रथवा केवल शंखमस्म नीवू के रस के साथ व्यवहार करे।

शंखभरम, वज्रक्षार त्रौर भारकर ठवण एकत्र मिलाकर प्रयोग करने से भी वेदना की शान्ति होती है।

रोग त्राधिक दिनों का पुराना होने पर ताम्रपर्पटी प्रयोग करना उचित है। वरुणादि कषाय के साथ शिलाजीतमस्म प्रयोग करने पर गलष्टोन रोग सत्वर श्रारोग्य होता है।

सप्तामृतरस—पारद, गन्धक, लोह, ताम्र, शंख, शिलाजीत, यवक्षार, प्रत्येक १ भाग, एकत्र मर्दन कर वरणछाल, उड़द, गोक्षर, कुड़ा, पाथरकुचि प्रत्येक १ भाग, एकत्र मर्दन कर वरणछाल, उड़द, गोक्षर, कुड़ा, पाथरकुचि (पत्यर चूर), सिहजन छाल श्रोर श्रदरक के रस या क्वाथ में भावना देकर (पत्यर चूर), सिहजन छाल श्रोर श्रातावर का रस, त्रिफला भिगोथा हुआ जल, धी श्रोर १ माशा की गोली बनावे। शतावर का रस, त्रिफला भिगोथा हुआ जल, धी श्रोर भाग, गरम जल, हरीतक्यादि या वरुणादि कषाय श्रादि श्रनुपान के साथ गलछोन रोग में प्रयोग करना चाहिये।

डिउडिनत श्रतसर—यह श्रायुर्वेद के पित्तशूल श्रीर प्रहणों के समान रोगविशेष है। ग्रहणीरोगाधिकार के श्रोषधियों को विवेचनापूर्वक प्रयोग करने पर यह व्याधि श्रारोग्य होती है। कुछ दिनों तक विजयपर्पटी का व्यवहार करने के बाद रसतालक का व्यवहार करने से यह व्याधि निश्चितरूप से श्रारोग्य होती है।

ताम्रपर्यटी, श्रत्यधिक रक्तहीनता में लोहपर्यटी, सोमनाथताम्र, चक्रदत्त संहिता में वर्णित ताम्रयोग इस रोग की उत्कृष्ट श्रोषध है।

नमक श्रौर जल त्याग कर दूध श्रौर श्रन्न पथ्य करते हुये उल्लिखित श्रोषधियों का व्यवहार करना श्रावश्यक है।

अम्लिपत्त रोगाधिकार का 'पीयूषवल्लीरस' श्रौर 'लीलाविलास' इस रोग की उत्कृष्ट श्रोषध है।

टिटेनास चिकित्सा—यह आयुर्वेद के वातन्याधि रोग के अन्तर्गत धनुष्रद्वार रोग का नामान्तर है। आदोपनिवर्त्तक इस रोग की एक उत्कृष्ट औषध है।

श्रादोपनिवर्त्तक—श्रांवला, हर्रा, बहेडा प्रत्येक श्राधा तोला, निशादल (हल्दी का पत्ता) चौथाई तोला, कपूर १ श्राना, हिङ्कल २ श्राना, विडङ्ग ४ श्राना, जटामांसी ४ श्राना भर, एकत्र जल मे मर्दन कर २ रत्ती की गोली वनाचे। वातारिरस, बहत् वातचिन्तामणि, ताम्रभस्म श्रीर हरितालभस्म इस रोग की उत्कृष्ट श्रीषध है।

डिपथिरिया चिकित्सा—श्रायुर्वेद के मत से यह एक प्रकार का दुःसाध्य कण्ठरोग है, इसके प्रारम्भ में हरितालभस्म ने रती की मात्रा में श्रदरक का रस श्रीर गरम गाय के घी के साथ व्यवहार करने से श्रितशय फल होता है।

ताम्रमस्म, वसन्ततिलकरस, वृहत् श्रङ्गाराभ्ररस एवं पंचतिक्तघृतगुग्गुलु इस रोग की उत्कृष्ट श्रोषध है।

डायेवेटिस चिकित्सा—श्रायुर्वेद के मत से यह प्रमेह श्रौर सोमरोग के श्रम्तर्गत है। रसचिकित्सा विधि के श्रमुसार करने से इसकी श्रित उत्कृष्ट चिकित्सा है। प्रथमतः उम्र श्रौर मूल्यवान श्रीषिधकों का प्रयोग न कर साधारण श्रोपिधयों से ही इसकी चिकित्सा श्रच्छी होती है। इस रोग में रोगी के पथ्य की श्रोर तीच्ण दृष्टि रखनी चाहिये। इस विषय में मेरी लिखी हुई 'सरल श्रायुर्वेद शिक्षा' नामक पुस्तक के पथ्यापथ्य विचार को देखना चाहिए। इन्द्रवटी, तारके-रवरस, हिरशद्वरस, मेहान्तकरस, बङ्गजतु, नागजतु, स्वर्णजतु, लोहाभ्रजतु, श्रादि

त्रीषध, हल्दी का रस, तेलार्कुचा पंत्ते का रस, नोनाञ्चाल का रस, शतावरि का रस, काकमाची का रस, केशुरिया पत्ते का रस, वेदाना का रस, घृतकुमारी का रस श्रीर संधानमक, घिसा हुआ सफेद चन्दन, और मधु के साथ प्रयोग करने से श्रीत उत्तम फल मिलता है।

उिल्लिखत श्रोपिथाँ शर्करा विहीन डायेवेटिसरोग में उपकारी हैं। शर्करायुक्त डायेवेटिस में रसराज रस, चन्द्रकान्ति रस, वसन्तकुसुमाकर रस, बृहत् सोमनाय रस, हेमनाथ रस श्रादि श्रोषध विशेष उपकारी हैं। श्रजुपान-धी श्रोर मधु, केला फूल का रस, वांस पत्ते का ववाथ, नोनाछाल का रस, कच्चे श्रांवले का रस, त्रिफलाचूर्ण, गूलर का रस श्रादि। उत्कृष्ट शिलाजीतभस्म, शताविर का रस, त्रिफलाचूर्ण, कच्चे श्रांवले का रस, केला फूल का रस या क्षाथ, पाठादि काथ श्रादि श्रजुपान के साथ प्रयोग करने पर श्रनेक चेत्रों में श्रच्छा फल होते देखा गया है। इस रोग की विशेष चिकित्सा विधि मेरी लिखी हुई 'इष्टफल चिकित्सा' नामक पुस्तक में देखने योग्य है।

डायेवेटिककोमा—डायेवेटिस की श्रति अग्रद्ध श्रवस्था में जब रोगी के पेशाव श्रोर रक्त में शक्कर की मात्रा श्रधिक हो जाती है तब श्रनेक समय रोगी वेहोश हो जाता है। यह श्रवस्था भयावह होती है। इसमें हरितालभस्म नेह रत्ती मात्रा में प्रयोग करने पर रक्त श्रोर पेशाव का वढ़ा हुश्रा शक्कर कम होकर रोगी की श्रवस्था सुधर जाती है। चतुर्भुजरस श्रोर वृहत् वातिचन्तामणि प्रयोग करने पर इस श्रवस्था में श्रच्छा फल मिलता है।

कार्यान्कल चिकित्सा—ग्रायुर्वेद के मत से यह प्रमेहिपिडिका विशेष है। इस श्रिधिकार की श्रोषियों को प्रयोग करने पर इस व्याधि से सहज ही में छुटकारा पा सकते हैं। कार्बान्कल में श्रचानक श्रिष्ठोपचार करना ठीक नहीं है। श्राभ्यन्तरिक दोष का निराकरण होने पर ही रोग धीरे-धीरे श्रारोग्य हो जाता है।

मूत्रदोष दूर करने के लिये बहुत् लोकनाथरस, चन्द्रकान्तिरस वसन्त-कुसुमाकररस, स्वर्णवङ्ग, प्रमेहसेतु, बृहत् वंगेश्वरस आदि श्रोषध व्यवहार करना चाहिए। अनुपान-सारिवादिगण का काथ, पाठादि काथ, वेणुपत्ते का काथ, नोना-चाल का रस, तेलाकुचा पत्ते का रस, शतावरि का रस आदि। श्रनन्तादि लेप—इस रोग की उत्कृष्ट श्रोषध है। यथा—श्रनन्तमूल १ भाग, नालुका २ भाग श्रोर मुलेठी १ भाग चूर्णकर छान कर एकत्र शीतल जल में पेषण कर गाय के घी में मिलाकर घाव वाले स्थान के ऊपर प्रलेप दे। इसके साथ-साय वसन्तकुसुमाकर रस या हरितालभस्म सेवनार्थ प्रयोग करने पर दुःसाध्य श्रोर परित्यक्त कार्वान्कल रोग भी श्रारोग्य होता है।

माणिक्यरस, रसतालक, रसमाणिक्य, पञ्चतिक्तघृतगुग्गुलु, उदयादित्यरस श्रादि कुष्टरोगाधिकार के श्रोषियों की भी इस रोग में सफलता के साथ व्यवस्था की जाती है।

गैंग्रीन चिकित्सा— आयुर्वेद के मत से यह व्याधि प्रमेहिपिडिका श्रीर कुछ रोगाधिकार के श्रन्तर्गत है। गैंग्रीन का क्षत दो प्रकार का होता है, शुष्क श्रीर क्लेदयुक्त। शुष्क गैंग्रीन श्रायुर्वेद के विसर्प रोगाधिकार के श्रन्तर्गत है। इसमें माणिक्यर्स, रसतालक, कालाग्निस्ट्रस, खगेरवररस श्रादि श्रीषध प्रयोग करने से श्रच्छा फल मिलता है।

क्लेदयुक्त गैंग्रीन मे तालेश्बर, महातालेश्वर, मेदिनीसार रस श्रादि श्रोषध प्रयोग करे। रोगी के मूत्र के दोष को दूर करने के लिये बृहत् वंगेश्वररस, प्रमेहसेतु, स्वर्णवङ्ग, शिलाजीत एवं चेत्र विशेष में वसन्तकुसुमाकररस प्रयोग करे। पंचितक्तिष्टतगुग्गुलु, श्रमृतभङ्खातकष्टत प्रयोग करने से भी श्रच्छा फल मिलता है। बाह्य प्रयोग के लिये ब्रणराक्षस तेल विशेष उपकारी है।

ब्लडप्रेसर—ग्रायुर्वेद के विचार से यह वायु श्रौर पित्त का विकारमात्र है। प्रकुपित-वायु कुपित पित्त का श्राश्रय कर शोणितोच्छ्वास उत्पन्न करती है। पित्त-प्रकोप-प्रशमक श्रौर वातानुलोमक श्रोषिधयाँ प्रयोग करने से इस व्याधि की शान्ति होती है। रसचिकित्सा की दृष्टि से गव्य घृतं के श्रनुपान के साथ हरिताल भस्म इस रोग की एक उत्कृष्ट श्रौषध है। इसके श्रितिरिक्त बृहत् वातचिन्तामणि, रसराजरस, योगेन्द्ररस श्रादि श्रौषध भी इस रोग की उत्कृष्ट श्रौषध हैं।

श्रमृतीकृत ताम्रभस्म घी श्रोर मधु के श्रनुपान के साथ २ रत्ती मात्रा में प्रयोग करने से शोणितोच्छ्वास श्रारोग्य होता है। त्रिफला भीगा हुत्रा जल या त्रिफला के काथ के साथ कृष्णचतुर्भुख इस रोग की एक विशिष्ट श्रोषध है। चिन्तामणि चतुर्भुख श्रोर त्रैलोक्यचिन्तामणिरस काकमाची के रस के साथ प्रयोग करने पर भी श्रच्छा फल मिलता है।

तेसिलरी डिसेन्ट्री—श्रायुर्वेद के रक्तातिसार श्रौर प्रहणी रोग के श्रन्तर्गत है। पंचामृतपर्पटी, स्वर्णपर्पटी, रसपर्पटी एवं श्राति प्रवृद्ध श्रवस्था में विजयपर्पटी इस रोग की श्रेष्ठ श्रौपध है। सोच विचार कर इसमें से किसी एक का प्रयोग करने पर प्रायः सभी रोगी श्रच्छे हो जाते हैं। जातीफलरस, कपूररस, महाराजनृपतिवद्धभ, महागन्धक श्रादि को सहायकरूप में व्यवहार किया जा सकता है। इस रोग की श्रायुर्वेदीय चिकित्सा सर्वत्र फलदायक हुई है।

डिसपेष्सिया — श्राग्नमान्य, श्रम्लिपत्त श्रीर संग्रहग्रहणीरोग के श्रन्तर्गत है। डिसपेष्सिया रोग में किसी किसी केत्र में कोष्ठबद्धता श्रीर किसी क्षेत्र में गलभेद होता है। पहले प्रकार के डिसपेष्सिया में ताम्रपर्पटी एवं द्वितीय प्रकार के डिसपेष्सिया में ताम्रपर्पटी एवं द्वितीय प्रकार के डिसपेष्सिया में पश्चामृतपर्पटी या विजयपर्पटी महौषध है। श्रादित्यरस, सर्व-रोगान्तक वटी श्रीर रसतालक इस रोग की उत्कृष्ट श्रोषध है। महाशंखवटी, महाराजनृपतिवह्मभ, पीयूपवल्लीरस श्रादि भी श्रच्छा फल दायक है।

लिउकोरिया—ग्रायुर्वेद के प्रदर श्रीर योनिन्यापद रोगाधिकार के घन्तर्गत है। चिकित्सा के प्रारम्भ में 'हरीतक्यादि कषाय' के साथ योगेन्द्रसार नामक श्रीपथ मिश्रित कर योनिद्वार को धोने एवं सेवनार्थ रत्नप्रभावटी दे।

हरीतक्यादि कपाय—हर्रा, श्रावला, बहेडा तथा श्राम, जामुन बबूल, कटम्य, गूलर, बुटज, नीम, वरगद श्रीर श्रश्वत्थ की छाल को श्राधा तोला की मात्रा में लेकर ४ सेर जल में उवाल कर १ सेर रहते छान ले।

योगेन्द्रसार—तृतिये का भस्म, ताम्रमस्म, शोधित हीराकस, स्वर्णगौरिक प्रत्येक १ भाग, एकत्र श्रव्छी तरह से मिलाकर जननेन्द्रिय को धोने के लिये एक श्राने की मात्रा में उल्लिखित कपाय के साथ व्यवहार करे।

स्वर्णवङ्ग, प्रमेहसेतु, रसतालक, वृहत् वंगेरवर्रस, वसन्तकुसुमाकररस इस
रोग में इत्हृष्ट फल देते हैं। शिलाजीत प्रयोग इसका श्रत्युत्हृष्ट श्रोषध है।
श्राहिफेल योग—गोधित श्रहिफेन, रसिसन्दूर, कपूर, कवावचीनी, वारितर
श्राहिफेल योग—गोधित श्रहिफेन, रसिसन्दूर, कपूर, कवावचीनी, वारितर
लोह प्रत्येक १ भाग, एकत्र गीतल जल में मईन कर २ रत्ती की गोली वनावे।
श्राहुपान-केणुरिया (कसेक्) या कच्ची हल्दी का रस। सफेद चन्दन धिसा
श्राहुपान-केणुरिया (कसेक्) या कच्ची हल्दी का रस। सफेद चन्दन धिसा
श्रीर मधु। श्रारवीगंद भीगा हुआ जल, दाक्हल्दी धिसा श्रीर मधु। सीठ
श्रीर गोक्षर का काथ। त्रिफला, दाक्हल्दी, चीतामूल श्रीर गांबालससा (इन्द्रायण)
श्रीर गोक्षर का काथ। त्रिफला, दाक्हल्दी, चीतामूल श्रीर गांबालससा (इन्द्रायण)
का काथ श्रादि। इस प्रयोग से श्रवश्य ही रोग श्रव्छा होता है।

२४ र० चि०

सिफिलिस—यह भाविमश्र कथित फिरइरोग के घ्रन्तर्गत है। पारद्भस्म, शोधित पारद, हरितालभस्म, माणिक्यरस, रसमाणिक्य, तालकेश्वरस ग्रादि श्रोषध खटाइ श्रोर नमक त्याग कर व्यवहार करने से यह रोग दूर होता है। सिफिलिस चिकिन्सा में पारद श्रोर हरिताल घटित श्रोषध हो सवसे श्रिधक फलदायक है। निम्नलिखित मिश्रयोग इस रोग को एक दृष्टफल श्रोषध है। पारद, गम्धक, खिदर प्रत्येक र तोला, हल्दी, नागेश्वर, वड़ी इलायची, छोटी इलायची, जीरा, काला जीरा, जवाइन, सफेद चन्दन, पीपल, वंशलोचन, जटामांसी श्रोर तेजपत्ता प्रत्येक का चूर्ण १ तोला एकत्र मिलाकर १६ तोला मधु श्रोर १६ तोला गाय के घी के साथ मर्दन कर १ तोले की गोली वनावे। नमक परित्याग कर २१ दिन तक यह श्रोषध सेवन करने से सिफिलिस का क्षत श्रवश्य ही श्रारोग्य होता है। श्रमुपान-श्रवन्तमूल श्रोर चोपचीनी का काथ।

गनोरिया—यह एक प्रकार का दूषित प्रमेह है। दुष्ट स्त्रियों के संसर्ग से ही इस रोग की उत्कृष्ट श्रीषध है।

वंगयोग—वंगमस्म, शिलाजीतभस्म, श्रश्रकभस्म, लोहमस्म, स्वर्णभस्म, ताम्रभस्म, रसिसन्दूर प्रत्येक १ भाग एकत्र कची हल्दी के रस मे मर्दन कर २ रत्ती की गोली तैयार करे। श्रनुपान-सफेद चन्दन धिसा श्रीर मधु। इस श्रीषध सेवन के साथ-साथ हरीतक्यादि कषाय सहित योगेन्द्रसार मिश्रित कर पिचकारी द्वारा मूत्र के द्वार को घोने से सत्वर उपकार होता है।

गाउट रिउमेटिजम श्रीर श्रारथाइटिज—ये व्याधि श्रायुर्वेद के श्राम-वात रोगाधिकार के श्रन्तर्गत हैं। इस रोग में रोगी के मूत्र में दोष है कि नहीं यह देखना विशेष श्रावश्यक है। रोगी को पहले सिफिलिस या गनोरिया रोग हुश्रा था कि नहीं वह भी जानना श्रावश्यक है।

मूत्र का दोष रहने पर प्रतीकार के लिये प्रमेहरोगाधिकार के श्रोषधियों की युक्तिपूर्वक व्यवस्था करे। किरंगरोग जनित या दूसरे तरह की रक्तदुष्टि का प्रतीकार करे एवं श्रामवात रोगाधिकारोक्त सिंहनादगुग्गुलु, श्रामवातारिवटी, वातगजेन्द्रसिंह, योगराजगुग्गुलु, वातारिरस श्रीर रसोनिपण्ड श्रादि श्रोषध महारास्नादि काथ, रास्नादि काथ या रास्नादि कषाय के साथ प्रयोग करे।

नेफाइटिज, ब्राइट्स डिजिज श्रीर एलबुमेनिडिरया—ये व्याधि श्रायुर्वेदोक्त प्रमेह, सोमरोग, श्रामवात श्रीर शोथ रोगाधिकार के श्रन्तर्गत हैं।